

पंजाब राज्य एवं अन्य

बनाम

दर्विंदर सिंह और अन्य

सिविल अपील संख्या 2317 सन् 2011

01 अगस्त 2024

[भारत के मुख्य न्यायाधीश डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, न्यायमूर्ति बी.आर. गवई, न्यायमूर्ति विक्रम नाथ, न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी, न्यायमूर्ति पंकज मित्तल, न्यायमूर्ति मनोज मिश्रा और न्यायमूर्ति सतीश चंद्र शर्मा]

विचारार्थ मुद्दा

सर्वोच्च न्यायालय को इस बात पर निर्णय देना था कि आरक्षण सहित सकारात्मक कार्यवाई प्रदान करने के उद्देश्य से अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण वैध है अथवा नहीं। इस संदर्भ में, निम्नलिखित मुद्दे विचारार्थ उठे: क्या संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 16 के अंतर्गत आरक्षित वर्ग का उप-वर्गीकरण स्वीकार्य है; क्या अनुसूचित जातियां एक समरूप या विषम समूह हैं; क्या संविधान का अनुच्छेद 341 मान्य कल्पना के संचालन के माध्यम से एक समरूप वर्ग का निर्माण करता है; और क्या उप-वर्गीकरण के दायरे पर कोई सीमाएं हैं।

हेडनोट्स

आरक्षण – क्या आरक्षण के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण संवैधानिक रूप से स्वीकार्य है – (बहुमत के अनुसार), हाँ।

(भारत के मुख्य न्यायाधीश डॉ. डी वाई चंद्रचूड़ के अनुसार) (स्वयं और न्यायमूर्ति मनोज मिश्रा के द्वारा) अवधारित किया गया : 1. संविधान का अनुच्छेद 14 किसी वर्ग के उप-वर्गीकरण की अनुमति देता है जो कानून के प्रयोजन के लिए समान रूप से स्थित नहीं है – उप-वर्गीकरण की वैधता का परीक्षण करते समय न्यायालय को यह निर्धारित करना होगा कि क्या वर्ग उप-वर्गीकरण के उद्देश्य को पूरा करने के लिए एक समरूप एकीकृत वर्ग है – यदि वर्ग को उद्देश्य के लिए एकीकृत नहीं किया गया है, तो वर्ग को दो-आयामी बोधगम्य विभेद मानक की पूर्ति पर आगे वर्गीकृत किया जा सकता है। [पैरा 205 (ए)]

2. चिन्नैया मामले में यह निर्णय कि अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण अस्वीकार्य है, खारिज किया जाता है। [पैरा 205(एफ)]

(न्यायमूर्ति बी.आर. गवई के अनुसार) (सहमति से) अवधारित किया गया : 1. ई.वी. चिन्नैया, जिसने कहा कि अनुसूचित जातियों के बड़े समूह में से किसी समूह को अधिक लाभकारी उपचार देने के उद्देश्य से अनुसूचित जातियों के बीच उप-वर्गीकरण स्वीकार्य नहीं है, एक अच्छा कानून नहीं बनाता है। [पैरा 296 (i)]

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

2. अनुसूचित जातियों के बीच अधिक लाभकारी उपचार देने के उद्देश्य से उप-वर्गीकरण कानून में स्वीकार्य है। [पैरा 296 (ii)]

(न्यायमूर्ति विक्रम नाथ के अनुसार) (सहमति से) अवधारित किया गया : मैं आम तौर पर माननीय मुख्य न्यायाधीश और भाई न्यायमूर्ति गवई की राय में दिए गए कारणों और निष्कर्षों से सहमत हूँ, विशेष रूप से ई.वी. चिन्नैया मामले में दिया गया निर्णय, कि अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण अस्वीकार्य था, अच्छा कानून नहीं बनाता है और खारिज हो जाता है। [पैरा 1]

(न्यायमूर्ति पंकज मित्तल के अनुसार) (सहमति से) अवधारित किया गया : 1. अनुसूचित जातियों के उप वर्गीकरण के मुद्दे का उत्तर मुख्य न्यायाधीश और मेरे आदरणीय भाई न्यायमूर्ति गवई ने अपनी अलग-अलग राय के माध्यम से उचित रूप से दिया है, जिससे मैं सम्मानपूर्वक सहमत हूँ। [पैरा 9]

2. संविधान में निहित आरक्षण की नीति और इसके विभिन्न संशोधनों पर नए सिरे से विचार करने तथा दलित वर्ग या दलितों या अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/अन्य पिछड़ा वर्ग समुदायों के लोगों की सहायता करने और उनके उत्थान के लिए अन्य तरीकों के विकास की आवश्यकता है— जब तक कोई नई पद्धति विकसित या अपनाई नहीं जाती, तब तक आरक्षण की प्रचलित प्रणाली, किसी वर्ग विशेष रूप से अनुसूचित जाति के उप-वर्गीकरण की अनुमति देने की शक्ति के साथ क्षेत्र पर कब्जा करना जारी रख सकती है, क्योंकि मैं किसी मौजूदा इमारत को गिराने का सुझाव नहीं दूंगा, उसके स्थान पर एक नई इमारत बनाए बिना, जो अधिक उपयोगी साबित हो सकती है। [पैरा 84 (i)]

3. आरक्षण के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण कानून में स्वीकार्य है। [पैरा 85]

(न्यायमूर्ति सतीश चंद्र शर्मा के अनुसार) (सहमति से) अवधारित किया गया : मुझे क्रमशः भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश डॉ. डी.वाई. चंद्रचूड़ और माननीय न्यायमूर्ति बी.आर. गवई द्वारा लिखित स्पष्ट और विस्तृत विचारों को पढ़ने का सौभाग्य मिला है। मैं दोनों मतों से इस हद तक पूरी तरह सहमत हूँ कि अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण की वैधता संवैधानिक रूप से स्वीकार्य मानी गई है। [पैरा 1]

(न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी के अनुसार) (असहमति से) अवधारित किया गया : 1. जब संविधान पीठ ने ई.वी. चिन्नैया मामले में इंद्रा साहनी सहित सभी पिछले निर्णयों पर विचार करने और पर्याप्त न्यायिक समय और संसाधनों का निवेश करने के बाद कानून तय किया था, तो देविंदर सिंह मामले में तीन न्यायाधीशों की बेंच द्वारा इस पर संदेह नहीं किया जाना चाहिए था और इसे बड़ी बेंच को नहीं भेजा जाना चाहिए था, और वह भी बिना कोई कारण बताए, खासकर पूर्व निर्णयों और न्यायनिर्णय के सुस्थापित सिद्धांतों की अवहेलना करते हुए। [पैरा 79(i)]

2. इंद्रा साहनी मामले में नौ न्यायाधीशों की पीठ और जरनैल सिंह मामले में पांच न्यायाधीशों की पीठ ने अनुच्छेद 341 के संदर्भ में “अनुसूचित जातियों” के उप-वर्गीकरण के मुद्दे पर विचार नहीं किया था, और संविधान के अनुच्छेद 341 के तहत “अनुसूचित जातियों” के रूप में निर्दिष्ट जातियों को उप-वर्गीकृत या उप-विभाजित या पुनर्समूहित करने की राज्य की शक्तियों पर तो और भी कम विचार किया था, और इसलिए, यह नहीं माना जा सकता था कि ई.वी. चिन्नैया मामले में निर्धारित कानून इंद्रा साहनी या जरनैल सिंह के अनुरूप नहीं था। [पैरा 79 (viii)]

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

3. अनुच्छेद 142 के तहत सर्वोच्च न्यायालय को प्रदत्त शक्ति का उपयोग विचाराधीन मामले पर लागू मूल कानून को प्रतिस्थापित करने के लिए नहीं किया जा सकता है – अपने व्यापक आयाम के साथ भी, अनुच्छेद 142 का उपयोग उस स्थान पर एक नया भवन बनाने के लिए नहीं किया जा सकता है जहां पहले कोई भवन नहीं था, विषय से संबंधित स्पष्ट वैधानिक प्रावधानों की अनदेखी करके, और इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से कुछ ऐसा हासिल करने के लिए जिसे सीधे तौर पर हासिल नहीं किया जा सकता है – राज्य की कार्यवाही, भले ही वह अच्छी नीयत और सकारात्मक प्रकृति की हो, यदि संविधान के विशिष्ट प्रावधान का उल्लंघन करती है, तो अनुच्छेद 142 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उसे वैध नहीं ठहराया जा सकता। [पैरा 79 (ix)]

4. सकारात्मक कार्यवाही और कानूनी ढांचे, हालांकि दोनों का लक्ष्य अधिक समतापूर्ण समाज बनाना है, लेकिन निष्पक्षता और संवैधानिकता सुनिश्चित करने के लिए उन्हें जटिल कानूनी सिद्धांतों का पालन करना होगा। [पैरा 79(x)]

5. ई.वी. चिन्नैया मामले में पांच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा निर्धारित कानून सही कानून है और इसकी पुष्टि की जानी चाहिए। [पैरा 80]

आरक्षण – क्या इंद्रा साहनी मामले में नौ न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय द्वारा आरक्षण के लिए अनुसूचित जातियों के उप-वर्गीकरण को बाहर रखा गया था या उस पर रोक लगाई गई थी – अवधारित किया गया, नहीं।

(भारत के मुख्य न्यायाधीश डॉ. डी.वाई. चंद्रचूड़ के अनुसार) (स्वयं तथा न्यायमूर्ति मनोज मिश्रा के द्वारा) अवधारित किया गया : इंद्रा साहनी मामले में, इस न्यायालय ने उप-वर्गीकरण के आवेदन को केवल अन्य पिछड़ा वर्ग तक सीमित नहीं किया था – इस न्यायालय ने अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के तहत लाभार्थी वर्गों पर सिद्धांत के लागू होने को बरकरार रखा। [पैरा 205(बी)]

(न्यायमूर्ति बी.आर. गवई के अनुसार) (सहमति से) अवधारित किया गया : इंद्रा साहनी मामले में, 7 विद्वान न्यायाधीशों ने एन.एम. थॉमस में निर्धारित स्थिति की पुष्टि की कि अनुच्छेद 16 का खंड (4) अनुच्छेद 16 के खंड (1) का अपवाद नहीं है, बल्कि यह अनुच्छेद 16(1) में निहित सिद्धांत को स्पष्ट करने का एक सशक्त तरीका है – यह अवधारित किया गया है कि पिछड़े वर्गों को पिछड़े और अधिक पिछड़े वर्गों में वर्गीकृत करना संविधान के तहत स्वीकार्य है – इंद्रा साहनी मामले में कहा गया है कि अनुच्छेद 16(4) के तहत अनुसूचित जातियों को भी 'नागरिकों के पिछड़े वर्ग' में शामिल किया गया है। [पैरा 247, 248]

(न्यायमूर्ति पंकज मिश्रा के अनुसार) (सहमति से) अवधारित किया गया : मुख्य न्यायाधीश ने अपनी राय में स्पष्ट रूप से कहा है कि इंद्रा साहनी मामले में इस न्यायालय का कभी भी उप-वर्गीकरण के आवेदन को केवल अन्य पिछड़े वर्गों तक सीमित करने का इरादा नहीं था – यदि कोई वर्ग एकीकृत नहीं है तो उसे आगे वर्गीकृत किया जा सकता है और किसी वर्ग का ऐसा उप-वर्गीकरण संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं होगा, जब तक कि किसी वर्ग के लोग समान स्थिति में न हों। [पैरा 79]

(न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी के अनुसार) अवधारित किया गया : यद्यपि इंद्रा साहनी ने अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजन के लिए "पिछड़े वर्ग" के दायरे पर विचार करते हुए सामाजिक पिछड़ेपन के संदर्भ में "पिछड़े वर्ग" को परिभाषित करने की मांग की थी, लेकिन इसने विशेष रूप से अनुच्छेद 341/342 के प्रकाश में अनुसूचित

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

जातियों/अनुसूचित जनजातियों के मुद्दे पर विचार नहीं किया, बल्कि इसने अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों को स्पष्ट रूप से विचार के दायरे से बाहर रखा— अनुसूचित जातियां पिछड़े वर्गों में सबसे पिछड़ा वर्ग हैं, और अनुच्छेद 341 के आधार पर उन्हें विशेष दर्जा प्राप्त है, इसलिए “अनुसूचित जाति” के रूप में “पिछड़े वर्ग” को परिभाषित करने का प्रश्न ही नहीं उठता, और संविधान के अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजनों के लिए इंद्रा साहनी मामले में इस पर उचित रूप से विचार नहीं किया गया। [पैरा 70]

आरक्षण — क्या अनुच्छेद 341 के तहत अनुसूचित जातियां एक समरूप वर्ग का गठन करती हैं — (बहुमत के अनुसार) नहीं — भारत का संविधान — अनुच्छेद 341।

(भारत के मुख्य न्यायाधीश डॉ. डी. वाई. चंद्रचूड़ के अनुसार) (स्वयं तथा न्यायमूर्ति मनोज मिश्रा के द्वारा) अवधारित किया गया : 1. चिन्नैया मामले में न्यायमूर्ति संतोष हेगड़े ने कहा कि अनुच्छेद 341 के तहत शक्ति के प्रयोग में राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचित जातियां अपने आप में एक वर्ग बनाती हैं— इस उद्देश्य के लिए, विद्वान न्यायाधीश ने एन.एम. थॉमस मामले में संविधान पीठ की कुछ टिप्पणियों पर अवलम्ब लिया — हालांकि, एन.एम. थॉमस मामले में, प्रवेश परीक्षा में अर्हता प्राप्त करने के लिए अनुसूचित जातियों के सदस्यों को रियायतें प्रदान करने वाले नियमों को चुनौती दी गई थी— न्यायालय के समक्ष एक मुद्दा यह था कि क्या अनुसूचित जातियों के सदस्यों को दी गई रियायत अनुच्छेद 16(2) का उल्लंघन है, क्योंकि यह केवल “जाति” के आधार पर भेदभाव करता है— अनुच्छेद 16(2) द्वारा लगाए गए प्रतिबंध को दूर करने के लिए, विद्वान न्यायाधीशों ने देखा कि अनुसूचित जातियों के पक्ष में सकारात्मक कार्रवाई का प्रावधान किया गया है, जो एक बार अनुच्छेद 341 के तहत शक्ति के प्रयोग में राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचित होने के बाद एक “जाति” नहीं बल्कि एक वर्ग है— राष्ट्रपति की अधिसूचना द्वारा अनुसूचित जाति के रूप में गठित वर्ग में अनेक जातियां शामिल हैं, जिससे एक वर्ग का निर्माण होता है— एन.एम. थॉमस में की गई टिप्पणियां यह बताने के लिए आगे नहीं जाती हैं कि यह एक समरूप वर्ग है जिसे आगे वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है — इसके अतिरिक्त, इस न्यायालय द्वारा एन.एम. थॉमस में अपनाया गया दृष्टिकोण कि अनुसूचित जातियां एक वर्ग हैं क्योंकि वे जातियों के एक समूह का गठन करती हैं, को इंद्रा साहनी में नौ न्यायाधीशों की खंडपीठ के फैसले के संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए, जहां इस न्यायालय ने कहा कि जाति स्वयं एक वर्ग है— इसलिए, चिन्नैया मामले में न्यायमूर्ति हेगड़े द्वारा निकाला गया निष्कर्ष कि एन.एम. थॉमस मामले में की गई उपरोक्त टिप्पणियों के आधार पर अनुसूचित जातियां एक समरूप वर्ग हैं, गलत है। [पैरा 113, 114]

2. अनुच्छेद 341(1) कोई मानी हुई कल्पना नहीं बनाता है — प्रावधान में “माना हुआ” वाक्यांश का उपयोग यह अर्थ लगाने के लिए किया गया है कि राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचित जातियों या समूहों को अनुसूचित जातियों के रूप में “माना जाएगा”— यदि यह स्वीकार भी कर लिया जाए कि संवैधानिक पहचान के निर्माण के लिए इस काल्पनिक कथा का प्रयोग किया गया है, तो इसका एकमात्र तार्किक परिणाम यह होगा कि सूची में शामिल जातियों को वे लाभ प्राप्त होंगे जो संविधान अनुसूचित जातियों को प्रदान करता है— प्रावधान के क्रियान्वयन से एकीकृत समरूप वर्ग का निर्माण नहीं होता है। [पैरा 205(सी)]

3. अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण अनुच्छेद 341(2) का उल्लंघन नहीं करता है क्योंकि जातियों को सूची में शामिल या बाहर नहीं रखा गया है— उप-वर्गीकरण केवल तभी प्रावधान का उल्लंघन करेगा जब

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

अनुसूचित जातियों के कुछ जातियों या समूहों को वर्ग के लिए आरक्षित सभी सीटों पर वरीयता या विशेष लाभ प्रदान किया जाता है। [पैरा 205 (डी)]

(न्यायमूर्ति बी.आर. गवई के अनुसार) (सहमति से) अवधारित किया गया : जमीनी हकीकत से इनकार नहीं किया जा सकता— यहां तक कि अनुसूचित जातियों में भी कुछ श्रेणियां ऐसी हैं, जिन्हें सदियों और पीढ़ियों से अन्य श्रेणियों की तुलना में अधिक अमानवीय व्यवहार सहना पड़ा है— ऐतिहासिक रूप से इन श्रेणियों को जो कठिनाइयां और पिछड़ापन झेलना पड़ा है, वह श्रेणी दर श्रेणी अलग-अलग होगा— इसलिए, केवल इसलिए कि वे एक एकल या संयुक्त राष्ट्रपति सूची का हिस्सा हैं, यह नहीं कहा जा सकता कि वे एक समरूप समूह का हिस्सा हैं। [पैरा 261]

(न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी के अनुसार) (असहमति से) अवधारित किया गया : 1. संवैधानिक प्रावधानों को व्यापक और उदार रूप देते समय, “स्पष्ट अर्थ” या “शाब्दिक” व्याख्या के नियम को ध्यान में रखना होगा, जो कि “प्राथमिक नियम” है। [पैरा 79(ii)]

2. अनुच्छेद 341 के तहत “अनुसूचित जातियों” को निर्दिष्ट करने वाली राष्ट्रपति सूची अधिसूचना के प्रकाशन पर अंतिम रूप ले लेती है, और अधिसूचना में निर्दिष्ट जातियां, मूलवंश या जनजातियाँ, या जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के भीतर के समूह संविधान के प्रयोजनों के लिए उस राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में “अनुसूचित जातियाँ” माने जाते हैं और इस तरह “अनुसूचित जातियों” का विशेष दर्जा प्राप्त करते हैं। [पैरा 79 (iii)]

3. केवल संसद ही कानून द्वारा खंड (1) के तहत अधिसूचित अधिसूचना में निर्दिष्ट “अनुसूचित जातियों” की सूची में किसी जाति, मूलवंश या जनजाति या किसी जाति, मूलवंश या जनजाति के हिस्से या समूह को शामिल या बाहर कर सकती है – खंड (1) के तहत अधिसूचित ऐसी अधिसूचना को राष्ट्रपति द्वारा किसी भी बाद की अधिसूचना जारी करके भी नहीं बदला जा सकता है। [पैरा 79 (iv)]

4. अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति की अधिसूचना के आधार पर “अनुसूचित जातियां” अस्तित्व में आती हैं – हालांकि अनुसूचित जातियों के सदस्य विभिन्न जातियों, नस्लों या जनजातियों से आते हैं, लेकिन वे राष्ट्रपति की अधिसूचना के आधार पर “अनुसूचित जातियों” का विशेष दर्जा प्राप्त करते हैं— संविधान के अनुच्छेद 341 के तहत प्रकाशित राष्ट्रपति के आदेशों के साथ मिलकर “अनुसूचित जाति” नाम की व्युत्पत्ति और विकासवादी इतिहास तथा पृष्ठभूमि, “अनुसूचित जाति” को एक समरूप वर्ग बनाती है, जिसके साथ राज्यों द्वारा छेड़छाड़ नहीं की जा सकती। [पैरा 79(v)]

आरक्षण – क्या राज्य विधायिका के पास अनुच्छेद 15 और 16 के तहत अनुसूचित जातियों के उप वर्गीकरण की शक्ति है – (बहुमत के अनुसार), हाँ – भारत का संविधान – अनुच्छेद 15 और 16।

(भारत के मुख्य न्यायाधीश डॉ. डी.वाई. चंद्रचूड़ के अनुसार) (स्वयं तथा न्यायमूर्ति मनोज मिश्रा के द्वारा) अवधारित किया गया : ऐतिहासिक और अनुभवजन्य साक्ष्य दर्शाते हैं कि अनुसूचित जातियां सामाजिक रूप से विषम वर्ग हैं – इस प्रकार, अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए राज्य अनुसूचित जातियों को आगे वर्गीकृत कर सकता है यदि (क) भेदभाव के लिए एक तर्कसंगत सिद्धांत है; और (ख) तर्कसंगत सिद्धांत का उप-वर्गीकरण के उद्देश्य के साथ संबंध है। [पैरा 205 (ई)]

(न्यायमूर्ति बी.आर. गवई के अनुसार) (सहमति से) अवधारित किया गया :

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

1. राज्य का यह कर्तव्य है कि वह पिछड़े वर्ग के नागरिकों को प्राथमिकता दे, जिनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है— यदि राज्य अपने कर्तव्य का निर्वहन करते समय पाता है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के भीतर कुछ श्रेणियों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है और केवल कुछ श्रेणियों के लोग ही अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित संपूर्ण लाभ का आनंद ले रहे हैं, तो क्या राज्य को ऐसी श्रेणियों के लिए अधिक तरजीही व्यवहार देने के अपने अधिकार से वंचित किया जा सकता है? इसका उत्तर नकारात्मक होगा, क्योंकि यह राष्ट्रपति सूची के साथ छेड़छाड़ नहीं माना जाएगा। [पैरा 258]
2. इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि राज्य, राष्ट्रपति सूची में सूचीबद्ध एक या अधिक श्रेणियों को अनुसूचित जातियों के लिए 100% आरक्षण प्रदान करने का निर्णय लेता है, तथा कुछ श्रेणियों को छोड़ देता है, तो यह उस सूची के साथ छेड़छाड़ हो सकती है, क्योंकि वास्तव में यह उन अनुसूचित जाति श्रेणियों को आरक्षण के लाभ से वंचित करने के समान होगा, जिन्हें सूची से बाहर रखा गया है— वास्तव में, यह संविधान के अनुच्छेद 341 के तहत अधिसूचित राष्ट्रपति सूची से उक्त श्रेणियों को हटाने के समान होगा, जिसका अधिकार विशेष रूप से संसद के पास सुरक्षित है; ऐसा करना स्वीकार्य नहीं होगा। [पैरा 259]
3. तथापि, केवल इसलिए कि अनुसूचित जातियों में अधिक पिछड़े या अपर्याप्त प्रतिनिधित्व वाले लोगों को अधिक तरजीही सुविधा प्रदान की गई है, यह राष्ट्रपति सूची के साथ छेड़छाड़ नहीं होगी— इंद्रा साहनी मामले में 9 न्यायाधीशों की पीठ द्वारा निर्धारित कानून के मद्देनजर यह स्वीकार्य होगा। [पैरा 260]

(न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी के अनुसार) (असहमति से) अवधारित किया गया : 1. राज्यों के पास अनुच्छेद 341 के तहत अधिसूचना में "अनुसूचित जातियों" के रूप में सूचीबद्ध जातियों, नस्लों या जनजातियों को विभाजित/उप-विभाजित/उप-वर्गीकृत या पुनर्समूहित करके किसी विशेष जाति/जातियों को आरक्षण प्रदान करने या अधिमान्य उपचार देने के लिए कानून बनाने की कोई विधायी क्षमता नहीं है। [पैरा 79 (vi)]

2. आरक्षण प्रदान करने की आड़ में या समाज के सबसे कमजोर वर्गों के लिए सकारात्मक कार्रवाई करने के बहाने, राज्य राष्ट्रपति सूची में बदलाव नहीं कर सकता है, न ही संविधान के अनुच्छेद 341 के साथ छेड़छाड़ कर सकता है। [पैरा 79(vii)]

आरक्षण – अनुसूचित जातियों के उप-वर्गीकरण के लिए मानदंड और दायरा – चर्चा की गई।

(भारत के मुख्य न्यायाधीश डॉ. डी.वाई. चंद्रचूड़ के अनुसार) (स्वयं और न्यायमूर्ति मनोज मिश्रा के द्वारा) अवधारित किया गया : 1. आरक्षण खंड का उद्देश्य कुछ "वर्गों" के सार्वजनिक सेवाओं में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व को दूर करना है – अनुच्छेद 16(4) का उद्देश्य उन वर्गों को शामिल करना है जिनका पिछड़ेपन के कारण अपर्याप्त प्रतिनिधित्व किया गया है। [पैरा 165, 166]

2. हालाँकि, प्रतिनिधित्व की पर्याप्तता का निर्धारण केवल संख्यात्मक दृष्टिकोण से किया जाता है, जिसमें पदों के संबंध में प्रतिनिधित्व जैसे कारकों को ध्यान में नहीं रखा जाता है, इससे प्रावधान का उद्देश्य कमजोर हो जाएगा – अनुच्छेद 16(4) का उद्देश्य राज्य की सेवाओं में सभी पदों और ग्रेडों में वर्ग का प्रभावी प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना है— इस प्रावधान का उद्देश्य मौजूदा सामाजिक पदानुक्रम का अनुकरण करना नहीं है, जहां निम्न श्रेणी के पदों पर सामाजिक रूप से पिछड़े लोग काबिज हैं, जबकि पर्यवेक्षी और प्रबंधकीय पदों पर उन्नत वर्ग का कब्जा बना हुआ है— यदि अनुच्छेद 16(4) के उद्देश्य को सही मायनों में प्राप्त करना है, तो प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

का निर्धारण केवल राज्य की सेवाओं में पिछड़े वर्ग के सदस्यों की कुल संख्या के आधार पर नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि विभिन्न पदों पर वर्ग के प्रतिनिधित्व का आकलन करके किया जाना चाहिए। [पैरा 167, 168]

3. चूंकि अनुच्छेद 15(4) और 16(4) का उद्देश्य सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों की अवसर की समानता सुनिश्चित करना है, इसलिए किसी वर्ग (चाहे वह अन्य पिछड़ा वर्ग हो या अनुसूचित जाति या जनजाति) के भीतर उप-वर्गीकरण का मानदंड सामाजिक पिछड़ेपन का सूचक होना चाहिए- वर्गीकरण के लिए मानदंड को पारस्परिक सामाजिक पिछड़ेपन के आधार पर वर्ग को अलग करना चाहिए – पारस्परिक पिछड़ेपन की पहचान समान या भिन्न पहचान के आधार पर की जा सकती है। [पैरा 174]

4. चूंकि राज्य अंतर-पिछड़ेपन को निर्धारित करने के लिए किसी भी मानदंड का उपयोग कर सकता है, इसलिए यह आवश्यक नहीं है कि उप-वर्गीकरण के मानदंड और वर्ग को अन्य वर्गों से अलग करने के लिए उपयोग किए जाने वाले मानदंड समान हों – राज्य अनुसूचित जातियों के भीतर अंतर-सामाजिक पिछड़ेपन की पहचान कैसे करता है? अंतर-पिछड़ेपन की पहचान, अन्य बातों के साथ-साथ, प्रभावी प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता के आधार पर की जा सकती है- हालांकि, यह साबित करना होगा कि किसी जाति के प्रभावी प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता उसके सामाजिक पिछड़ेपन के कारण है – राज्य को यह साबित करना होगा कि अनुसूचित जातियों के बड़े समूह से बना समूह/जाति अधिक वंचित है और उसका प्रतिनिधित्व अपर्याप्त है। [पैरा 175, 177]

5. यद्यपि राज्य उप-वर्गीकरण की प्रक्रिया शुरू कर सकता है, परंतु उसे ऐसा राज्य की सेवाओं में पिछड़ेपन और प्रतिनिधित्व के स्तर से संबंधित मात्रात्मक और प्रमाणित आंकड़ों के आधार पर करना होगा – वह केवल अपनी मर्जी से या राजनीतिक लाभ के लिए कार्य नहीं कर सकता है – राज्य का निर्णय न्यायिक समीक्षा के अधीन है – जब उसके कार्य को अनुच्छेद 226 के तहत या अनुच्छेद 32 के तहत इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी जाती है, तो राज्य को अपने निर्णय के लिए औचित्य और तर्क प्रदान करना होगा – राज्य की कोई भी कार्रवाई स्पष्ट रूप से मनमानी नहीं हो सकती है – यह उप-वर्गीकरण के अंतर्निहित स्पष्ट अंतर पर आधारित होनी चाहिए – उप-वर्गीकरण का आधार प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य से उचित संबंध होना चाहिए। [पैरा 190]

6. यद्यपि प्रत्येक जाति के आधार पर उप-वर्गीकरण स्वीकार्य है, परंतु ऐसी स्थिति कभी नहीं हो सकती कि प्रत्येक जाति के लिए अलग से सीटें आवंटित की जाएं- यद्यपि प्रत्येक जाति एक अलग इकाई है, लेकिन उनमें से प्रत्येक द्वारा झेली जाने वाली सामाजिक पिछड़ापन इतनी अलग नहीं है कि राज्य को प्रत्येक जाति के लिए सीटें आरक्षित करने का अधिकार मिल सके – यदि दो या अधिक वर्गों का सामाजिक पिछड़ापन तुलनीय है, तो उन्हें आरक्षण के प्रयोजनों के लिए एक साथ समूहीकृत किया जाना चाहिए। [पैरा 195]

7. अनुसूचित जातियों के उप-वर्गीकरण का दायरा संक्षेप में इस प्रकार है: (i) उप-वर्गीकरण सहित किसी भी प्रकार की सकारात्मक कार्रवाई का उद्देश्य पिछड़े वर्गों के लिए अवसर की पर्याप्त समानता प्रदान करना है – राज्य, अन्य बातों के साथ-साथ, कुछ जातियों के अपर्याप्त प्रतिनिधित्व के आधार पर उप-वर्गीकरण कर सकता है- हालांकि, राज्य को यह स्थापित करना होगा कि किसी जाति/समूह के प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता उसके पिछड़ेपन के कारण है; (ii) राज्य को “राज्य की सेवाओं” में प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता पर आंकड़े एकत्र करना होगा क्योंकि इसका उपयोग पिछड़ेपन के संकेतक के रूप में किया जाता है; और (iii) संविधान का अनुच्छेद 335 अनुच्छेद 16(1) और 16(4) के तहत शक्ति के प्रयोग पर कोई सीमा नहीं है- बल्कि, यह सार्वजनिक सेवाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावों पर विचार करने की आवश्यकता

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

की पुनःपुष्टि है – प्रशासन की दक्षता को उस तरीके से देखा जाना चाहिए जो अनुच्छेद 16(1) के अनुसार समावेशिता और समानता को बढ़ावा दे। [पैरा 205(एफ)]

(न्यायमूर्ति बी.आर. गवई के अनुसार) (सहमति से) अवधारित किया गया : 1. अनुसूचित जातियों में उप-वर्गीकरण के लिए, राज्य को यह साबित करना होगा कि जिस समूह के लिए अधिक लाभकारी उपचार प्रदान किया जाता है, उसका प्रतिनिधित्व उक्त सूची में अन्य जातियों की तुलना में अपर्याप्त है। [पैरा 296 (iii)]

2. ऐसा करते समय, राज्य को अनुभवजन्य आंकड़ों के आधार पर इसका औचित्य सिद्ध करना होगा कि जिस उप-वर्ग के पक्ष में ऐसा अधिक लाभकारी उपचार प्रदान किया गया है, उसका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है। [पैरा 296 (iv)]

3. हालाँकि, उप-वर्गीकरण का प्रावधान करते समय, राज्य सूची में अन्य जातियों को बाहर करने के लिए किसी उप-वर्ग के पक्ष में अनुसूचित जातियों के लिए उपलब्ध 100% सीटों को आरक्षित करने का हकदार नहीं होगा। [पैरा 296 (v)]

4. ऐसा उप-वर्गीकरण तभी स्वीकार्य होगा जब उप-वर्ग के साथ-साथ बड़े वर्ग के लिए भी आरक्षण हो। [पैरा 296 (vi)]

(न्यायमूर्ति विक्रम नाथ के अनुसार) (सहमति से) अवधारित किया गया : राज्य द्वारा उप-वर्गीकरण से संबंधित किसी भी अभ्यास को अनुभवजन्य आंकड़ों द्वारा समर्थित होना चाहिए। [पैरा 1]

(न्यायमूर्ति सतीश चंद्र शर्मा के अनुसार) (सहमति से) अवधारित किया गया : मैं भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश डॉ. डी.वाई. चंद्रचूड़ और माननीय न्यायमूर्ति बी.आर. गवई द्वारा लिखित राय से पूरी तरह सहमत हूँ, इस हद तक कि राज्य द्वारा उप-वर्गीकरण से जुड़े किसी भी अभ्यास को अनुभवजन्य आंकड़ों द्वारा समर्थित होना चाहिए, जो उस उप-समूह की अधिक 'वंचित' स्थिति को रेखांकित करता है, जिसके लिए समग्र रूप से संवैधानिक वर्ग के मुकाबले इस तरह के अधिमान्य उपचार प्रदान करने की मांग की जाती है। [पैरा 1]

आरक्षण – अनुसूचित जातियों पर क्रीमी लेयर सिद्धांत की प्रयोज्यता – चर्चा की गई।

(न्यायमूर्ति बी.आर. गवई के अनुसार) अवधारित किया गया : 1. यह ध्यान में रखते हुए कि संविधान स्वयं अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को समाज का सबसे पिछड़ा वर्ग मानता है, इस श्रेणी से संबंधित व्यक्ति के सकारात्मक कार्रवाई से बहिष्कार के मापदंड वही नहीं हो सकते जो अन्य वर्गों पर लागू होते हैं – यदि ऐसी श्रेणी का कोई व्यक्ति आरक्षण का लाभ प्राप्त करके चपरासी या सफाई कर्मचारी का पद प्राप्त कर लेता है, तो भी वह सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग से ही संबंधित रहेगा – साथ ही, इस वर्ग के लोग, जो आरक्षण का लाभ उठाकर जीवन में उच्च स्तर पर पहुंच गए हैं, उन्हें सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा नहीं माना जा सकता, ताकि वे सकारात्मक कार्रवाई का लाभ उठाते रहें – वे पहले ही उस स्थिति में पहुंच चुके हैं जहां उन्हें अपनी इच्छा से विशेष प्रावधानों से बाहर निकल जाना चाहिए और योग्य और जरूरतमंदों को रास्ता देना चाहिए। [पैरा 294]

2. राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों में से भी क्रीमी लेयर की पहचान करने के लिए एक नीति विकसित करनी चाहिए ताकि उन्हें सकारात्मक कार्रवाई के लाभ से बाहर रखा जा सके – केवल इसी से संविधान के तहत वास्तविक समानता प्राप्त की जा सकती है। [पैरा 295]

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

3. एम. नागराज, जरनैल सिंह और दविंदर सिंह का यह निष्कर्ष कि क्रीमी लेयर सिद्धांत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर भी लागू होता है, कानून की सही स्थिति बताता है। [पैरा 296 (vii)]
4. सकारात्मक कार्रवाई के उद्देश्य से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से क्रीमी लेयर को बाहर करने के मानदंड अन्य पिछड़ा वर्गों पर लागू मानदंडों से भिन्न हो सकते हैं। [पैरा 296 (viii)]

अवधारित किया गया (न्यायमूर्ति विक्रम नाथ के अनुसार) (सहमति से): मैं भाई न्यायमूर्ति गवई की राय से सहमत हूँ कि 'क्रीमी लेयर' सिद्धांत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर भी लागू होता है, और सकारात्मक कार्रवाई के उद्देश्य से क्रीमी लेयर को बाहर करने के मानदंड अन्य पिछड़ा वर्गों पर लागू मानदंडों से अलग हो सकते हैं। [पैरा 2]

(न्यायमूर्ति पंकज मित्तल के अनुसार) (सहमति से) अवधारित किया गया : 1. न्यायमूर्ति गवई ने सही निष्कर्ष निकाला है कि राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों में से भी क्रीमी लेयर की पहचान करने की नीति विकसित करनी चाहिए ताकि उन्हें आरक्षण के लाभ से बाहर रखा जा सके। [पैरा 83]

2. संवैधानिक शासन में कोई जाति व्यवस्था नहीं है और देश जातिविहीन समाज की ओर अग्रसर हो चुका है, सिवाय संविधान के तहत सीमित उद्देश्यों के लिए दलित, पिछड़े या अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/अन्य पिछड़ा वर्ग के लोगों को आरक्षण देने के प्रावधान को छोड़कर—इसलिए, उपर्युक्त श्रेणियों के व्यक्तियों की पदोन्नति के लिए कोई भी सुविधा या विशेषाधिकार जाति के अलावा पूरी तरह से अलग मानदंडों पर आधारित होना चाहिए, जो आर्थिक या वित्तीय कारकों, रहने की स्थिति, व्यवसाय और उनके रहने के स्थान (शहरी या ग्रामीण) के आधार पर उनमें से प्रत्येक को उपलब्ध सुविधाओं पर आधारित हो सकता है। [पैरा 84 (ii)]

3. आरक्षण, यदि कोई हो, केवल पहली पीढ़ी या एक पीढ़ी के लिए ही सीमित होना चाहिए और यदि परिवार में किसी भी पीढ़ी ने आरक्षण का लाभ लिया है और उच्च दर्जा प्राप्त किया है, तो आरक्षण का लाभ तार्किक रूप से दूसरी पीढ़ी को उपलब्ध नहीं होगा। [पैरा 84 (iii)]

4. आरक्षण का लाभ लेने के बाद सामान्य वर्ग के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने वाले लोगों के वर्ग को बाहर करने के लिए समय-समय पर प्रयास किया जाना चाहिए। [पैरा 84 (iv)]

(न्यायमूर्ति सतीश चंद्र शर्मा के अनुसार) अवधारित किया गया (सहमति से) : अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए 'क्रीमी लेयर सिद्धांत' की प्रयोज्यता के प्रश्न पर, मैं न्यायमूर्ति गवई द्वारा व्यक्त किए गए दृष्टिकोण से सहमत हूँ, अर्थात् अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बीच वास्तविक समानता की पूर्ण प्राप्ति के लिए, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के रूप में 'क्रीमी लेयर' की पहचान राज्य के लिए एक संवैधानिक अनिवार्यता बन जानी चाहिए। [पैरा 2]

(न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी के अनुसार) अवधारित किया गया (असहमति से): जहाँ तक अनुच्छेद 15(4) और 15(5) का सवाल है, "सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों" से पहले "कोई भी" शब्द का इस्तेमाल और "अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति" से पहले "द" शब्द का इस्तेमाल स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि उक्त प्रावधान "अन्य पिछड़े वर्गों" से संबंधित हैं जो सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े हैं, और यह कि उक्त प्रावधान "अनुसूचित जातियों" और "अनुसूचित जनजातियों" से भी संबंधित हैं, हालाँकि "अनुसूचित जातियों"

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

को अनुच्छेद 341 के तहत अधिसूचित किए जाने के बाद किसी और पहचान की आवश्यकता नहीं है —जैसा कि अशोक कुमार ठाकुर ने सही कहा है, "क्रीमी लेयर" सिद्धांत पिछड़े वर्गों की पहचान करने के मापदंडों में से एक है – "अनुसूचित जातियाँ" पहले से ही अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति सूची में निर्दिष्ट हैं, इसलिए क्रीमी लेयर सिद्धांत को पिछड़े वर्ग के रूप में उनकी पहचान के लिए "अनुसूचित जातियों" पर लागू नहीं किया जा सकता है। [पैरा 71]

उद्धृत वाद

भारत के मुख्य न्यायाधीश डॉ. धनंजय वाई. चंद्रचूड़ के निर्णय में

ईवी चिन्नेया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य [2004] एसयूपीपी 5 एससीआर 972: (2005) 1 एससीसी 394 – खारिज।

केरल राज्य बनाम एनएम थॉमस [1976] 1 एससीआर 906: (1976) 2 एससीसी 310; इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ [1992] अनुपूरक 2 एससीआर 454: (1992) अनुपूरक 3 एससीसी 217 – वर्णित।

त्रिलोकी नाथ बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य [1969] 1 एससीआर 103; यूपी राज्य बनाम प्रदीप टंडन [1975] 2 एससीआर 761: 1975 1 एससीसी 267; अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ (रेलवे) बनाम भारत संघ [1981] 2 एससीआर 185: (1981) 1 एससीसी 246; पंजाब राज्य बनाम दविंदर सिंह [2020] 10 एससीआर 857: (2020) 8 एससीसी 1; जरनैल सिंह बनाम लछमी नारायण गुप्ता [2018] 10 एससीआर 663: (2018) 10 एससीसी 396; भैयालाल बनाम हरिकिशन सिंह [1965] 2 एससीआर 877; महाराष्ट्र राज्य बनाम मिलिंद [2000] पूरक। 5 एससीआर 65 : (2001) 1 एससीसी 4; बीर सिंह बनाम दिल्ली जल बोर्ड [2018] 10 एससीआर 513 : (2018) 10 एससीसी 312; बी. बसवलिंगप्पा बनाम डी. मुनिचिन्नापा [1965] 1 एससीआर 316; श्रीश कुमार चौधरी बनाम त्रिपुरा राज्य [1990] 1 एससीआर 576: 1990 सपोर्ट एससीसी 220; पश्चिम बंगाल राज्य बनाम. अनवर अली सरकार [1952] 1 एससीआर 284: (1952) एआईआर 75; चिरंजीत लाल चौधरी बनाम भारत संघ [1950] 1 एससीआर 869: 1950 एससीसी 833; महाप्रबंधक, दक्षिणी रेलवे बनाम रंगाचारी [1962] 2 एससीआर 586 : एआईआर 1962 एससी 36; सीए राजेंद्र बनाम भारत संघ एआईआर 1968 एससी 507; मद्रास राज्य बनाम चंपकम दोरैराजन [1951] 1 एससीआर 525; बी वेंकटरमण बनाम मद्रास राज्य एआईआर 1951 एससी 229; बालाजी बनाम मैसूर राज्य [1963] अनुपूरक 1 एससीआर 439 : एआईआर 1963 एससी 649; भारत संघ बनाम वीरपाल सिंह चौहान [1995] अनुपूरक 4 एससीआर 158 : (1995) 6 एससीसी 684; अजीत सिंह (द्वितीय) बनाम पंजाब राज्य (1999) आईएनएससी 407; अजीत सिंह (प्रथम) बनाम पंजाब राज्य [1996] 3 एससीआर 125 : (1996) 2 एससीसी 715; एस विनोद कुमार बनाम भारत संघ [1996] अनुपूरक 7 एससीआर 142 : (1996) 6 एससीसी 580; टी देवदासन बनाम भारत संघ [1964] 4 एससीआर 680; एम नागराज बनाम भारत संघ [2006] सप. 7 एससीआर 336 : (2006) 8 एससीसी 212; नील ऑरेलियो नून्स बनाम भारत संघ [2022] 1 एससीआर 970 : (2022) 4 एससीसी 1; बीके पवित्रा (द्वितीय) बनाम कर्नाटक राज्य [2019] 7

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

एससीआर 1086 : (2019) 16 एससीसी 129; जानकी प्रसाद परिमू बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य [1973] 3 एससीआर 236 : (1973) 1 एससीसी 420; श्री राम कृष्ण डालमिया बनाम श्री एसआर टंडोलकर [1959] 1 एससीआर 279 : 1958 एससीसी ऑनलाइन एससी 6; विशेष न्यायालय विधेयक, 1978, इन रे [1979] 2 एससीआर 476 : (1979) 1 एससीसी 380; मूर्ति मैच वर्क्स बनाम सीसीई [1974] 3 एससीआर 121 : (1974) 4 एससीसी 428; दीपक सिब्बल बनाम पंजाब विश्वविद्यालय [1989] 1 एससीआर 689 : (1989) 2 एससीसी 145; बुधन चौधरी बनाम बिहार राज्य [1955] 1 एससीआर 1045; ऑल इंडिया स्टेशन मास्टर्स एंड असिस्टेंट स्टेशन मास्टर्स एसोसिएशन बनाम सेंट्रल रेलवे के जनरल मैनेजर [1960] 2 एससीआर 311 : एआईआर 1960 एससी 384; मोहम्मद शुजात अली बनाम भारत संघ [1975] 1 एससीआर 449 : 1975 3 एससीसी 76; जम्मू और कश्मीर राज्य बनाम त्रिलोकी नाथ खोसा [1974] 1 एससीआर 771: 1974 1 एससीसी 19; रोशन लाल टंडन बनाम भारत संघ [1968] 1 एससीआर 185; कात्यानी सायाल बनाम भारत संघ [1980] 3 एससीआर 139: (1980) 3 एससीसी 245; कर्नल एस अय्यर बनाम वी बालासुब्रमण्यम [1980] 1 एससीआर 1036: 1980 1 एससीसी 634; नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ [2018] 7 एससीआर 379: (2019) 3 एससीसी 345; कंसोलिडेटेड कॉफी लिमिटेड बनाम कॉफी बोर्ड, बेंगलोर [1980] 3 एससीआर 625 : 1980 3 एससीसी 358; भुवलका स्टील इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम भारत संघ [2017] 2 एससीआर 993 : (2017) 5 एससीसी 598; सेंट ऑबिन बनाम अटॉर्नी जनरल 1952 एसी 15; इंडस्ट्रियल सप्लाइ प्राइवेट लिमिटेड बनाम भारत संघ [1981] 1 एससीआर 375 : (1980) 4 एससीसी 341; के. प्रभाकरन बनाम पी. जयरामन [2005] 1 एससीआर 296 : (2005) 1 एससीसी 754; बंगाल इम्युनिटी कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य [1955] 2 एससीआर 603 : (1955) एससीसी ऑनलाइन एससी 2 दिल्ली क्लॉथ एंड जनरल मिल्स कंपनी लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य [1980] 3 एससीआर 1109 : 1976 3 एससीसी 443; पुनित राय बनाम दिनेश चौधरी [2003] सप्प. 2 एससीआर 743 : 2003 8 एससीसी 204; मैरी चंद्र शेखर राव वी. डीन, सेठ जीएस मेडिकल कॉलेज [1990] 2 एससीआर 843: (1990) 3 एससीसी 130; पालघाट जिला थंडन सामुदायिक संरक्षण समिति बनाम केरल राज्य [1993] पूरक। 3 एससीआर 872 : (1994) 1 एससीसी 359; जानकी प्रसाद परिमू बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य [1973] 3 एससीआर 236 : (1973) 1 एससीसी 420; आरके सभरवाल बनाम पंजाब राज्य [1995] 2 एससीआर 35: (1995) 2 एससीसी 745; त्रिलोकी नाथ बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य (I) [1967] 2 एससीआर 265; चित्रलेखा बनाम मैसूर राज्य. एआईआर 1964 एससी 1823; पी राजेंद्रन बनाम मद्रास राज्य [1968] 2 एससीआर 786; बेरियम केमिकल्स बनाम कंपनी लॉ बोर्ड (1992) सप. 3 एससीसी 217 – **संदर्भित**।

ईस्ट एंड ड्वेलिंग कंपनी लिमिटेड बनाम फिन्सबरी बरो काउंसिल एलआर 1952 एसी 109 – **संदर्भित**।

न्यायमूर्ति बी.आर. गवई के निर्णय

ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य [2004] सप. 5 एससीआर 972: (2005) 1 एससीसी 394;
– अच्छा कानून नहीं धारित किया गया।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

केरल राज्य और अन्य बनाम एन.एम. थॉमस और अन्य [1976] 1 एससीआर 906: (1976) 2 एससीसी 310; इंद्रा साहनी और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य [1992] अनुपूरक। 2 एससीआर 454: (1992) एसयूपीपी 3 एससीसी 217 – वर्णित।

एम. नागराज और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य [2006] अनुपूरक। 7 एससीआर 336: (2006) 8 एससीसी 212; पंजाब राज्य और अन्य बनाम दर्विंदर सिंह और अन्य [2020] 10 एससीआर 857: (2020) 8 एससीसी 1; जरनैल सिंह व अन्य बनाम लक्ष्मी नारायण गुप्ता व अन्य [2018] 10 एससीआर 663 : (2018) 10 एससीसी 396 – पुष्टि की गई।

पंजाब राज्य व अन्य बनाम दर्विंदर सिंह व अन्य (2020) 8 एससीसी 65; मद्रास राज्य बनाम श्रीमती चंपकम दोराईराजन [1951] 1 एससीआर 525; एम.आर. बालाजी व अन्य बनाम मैसूर राज्य [1963] अनुपूरक 1 एससीआर 439 : 1962 एससीसी ऑनलाइन 147; गुजरात राज्य बनाम श्री अंबिका मिल्स लिमिटेड, अहमदाबाद [1974] 3 एससीआर 760 : (1974) 4 एससीसी 656; परम पावन केशवानंद भारती श्रीपदगलवरु बनाम केरल राज्य [1973] अनुपूरक 1 एससीआर 1 : (1973) 4 एससीसी 225; टी. देवदासन बनाम भारत संघ [1964] 4 एससीआर 680 : एआईआर 1964 एससी 55; अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ (रेलवे) का प्रतिनिधित्व उसके सहायक महासचिव द्वारा एसोसिएशन की ओर से किया गया बनाम भारत संघ और अन्य [1981] 2 एससीआर 185 : (1981) 1 एससीसी 246; के.सी. वसंत कुमार और अन्य बनाम कर्नाटक राज्य [1985] सप. 1 एससीआर 352 : 1985 सप. एससीसी 714; मर्ी चंद्र शेखर राव बनाम डीन, सेठ जी.एस. मेडिकल कॉलेज और अन्य [1990] 2 एससीआर 843 : (1990) 3 एससीसी 130 – संदर्भित।

न्यायमूर्ति पंकज मित्तल के निर्णय में

जे. ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य [2004] अनुपूरक 5 एससीआर 972: (2005) 1 एससीसी 394; इंद्रा साहनी और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य [1992] अनुपूरक 2 एससीआर 454: (1992) अनुपूरक 3 एससीसी 217; मद्रास राज्य बनाम चंपकम दोराईराजन [1951] 1 एससीआर 525: एआईआर (1951) एससी 226; बी. वेंकटरमण बनाम मद्रास राज्य और अन्य एआईआर (1951) एससी 229; एस. विनोद कुमार और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य [1996] अनुपूरक 7 एससीआर 142: (1996) 6 एससीसी 580; यूनियन ऑफ इंडिया बनाम वीरपाल सिंह चौहान [1995] सप. 4 एससीआर 158 : (1995) 6 एससीसी 684; अजीत सिंह जनुजा बनाम पंजाब राज्य [1996] 3 एससीआर 125 : (1996) 2 एससीसी 715; अजीत सिंह (द्वितीय) बनाम पंजाब राज्य (1999) आईएनएससी 546; अशोक कुमार ठाकुर बनाम बिहार राज्य [1995] एसयूपीपी. 3 एससीआर 269 : (1995) 5 एससीसी 403; इंद्रा साहनी (द्वितीय) बनाम यूनियन ऑफ इंडिया [1999] सप. 5 एससीआर 229 : (2000) 1 एससीसी 168; एम. नागराज बनाम यूनियन ऑफ इंडिया [2006] सप. 7 एससीआर 336 : (2006) 8 एससीसी 212; टीएमए पाई फाउंडेशन बनाम कर्नाटक राज्य [2002] सप. 3 एससीआर 587 : (2002) 8 एससीसी 481; इस्लामिक एकेडेमिया एजुकेशन बनाम कर्नाटक राज्य [2003] सप. 2 एससीआर 474 : (2003) 6 एससीसी 697; पी.ए. इनामदार बनाम महाराष्ट्र राज्य [2005] सप. 2 एससीआर 603 : (2005) 6 एससीसी 537; अशोक प्रमति एजुकेशनल एंड कल्चरल ट्रस्ट बनाम भारत संघ [2014] 11 एससीआर 712 : (2014) 8

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

एससीसी 1; राम सिंह बनाम भारत संघ [2015] 5 एससीआर 670 : (2015) 4 एससीसी 697; जनहित अभियान बनाम भारत संघ (ईडब्ल्यूएस आरक्षण) [2022] 14 एससीआर 1 : (2023) 5 एससीसी 1; एम.आर. बालाजी बनाम मैसूर राज्य [1963] अनुपूरक 1 एससीआर 439 : एआईआर 1963 एससी 649; के सी वसंत कुमार एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य (1985) एससीसी अनुपूरक 714; केरल राज्य बनाम एन एम थॉमस [1976] 1 एससीआर 906 : (1976) 2 एससीसी 310; अखिल भारतीय सोषित कर्मचारी संघ बनाम भारत संघ एवं अन्य। [1981] 2 एससीआर 185 : (1981) 1 एससीसी 246; जयश्री लक्ष्मणराव पाटिल बनाम महाराष्ट्र राज्य (2021) 8 एससीसी 1 – संदर्भित।

न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी के निर्णय में

प्रदीप चंद्र परीजा और अन्य बनाम प्रमोद चंद्र पटनायक और अन्य [2001] सप. 5 एससीआर 460: 2002 (1) एससीसी 1; मगनलाल छगनलाल (पी) लिमिटेड बनाम ग्रेटर बॉम्बे नगर निगम और अन्य [1975] 1 एससीआर 1: (1974) 2 एससीसी 402; लेफ्टिनेंट कर्नल खजूर सिंह बनाम भारत संघ और अन्य [1961] 2 एससीआर 828: एआईआर 1961 एससी 532; केशव मिल्स कंपनी लिमिटेड बनाम आयकर आयुक्त, बॉम्बे उत्तर, अहमदाबाद [1965] 2 एससीआर 908: एआईआर 1965 एससी 1636; डॉ. शाह फैसल और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य [2020] 3 एससीआर 1115: (2020) 4 एससीसी 1; जीवीके इंडस्ट्रीज लिमिटेड और अन्य बनाम आयकर अधिकारी और अन्य [2011] 3 एससीआर 366: (2011) 4 एससीसी 36; डॉ. जयश्री लक्ष्मण राव पाटिल बनाम मुख्यमंत्री और अन्य [2021] 15 एससीआर 715: (2021) 8 एससीसी 1; बी. बसवलिंगप्पा बनाम डी. मुनिचिन्नाप्पा और अन्य [1965] 1 एससीआर 316: एआईआर (1965) एससी 1269; भैया लाल बनाम हरिकिशन सिंह [1965] 2 एससीआर 877: एआईआर (1965) एससी 1557; महाराष्ट्र राज्य बनाम मिलिंद और अन्य [2000] एसयूपीपी 5 एससीआर 65: (2001) 1 एससीसी 4; बीर सिंह बनाम दिल्ली जल बोर्ड और अन्य [2018] 10 एससीआर 513: (2018) 10 एससीसी 312; केरल राज्य और अन्य बनाम एन.एम. थॉमस और अन्य [1976] 1 एससीआर 906: (1976) 2 एससीसी 310; अशोक कुमार ठाकुर बनाम भारत संघ और अन्य [2007] 7 एससीआर 63: (2008) 6 एससीसी 1; और सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन बनाम भारत संघ और अन्य [1998] 2 एससीआर 795: (1998) 4 एससीसी 409 – अनुसरण किया गया।

हरियाणा राज्य बनाम रणबीर उर्फ राणा [2006] 3 एससीआर 864: (2006) 5 एससीसी 167; एडीएम जबलपुर बनाम शिवकांत शुक्ला (1976) 8 एससीसी 521; और भारत कोकिंग कोल लिमिटेड बनाम बिहार राज्य और अन्य [1990] 3 एससीआर 744: (1990) 4 एससीसी 557 – अवलम्बित।

ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य [2004] सप्लीमेंट 5 एससीआर 972: (2005) 1 एससीसी 394 – पुष्टिकृत।

इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ और अन्य [1992] सप्लीमेंट 2 एससीआर 454: (1992) सप्लीमेंट 3 एससीसी 217; और जरनैल सिंह बनाम लक्ष्मी नारायण गुप्ता [2018] 10 एससीआर 663: (2018) 10 एससीसी 396 – विशिष्ट।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

के.सी. गजपति नारायण देव बनाम उड़ीसा राज्य [1954] 1 एससीआर 1: (1953) 2 एससीसी 178; एम. नागराज और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य [2006] अनुपूरक 7 एससीआर 336: (2006) 8 एससीसी 212; पंजाब राज्य और अन्य बनाम दर्विंदर सिंह और अन्य (2020) 8 एससीसी 65; पंजाब राज्य और अन्य बनाम दर्विंदर सिंह और अन्य [2020] 10 एससीआर 857: (2020) 8 एससीसी 1 – संदर्भित।
नॉर्दर्न सिक्वोरिटीज कंपनी बनाम यूनाइटेड स्टेट्स (1903) 193 यू.एस. 197 (1903) – संदर्भित।

पुस्तकें एवं ऐतिहासिक निर्णय

भारत के मुख्य न्यायाधीश डॉ. धनंजय वाई. चंद्रचूड़ के निर्णय में

13.12.2010 को डॉ. पीएल पुनिया की अध्यक्षता में आयोजित राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग की तीसरी बैठक; अश्विनी देशपांडे, दोहरा खतरा? पहचान का कलंक और सकारात्मक कार्रवाई, ब्लैक पॉलिटिकल इकोनॉमी 2019 की समीक्षा, खंड 46(1) 38-64; मार्क गैलेंटर, प्रतिस्पर्धा समानता: कानून और भारत में पिछड़ा वर्ग, [ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस (1984)] 130; भारतीय मताधिकार समिति की रिपोर्ट (1932) खंड I, 112; हटन जनगणना रिपोर्ट (1931) 471; श्री एसबी रामबे, श्री सीवाई चिंतामणि, श्री आरआर बाखले द्वारा असहमति का मिनट, मताधिकार समिति की रिपोर्ट, 231; डॉ. अंबेडकर, दलित वर्गों पर टिप्पणी, मताधिकार समिति की रिपोर्ट, 211; एएम शाह, दलित श्रेणी और उसका विभेदीकरण; एएम शाह, अस्पृश्यता, गुजरात में अछूत और सामाजिक परिवर्तन सामाजिक जीवन के आयामों में, डेविड जी मंडेलबाम के सम्मान में निबंध (पॉल हॉकिंग्स द्वारा संपादित); रॉबर्ट एफ कैनेडी, न्याय और मानवाधिकार केंद्र, अस्पृश्यता को समझना: 1589 गांवों में प्रथाओं और स्थितियों का एक व्यापक अध्ययन, 22-33; रविचंद्रन बाथरन, एक अवधारणा की कई चूकें: अनुसूचित जातियों के बीच भेदभाव, आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक, (वॉल्यूम एल 1 नंबर 47, 19 नवंबर, 2016) 1342-1346; उमा रामास्वामी, पिछड़े समूहों के बीच संरक्षण और असमानता, आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक (वॉल्यूम 21 नंबर 9, 9 मार्च 1986); बी शिव राव, भारत के संविधान का निर्माण: चुनिंदा दस्तावेज [खंड II, भारतीय लोक प्रशासन संस्थान] 221; न्यायमूर्ति उषा मिश्रा की उप-वर्गीकरण के मुद्दे की जांच करने के लिए राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट [327] – संदर्भित।

न्यायमूर्ति बी.आर. गवई के निर्णय में

अभिनव चंद्रचूड़, ये सीटें आरक्षित हैं: जाति, कोटा और भारत का संविधान (पेंगुइन रैंडम हाउस इंडिया द्वारा वाइकिंग 2023); बी.आर. अंबेडकर, डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर में 'साउथबोरो समिति के समक्ष साक्ष्य: लेखन और भाषण, संपादक वसंत मून, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय 2019, खंड I, पृष्ठ 255; अनुराग भास्कर, दूरदर्शी अंबेडकर: विचार जिन्होंने भारतीय संवैधानिक प्रवचन को आकार दिया (पेंगुइन रैंडम हाउस द्वारा वाइकिंग 2024); नरेंद्र जाधव, अंबेडकर: भारत की सामाजिक चेतना को जागृत करना। (कोणार्क पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड 2014) – संदर्भित।

न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी के निर्णय में

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

बर्नार्ड श्वार्ट्ज, ए बुक ऑफ लीगल लिस्ट्स: द बेस्ट एंड वर्स्ट इन अमेरिकन लॉ पृ..283 और बेंजामिन कार्डोजो, द नेचर ऑफ ज्यूडिशियल प्रोसेस, (न्यू हेवन: येल यूनिवर्सिटी प्रेस, 13 वां संस्करण 1946)141 – संदर्भित।

न्यायमूर्ति पंकज मिथल के निर्णय में

नानी पालकीवाला, वी, द नेशन: द लॉस्ट डिकेड्स 179 (मेहता पब्लिशिंग हाउस 1995) और स्कंद पुराण खंड 18 पुस्तक VI, नगर कांड, अध्याय 239, श्लोक 31-34 – संदर्भित।

अधिनियमों की सूची

भारत का संविधान; पंजाब अनुसूचित जाति और पिछड़ा वर्ग (सेवाओं में आरक्षण) अधिनियम 2006; तमिलनाडु अरुंधथियार (निजी शैक्षणिक संस्थानों सहित शैक्षणिक संस्थानों में सीटों का विशेष आरक्षण और अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण के भीतर राज्य के अधीन सेवाओं में नियुक्तियाँ या पद) अधिनियम 2009; आंध्र प्रदेश अनुसूचित जाति (आरक्षण का युक्तिकरण) अधिनियम 2000; संविधान (एक सौ दूसरा संशोधन) अधिनियम, 2018; संविधान (सत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम 1995; संविधान (इक्यासीवाँ) संशोधन अधिनियम 2000; संविधान (बयासीवाँ) संशोधन अधिनियम 2000; संविधान (एक सौ पाँचवाँ) संशोधन अधिनियम, 2021; संविधान में पहला संशोधन।

महत्वपूर्ण शब्दों की सूची

संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16 और 341; आरक्षण; अनुसूचित जातियाँ; उप-वर्गीकरण; सकारात्मक कार्रवाई; समरूप या विषम समूहीकरण; काल्पनिक कल्पना का संचालन; उप-वर्गीकरण के दायरे की सीमाएँ; सुबोध विभेद; लाभकारी व्यवहार; मिसाल का सिद्धांत; निर्णायक निर्णय; मूल कानून; पिछड़ा वर्ग; एकीकृत समरूप वर्ग; राष्ट्रपति सूची; ऐतिहासिक और अनुभवजन्य साक्ष्य; सामाजिक रूप से विषम वर्ग; विभेदीकरण के लिए तर्कसंगत सिद्धांत; अधिमान्य व्यवहार; अपर्याप्त प्रतिनिधित्व; उप-वर्गीकरण के लिए मानदंड और दायरा; परस्पर पिछड़ापन; न्यायिक समीक्षा; उचित संबंध; जाति के आधार पर उप-वर्गीकरण; सामाजिक पिछड़ापन; अनुभवजन्य डेटा; अधिक 'वंचित' स्थिति; क्रीमी लेयर सिद्धांत।

निम्न से उद्धृत मामले

सिविल अपलीय/मूल क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या. 2317/2011
पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के दिनांक 29.03.2010 के निर्णय एवं आदेश से, सी.डब्ल्यू.पी. संख्या 18290/2009
के साथ

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

सी.ए. संख्या 6936/2015, सी.ए. संख्या 5597/2010, डब्ल्यू.पी.(सी) संख्या 21/2023, सी.ए.संख्या 5593/2010, एस.एल.पी.(सी) संख्या 30766/2010, एस.एल.पी.(सी) संख्या 8701, 36500-36501/2011, टी.सी.(सी) संख्या 38/2011, टी.पी.(सी) संख्या 464/2015, डब्ल्यू.पी.(सी) संख्या 1477/2015, सी.ए. संख्या 5586, 5598/ 2019 और 5595-5596/2019, सी.ए. संख्या 2324/2010, टी.सी.(सी) संख्या 37/2011, सी.ए. संख्या 5589, 5600 और 5587/2011, एस.एल.पी.(सी) संख्या 5454-5459/2011, सी.ए. संख्या 2318 2011, सी.ए. संख्या 289 2014 और डब्ल्यू.पी.(सी)सं. 562/2022

पक्षकारों के लिए उपस्थिति

पक्षों की ओर से उपस्थित अधिवक्ता आर. वेंकटरमणी, ए.जी., तुषार मेहता, एस.जी., के.एम. नटराज, एसजी, सौरभ मिश्रा, शादान फरासत, एएजी, विवेक जैन, डीएजी, गुरमिंदर सिंह, एडवोकेट जनरल/सीनियर एडवोकेट, कपिल सिब्बल, विजय हंसारिया, एम.एस. गणेश, सलमान खुर्शीद, राकेश खन्ना, अरुण भारद्वाज, मनोज स्वरूप, डॉ. के.एस. चौहान, सलिल सागर, शेखर नफाडे, पी.एस. तेजी, साकेत सिंह, दामा शेषाद्रि नायडू, निदेश गुप्ता, डॉ. मनीष सिंघवी, सिद्धार्थ लूथरा, संजय हेगड़े, कॉलिन गोंसाल्वेस, डॉ. एस. मुरलीधर, ए.डी.एन. राव, वरिष्ठ अधिवक्ता, करण शर्मा, कर्मनबीर सिंह, हर्षित आनंद, अभिषेक बब्बर, मोहित सिवाच, ऋषभ शर्मा, सुश्री ऋषिका जैन, सुश्री प्रिंसी शर्मा, सुश्री मृगांका कुकरेजा, सुश्री नताशा माहेश्वरी, सुश्री देवयानी गुप्ता, सुश्री अपराजिता जामवाल, गौतम भाटिया, निज़ाम पाशा, ऋषभ पारिख, राहुल नारायण, सुश्री आरजू रावत, सुश्री सौश्रिया हवेलिया, सुश्री तन्वी आनंद, सुश्री रूपाली सैमुअल, थॉमस फ्रैंकलिन सीजर, एस गौतमन, वी. पुनीधन, धूलि वेंकट कृष्णा, सेल्वम पी, समीर असलम, समर विजय सिंह, रेशम सिंह, सुश्री रुपा पॉल, एच.एल. चुम्बर, सुश्री सुनीता भारद्वाज, परवीन पॉल, सुश्री वसुन्धरा राणा, राहुल कुमार, सत्येन्द्र कुमार, आनंद कन्नन एन., सुश्री काव्या झावर, सुश्री नंदिनी राय, आर.के. सिंह, श्रीमती नीरज सिंह, कुमार गौरव, पी.एस. भगत सिंह, वी. सुब्रमण्यम, अजय चौधरी, प्रवीण पाठक, राम भदौरिया, रॉबिन खोखर, देवेन्द्र सिंह, के. शेषाचार्य, संचार आनंद, अनंत कुमार वात्स्य, सुश्री पूनम दत्ता, सुश्री यशस्विनी, निखिल हुडा, गजिंदर चौहान, कौशल यादव, कु. लुबना नाज़, नंदलाल कुमार मिश्रा, आदित्य पुष्कल खन्ना, कु. आरुषि जैन, राम किशोर सिंह यादव, सुश्री राम्या खन्ना, सुश्री. विधि जैन, डॉ. सुशील बलवाड़ा, डॉ. रश्मी खन्ना, डॉ. अजय कुमार, डॉ. विकास पहल, सुश्री शिल्पिता, श्रीमती अनिला भारती, अर्जुन रघुवंशी, अर्पित कुमार, रितुल टंडन, डॉ. मोनिका गुसाई, गौरान, अभिषेक शर्मा, श्रुतंजय भारद्वाज, हरिओम यदुवंशी, सुश्री एस. हरिणी, अंकित स्वरूप, रोहित कुमार सिंह, नीलमणि पंत, सुश्री अपूर्वा सिंह, ऋषि भार्गव, सुश्री यक्षी आसवानी, सुश्री राजलक्ष्मी, सुश्री सुप्रिया जुनेजा, अपूर्व कुरूप, शैलेश मडियाल, कनु अग्रवाल, श्रीमती सोनाली जैन, रमन यादव, चितवन सिंघल, कार्तिकेय अग्रवाल, अभिषेक कुमार पांडे, अमरीश कुमार, गुरुमीत सिंह मक्कड़, सुश्री सोनाली जैन, चितवन सिंहल, अनमोल चंदन, सौरभ मिश्रा, मुकेश कुमार मारोरिया, रजत नायर, तडिमल्ला भास्कर गौतम, वत्सल जोशी, भुवन कपूर, कृष्ण कांत दुबे, सुश्री इंदिरा भाकर, शाश्वत परिहार, राजेश सिंह चौहान, विनायक शर्मा, करणबीर सिंह, कु. नूपुर कुमार, अमन नकवी, शादाब अज़हर, अजीत कुमार एक्का, प्रतीक आर. बॉम्बार्डे, आर.एस.एम. कल्कि,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

एस.पी. सिंह, सुनील कुमार, मुरारी लाल, डॉ. के. एलुमलाई, रमेश कुमार, सुमित किशोर, अभिषेक चौहान, भीम किशोर, संदीप मलिक, अजीत कुमार, समर्थ सागर, संकल्प सागर, मिडू जैन, संचित गर्ग, बीरेंद्र कुमार मिश्रा, कु. पूनम अटे, हेमेंद्र, सिराजुद्दीन, बलबीर सिंह सेवक, रिपुदमन सिंह सिधू, एम.एफ. फिलिप, सुश्री पूर्णिमा कृष्णा, सुश्री ऐश्वर्या दाश,

सुश्री फराह हाशमी, करमवीर सिंह यादव, प्रशांत, संजय कुमार विसेन, कुलदीप सिंह कुचलिया, नीलेश सिंह राव, प्रतिभा प्रकाश जनप्रिया नायक, श्रीमती संगीता सिंह, सुश्री सर्वश्री, श्रीमती निरंजना सिंह, सुश्री जपनीत कौर, जी. बालाजी, सुश्री शिवाली चौधरी, सुश्री वृत्ति गुजराल, अननवय, पूर्ण चंदन, संदीप कुमार झा, कुमार वैभव, सुश्री देविना सहगल, सहजन हाशमी, विनीत जॉर्ज, अनस तनवीर, शाहरुख अली, एबाद उर रहमान, सुश्री स्तुति श्रीवास्तव, सुश्री रियाल सूर्यवंशी, अंकित तिवारी, तनय हेगड़े, सत्या मित्रा, सुश्री हेतवी पटेल, पी. वेंकटेशन, बांके बिहारी शर्मा, सुश्री एस. जननी, राहुल गुप्ता, आर.वी. कामेश्वरन, रवि प्रकाश, तुषार बख्शी, शक्ति कांता पटनायक, श्रीमती नरेश बख्शी, राज कुमार गुप्ता, शेखर कुमार, संतोष कृष्णन, एमए कार्तिक, मैत्रेय सुब्रमण्यम, सुश्री पल्लक भगत, गिरीश चौधरी, सुश्री नंदिनी राय, आर.के. सिंह, श्रीमती नीरज सिंह, कुमार गौरव, पी.एस. भगत सिंह, वी. सुब्रमण्यम, अजय चौधरी, प्रवीण पाठक, राम भदौरिया, रॉबिन खोखर, देवेन्द्र सिंह, के. शेषाचार्य, संचार आनंद, अनंत कुमार वात्स्य, सुश्री पूनम दत्ता, सुश्री यशस्विनी, निखिल हुडा, गजिंदर चौहान, कौशल यादव, कु. लुबना नाज, नंदलाल कुमार मिश्रा, आदित्य पुष्कल खन्ना, कु. आरुषि जैन, राम किशोर सिंह यादव, सुश्री राम्या खन्ना, सुश्री. विधि जैन, डॉ. सुशील बलवाड़ा, डॉ. रश्मी खन्ना, डॉ. अजय कुमार, डॉ. विकास पहल, सुश्री शिल्पिता, श्रीमती अनिला भारती, अर्जुन रघुवंशी, अर्पित कुमार, रितुल टंडन, डॉ. मोनिका गुसाई, गौरान, अभिषेक शर्मा, श्रुतंजय भारद्वाज, हरिओम यदुवंशी, सुश्री एस. हरिणी, अंकित स्वरूप, रोहित कुमार सिंह, नीलमणि पंत, सुश्री अपूर्वा सिंह, ऋषि भार्गव, सुश्री यश्वी आसवानी, सुश्री राजलक्ष्मी, सुश्री सुप्रिया जुनेजा, अपूर्व कुरूप, शैलेश मडियाल, कनु अग्रवाल, श्रीमती सोनाली जैन, रमन यादव, चितवन सिंघल, कार्तिकेय अग्रवाल, अभिषेक कुमार पांडे, अमरीश कुमार, गुरुमीत सिंह मक्कड़, सुश्री सोनाली जैन, चितवन सिंहल, अनमोल चंदन, सौरभ मिश्रा, मुकेश कुमार मारोरिया, रजत नायर, तडिमल्ला भास्कर गौतम, वत्सल जोशी, भुवन कपूर, कृष्ण कांत दुबे, सुश्री इंदिरा भाकर, शाश्वत परिहार, राजेश सिंह चौहान, विनायक शर्मा, करणबीर सिंह, कु. नूपुर कुमार, अमन नकवी, शादाब अजहर, अजीत कुमार एक्का, प्रतीक आर. बॉम्बार्डे, आर.एस.एम. कल्कि, एस.पी. सिंह, सुनील कुमार, मुरारी लाल, डॉ. के. एलुमलाई, रमेश कुमार, सुमित किशोर, अभिषेक चौहान, भीम किशोर, संदीप मलिक, अजीत कुमार, समर्थ सागर, संकल्प सागर, मिडू जैन, संचित गर्ग, बीरेंद्र कुमार मिश्रा, कु. पूनम अटे, हेमेंद्र, सिराजुद्दीन, बलबीर सिंह सेवक, रिपुदमन सिंह सिधू, एम.एफ. फिलिप, सुश्री पूर्णिमा कृष्णा, सुश्री ऐश्वर्या दाश, सुश्री फराह हाशमी, करमवीर सिंह यादव, प्रशांत, संजय कुमार विसेन, कुलदीप सिंह कुचलिया, नीलेश सिंह राव, प्रतिभा प्रकाश जनप्रिया नायक, श्रीमती संगीता सिंह, सुश्री सर्वश्री, श्रीमती निरंजना सिंह, सुश्री जपनीत कौर, जी. बालाजी, सुश्री शिवाली चौधरी, सुश्री वृत्ति गुजराल, अननवय, पूर्ण चंदन, संदीप कुमार झा, कुमार वैभव, सुश्री देविना सहगल, सहजन हाशमी, विनीत जॉर्ज, अनस तनवीर, शाहरुख अली, एबाद उर रहमान, सुश्री स्तुति श्रीवास्तव, सुश्री रियाल सूर्यवंशी, अंकित तिवारी, तनय हेगड़े, सत्या मित्रा, सुश्री हेतवी पटेल, पी. वेंकटेशन, बांके बिहारी शर्मा, सुश्री एस. जननी, राहुल गुप्ता, आर.वी. कामेश्वरन, रवि प्रकाश, तुषार बख्शी, शक्ति कांता पटनायक, श्रीमती नरेश बख्शी, राज कुमार गुप्ता, शेखर

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

कुमार, संतोष कृष्णन, एमए कार्तिक, मैत्रेय सुब्रमण्यम, सुश्री पल्लक भगत, गिरीश चौधरी, सुश्री दीपशिखा सनसनवाल, सुश्री वसुन्धरा राणा, राकेश दहिया, बृज भूषण, विशाल प्रसाद, अभय अनिल अंतूरकर, ध्रुव टांक, अनिरुद्ध अवलगांवकर, सुश्री सुरभि कपूर, सुश्री दीपनविता प्रियंका, बी.के. सतीजा, डॉ. विनोद कुमार तिवारी, विश्वनाथन अय्यर, अमन रूप शर्मा, सुश्री शिम्फी शर्मा, प्रमोद तिवारी, विवेक तिवारी, सुश्री ज्योति मेहरा, सुश्री मधुस्मिता बोरा, निशे राजेन शोंकर, सनी चौधरी, प्रतीक भाटिया, आदित्य अनिरुद्ध पांडे, सिद्धार्थ धर्माधिकारी, भरत बागला, सौरव सिंह, आदित्य कृष्णा, सुश्री रावी शर्मा, अजय पाल, डी. कुमानन, शेख एफ कालिया, श्रीमती दीपा। एस, विशाल त्यागी, विश्व पाल सिंह, धवल उनियाल, आशीष पांडे, मुकेश कुमार, श्रीकांत सिंह, आशुतोष भारद्वाज, प्रतीक राय, शुभम् सकसैना, संजीव कौशिक, सुश्री अन्विता द्विवेदी, सुश्री आस्था शर्मा, श्रीकांत नीलप्पा तेरदाल, अभिमन्यु तिवारी, सुश्री एलिजा बार, पुखरामबम रमेश कुमार, करुण शर्मा, सुश्री अनुपमा नगनगोम, सुश्री राजकुमारी दिव्यासन, अविजित मणि त्रिपाठी, सुश्री के. एनाटोली सेमा, सुश्री लिमायिनला जमीर, अमित कुमार सिंह, सुश्री चुबलेम्ला चांग, प्रांग न्यूमाई, समीर अभ्यंकर, सुश्री वाणी वंदना छेत्री, सुश्री निशी संगतानी, सुश्री जिन्निया मेहता, आकाश ठाकुर, वात्सल्य विज्ञान, डॉ. अशोक सिद्धार्थ प्रिय राम सिंह, धर्म दत्त वर्मा, रोहित वर्मा, विवेक सी. सोल्शे, वरुण वी. सोल्शे, अंजनी कुमार झा, पी. वेंकटेशन, रौनक करणपुरिया, परतीक कुमार, जय वाधवा, आकर्ष जैन, अंकित स्वरूप, अन्नम वेंकटेश, पी. सोमा सुंदरम, कृष्ण कुमार, विपिन कुमार जय, राज बहादुर यादव, सुश्री श्रद्धा देशमुख, सुश्री चरण्या लक्ष्मीकुमारन, राहुल जाजू, वीरदासु वंकटा रत्नम, वाई.के. विश्वनाथ, ए. वीरेश कुमार, काशापोगु सुरेश, डॉ. मनोज गोर्केला, सुश्री सीतवत नबी, सुश्री रैना आनंद, वरुण कुमार, मेसर्स. गोर्केला लॉ ऑफिस, एस. प्रभु रामसुब्रमण्यम, ए.मनोज कुमार, के. पारी वेंधन, मै. नूली और नूली, विवेक शर्मा, संजय जैन, रघुनाथ सेतुपति बी, विकल्प मुद्गल, सुश्री ज्योति मेंदीरत्ता, मैसर्स. मुकेश कुमार सिंह एंड कंपनी, श्रवण कुमार करणम, पोडुरी सुरेश कुमार, पूसा मल्लेश, सुश्री प्रणाली तायडे, श्रीमती मेधा सिंह, पी. संतोष कुमार, सुश्री शिरीष त्यागी, श्रीमती बी.रेणुका देवी, श्रीमती ममता रत्ना, वी.के. बीजू, अनिरुद्ध पुरुषोत्तम, अभय प्रताप सिंह, श्रीमती रिया सच्चे, चेतन्य सिंह, शाजी जॉर्ज, डॉ. रणजीत भारती, मयंक पांडे, सुश्री वियाजी लक्ष्मी, श्रीमती रूबीना जावेद, अमलेंदु कुमार अखिलेश कुमार झा, श्रीमती रेखा पांडे, नितिन मेश्राम, आशुतोष दुबे, सलाहकार।

व्यक्तिगत रूप से आवेदक।

उच्चतम न्यायालय के निर्णय/आदेश

निर्णय

भारत के मुख्य न्यायधीश डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़

- A पृष्ठभूमि -
- i. प्रासंगिक संवैधानिक प्रावधान -

ii. संविधान पीठ को संदर्भ की उत्पत्ति -

iii. चिन्त्रेया में निर्णय -

iv. संदर्भ -
- B. प्रस्तुतियाँ -

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

i. याचिकाकर्ताओं की प्रस्तुतियाँ	-
ii. प्रतिवादियों की प्रस्तुतियाँ	-
C. मुद्दे	-
D. विश्लेषण	-
i. आरक्षण पर न्यायशास्त्र	-
a. वास्तविक समानता की व्याख्या के रूप में आरक्षण	-
I. समानता के प्रतिस्पर्धी दृष्टिकोण	-
II. आरक्षण की "दक्षता"	-
III. अनुच्छेद 16 और अनुच्छेद 335 का परस्पर संबंध	-
ii. अनुच्छेद 14 के तहत उप-वर्गीकरण की अनुमति	-
a. अनुच्छेद 14 की रूपरेखा	-
b. समानता के एक पहलू के रूप में उप-वर्गीकरण	-
c. सूक्ष्म वर्गीकरण: उप-वर्गीकरण की सीमाएँ	-
iii. आरक्षण में उप-वर्गीकरण: यात्रा का पता लगाना	
बालाजी, वसंत कुमार और इंद्र साहनी	-
a. इंद्र साहनी ने अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण को बाहर नहीं किया...	-
iv. अनुच्छेद 341 में मानी जाने वाली कल्पना का महत्व ...	-
a. अनुच्छेद 341 में मानी जाने वाली कल्पना पर चिन्त्रैया ...	-
b. मानी जाने वाली कल्पना का दायरा ...	-
c. अनुच्छेद 341 कोई मानी जाने वाली कल्पना नहीं बनाता ...	-
d. अनुच्छेद 341(1) को अनुच्छेद 341(2) के साथ पढ़ने पर केवल अनुसूचित जातियों की सूची से बहिष्करण और समावेशन निषिद्ध होता है।...	-
v. अनुसूचित जातियों के भीतर परस्पर पिछड़ेपन के ऐतिहासिक और अनुभवजन्य साक्ष्य ...	-
a. दलित वर्गों की पहचान ...	-
b. विविधता का अनुभवजन्य साक्ष्य	-
vi. अनुच्छेद 15 और 16 के तहत उप-वर्गीकरण करने की राज्य की शक्ति ...	-
vii. उप-वर्गीकरण के लिए मानदंड	-
a. "पिछड़ा वर्ग" का अर्थ	-
b. राज्य की सेवाओं में प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता	-
c. "प्रभावी" प्रतिनिधित्व की आवश्यकता	-
d. उप-वर्गीकरण के लिए मापदंड	-
viii. उप-वर्गीकरण की सीमाएँ	-
a. विशेष प्रावधानों का मॉडल	-
b. जाति-वर्ग की पहेली	-

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु हैं और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

ix. न्यायिक समीक्षा की गुंजाइश -

a. परस्पर पिछड़ापन -

b. प्रतिनिधित्व की पर्याप्तता -

E. निष्कर्ष -

1. इस संविधान पीठ को भेजे गए संदर्भ से संविधान द्वारा गारंटीकृत समान अवसर के अधिकार से संबंधित महत्वपूर्ण प्रश्न उठते हैं। मुख्य मुद्दा यह है कि क्या आरक्षण के लिए अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण संवैधानिक रूप से स्वीकार्य है।

A. पृष्ठभूमि

i. प्रासंगिक संवैधानिक प्रावधान

2. संविधान के अनुच्छेद 14 में यह प्रावधान है कि भारत के राज्य क्षेत्र में किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता या कानूनों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा। अनुच्छेद 15(1) में कहा गया है कि राज्य को किसी भी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर भेदभाव नहीं करना चाहिए। अनुच्छेद 15(4) में प्रावधान है कि अनुच्छेद 15 में कुछ भी राज्य को नागरिकों के किसी भी सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के उत्थान के लिए कोई विशेष प्रावधान करने से नहीं रोकेगा।

3. अनुच्छेद 16 सार्वजनिक रोजगार के मामलों में अवसर की समानता से संबंधित है। अनुच्छेद 16 का खंड (1) राज्य के अधीन किसी भी कार्यालय में रोजगार या नियुक्ति से संबंधित मामलों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता की गारंटी देता है। खंड (2) में कहा गया है कि किसी भी नागरिक के साथ केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, वंश, जन्म स्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर राज्य के अधीन किसी भी रोजगार या कार्यालय के लिए भेदभाव नहीं किया जाएगा या उसे अयोग्य नहीं ठहराया जाएगा। प्रावधान के खंड (4) में कहा गया है कि अनुच्छेद 16 में कुछ भी राज्य को नागरिकों के किसी भी पिछड़े वर्ग के पक्ष में नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए कोई प्रावधान करने से नहीं रोकेगा, जिसका राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है।

4. संविधान के अनुच्छेद 366(24) में अनुसूचित जातियों को ऐसी जातियों, जनजातियों या जातियों, नस्लों या जनजातियों के भागों या समूहों के रूप में परिभाषित किया गया है, जिन्हें संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 341 के तहत अनुसूचित जाति माना जाता है। अनुच्छेद 341(1) राष्ट्रपति को उन जातियों, नस्लों या जनजातियों (या जातियों, नस्लों या जनजातियों के भागों या समूहों) को अधिसूचित करने की शक्ति प्रदान करता है, जिन्हें संविधान के प्रयोजनों के लिए किसी राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के लिए अनुसूचित जाति माना जाएगा। राष्ट्रपति को राज्य के राज्यपाल के परामर्श से किसी राज्य के संबंध में अधिसूचना जारी करने का अधिकार दिया गया है। अनुच्छेद 341(2) में प्रावधान है कि संसद कानून द्वारा किसी जाति, मूलवंश या जनजाति (या किसी जाति, मूलवंश या जनजाति के भाग या समूह) को अधिसूचना में निर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में शामिल या बहिष्कृत कर सकती है और खंड (1) के तहत जारी अधिसूचना में किसी भी बाद की अधिसूचना द्वारा कोई परिवर्तन नहीं किया जाएगा। संदर्भ के लिए अनुच्छेद 341 नीचे उद्धृत है:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

“अनुच्छेद 341. अनुसूचित जातियाँ— (1) राष्ट्रपति किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में, और जहाँ वह राज्य है, वहाँ उसके राज्यपाल से परामर्श के पश्चात, सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा, उन जातियों, मूलवंशों या जनजातियों अथवा जातियों, मूलवंशों, जनजातियों के भागों या समूहों को निर्दिष्ट कर सकेगा, जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए उस राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में, जैसा भी मामला हो, अनुसूचित जातियाँ माना जाएगा।

(2) संसद विधि द्वारा खंड (1) के अधीन जारी अधिसूचना में निर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में किसी जाति, मूलवंश या जनजाति अथवा किसी जाति, मूलवंश या जनजाति के भाग या समूह को शामिल या बहिष्कृत कर सकेगी, किन्तु पूर्वोक्त के सिवाय उक्त खंड के अधीन जारी अधिसूचना में किसी पश्चातवर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा।”

5. अनुच्छेद 342 और 342-ए क्रमशः अनुसूचित जनजातियों और सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों की अधिसूचना से संबंधित हैं और इनमें अनुच्छेद 341 के समरूप प्रावधान हैं।

ii. संविधान पीठ के संदर्भ की उत्पत्ति

6. पंजाब के राज्य विधानमंडल ने पंजाब अनुसूचित जाति और पिछड़ा वर्ग (सेवाओं में आरक्षण) अधिनियम 20065 को अधिनियमित किया। लंबे शीर्षक में यह प्रावधान है कि यह अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों के सदस्यों के लिए सेवाओं में आरक्षण और उससे संबंधित मामलों के लिए प्रावधान करने के लिए एक कानून है। धारा 2 (एफ) "अनुसूचित जातियों" को संविधान के अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति द्वारा संविधान (अनुसूचित जातियाँ) आदेश 1950 द्वारा अधिसूचित अनुसूचित जातियों के रूप में परिभाषित करती है, जैसा कि समय-समय पर संशोधित किया जाता है। धारा 4(2) में प्रावधान है कि सेवाओं में सीधी भर्ती द्वारा रिक्तियों को भरते समय अनुसूचित जातियों के सदस्यों के लिए पच्चीस प्रतिशत और पिछड़े वर्गों के लिए बारह प्रतिशत आरक्षण दिया जाएगा। धारा 4(5) में प्रावधान है कि सीधी भर्ती में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित कोटे की पचास प्रतिशत रिक्तियाँ अनुसूचित जातियों में से प्रथम वरीयता के रूप में बाल्मीकि और मजहबी सिखों को दी जाएंगी।

7. संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत पंजाब अधिनियम की धारा 4(5) की वैधता को चुनौती देने के लिए कार्यवाही शुरू की गई थी। 29 मार्च 2010 के एक फैसले में, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय ने **ईवी चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य** में इस न्यायालय की संविधान पीठ के फैसले पर भरोसा करते हुए धारा 4(5) को असंवैधानिक घोषित किया।

8. उच्च न्यायालय के आदेश के खिलाफ राज्य की अपील का विरोध करते हुए, प्रतिवादियों ने **चिन्नैया (उपरोक्त) के मामले** में संविधान पीठ के फैसले पर भरोसा किया। राज्य ने प्रस्तुत किया कि **चिन्नैया (उपरोक्त) के मामले** हाथ में मौजूद विवाद पर लागू नहीं होता है और यह निर्णय किसी भी स्थिति में, **इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ** में नौ न्यायाधीशों की पीठ के फैसले के अनुरूप नहीं है। 20 अगस्त 2014 को, तीन न्यायाधीशों की पीठ ने **चिन्नैया (उपरोक्त) के मामले** की शुद्धता को एक बड़ी पीठ द्वारा विचार के लिए संदर्भित किया। तीन न्यायाधीशों की पीठ ने कहा कि अनुच्छेद 338, **इंद्रा साहनी (उपरोक्त) के मामले** में इस न्यायालय के फैसले और संविधान के अनुच्छेद 16 और अनुच्छेद 338 और 341 के बीच अंतर्सम्बन्ध को ध्यान में रखते हुए फैसले पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

9. 9 नवंबर 1994 को हरियाणा सरकार ने एक अधिसूचना जारी की जिसके तहत आरक्षण के उद्देश्य से राज्य में अनुसूचित जातियों को दो श्रेणियों – ब्लॉक ए और बी में वर्गीकृत किया गया। ब्लॉक बी में चमार, जटिया चमार, रहगर, रैगर, रामदासिया या रविदासिया शामिल थे। ब्लॉक ए में राज्य की अनुसूचित जातियों की सूची में शेष छत्तीस जातियां शामिल थीं। सरकारी नौकरियों के लिए सीधी भर्ती में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित कोटे में से पचास प्रतिशत रिक्तियां ब्लॉक ए के उम्मीदवारों को और शेष पचास प्रतिशत ब्लॉक बी के उम्मीदवारों को दी जानी थीं। अधिसूचना में आगे यह भी निर्धारित किया गया था कि यदि ब्लॉक ए से उपयुक्त उम्मीदवार उपलब्ध नहीं हैं, तो उन रिक्तियों के विरुद्ध ब्लॉक बी के उम्मीदवारों की भर्ती की जानी चाहिए। इसी प्रकार, यदि ब्लॉक बी से उपयुक्त उम्मीदवार उपलब्ध नहीं हैं, तो उन रिक्तियों के विरुद्ध ब्लॉक ए के उम्मीदवारों की भर्ती की जानी चाहिए। इस प्रकार, ब्लॉक ए और ब्लॉक बी से संबंधित जातियों को उनके लिए निर्धारित पचास प्रतिशत में वरीयता दी जाएगी। अधिसूचना की संवैधानिक वैधता को चुनौती देने के लिए अनुच्छेद 226 के तहत कार्यवाही शुरू की गई थी। 6 जुलाई 2006 के एक फैसले द्वारा, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय ने इस आधार पर अधिसूचना को रद्द कर दिया कि अनुसूचित जातियों की सूची में रखी गई जातियों का उप-वर्गीकरण **चिन्नैया (उपरोक्त) के मामले** में इस न्यायालय के फैसले के मद्देनजर असंवैधानिक है। पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के फैसले को चुनौती देने वाली विशेष अनुमति याचिकाओं को पंजाब अधिनियम को चुनौती देने वाली अपीलों के साथ जोड़ा गया था।

10. तमिलनाडु राज्य विधानमंडल ने तमिलनाडु अरुंधथियार (निजी शैक्षणिक संस्थानों सहित शैक्षणिक संस्थानों में सीटों का विशेष आरक्षण और अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण के अंतर्गत राज्य के अधीन सेवाओं में नियुक्तियों या पदों का आरक्षण) अधिनियम, 2009 पारित किया। इस कानून के लंबे शीर्षक में कहा गया है कि यह राज्य में निजी शैक्षणिक संस्थानों सहित शैक्षणिक संस्थानों में अरुंधथियार के लिए सीटों का आरक्षण और राज्य के अधीन सेवाओं में नियुक्ति प्रदान करने के लिए एक अधिनियम है। तमिलनाडु अधिनियम में अरुंधथियार का अर्थ राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 341 के तहत अधिसूचित छिहत्तर अनुसूचित जातियों की सूची में से अरुंधथियार, चक्किलियन, मदारी, मदीगा, पगड़ी, थोटी और आदि आंध्र की जातियों से है, जिसे समय-समय पर संशोधित किया जाता है। धारा 3 में प्रावधान है कि शैक्षणिक संस्थानों में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सोलह प्रतिशत सीटें, यदि उपलब्ध हों, समुदाय के सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन को ध्यान में रखते हुए अरुंधथियार को दी जाएंगी। धारा 4 सरकारी पदों पर भर्ती में अरुंधथियार के लिए इसी तरह का प्रावधान करती है। संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत इस न्यायालय के समक्ष तमिलनाडु अधिनियम की संवैधानिक वैधता को चुनौती देने के लिए कार्यवाही शुरू की गई थी, इस आधार पर कि यह **चिन्नैया (उपरोक्त) के मामले** में इस न्यायालय के फैसले का उल्लंघन करता है। तमिलनाडु अधिनियम को चुनौती देने वाले मामलों के समूह को पंजाब अधिनियम को चुनौती देने वाले मामलों के समूह के साथ टैंग किया गया था।

iii. चिन्नैया मामले में फैसला

11. इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों वाली पीठ को आंध्र प्रदेश अनुसूचित जाति (आरक्षण का युक्तिकरण) अधिनियम 2000 की वैधता पर फैसला सुनाने के लिए बुलाया गया था। राज्य सरकार द्वारा गठित रामचंद्रन राजू आयोग की सिफारिशों के बाद यह अधिनियम बनाया गया था। आयोग को राज्य में अनुसूचित जातियों के उन समूहों का पता लगाने का काम सौंपा गया था जो कॉलेज में प्रवेश और राज्य की सार्वजनिक सेवाओं में आरक्षण

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

का लाभ उठाने में विफल रहे थे। आयोग ने शिक्षा और नियुक्ति में आरक्षण के मामलों में राज्य में अनुसूचित जातियों के बीच परस्पर पिछड़ापन पाया। अपने निष्कर्षों को स्वीकार करते हुए – कि आरक्षण के लाभों के वितरण के संबंध में अनुसूचित जातियों के बीच असमानताएँ थीं – राज्य सरकार ने आंध्र प्रदेश अनुसूचित जाति (आरक्षण का युक्तिकरण) अध्यादेश 1999 लागू किया। अध्यादेश को चुनौती देने वाली कार्यवाही लंबित रहने के दौरान, राज्य ने अध्यादेश को बदलने के लिए एक कानून बनाया। धारा 3, जो 'आरक्षण के युक्तिकरण' का प्रावधान करती है, अनुसूचित जातियों के बीच आरक्षण के लाभों को चार समूहों – समूह ए, बी, सी और डी में अलग-अलग प्रतिशत में विभाजित करती है: समूह ए के लिए 1%, समूह बी के लिए 7%, समूह सी के लिए 6% और समूह डी के लिए 1%, जो योग्य उम्मीदवारों की उपलब्धता के अधीन है। आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने अधिनियम को चुनौती देने वाली चुनौतियों को खारिज कर दिया, जिसके कारण अपील हुई, जिसका फैसला इस न्यायालय ने **चित्रैया** (उपरोक्त) के मामले में किया।

12. अपीलकर्ताओं ने तर्क दिया कि राज्य विधानमंडल के पास कानून बनाने के लिए विधायी क्षमता का अभाव है। उन्होंने तर्क दिया कि संविधान के अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति सूची में शामिल होने के बाद, अनुसूचित जातियाँ एक समरूप वर्ग बन जाती हैं, जो आगे उपविभाजन/उपवर्गीकरण के योग्य नहीं होती हैं। उन्होंने तर्क दिया कि इस तरह का वर्गीकरण संविधान के अनुच्छेद 341(2) और अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करते हुए राष्ट्रपति सूची के साथ छेड़छाड़ करने के बराबर है।

13. दूसरी ओर, प्रतिवादी-राज्य ने तर्क दिया कि अनुच्छेद 341 राष्ट्रपति को कुछ जातियों को अनुसूचित जातियों के रूप में पहचानने की अनुमति देता है और केवल संसद ही इस तरह बनाई गई सूची में प्रविष्टियों को शामिल या बाहर कर सकती है। राज्य ने तर्क दिया कि वह अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के तहत शक्तियों का प्रयोग करके आरक्षण के दायरे और सीमा को तय कर सकता है। उन्होंने तर्क दिया कि यह शक्ति अनुच्छेद 341 द्वारा सीमित नहीं थी, जो पूरी तरह से अलग क्षेत्र में काम करती है। राज्य ने आग्रह किया कि 2000 का अधिनियम सकारात्मक कार्रवाई का एक रूप था और इसने अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति सूची से किसी को भी बाहर या शामिल नहीं किया। अनुसूचित जातियों के इस तरह के उप-वर्गीकरण को अनुच्छेद 16(4) के तहत उसी कारण से अनुमेय होने का दावा किया गया था जिस कारण से इस न्यायालय ने इंद्रा साहनी (उपरोक्त) के मामले में माना था कि पिछड़े वर्गों को परस्पर पिछड़ेपन के आधार पर 'अधिक पिछड़े' और 'पिछड़े' में विभाजित किया जा सकता है।

14. इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने न्यायमूर्ति संतोष हेगड़े (स्वयं, न्यायमूर्ति एसएन वरियावा और न्यायमूर्ति बीपी सिंह), न्यायमूर्ति एचके सेमा और न्यायमूर्ति एसबी सिन्हा के माध्यम से बोलते हुए सर्वसम्मति से माना कि आंध्र प्रदेश अधिनियम असंवैधानिक था।

15. न्यायमूर्ति हेगड़े ने जांच की कि क्या आंध्र प्रदेश अधिनियम ने अनुच्छेद 341 के तहत अधिसूचित राष्ट्रपति सूची के साथ छेड़छाड़ की है और माना कि राज्यों के पास प्रशासन की दक्षता बनाए रखने के अलावा अनुसूचित जातियों से निपटने का कोई अधिकार नहीं है। न्यायमूर्ति हेगड़े ने देखा कि संविधान सभा के कुछ सदस्यों ने राज्यों को सूची में हस्तक्षेप करने की शक्ति देने की मांग की थी, लेकिन उस प्रभाव के संशोधन असफल रहे। न्यायमूर्ति हेगड़े की राय का विश्लेषण करने पर, निम्नलिखित सूत्र सामने आते हैं:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

a. अनुसूचित जातियाँ अपने आप में एक वर्ग बनाती हैं, जैसा कि केरल राज्य बनाम एनएम थॉमस में न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर और न्यायमूर्ति फजल अली की राय में स्पष्ट किया गया है;

b. अधिनियम का उद्देश्य राष्ट्रपति सूची में जातियों को विभाजित करना और फिर राज्य में अनुसूचित जातियों के लिए 15% आरक्षण को चार समूहों में वितरित करना था। अधिनियम ने पहली बार आरक्षण प्रदान नहीं किया, बल्कि अनुसूचित जातियों को उप-वर्गीकृत करके उन्हें पुनर्वितरित किया। आरक्षण संवैधानिक जनादेश नहीं है और एक बार जब राज्य अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के तहत कुछ सीटों को आरक्षित करने के दायित्व को पूरा कर लेता है, तो वह उप-वर्गों के बीच आरक्षण का बंटवारा नहीं कर सकता। इस तरह के उप-वर्गीकरण के उद्देश्य के बावजूद, राज्य अनुसूचित जातियों की सूची को विभाजित करने के लिए सातवीं अनुसूची की प्रविष्टि 41, सूची II और प्रविष्टि 25, सूची III के तहत विधायी क्षमता का दावा नहीं कर सकता। विचाराधीन कानून का सार और सार इन प्रविष्टियों से पता नहीं लगाया जा सकता है;

c. अनुसूचित जातियाँ एक वर्ग का गठन करती हैं, और एक वर्गीकरण पहले से ही मौजूद है। मुद्दा यह था कि क्या आरक्षण प्रदान करने के उद्देश्य से इस वर्ग के भीतर एक और वर्गीकरण अनुमेय है। **इंद्रा साहनी (उपरोक्त) के मामले** का तर्क, इस सीमा तक कि यह अन्य पिछड़े वर्गों के उप-वर्गीकरण की अनुमति देता है, अनुसूचित जातियों पर लागू नहीं होता। उप-वर्गीकरण अनुसूचित जातियों के एक 'छोटे अनुपात' को अन्य समूहों पर वरीयता देने के समान था और अनुच्छेद 14, और 14 के मद्देनजर यह अस्वीकार्य होगा।

d. संविधान एक कानूनी कल्पना बनाता है जिसके अनुसार अनुसूचित जातियाँ "एक पूरे वर्ग के रूप में" का गठन करती हैं। राज्य उन्हें उप-विभाजित नहीं कर सकते। इस तरह का उप-वर्गीकरण राष्ट्रपति सूची के साथ छेड़छाड़ करेगा और अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करेगा। यदि आरक्षण का लाभ समान रूप से वितरित नहीं किया जा रहा है, तो उन्हें प्रशिक्षण जैसे अतिरिक्त उपायों द्वारा पूरक किया जा सकता है, जो अनुच्छेद 14 और 15 के विपरीत नहीं होगा। अनुसूचित जातियों के बीच एक और उप-वर्गीकरण उचित नहीं होगा और अनुसूचित जातियों को लाभ देने के लिए एक समान मानदंड अपनाया जाना चाहिए।

16. **न्यायमूर्ति एचके सेमा** ने अपनी सहमति व्यक्त करते हुए कहा कि आरक्षण का उद्देश्य अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को व्यक्तियों के एक समरूप वर्ग के रूप में विशेष सुरक्षा प्रदान करना है। लोगों के इस वर्ग का आगे वर्गीकरण राष्ट्रपति सूची के साथ छेड़छाड़ के बराबर होगा। एक समरूप समूह का यह पुनर्गठन, भेदभाव को उलटने के बराबर होगा और अनुच्छेद 14.22 का उल्लंघन होगा।

17. अपनी सहमति व्यक्त करते हुए, न्यायमूर्ति एसबी सिन्हा ने माना कि **इंद्रा साहनी (उपरोक्त) के मामले**, यह निर्धारित करते समय कि क्या पिछड़े वर्गों को अधिक पिछड़े और पिछड़े वर्गों में विभाजित किया जा सकता है, अनुसूचित जातियों से निपट नहीं रही थी।²³ उस संदर्भ में, न्यायमूर्ति सिन्हा ने कहा:

क. अन्य पिछड़े वर्गों के विपरीत, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को अनुसूचित जातियों और जनजातियों के आदेशों द्वारा एक अलग वर्ग के रूप में माना जाता है;

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

- ख. राज्य अनुसूचित जातियों के बीच अपने वर्गीकरण की तर्कसंगतता स्थापित करने में विफल रहा है;
- ग. रेल्ही समुदाय सबसे पिछड़ा समुदाय था और उसे आरक्षण का शायद ही कोई लाभ मिला हो। दूसरी ओर, आदि आंध्र समुदाय संख्यात्मक रूप से बड़ा था और शैक्षणिक रूप से रेल्ही की तुलना में बेहतर था। इन दोनों समूहों को क्रमशः ग्रुप ए और ग्रुप डी में रखा गया था और प्रत्येक को कुल आरक्षण में समान 1% हिस्सा दिया गया था। इस प्रकार अधिनियम ने स्पष्ट अंतरों के बावजूद, बिना किसी आधार के, उनके साथ गलत तरीके से समान व्यवहार किया;
- घ. अनुच्छेद 14 के तहत सूक्ष्म वर्गीकरण अस्वीकार्य था;
- ई. वर्ग का पिछड़ापन इस वर्ग को एक साथ जोड़े रखने वाली कड़ी है और वर्ग के पिछड़ेपन के आधार पर जो वर्गीकरण उचित है, वह जाति के पिछड़ेपन के आधार पर नहीं हो सकता;
- फ. अनुच्छेद 16(4) को अनुच्छेद 335 के साथ पढ़ा जाना चाहिए और प्रशासन की कार्यकुशलता को समरूप अनुसूचित जातियों में से कुछ जातियों को लाभ पहुंचाने के लिए बलिदान नहीं किया जा सकता; और
- ग. आरक्षण की सीमा नहीं बल्कि उप-वर्गीकरण की वैधता प्रश्नगत थी। इसलिए यह तर्क कि राज्यों के पास आरक्षण की सीमा तय करने का विशेषाधिकार है, अनुपयुक्त था। राज्य निश्चित रूप से आरक्षण की सीमा के बारे में विधायी नीति निर्धारित कर सकता है, लेकिन वह इस आधार पर आरक्षण का लाभ नहीं छीन सकता कि अनुसूचित जातियों के कुछ समूह पदानुक्रम में आगे बढ़ गए हैं।

iv. संदर्भ

18. 27 अगस्त 2020 को **पंजाब राज्य बनाम दर्विंदर सिंह** में, एक संविधान पीठ ने माना कि **चिन्नैया (उपरोक्त) के मामले** में दिए गए फैसले पर सात न्यायाधीशों की एक वृहद पीठ द्वारा पुनर्विचार किए जाने की आवश्यकता है क्योंकि यह मुद्दे से जुड़े महत्वपूर्ण पहलुओं पर विचार करने में विफल रहा। इन पहलुओं को इस प्रकार तैयार किया गया है:

- a. **इंद्रा साहनी (उपरोक्त) के मामले** में इस न्यायालय ने माना कि पिछड़े वर्ग को नागरिकों के 'पिछड़े' और 'अधिक पिछड़े' वर्ग में वर्गीकृत करना संवैधानिक है। अनुच्छेद 341, 342 और 342 ए के प्रावधान समान हैं। ऐसा होने पर, इस न्यायालय को यह विश्लेषण करना होगा कि कैसे इस विपरीत निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि पिछड़े वर्ग के भीतर उप-वर्गीकरण अनुमेय है, लेकिन अनुसूचित जातियों के भीतर नहीं। **इंद्रा साहनी (उपरोक्त) के मामले** में अनुच्छेद 16(4) में "पिछड़े वर्ग" वाक्यांश की व्याख्या सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों दोनों को शामिल करने के लिए की गई थी;
- b. अनुसूचित जातियां समरूप वर्ग नहीं हैं वर्ग के सबसे वंचित लोगों को वरीयता दी जा सकती है, जिनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है। ऐसा उप-वर्गीकरण अवसर की समानता प्रदान करने के लिए किया गया है, ताकि आरक्षण के उद्देश्य को प्राप्त किया जा सके;

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

c. अनुच्छेद 16(4) के तहत राज्य के लिए यह खुला होगा कि वह अनुसूचित जातियों के भीतर कुछ जातियों को आरक्षण का लाभ तर्कसंगत आधार पर दे, यदि उनका प्रतिनिधित्व अपर्याप्त है तो उनके लिए आरक्षित सीटों का उचित कोटा तय करके; और

d. कुछ जातियों को तरजीह दिए जाने से अनुच्छेद 341 के तहत तैयार सूची से अन्य जातियों को बाहर नहीं किया जाएगा। **जरनैल सिंह बनाम लक्ष्मी नारायण गुप्ता** में, इस न्यायालय ने देखा कि आरक्षण का लाभ हासिल करने के लिए अनुसूचित जातियों से "क्रीमी लेयर" को बाहर करना अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति सूची के साथ छेड़छाड़ नहीं करता है। अनुसूचित जातियों की सूची में शामिल सभी जातियों को आरक्षण का लाभ दिया जाता है, भले ही वे उप-वर्गीकृत हों।

B. प्रस्तुतियाँ

19. अधिवक्ताओं की प्रस्तुतियाँ इस मुद्दे तक सीमित थीं कि क्या चिन्नैया (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है क्योंकि उच्च न्यायालय ने माना था कि पंजाब अधिनियम और हरियाणा अधिसूचना केवल इस कारण से असंवैधानिक थी कि वे उपरोक्त फैसले के विपरीत हैं।

i. याचिकाकर्ताओं की प्रस्तुतियाँ

20. पंजाब राज्य के महाधिवक्ता श्री गुरमिंदर सिंह और अतिरिक्त महाधिवक्ता श्री शादान फरासत ने निम्नलिखित प्रस्तुतियाँ कीं:

a. चिन्नैया (उपरोक्त) के मामले में दिए गए फैसले में अनुसूचित जातियों को गलती से अविभाज्य एकात्म/ब्लॉक माना गया है;

b. अधिमान्य व्यवहार वास्तविक समानता को बढ़ावा देता है। चिन्नैया (उपरोक्त) के मामले आरक्षण के उस विचार के विरुद्ध है जो सापेक्ष पिछड़ेपन के आधार पर सुरक्षात्मक भेदभाव को अनिवार्य बनाता है;

c. चिन्नैया (उपरोक्त) के मामले में न्यायमूर्ति एसबी सिन्हा का निर्णय स्वयं विरोधाभासी है। यद्यपि यह अनुसूचित जातियों के बीच अंतर-असमानता को मान्यता देता है, यह इस अंतर को दूर करने के उपाय को असंवैधानिक मानता है। एक बार अंतर-असमानता स्वीकार कर लेने के बाद, वर्ग का उप-वर्गीकरण वास्तविक समानता के अनुसरण में होगा;

d. राज्य के पास उप-वर्गीकरण करने की शक्ति है क्योंकि सीटें आरक्षित करने की सक्षम शक्ति में सहायक और पूरक प्रावधान जैसे कि वरीयताएँ, रियायतें और छूट शामिल हैं;

e. इंद्रा साहनी (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय ने जातियों के बीच आंतरिक अंतर को मान्यता दी है। एक वर्ग के भीतर उप-वर्गीकरण एनएम थॉमस (उपरोक्त) के मामले में न्यायमूर्ति मैथ्यू की राय के अनुरूप है, जिसमें कहा गया था कि वर्ग के भीतर आगे वर्गीकरण संभव है;

f. अनुसूचित जातियाँ एक समरूप समूह नहीं हैं, लेकिन उन्हें भेदभाव की अलग-अलग डिग्री का सामना करना पड़ता है। पिछड़ेपन का पता लगाने के लिए अनुच्छेद 16 (4) के तहत दायित्व का पहला भाग राष्ट्रपति द्वारा और बाद में अनुच्छेद 341 के तहत संसद द्वारा पूरा किया गया है। 'अपर्याप्त प्रतिनिधित्व' के बारे में जांच का दूसरा भाग राज्यों के लिए एक अधिदेश है। यदि अनुसूचित जातियों की

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

सूची को एक अखंड के रूप में माना जाता है, तो यह अनुच्छेद 16 (4) के दूसरे भाग को निरर्थक बना देगा और राज्यों की भूमिका को निरर्थक बना देगा;

g. उप-वर्गीकरण क्रीमी लेयर सिद्धांत से भिन्न है क्योंकि (i) आर्थिक उन्नति अनुसूचित जातियों द्वारा सामना किए जाने वाले सामाजिक भेदभाव को समाप्त नहीं करती है; (ii) जबकि क्रीमी लेयर सामाजिक रूप से उन्नत लोगों को बाहर करता है, उप-वर्गीकरण का उद्देश्य अनुसूचित जातियों के भीतर उन लोगों की पहचान करना है, जो अधिकतम सामाजिक भेदभाव का सामना करते हैं; (iii) उप-वर्गीकरण कुछ जातियों को मुख्यधारा में लाता है और गुणात्मक समावेशन के आधार पर वरीयता बनाता है, जो क्रीमी लेयर के बहिष्कार से अलग है; और (iv) अधिमान्य उपचार अनुसूचित जातियों की सूची के भीतर कुछ जातियों की पहचान करता है, जबकि क्रीमी लेयर बहिष्कार व्यक्तियों पर लागू होता है;

h. अनुसूचित जातियाँ एक बार गणना किए जाने के बाद अपनी पहचान नहीं खोती हैं क्योंकि जाति एक समाजशास्त्रीय वास्तविकता है जबकि सूची में गणना एक कानूनी कल्पना के संचालन के माध्यम से होती है। कुछ समूहों को उनके सापेक्ष नुकसान के कारण उप-वर्गीकरण द्वारा सीमित वरीयता अनुच्छेद 341 के तहत अधिसूचित सूची में अन्य अनुसूचित जातियों को बाहर नहीं करेगी;

i. राज्य विधानमंडलों को सातवीं अनुसूची की सूची II की प्रविष्टि 41 और सूची III की प्रविष्टि 25 के संबंध में कानूनों के प्रयोजनों के लिए वरीयता देने की विधायी क्षमता है; और

j. अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 335 के अधीन नहीं है। अनुच्छेद 335 के तहत 'दक्षता' को समावेशी अर्थ में परिभाषित किया जाना चाहिए।

21. वरिष्ठ अधिवक्ता श्री कपिल सिब्बल ने निम्नलिखित प्रस्तुतियाँ कीं:

a. संविधान उप-वर्गीकरण की अनुमति देता है। अनुच्छेद 366(34) जो अनुसूचित जातियों को परिभाषित करता है, उसमें यह परिकल्पना की गई है कि किसी जाति या समूह के एक हिस्से को भी इसमें शामिल किया जा सकता है;

b. जबकि न्यायमूर्ति मैथ्यू ने **एनएम थॉमस** (उपरोक्त) के मामले में उल्लेख किया कि "वे हिंदू धर्म में कोई जाति नहीं हैं, बल्कि जातियों का मिश्रण हैं...", **चिन्नैया** (उपरोक्त) के मामले में न्यायमूर्ति हेगड़े ने उपरोक्त पैराग्राफ में "वे" को "वहाँ" से बदल दिया और इसके बजाय कहा, "कोई जाति नहीं है..."। यह प्रतिस्थापन **एनएम थॉमस** (उपरोक्त) के मामले में दिए गए उद्धरण के अर्थ को पूरी तरह से बदल देता है, जो यह था कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति जाति पदानुक्रम से बाहर रखे गए समूहों का एक समूह है, न कि अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति समरूप हैं;

c. जब डॉ. बी आर अंबेडकर ने संविधान सभा में कहा कि अनुच्छेद 341 का उद्देश्य सूची को "परेशान" करने वाले "किसी भी तरह के राजनीतिक कारकों को खत्म करना" है, तो वे सूची में शामिल करने और बहिष्कृत करने का उल्लेख कर रहे थे। उपवर्गीकरण का समावेश और बहिष्करण की शक्ति पर कोई असर नहीं पड़ता है। संभावित राजनीतिक छेड़छाड़ अनुसूचित जातियों के बीच अंतर-असमानता को स्वीकार करने और उसे दूर करने की वर्तमान संवैधानिक आवश्यकता को समाप्त नहीं कर सकती है;

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

d. संविधान (102 वां संशोधन) अधिनियम 2018 द्वारा डाला गया संविधान का अनुच्छेद 342A राष्ट्रपति को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों को अधिसूचित करने का अधिकार देता है। यह अनुच्छेद अनुच्छेद 341 और अनुच्छेद 342 के समतुल्य है। अनुसूचित जातियों के लिए उप-वर्गीकरण अनुमेय है क्योंकि **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए उप-वर्गीकरण की अनुमति देता है और अनुच्छेद 342A के समावेश के बाद, वे अनुसूचित जातियों के बराबर हैं; और

e. **चिन्नैया** (उपरोक्त) के मामले राज्य द्वारा एकत्र अनुभवजन्य आंकड़ों के अनुरूप नहीं है। **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले में न्यायमूर्ति रेड्डी के दृष्टिकोण के अनुसार, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के भीतर कई जातियाँ या जनजातियाँ समान रूप से स्थित नहीं हैं।

22. तमिलनाडु राज्य की ओर से उपस्थित वरिष्ठ अधिवक्ता श्री शेखर नफड़े ने प्रस्तुत किया कि:

a. **चिन्नैया** (उपरोक्त) के मामले अनुच्छेद 341 और उपवर्गीकरण के बीच जोड़ने वाली कड़ियाँ प्रदान नहीं करता है। अनुच्छेद 341 का सीधा अर्थ राज्य विधानमंडल की सूचीबद्ध अनुसूचित जातियों को वर्गीकृत करने की शक्ति को सीमित नहीं करता है; और

b. परस्पर पिछड़ेपन के आधार पर वर्गीकरण अनुच्छेद 14 के अनुसार है। यह परस्पर पिछड़ापन व्यक्तियों के बीच नहीं बल्कि अनुसूचित जातियों के समूहों के बीच है। **इंद्रा साहनी**(उपरोक्त) के मामले अनुसूचित जातियों के उप-वर्गीकरण पर लागू होता है।

23. हस्तक्षेपकर्ता मडिगा जन सेवा समिति की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता श्री गोपाल शंकरनारायणन ने कहा कि अनुसूचित जाति या जनजाति जाति नहीं है क्योंकि अनुच्छेद 366(24) में “मान्य” शब्द का प्रयोग किया गया है। अनुच्छेद 16(2) में “केवल” शब्द का प्रयोग किया गया है; इस प्रकार, ऐतिहासिक अस्पृश्यता के कारण पहचानी जाने वाली अनुसूचित जाति अनुच्छेद 15(1) और 16(2) के अंतर्गत “जाति” नहीं है।

24. याचिकाकर्ता मडिगा आरक्षण पोराटा समिति के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री केके वेणुगोपाल ने कहा कि अनुच्छेद 14 न केवल सभी के लिए समान व्यवहार का आदेश देता है बल्कि असमान लोगों के साथ समान व्यवहार करके भेदभाव को भी रोकता है। उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 38(2) उन लोगों को विशेष उपचार का अधिकार देता है जो असमान स्थिति में हैं ताकि उन्हें समान स्तर पर लाया जा सके। अनुच्छेद 341 को अनुच्छेद 38(2) के साथ पढ़ा जाना चाहिए।

25. भारत के अटॉर्नी जनरल श्री आर. वेंकटरमणी ने कहा कि अनुच्छेद 14 से 16 और अनुच्छेद 341 और 342 अलग-अलग क्षेत्रों में काम करते हैं। अनुच्छेद 341 के तहत केवल पदनाम से समरूपता नहीं आती है।

26. भारत के सॉलिसिटर जनरल श्री तुषार मेहता ने कहा कि समानता एक स्थिर अवधारणा नहीं है। यह **चंपकम दोराईराजन** (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय के फैसले से लेकर **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले तक विकसित हुई है। उप-वर्गीकरण सकारात्मक कार्रवाई व्यवस्था को तर्कसंगत बनाने का मुद्दा है।

27. श्री निधेश गुप्ता, वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि पर्याप्त प्रतिनिधित्व राज्य की व्यक्तिपरक संतुष्टि के अंतर्गत आता है, जो पिछड़ेपन और प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता के अधीन है। न्यायालय राज्य की संतुष्टि तक पहुँचने के लिए अंतर्निहित डेटा की जाँच नहीं कर सकते। चूँकि अनुच्छेद 16(4) सामूहिक रूप से “नागरिकों के

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पिछड़े वर्गों" को संदर्भित करता है, इसलिए अनुसूचित जातियाँ पिछड़े वर्गों के बराबर हैं। अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 15(4) और 15(5) से व्यापक प्रावधान है। जबकि अनुच्छेद 15(4), 15(5) "अनुसूचित जातियों के लिए किसी विशेष प्रावधान" का उल्लेख करते हैं, अनुच्छेद 16(4) "नागरिकों के किसी भी पिछड़े वर्ग" का उपयोग करता है। अनुच्छेद 15(4) और 15(5) में लाभार्थी वर्गों को योग्य बनाने के लिए "किसी" शब्द के प्रयोग के विपरीत अनुच्छेद 16(4) में "किसी" का प्रयोग यह दर्शाता है कि अनुच्छेद 16(4) के अंतर्गत अधिक विवेकाधीन शक्ति है।

28. श्री विजय हंसारिया, वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अनुच्छेद 341 के अंतर्गत सूची अपने आप में कोई संवैधानिक प्रावधान नहीं है, बल्कि राष्ट्रपति द्वारा पारित एक कार्यकारी आदेश है जिसे संसद द्वारा संशोधित किया जा सकता है।

29. डॉ. एस मुरलीधर, वरिष्ठ अधिवक्ता, आंध्र प्रदेश राज्य की ओर से उपस्थित हुए, ने प्रस्तुत किया कि राज्य ने **चित्रैया** (उपरोक्त) के मामले में निर्णय के परिणामस्वरूप कोई नया कानून नहीं बनाया है।

30. श्री अरुण भारद्वाज, वरिष्ठ अधिवक्ता, हरियाणा राज्य की ओर से उपस्थित हुए, ने प्रस्तुत किया कि अनुसूचित जातियों के भीतर वंचित समूह हैं और राज्य को उनकी चिंताओं को दूर करने की अनुमति दी जानी चाहिए।

31. चंडीगढ़ के स्थायी अधिवक्ता श्री कनु अग्रवाल ने कहा कि सकारात्मक कार्रवाई को दो चरणों वाली प्रक्रिया के रूप में संक्षेपित किया जा सकता है, जिसमें पहचान (अनुच्छेद 341 और 342) और विस्तार (यानी सकारात्मक कार्रवाई कैसे की जा सकती है) शामिल है।

32. अधिवक्ता सुश्री श्रद्धा देशमुख ने कहा कि अनुसूचित जातियों के असमान सदस्यों के अधिकारों को तब तक एक साथ नहीं रखा जा सकता, जब तक यह सुनिश्चित न हो जाए कि उन्हें उनके प्रतिनिधित्व की कमी के अनुपात में अधिकार प्राप्त हों। इसलिए, अनुसूचित जातियों में कमजोर लोगों के बेहतर प्रतिनिधित्व के लिए उपवर्गीकरण आवश्यक है।

33. श्री दामा शेषाद्रि नायडू, श्री राजेश कुमार खन्ना, श्री सिद्धार्थ लूथरा, वरिष्ठ अधिवक्ता और डॉ विवेक शर्मा, श्री शिवम सिंह और श्री संजय जैन, अन्य याचिकाकर्ताओं और हस्तक्षेपकर्ताओं की ओर से उपस्थित अधिवक्ता ने उपरोक्त प्रस्तुतियाँ स्वीकार की हैं।

ii. प्रतिवादियों की दलीलें

34. वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनोज स्वरूप ने निम्नलिखित दलीलें पेश कीं:

- a. अनुच्छेद 341(1) के तहत राष्ट्रपति द्वारा जारी अधिसूचना द्वारा गठित अनुसूचित जातियाँ अपने आप में एक वर्ग हैं। अनुच्छेद 341(2) का उत्तरार्द्ध यह निर्धारित करता है कि संसद द्वारा अधिनियमित कानून के अलावा सूची में कोई बदलाव की अनुमति नहीं है। राष्ट्रपति की अधिसूचना द्वारा गठित वर्ग में केवल अनुच्छेद 341(2) के तहत संसद द्वारा हस्तक्षेप किया जा सकता है। जैसा कि अनुच्छेद 341 पर संविधान सभा की बहसों से स्पष्ट है, संसद को पूरी तरह से राष्ट्रपति की सूची में बदलाव करने की शक्ति प्राप्त है अन्यथा, कार्यपालिका राजनीतिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए सूची में फेरबदल करेगी;

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

- b. अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचना जारी किए जाने पर, अधिसूचित जातियाँ संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियाँ मानी जाती हैं। अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति सूची में शामिल जातियाँ विषमांगी हैं। हालाँकि, एक बार अधिसूचित होने के बाद, जातियों को काल्पनिक रूप से एकरूपता के कृत्रिम ढाँचे में डाल दिया जाता है;
- c. पंजाब में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित पचास प्रतिशत सीटों में बाल्मीकि सिखों और मजहबियों को तरजीह दिए जाने का आवश्यक प्रभाव यह है कि अन्य अनुसूचित जातियों के व्यक्ति उन सीटों से बाहर हो जाते हैं;
- d. सातवीं अनुसूची की कोई भी प्रविष्टि अनुसूचित जातियों से संबंधित नहीं है। एकमात्र प्रविष्टि जिसके तहत अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण पर एक कानून बनाया जा सकता है, वह सूची I की प्रविष्टि 97 है। इस प्रकार, भले ही अनुसूचित जातियों का उपवर्गीकरण अनुमेय हो, केवल संसद और राज्य विधानमंडल के पास ऐसा कानून बनाने की शक्ति है;
- e. अनुच्छेद 338 के तहत गठित राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग अनुसूचित जातियों के किसी भी नए डेटा सेट या अनुभवों पर विचार कर सकता है और सिफारिशें कर सकता है। हालाँकि, सूची को बदलने की शक्ति पूरी तरह से संसद के पास है;
- f. न्यायालय न्यायिक अभ्यास के माध्यम से राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचित अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों की सूची में किसी भी जाति को शामिल या बाहर नहीं कर सकते हैं⁴⁴;
- g. अनुसूचित जातियों के भीतर वर्गीकरण जाति पर आधारित है जो अनुच्छेद 16(2) के आधार पर अस्वीकार्य है; और
- h. याचिकाकर्ताओं के तर्कों के विपरीत, **चित्रैया** (उपरोक्त) के मामले संविधान के अनुच्छेद 16(4) और 341 के बीच अंतर्सम्बन्ध पर चर्चा करते हैं।

35. वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सलिल सागर ने निम्नलिखित तर्क दिए:

- a. प्रत्यक्ष प्रभाव और परिणाम मानक का उपयोग इस मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए किया जाना चाहिए कि क्या कुछ जातियों को वरीयता देना राष्ट्रपति सूची में छेड़छाड़ करना है। उप-वर्गीकरण, वास्तव में, राष्ट्रपति सूची के दायरे और संचालन को निम्नलिखित तरीके से प्रतिबंधित करता है:
 - i. इसका एक बहिष्करणकारी प्रभाव होता है, जो लागू किए जाने वाले आरक्षण की योजना को बाधित करता है;
 - ii. यह कुछ समुदायों के लिए उपलब्ध आरक्षण के हिस्से को अनुपातहीन रूप से बढ़ाता है और शेष समुदायों के लिए उपलब्ध हिस्से को कम करता है; और
 - iii. जातियों का उप-समूहीकरण अनुच्छेद 341 में कानूनी कल्पना का उल्लंघन करता है जिसके द्वारा संविधान के प्रयोजनों के लिए एक समरूप समूह बनाया जाता है।
- b. **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले में, इस न्यायालय ने माना कि अन्य पिछड़े वर्गों का उप-वर्गीकरण संवैधानिक रूप से वैध है। इस न्यायालय ने आईआर कोएलो बनाम तमिलनाडु राज्य, (2007) 2

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

एससीसी 1 पर भरोसा करते हुए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर समान सिद्धांतों के लागू होने के प्रति आगाह किया; और

c. अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण केवल इसलिए संवैधानिक नहीं माना जा सकता क्योंकि अनुच्छेद 341, 342 और 342-ए समान हैं। अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों द्वारा प्रतिनिधित्व किए जाने वाले वर्ग अलग-अलग हैं। जिन जातियों को अनुसूचित जातियों के रूप में अधिसूचित किया गया है, उनमें समानता की विशेषता है; वे सभी अस्पृश्यता के ऐतिहासिक अन्याय से पीड़ित हैं।

36. वरिष्ठ अधिवक्ता डॉ. केएस चौहान ने निम्नलिखित प्रस्तुतियाँ कीं:

a. **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले में, इस न्यायालय ने माना कि एक जाति अनुच्छेद 16 के तहत आरक्षण के प्रयोजनों के लिए एक वर्ग हो सकती है यदि जाति सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ी है;

b. **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले में न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने कहा कि संविधान का अनुच्छेद 16(4) मुख्य रूप से यह मानता है कि आरक्षण सामाजिक पिछड़ेपन के आधार पर होना चाहिए। अनुसूचित जातियों का कोई और वर्गीकरण नहीं हो सकता क्योंकि राष्ट्रपति द्वारा अनुसूचित जातियों के रूप में अधिसूचित सभी जातियाँ अस्पृश्यता के रूप में सामाजिक पिछड़ेपन की समानता साझा करती हैं।

37. वरिष्ठ अधिवक्ता श्री संजय हेगड़े ने निम्नलिखित प्रस्तुतियाँ कीं:

a. **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले के बाद दिए गए निर्णयों में इस न्यायालय ने यह टिप्पणी की है कि यह अन्य पिछड़े वर्गों तक ही सीमित है;

b. **केरल राज्य बनाम एनएम थॉमस** में इस न्यायालय ने माना कि अनुसूचित जातियाँ अपने आप में एक वर्ग हैं। अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ (रेलवे) बनाम भारत संघ में भी इसी प्रकार की टिप्पणियाँ की गई थीं;

c. अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति द्वारा जारी अधिसूचना को केवल संसद द्वारा बनाए गए कानून द्वारा ही बदला जा सकता है;

d. राज्यों को अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचित सभी जातियों के सदस्यों को लाभ प्रदान करना चाहिए। यदि राज्य सरकार की राय है कि जाति को लाभ प्रदान किए जाने की आवश्यकता नहीं है, तो वह अनुसूचित जातियों की सूची से इसे बाहर करने की सिफारिश कर सकती है; और

e. अनुच्छेद 321 के तहत राष्ट्रपति द्वारा जारी सूची में परिवर्तन करने की शक्ति संसद को प्रदान करने का उद्देश्य राजनीतिक उद्देश्यों के लिए सूची में छेड़छाड़ को रोकना है।

38. अधिवक्ता श्री मल्लेला वेंकट राव ने प्रस्तुत किया कि **चिन्नैया** (उपरोक्त) के मामले में न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा की राय कि अनुसूचित जातियों के भीतर परस्पर पिछड़ेपन को दूर करने के लिए सकारात्मक कार्रवाई के अन्य रूपों को नियोजित किया जाना चाहिए, उचित और संवैधानिक दृष्टिकोण है।

39. डॉ. अंबेडकर अनुसूचित जाति संघ, कर्नाटक की ओर से व्यक्तिगत रूप से उपस्थित याचिकाकर्ता महेंद्र कुमार मित्रा ने प्रस्तुत किया कि न्यायमूर्ति उषा मेहरा समिति की सिफारिश जिसमें अनुच्छेद 341 में खंड (3)

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

को शामिल करने की सिफारिश की गई थी, जो संसद को राज्य से प्राप्त प्रस्ताव पर जातियों को उप-वर्गीकृत करने की शक्ति प्रदान करती है, को राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था।

40. अनुसूचित जाति-जनजाति अधिकारी एवं कर्मचारी संघ, एक सामाजिक कल्याण संघ ने प्रस्तुत किया कि अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण अनुसूचित जातियों को विशेष आरक्षण प्रदान करने के उद्देश्य को पराजित करता है।

41. हरियाणा प्रदेश चमार महासभा की ओर से पेश हुए श्री साकेत सिंह ने दलील दी कि अनुच्छेद 341 में निहित काल्पनिकता अनुसूचित जातियों की एक सामान्य पहचान बनाती है, भले ही सूची में शामिल प्रत्येक जाति की एक विशिष्ट पहचान हो। अधिवक्ता ने आगे दलील दी कि संविधान में स्पष्ट रूप से कुछ जातियों के लिए विशेष उपचार का प्रावधान होगा, जहाँ आवश्यक हो।

42. श्री वेम्बाडी सुब्रमण्यम और श्री वी.के. बीजू अधिवक्ता ने भी इसी तर्ज पर दलीलें पेश कीं।

C. मुद्दे

43. संविधान पीठ को इस बात पर फैसला करना है कि आरक्षण सहित सकारात्मक कार्रवाई प्रदान करने के उद्देश्य से अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण वैध है या नहीं। इस संदर्भ में, विचार के लिए निम्नलिखित मुद्दे उठते हैं:

- a. क्या अनुच्छेद 14, 15 और 16 के तहत आरक्षित वर्ग का उप-वर्गीकरण स्वीकार्य है;
- b. क्या अनुसूचित जातियाँ एक समरूप या विषम समूह बनाती हैं;
- c. क्या अनुच्छेद 341 मान्य कल्पना के संचालन के माध्यम से एक समरूप वर्ग बनाता है; और
- d. क्या उप-वर्गीकरण के दायरे पर कोई सीमाएँ हैं।

D. विश्लेषण

i. आरक्षण पर न्यायशास्त्र

44. आरक्षण से संबंधित न्यायशास्त्र न्यायालयों के अंदर और बाहर दोनों जगह उथल-पुथल से गुजरा है। न्यायशास्त्रीय बहस में दो महत्वपूर्ण मुद्दे हावी रहे हैं – संविधान द्वारा समर्थित समानता के मॉडल की पहचान करना और 'दक्षता' या 'योग्यता' के साथ समानता का परस्पर संबंध। यह महत्वपूर्ण है कि हम भारत में आरक्षण को नियंत्रित करने वाले मूल सिद्धांतों का पता लगाएं, इससे पहले कि हम इस मुद्दे का उत्तर दें कि क्या अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण अनुच्छेद 14, 15 और 16 का उल्लंघन करता है। इससे हम यह विश्लेषण कर पाएंगे कि क्या उप-वर्गीकरण समानता के संवैधानिक वादे को आगे बढ़ाता है।

a. मौलिक समानता की व्याख्या के रूप में आरक्षण

45. अनुच्छेद 16(1) में समान अवसर सिद्धांत का उद्देश्य और अनुच्छेद 16(4) में आरक्षण प्रावधान इस न्यायालय में आरक्षण पर न्यायशास्त्र के केंद्र बिंदु के रूप में उभरा है। समानता के प्रतिस्पर्धी मॉडलों की यात्रा की चर्चा, जिसे न्यायालय ने अपनाया है और वर्षों के दौरान उनका विकास, समानता पर संवैधानिक दृष्टिकोण को समझने के लिए आवश्यक है।

i. समानता के प्रतिस्पर्धी दृष्टिकोण

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

46. संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 16 में स्थिति और अवसर की समानता और सामाजिक न्याय के प्रस्तावना मूल्यों के अनुसरण में समानता संहिता शामिल है। अनुच्छेद 14 समानता को नियंत्रित करने वाले सामान्य सिद्धांतों को निर्धारित करता है, जिसमें यह माना गया है कि “कानून के समक्ष समानता” और “कानून का समान संरक्षण” होना चाहिए। अपने प्रारंभिक वर्षों में, इस न्यायालय ने अनुच्छेद 14 की व्याख्या वर्गीकरण सिद्धांत के लेंस के माध्यम से की, जो इस मान्यता पर आधारित है कि कानून में औपचारिक समानता, जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को उनकी परिस्थितियों के बावजूद समान माना जाता है, वास्तविक समानता में तब्दील नहीं होती है। इस सिद्धांत का अंतर्निहित आधार यह है कि दो व्यक्ति जो समान रूप से स्थित नहीं हैं, उनके साथ समान व्यवहार नहीं किया जा सकता है।

47. अनुच्छेद 15(1) और 16(1) को अनुच्छेद 14.54 में निहित समानता सिद्धांत की व्याख्या के रूप में देखा गया था, लेकिन न्यायालय उचित वर्गीकरण के सिद्धांत और इसकी अंतर्निहित धारणा को लागू करने में संकोच कर रहे थे कि 'सभी व्यक्ति (और सभी परिस्थितियाँ) समान नहीं हैं' आरक्षण के दायरे में। हिचकिचाहट का कारण यह था कि अपनाए गए साधनों (यानी आरक्षण) को अवसर की समानता हासिल करने के लिए प्रासंगिक नहीं समझा गया था जिसे औपचारिक समानता और दक्षता के संदर्भ में परिभाषित किया गया था। मद्रास (अब तमिलनाडु) राज्य में, मेडिकल और इंजीनियरिंग कॉलेजों में सीटें "सांप्रदायिक जीओ" नामक सरकारी आदेश में निर्धारित अनुपात में विभिन्न समूहों के बीच विभाजित की गई थीं। गैर-ब्राह्मण (हिंदू), पिछड़े हिंदू, ब्राह्मण, हरिजन, एंग्लो-इंडियन, ईसाई और मुसलमानों के लिए विशिष्ट अनुपात में सीटें आवंटित की गई थीं।⁵⁶ मद्रास राज्य बनाम चंपकम दोराईराजन में, इस न्यायालय की संविधान पीठ ने उस आधार पर शैक्षणिक संस्थानों में सीटों के आरक्षण को असंवैधानिक और अनुच्छेद 29(2) का उल्लंघन माना था जो यह निर्धारित करता है कि किसी भी नागरिक को केवल धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा या इनमें से किसी के आधार पर राज्य द्वारा संचालित या राज्य निधि से सहायता प्राप्त करने वाले किसी भी शैक्षणिक संस्थान में प्रवेश से वंचित नहीं किया जाएगा। न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 29 में अनुच्छेद 16(4) जैसा कोई अपवाद खंड शामिल नहीं है जो शैक्षणिक संस्थानों में सीटों के आरक्षण की अनुमति देता हो।

48. मद्रास राज्य ने यह भी अधिसूचित किया कि जिला मुंसिफ के पद की रिक्तियां सांप्रदायिक जीओ के आधार पर दायर की जाएंगी संविधान पीठ ने देखा कि अनुच्छेद 16(4) राज्य को सेवाओं में 'पिछड़े वर्गों' के लिए प्रावधान करने की अनुमति देता है यदि राज्य की राय में उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है और केवल हरिजन और पिछड़े हिंदुओं को ही 'पिछड़ा वर्ग' माना जा सकता है। यह देखा गया कि हरिजन और पिछड़े हिंदुओं के लिए आरक्षित सीटों के अलावा अन्य पर प्रवेश से इनकार करना, अनुच्छेद 16(1) और 16(2) का उल्लंघन करते हुए "जाति" के आधार पर भेदभाव होगा।

49. उपर्युक्त निर्णयों ने संवैधानिक प्रावधानों को पढ़ने में एक औपचारिक और आरक्षण-सीमित दृष्टिकोण अपनाया। इस दृष्टिकोण में आरक्षण को अनुच्छेद 15(1) और 16(1) में समान अवसर के सिद्धांत के अपवाद के रूप में देखा गया। इस न्यायालय ने **चंपकम दोराईराजन** (उपरोक्त) के मामले में फैसले से पहले अनुच्छेद 14 में उचित वर्गीकरण के सिद्धांत को मान्यता दी थी। हालांकि, इसने इस सिद्धांत को आरक्षण के दायरे में नहीं बदला। **वेंकटरमण** (उपरोक्त) के मामले में भी, इस न्यायालय ने माना कि सेवाओं में आरक्षण केवल तभी

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

स्वीकार्य है जब संविधान में इसके लिए स्पष्ट प्रावधान है। आरक्षण या किसी अन्य प्रकार की सकारात्मक कार्रवाई को समानता के सिद्धांत के विपरीत माना गया और न कि इसका पुनर्कथन माना गया।

50. संविधान (प्रथम संशोधन) अधिनियम 1951 द्वारा संविधान में संशोधन किया गया था, ताकि अनुच्छेद 15 में खंड (4) को शामिल किया जा सके, ताकि **चंपकम दोराईराजन** (उपरोक्त) के मामले में दिए गए फैसले को पलटा जा सके। अनुच्छेद 15(4) को शामिल किए जाने के बावजूद, समानता संहिता की औपचारिक व्याख्या जारी रही। **बालाजी बनाम मैसूर राज्य** में, इस न्यायालय ने पाया कि अनुच्छेद 15(4) और 16(4) विशेष प्रावधान हैं (या दूसरे शब्दों में, समानता के सिद्धांत का अपवाद) जबकि आरक्षित की जाने वाली कुल सीटों पर पचास प्रतिशत की सीमा निर्धारित की गई है। **एनएम थॉमस बनाम केरल राज्य** में इस न्यायालय ने समानता संहिता की विस्तृत और सारगर्भित व्याख्या की। उस मामले में, केरल राज्य और अधीनस्थ सेवा नियम 1958 के नियम 13AA की संवैधानिक वैधता को चुनौती देने के लिए कार्यवाही शुरू की गई थी, जिसके द्वारा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों के लिए योग्यता मानदंडों में छूट दी गई थी। सात न्यायाधीशों की पीठ के बहुमत ने अनुच्छेद 14 में उचित वर्गीकरण के सिद्धांत को अनुच्छेद 16(1)62 में हस्तक्षेप किया और देखा कि अनुच्छेद 16(4) अवसर की समानता के सिद्धांत का अपवाद नहीं है। न्यायालय की राय में अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) में सिद्धांत को स्पष्ट और स्पष्ट करता है। मुख्य न्यायाधीश रे ने देखा कि अनुच्छेद 16(1) का उल्लंघन नहीं होगा जब नियम "प्रशासन की दक्षता की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के बाद गैर-प्रतिनिधित्व वाले वर्गों के लिए सेवाओं में प्रतिनिधित्व की समानता" सुनिश्चित करता है। मुख्य न्यायाधीश रे की राय दो वैचारिक नींव पर टिकी हुई है। पहला, अनुच्छेद 16(1) का लक्ष्य सेवा की दक्षता बनाए रखते हुए प्रतिनिधित्व की समानता सुनिश्चित करना है; और दूसरा, लाभार्थी गैर-प्रतिनिधित्व वाला वर्ग होना चाहिए। अवसर की समानता को इन दो चेतावनियों के अधीन समान प्रतिनिधित्व की भाषा में तैयार किया गया था। न्यायमूर्ति के के मैथ्यू ने एक अलग दृष्टिकोण अपनाया। विद्वान न्यायाधीश ने समानता प्रावधान के वैचारिक आधार को निम्नलिखित तरीके से तोड़ा:

a. एक मानदंड जो वस्तु (यानी सेवाओं) के आबंटन के लिए प्रासंगिक है, उसे अपनाया जाना चाहिए;

b. यह निर्धारित किया जाना चाहिए कि क्या प्रासंगिक मानदंड किसी निश्चित वर्ग के पूर्व-अपवर्जन की ओर ले जाता है। राज्य को यह पहचानना आवश्यक है कि क्या सभी वर्गों के व्यक्तियों के पास चुने गए मानदंडों को पूरा करने का समान अवसर है; और

ग. यदि प्रासंगिक मानदंड पूर्वगामी बहिष्कार की ओर ले जाता है तो समान अवसर के अधिकार का उल्लंघन होता है। उस स्थिति में, नुकसान की भरपाई के लिए प्रतिपूरक प्रावधान किया जाना चाहिए।

51. न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने अपनी सहमति व्यक्त करते हुए कहा कि जब अनुच्छेद 16(1) की दो व्याख्याएँ उपलब्ध हों, तो प्रशासन में समान भागीदारी और निष्पक्ष प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने वाली व्याख्या को चुना जाना चाहिए।

52. इस प्रकार, पहले चरण के अंत में, यह स्पष्ट किया गया कि संविधान समानता की एक ठोस दृष्टि का समर्थन करता है जहाँ आरक्षण अपवाद नहीं है, बल्कि जैसा कि न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने **एनएम थॉमस** (उपरोक्त) के मामले में कहा है, यह "संवैधानिक रूप से पवित्र" वर्गीकरण का एक उदाहरण है। हालाँकि, न्यायाधीशों ने

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अनुच्छेद 16(1) के उद्देश्य पर अलग-अलग राय दी। जहाँ मुख्य न्यायाधीश रे ने अवसर में समानता को प्रतिनिधित्व और सेवा की दक्षता में समानता के संदर्भ में परिभाषित किया, वहीं न्यायमूर्ति मैथ्यू ने इसे पिछड़े वर्ग के प्रतिनिधित्व में समानता के संदर्भ में परिभाषित किया। इसके अतिरिक्त, मुख्य न्यायाधीश रे ने लाभार्थी वर्ग की पहचान 'अप्रतिनिधित्व' वर्ग के रूप में की, बिना यह बताए कि प्रतिनिधित्व कम है। दूसरी ओर, न्यायमूर्ति मैथ्यू ने लाभार्थी वर्ग की पहचान केवल प्रतिनिधित्व कम होने के आधार पर नहीं, बल्कि प्रतिनिधित्व कम होने के कारण के आधार पर की। यह मतभेद ही था जो एनएम थॉमस के बाद के युग में चर्चा का विषय बना रहा। अगले भाग में, हम आरक्षण नीतियों के दायरे पर मुख्य न्यायाधीश रे द्वारा अनुच्छेद 16 में दक्षता के सिद्धांत को पढ़ने के प्रभाव पर चर्चा करेंगे।

53. समानता के संवैधानिक आदर्श का विस्तृत अध्ययन, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, सकारात्मक कार्रवाई की पूरी क्षमता को साकार करने के लिए पर्याप्त नहीं था। अनुच्छेद 335 के माध्यम से एक बाधा उत्पन्न की गई थी। अनुच्छेद 335 इस बात पर जोर देता है कि राज्य सेवाओं में नियुक्तियों में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावों का निर्णय करते समय प्रशासन की दक्षता बनाए रखेगा। इस न्यायालय ने आरक्षण से संबंधित निम्नलिखित चार महत्वपूर्ण प्रश्नों पर निर्णय करते समय आरक्षण के दायरे को सीमित करने के लिए सेवा की दक्षता पर काफी जोर दिया:

- a. क्या आरक्षण प्रारंभिक नियुक्ति तक सीमित है;
- b. यदि आरक्षण पदोन्नति तक बढ़ाया जा सकता है, तो वरिष्ठता का पता लगाने के लिए किस पद्धति का उपयोग किया जाना चाहिए;
- c. क्या पिछड़े वर्गों के लिए मूल्यांकन के मानक को कम करना अनुच्छेद 16 में समान अवसर सिद्धांत का उल्लंघन करता है; और
- d. आरक्षण के माध्यम से भरी जाने वाली रिक्तियों की गणना करने की अनुमेय पद्धति।

इन चार मुद्दों को नियंत्रित करने वाला केंद्रीय विषय यह था कि क्या आरक्षण के दायरे का विस्तार सेवा की समग्र दक्षता को कमजोर करेगा।

54. **महाप्रबंधक, दक्षिण रेलवे बनाम रंगाचारी** में मुद्दा यह था कि क्या अनुच्छेद 16(4) पदोन्नति में आरक्षण की अनुमति देता है। संविधान पीठ के बहुमत के लिए लिखते हुए, न्यायमूर्ति गजेंद्रगडकर ने कहा कि हालांकि पदोन्नति में आरक्षण "दक्षता" के लिए हानिकारक है, पदोन्नति में आरक्षण को शामिल करने के लिए अनुच्छेद 16(4) को पढ़ने से आगे की समानता होगी:

27. यह सच है कि अनुच्छेद 16(4) के तहत नियुक्तियों या पदों के आरक्षण का प्रावधान करते समय राज्य को प्रशासन की दक्षता बनाए रखने के साथ-साथ पिछड़े वर्गों के सदस्यों के दावों पर भी विचार करना होगा। यह नहीं भूलना चाहिए कि प्रशासन की दक्षता इतनी महत्वपूर्ण है कि प्रशासन की दक्षता की कीमत पर कोई भी आरक्षण देना नासमझी और अनुचित होगा। निस्संदेह यह अनुच्छेद 335 का प्रभाव है। नियुक्तियों या पदों के आरक्षण का सैद्धांतिक और बोधगम्य रूप से दक्षता में कुछ कमी हो सकती है; लेकिन जब कोई राज्य नियुक्तियों या पदों के आरक्षण

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

का प्रावधान करने की तैयारी करता है तो प्रशासन की दक्षता की बलि देने में शामिल जोखिम को हमेशा ध्यान में रखा जाना चाहिए।

(प्रभाव वर्धित)

55. बहुमत और अल्पमत (जिसमें न्यायमूर्ति वांचू और न्यायमूर्ति अयंगर शामिल थे) दोनों इस बात पर सहमत थे कि आरक्षण प्रशासन की दक्षता को कम करता है। अल्पमत से संबंधित विद्वान न्यायाधीश केवल इस बात पर असहमत थे कि आरक्षण और सेवा की दक्षता के बीच संतुलन बनाया जाना चाहिए। न्यायमूर्ति गजेंद्रगडकर ने कहा कि हालांकि पदोन्नति में आरक्षण प्रशासन की दक्षता को कम करेगा, लेकिन आरक्षण का सामाजिक लाभ हानि की लागत को कम कर देगा। न्यायमूर्ति वांचू और न्यायमूर्ति अयंगर असहमत थे। अल्पमत के अनुसार, पदोन्नति में आरक्षण को शामिल करने के लिए अनुच्छेद 16(4) की व्याख्या अनुच्छेद 335 में निर्धारित सिद्धांतों के विपरीत होगी। इसी तरह, **सीए राजेंद्रन बनाम भारत संघ**, में इस न्यायालय ने कहा कि आरक्षण को केवल तृतीय और चतुर्थ श्रेणी के पदों तक सीमित करना उचित था क्योंकि प्रथम और द्वितीय श्रेणी के पदों के लिए उच्च दक्षता वाले उम्मीदवारों की आवश्यकता होती है जो पदोन्नति वाले पदों को आरक्षित करने पर प्राप्त नहीं होगी।

56. **रंगाचारी** (उपरोक्त) के मामले में दिए गए फैसले को **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले में खारिज कर दिया गया। **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले में, इस न्यायालय ने **रंगाचारी** (उपरोक्त) के मामले के अल्पमत के दृष्टिकोण को अपनाया, जिसमें कहा गया कि पदोन्नति में आरक्षण प्रशासन में दक्षता को कम करेगा। संविधान (सत्तरवें संशोधन) अधिनियम 1995 द्वारा, संसद ने संविधान में संशोधन करके अनुच्छेद 16 में खंड (4-ए) को शामिल किया, जिससे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए पदोन्नति में आरक्षण की अनुमति मिली।

57. यह मुद्दा कि क्या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को सामान्य श्रेणी के उम्मीदवारों (जो फीडर श्रेणी में आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवारों से वरिष्ठ थे) से वरिष्ठ माना जाना चाहिए, जब उन्हें बाद की पदोन्नति के लिए विचार किया जा रहा हो, इस न्यायालय के समक्ष उठा। **यूनियन ऑफ इंडिया बनाम वीरपाल सिंह चौहान** में, इस न्यायालय ने माना कि हालांकि कैच-अप नियम अनुच्छेद 16 में निहित नहीं है, यह "दक्षता" बनाए रखने के लिए एक संवैधानिक रूप से वैध अभ्यास है। इसे **अजीत सिंह (I) बनाम पंजाब राज्य** में दोहराया गया था। तीन न्यायाधीशों की पीठ की ओर से लिखते हुए न्यायमूर्ति एनपी सिंह ने कहा कि नियुक्तियों की प्रक्रिया में अनुच्छेद 16(4) और अनुच्छेद 335 दोनों का संतुलन होना चाहिए और "पदोन्नति प्रणाली का मुख्य उद्देश्य उच्च पद के लिए सर्वोत्तम संभव पदाधिकारियों को सुरक्षित करना है"। इसके बाद, संसद ने इस न्यायालय के कई निर्णयों पर काबू पाने के लिए संविधान (85 वां संशोधन) अधिनियम 2001 द्वारा अनुच्छेद 16(4-ए) में संशोधन किया, जहां आरक्षण में परिणामी वरिष्ठता के नियम को विपरीत भेदभाव का परिणाम माना गया था। संविधान (85 वां संशोधन) अधिनियम 2001 द्वारा संशोधित अनुच्छेद 16(4-ए) राज्य को परिणामी वरिष्ठता के साथ पदोन्नति में आरक्षण प्रदान करने में सक्षम बनाता है।

58. **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले में, न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने चार न्यायाधीशों की ओर से लिखते हुए कहा कि पदोन्नति में अर्हक अंकों में छूट से प्रशासन की अक्षमता होगी **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले और **विनोद कुमार** (उपरोक्त) के मामले में दिए गए फैसले के इस पहलू को दूर करने के लिए संविधान (बयासी) संशोधन

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अधिनियम 2000 द्वारा अनुच्छेद 335 में एक प्रावधान जोड़ा गया था। प्रावधान में प्रावधान है कि अनुच्छेद 335 राज्य को पदोन्नति में आरक्षण के लिए किसी भी परीक्षा में अर्हक अंकों में छूट देने से नहीं रोकता है।

59. आरक्षण के अनुमेय कुल प्रतिशत की गणना करने की विधि एक और मुद्दा था जिसमें आरक्षण के दायरे को सीमित करने के लिए "प्रशासन की दक्षता" का उपयोग किया गया था। इस न्यायालय ने **बालाजी** (उपरोक्त) के मामले और **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले में माना था कि आरक्षण 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। राज्य को एक अजीबोगरीब स्थिति का सामना करना पड़ा, जहां आरक्षित वर्ग के पर्याप्त संख्या में व्यक्ति उनके लिए आरक्षित सीटों को भरने के लिए उपलब्ध नहीं थे। मुद्दा यह था कि क्या आरक्षित श्रेणी की खाली सीटों को अगले साल के लिए आगे बढ़ाया जा सकता है और क्या उस साल आरक्षित सीटों के कुल प्रतिशत की गणना करते समय आगे बढ़ाई गई रिक्तियों को गिना जा सकता है।

60. टी देवदासन बनाम भारत संघ में, बहुमत ने माना कि आरक्षित श्रेणी की खाली सीटों को अगले साल के लिए आगे ले जाने से समान अवसर का सिद्धांत समाप्त हो जाएगा और कार्यकुशलता कम हो जाएगी। न्यायमूर्ति सुब्बा राव ने असहमति जताते हुए अनुच्छेद 16, 46 और 335 के सामंजस्यपूर्ण रूप से पढ़ने की वकालत की। **एनएम थॉमस** (उपरोक्त) के मामले में न्यायशास्त्रीय विकास के लिए आधार तैयार करते हुए, विद्वान न्यायाधीश ने देखा कि अनुच्छेद 16(4) में "कोई भी प्रावधान" वाक्यांश आगे ले जाने के नियम को शामिल करने के लिए पर्याप्त व्यापक है। बहुमत का यह अवलोकन कि रिक्तियों को अगले वर्ष के लिए आगे ले जाना समान अवसर के सिद्धांत के विपरीत है, **बालाजी** (उपरोक्त) के मामले के फैसले के अनुरूप था क्योंकि यह फैसला **एनएम थॉमस** (उपरोक्त) के मामले से पहले के युग में सुनाया गया था। हालाँकि, समान अवसर सिद्धांत की संकीर्ण व्याख्या के अलावा, न्यायालय ने "दक्षता" की अवधारणा पर भी विचार किया।

61. संविधान (इक्यासीवाँ) संशोधन अधिनियम, 2000 द्वारा संविधान में अनुच्छेद 16(5) को शामिल करने के लिए संशोधन किया गया, जिसके द्वारा राज्यों को आरक्षित श्रेणी की रिक्त सीटों को आगामी वर्षों में भरने की अनुमति दी गई। एम नागराज बनाम भारत संघ मामले में संविधान पीठ ने अनुच्छेद 16(4-ए) और 16(4-बी) की संवैधानिक वैधता को चुनौती देने वाली याचिका को खारिज कर दिया था, जहां यह माना गया था कि अनुच्छेद 16(4-ए) और 16(4-बी) को शामिल करने से प्रशासन की दक्षता में केवल कमी आती है, वह खत्म नहीं होती।

62. जैसा कि उपर्युक्त चर्चा से स्पष्ट है, आरक्षण के दायरे से जुड़े प्रश्नों पर दूसरे चरण में न्यायशास्त्र इस विचार के इर्द-गिर्द विकसित हुआ कि आरक्षण प्रशासन की दक्षता को कमजोर करता है या दूसरे शब्दों में कहें तो आरक्षण योग्यता विरोधी है। उपरोक्त प्रत्येक मुद्दे पर इस न्यायालय के निर्णय को पलटने के लिए संविधान में संशोधन किया गया, जिससे यह धारणा बदल गई कि आरक्षण से सेवा में दक्षता सुनिश्चित नहीं होती। प्रत्येक मुद्दे पर अनेक उथल-पुथल के बाद, आज संविधान समानता के प्रावधान को और अधिक ठोस रूप देता है, तथा आरक्षण के दायरे और परिधि का विस्तार करता है, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि लाभ उन लोगों तक पहुंचे जिन्हें इसकी सबसे अधिक आवश्यकता है। हालाँकि, अनुच्छेद 16 और 335 में संशोधन के बाद भी योग्यता और आरक्षण के बीच टकराव के निशान बने हुए हैं। इस न्यायालय ने, कुछ मतभेदों के साथ, योग्यता और आरक्षण की द्विआधारी व्यवस्था को कायम रखा है। इस चरण के अंत में न्यायालयों की समझ यह थी कि

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

आरक्षण के दायरे को बढ़ाया जाना चाहिए ताकि दक्षता में कमी के बावजूद मौलिक समानता सुनिश्चित की जा सके, जिससे अनुच्छेद 16(4) में दक्षता की आवश्यकता को जारी रखा जा सके।

III. अनुच्छेद 16 और अनुच्छेद 335 का परस्पर प्रभाव

63. इस खंड में हम चर्चा करेंगे कि क्या अनुच्छेद 335 के सिद्धांत को अनुच्छेद 16 के तहत आरक्षण प्रदान करने की राज्य की शक्ति पर एक सीमा के रूप में पढ़ा जाना चाहिए। अनुच्छेद 335 में यह प्रावधान है कि सेवाओं में नियुक्तियां करते समय, प्रशासन की दक्षता बनाए रखने के अनुरूप, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावों को ध्यान में रखा जाएगा। अनुच्छेद के प्रावधान में कहा गया है कि यह प्रावधान पदोन्नति के मामलों में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के आरक्षण के लिए “किसी भी परीक्षा में अर्हक अंकों में छूट देने या मूल्यांकन के मानकों को कम करने” से नहीं रोकेगा।

64. अनुच्छेद 16(4) के अंतर्गत आरक्षण अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों तक सीमित नहीं है। यह प्रावधान राज्य को उन “पिछड़े वर्गों” के लिए आरक्षण प्रदान करने की शक्ति प्रदान करता है, जिनका राज्य की सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है। पिछड़ा वर्ग में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के अलावा अन्य वर्ग भी शामिल हैं। इसमें वे सभी वर्ग शामिल हैं जिनका पिछड़ापन सामाजिक कारणों से है। इसमें अन्य सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग जैसे अन्य पिछड़ा वर्ग, महिलाएं और विकलांग शामिल हैं।

65. अनुच्छेद 16(4) के तहत शक्ति के प्रयोग के संबंध में केवल अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के संबंध में “प्रशासन की दक्षता” की अतिरिक्त आवश्यकता को लागू करना भेदभावपूर्ण होगा। अनुच्छेद 16(4) में इस आवश्यकता को पढ़ने से यह माना जाता है कि प्रशासन में दक्षता के सिद्धांत का कमजोर होना अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण का आवश्यक प्रभाव है, जबकि अन्य पिछड़ा वर्गों के लिए आरक्षण पर समान मानक लागू नहीं होता है। यद्यपि इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से इतने शब्दों में नहीं कहा है, फिर भी अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों और अन्य सामाजिक तथा शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के बीच भेदभाव को रोकने के लिए अनुच्छेद 16(4) के तहत शक्ति के प्रयोग के लिए प्रशासन की दक्षता को एक आवश्यकता के रूप में जोड़ा गया था। यदि अनुच्छेद 335 में प्रशासन की दक्षता की आवश्यकता को अनुच्छेद 16 में नहीं पढ़ा जाता, तो यह आवश्यकता केवल अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण पर लागू होगी, अन्य सामाजिक रूप से पिछड़े लाभार्थी वर्गों के आरक्षण के लिए नहीं।

66. तथापि, इस प्रकार की व्याख्यात्मक प्रयोग (अर्थात्, सकारात्मक कार्रवाई नीतियां प्रदान करने की राज्य की शक्ति को प्रतिबंधित करने के लिए सेवा की दक्षता के सिद्धांत को लागू करना) अनुच्छेद 335 की स्पष्ट भाषा के विपरीत है, जो अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों तक ही सीमित है। प्रारंभिक त्रुटि यह है कि प्रशासन की दक्षता की आवश्यकता को एक अतिरिक्त आवश्यकता और आरक्षण प्रावधानों में बाधा के रूप में देखा गया। दक्षता को समान अवसर के सिद्धांत के एक पहलू के रूप में नहीं समझा गया।

67. इस तर्क को तार्किक निष्कर्ष तक ले जाने के लिए अनुच्छेद 335 में प्रयुक्त वाक्यांश “दक्षता” का अर्थ निर्धारित किया जाना चाहिए। हालाँकि संविधान इस वाक्यांश को परिभाषित नहीं करता है, लेकिन अनुच्छेद का प्रावधान व्याख्यात्मक मार्गदर्शन प्रदान करता है। प्रावधान में कहा गया है कि “किसी भी परीक्षा में अर्हक अंकों में छूट या मूल्यांकन के मानकों को कम करना” प्रशासन की दक्षता में कमी नहीं है। प्रावधान के दायरे के बारे में,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

परंतु को पढ़ने के आधार पर, दो संभावित निष्कर्ष हो सकते हैं। एक संभावित अर्थ जो निकाला जा सकता है वह यह है कि अर्हता परीक्षा में प्राप्त अंक प्रशासन की दक्षता के सूचक नहीं हैं, क्योंकि यदि ऐसा होता तो अर्हता मानकों/अंकों में कमी से दक्षता में भी कमी आती। एक अन्य संभावित व्याख्या यह हो सकती है कि प्रावधान का आधार यह है कि मूल्यांकन मानकों या अर्हक अंकों में कमी या उन्हें कमजोर करना दक्षता बनाए रखने के साथ असंगत नहीं है, लेकिन अर्हक अंकों को पूरी तरह से हटाना असंगत होगा। यदि बाद वाली व्याख्या को स्वीकार भी कर लिया जाए तो इससे केवल यही स्थापित होता है कि परीक्षा में उच्च अंक प्राप्त करने से उच्च दक्षता प्राप्त नहीं होती है तथा परीक्षा में न्यूनतम अंक (न कि उच्चतम) प्राप्त करना ही प्रशासन की दक्षता बनाए रखने के लिए पर्याप्त है। इस प्रकार, ऐसी नीति जो कम अर्हक अंक या मूल्यांकन के मानकों की अनुमति देती है, अनुच्छेद 335 के प्रावधान के अनुसार दक्षता के विपरीत नहीं है।

68. सेवाओं में पदों पर नियुक्ति के लिए परीक्षा का उल्लेख करने वाला एकमात्र संवैधानिक प्रावधान अनुच्छेद 320 है, जो यह निर्धारित करता है कि संघ और राज्य लोक सेवा आयोगों को संघ और राज्य की सेवाओं में नियुक्तियों के लिए परीक्षाएं आयोजित करनी चाहिए। परीक्षा उम्मीदवारों की दक्षता और पद के लिए उनकी उपयुक्तता निर्धारित करने के लिए एक मूल्यांकन है। संविधान मूल्यांकन की सटीक विधि निर्धारित नहीं करता है जिसे परीक्षा के लिए अपनाया जाना चाहिए। संविधान यह भी निर्धारित नहीं करता है कि परीक्षा को इस तरह से तैयार किया जाना चाहिए जो केवल कुछ वर्गों के लोगों के लिए सुलभ कौशल सेट का आकलन करे। अनुच्छेद 16(1) में अवसर में समानता का सिद्धांत इसलिए राज्य के लिए मार्गदर्शक है, जब वह परीक्षा की पद्धति निर्धारित कर रहा हो। परीक्षा या पदों के वितरण की किसी भी पद्धति में तथ्यात्मक समानता सुनिश्चित होनी चाहिए। यदि परीक्षा केवल उन कौशलों का मूल्यांकन करती है जो विशिष्ट वर्गों के लिए सुलभ हैं, तो यह प्राथमिक रूप से बहिष्करण की ओर ले जाती है। इस नुकसान की भरपाई के लिए पदों के वितरण के लिए सकारात्मक कार्रवाई की नीतियाँ शुरू की गई हैं।

69. **एनएम थॉमस (उपरोक्त)** में निर्णय का अंतर्निहित आधार यह है कि शैक्षणिक संस्थानों और सार्वजनिक सेवाओं में सीटों सहित सार्वजनिक संसाधनों का वितरण समानता और न्याय के विचारों पर आधारित होना चाहिए। इस प्रकार, अनुच्छेद 335 अनुच्छेद 16(1) और 16(4) के तहत शक्ति के प्रयोग पर कोई सीमा नहीं है। बल्कि, यह सार्वजनिक सेवाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावों पर विचार करने की आवश्यकता की पुनः पुष्टि है। प्रशासन की दक्षता को किसी परीक्षा में अंकों के संकीर्ण दृष्टिकोण से नहीं देखा जाना चाहिए, जो कुछ वर्गों को पहले से ही बाहर कर देता है, बल्कि अनुच्छेद 16(1) के अनुसार समावेशिता और समानता के संदर्भ में देखा जाना चाहिए।

70. इस न्यायालय ने पहले भी आरक्षण और योग्यता की द्विआधारी व्यवस्था को चुनौती दी है। **देवदासन (उपरोक्त)** में न्यायमूर्ति सुब्बा राव ने कहा कि अनुच्छेद 16(4) और 335 के प्रावधानों के बीच कोई संघर्ष नहीं है और अनुच्छेद 335 का अनुच्छेद 335 की व्याख्या पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। न्यायमूर्ति राव ने कहा कि पहला प्रावधान निर्देशात्मक है, जबकि दूसरा प्रावधान अनिवार्य है जिसके तहत राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावों पर विचार करना आवश्यक है। इसके बाद, **वसंत कुमार (उपरोक्त)** मामले में न्यायमूर्ति चिन्नप्पा रेड्डी ने भी यही विचार दोहराया। विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि आरक्षण को योग्यता और

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

वितरणात्मक न्याय के सिद्धांतों के बीच संघर्ष के रूप में नहीं देखा जा सकता। बल्कि यह तो संपन्न और वंचित के बीच संघर्ष है।

71. **बी.के. पवित्रा (द्वितीय)** बनाम कर्नाटक राज्य मामले में तर्क की इसी पंक्ति को आगे बढ़ाया गया, जहां इस न्यायालय ने कहा कि आरक्षण के आलोचकों की धारणा यह है कि "मेरिट" के आधार पर सरकारी सेवाओं में अवसर प्रदान करने से प्रशासनिक दक्षता में वृद्धि होती है। बीके पवित्रा (II) (उपरोक्त) और नील ऑरेलियो नून्स बनाम भारत संघ मामले में, इस न्यायालय ने एक "तटस्थ" प्रतीत होने वाली चयन प्रक्रिया में उम्मीदवारों के प्रदर्शन के आधार पर "मेरिट" को मापने की मूर्खता को उजागर किया, जो वास्तव में तटस्थ नहीं है क्योंकि यह प्रक्रिया उन वर्गों के उम्मीदवारों को समान अवसर प्रदान नहीं करती है, जिन्हें परीक्षाओं में सफल होने के लिए आवश्यक सुविधाओं तक पहुंच में व्यापक असमानताओं का सामना करना पड़ता है। नील ऑरेलियो नून्स (उपरोक्त) मामले में, इस न्यायालय की दो न्यायाधीशों वाली पीठ ने सांस्कृतिक पूंजी के रूप में उन्नत वर्गों को प्राप्त होने वाले विशेषाधिकारों पर चर्चा की, जो यह सुनिश्चित करता है कि एक बच्चा अनजाने में पारिवारिक वातावरण और आर्थिक पूंजी द्वारा प्रशिक्षित होता है:

"24. [...] उच्च वर्गों को मिलने वाले विशेषाधिकार केवल गुणवत्तापूर्ण स्कूली शिक्षा और प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी के लिए ट्यूटोरियल और कोचिंग सेंटर तक ही सीमित नहीं हैं, बल्कि इसमें उनके सामाजिक नेटवर्क और सांस्कृतिक पूंजी, संचार कौशल, उच्चारण, किताबें या शैक्षणिक उपलब्धियाँ भी शामिल हैं, जो उन्हें अपने परिवार से विरासत में मिलती हैं। [...] सामुदायिक संपर्कों पर आधारित सामाजिक नेटवर्क तब उपयोगी हो जाते हैं जब व्यक्ति परीक्षा की तैयारी करने और अपने करियर में आगे बढ़ने के बारे में मार्गदर्शन और सलाह चाहते हैं।"

72. हममें से एक (न्यायमूर्ति डी.वाई. चंद्रचूड़) ने खंडपीठ के लिए लिखते हुए कहा कि हालांकि परीक्षाएं शैक्षिक संसाधनों के आवंटन के लिए एक सुविधाजनक तरीका है, लेकिन वे योग्यता के प्रभावी संकेतक नहीं हैं, और योग्यता को समानता और समावेशिता के सामाजिक हित के संदर्भ में समझा जाना चाहिए।

73. इस खंड में चर्चा समाप्त करने से पहले, हम योग्यता और आरक्षण के द्विआधारी पर **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में नौ न्यायाधीशों की पीठ की राय पर चर्चा करना आवश्यक समझते हैं क्योंकि सात सदस्यों वाली यह पीठ बड़ी पीठ की राय से बंधी हुई है। उस मामले में याचिकाकर्ताओं ने तर्क दिया कि आरक्षण का आवश्यक प्रभाव कम योग्यता वाले व्यक्तियों की नियुक्ति है, जबकि प्रतिवादियों ने तर्क दिया कि किसी परीक्षा में प्राप्त अंक उम्मीदवार की अंतर्निहित योग्यता का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं। न्यायमूर्ति बी. पी. जीवन रेड्डी ने बहुमत की राय लिखते हुए कहा कि आरक्षण और योग्यता के प्रतिस्पर्धी दृष्टिकोणों पर अपना दृष्टिकोण व्यक्त करना आवश्यक नहीं है। हालांकि, विद्वान न्यायाधीश ने अवधारित किया कि आरक्षण योग्यता विरोधी नहीं है। विद्वान न्यायमूर्ति ने दो वैचारिक टिप्पणियाँ की हैं: पहली, भले ही योग्यता प्रशासन में दक्षता का पर्याय न हो, फिर भी इसकी प्रासंगिकता और महत्व को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। आरक्षण का तात्पर्य है कम योग्यता वाले व्यक्ति का चयन; और दूसरा, वंचित वर्ग के सदस्य, अवसर मिलने पर, बाधाओं को पार कर अपनी योग्यता साबित कर सकेंगे।

74. इन दो सिद्धांतों को लागू करते हुए, न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने अवधारित किया कि: (क) पिछड़े वर्ग के लिए अर्हक परीक्षाओं में न्यूनतम अंकों को हटाना अवैध है; (ख) पदोन्नति में आरक्षण नहीं हो सकता; और (ग) सेवाओं के कुछ पदों में कोई आरक्षण नहीं हो सकता "जहां या तो उनसे जुड़े कर्तव्यों की प्रकृति या स्तर

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(पदानुक्रम में) के कारण, केवल योग्यता ही मायने रखती है।" विद्वान न्यायाधीश ने ऐसे पदों की एक अपूर्ण सूची भी दी। सूची में अनुसंधान एवं विकास संगठनों/विभागों/संस्थानों में तकनीकी पद; चिकित्सा, इंजीनियरिंग और भौतिक विज्ञान एवं गणित में ऐसे अन्य पाठ्यक्रमों में विशेषज्ञताएं और अति-विशिष्टताएं; रक्षा सेवाएं; प्रोफेसरों के पद; एयरलाइन पायलट; तथा परमाणु एवं अंतरिक्ष अनुप्रयोग में वैज्ञानिक और तकनीशियन के पद शामिल थे। न्यायमूर्ति पांडेयन भी इस दृष्टिकोण से सहमत हुए, जिससे यह बहुमत का दृष्टिकोण बन गया।

75. न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने अवधारित किया कि आरक्षण योग्यता विरोधी नहीं है। दो संवैधानिक संशोधनों ने **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में दिए गए निर्णय के उपरोक्त पहलुओं को खारिज कर दिया। इन संशोधनों ने अनुच्छेद 16(4) और अनुच्छेद 335 के तहत शक्ति के प्रयोग के बीच के अंतर को बदल दिया। संविधान (सत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1995 में अनुच्छेद 16(4-ए) को शामिल किया गया, जिससे राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए पदोन्नति में आरक्षण प्रदान करने का अधिकार मिल गया। संविधान (बयासी) संशोधन अधिनियम 2000 द्वारा अनुच्छेद 335 में यह प्रावधान जोड़ा गया कि मूल्यांकन के मानकों को कम करना दक्षता बनाए रखने के साथ असंगत नहीं होगा। संशोधनों में पदोन्नति के दौरान अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों द्वारा सामना की जाने वाली कठिनाइयों और संघर्षों को मान्यता दी गई है। औपचारिक अर्थ में, पदोन्नति के लिए चयन के मानदंड में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को शामिल नहीं किया जाता है, क्योंकि जो मानदंड उपयुक्त माने जाते हैं, वे उनके लिए सुलभ नहीं हैं। अधिक अनौपचारिक लेकिन ठोस तरीके से कहें तो, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्य अक्सर उन्नति की सीढ़ी चढ़ने में असमर्थ रहते हैं, क्योंकि आरक्षण के माध्यम से चुने गए उम्मीदवारों पर अयोग्यता का कलंक लगा रहता है। यह रूढ़ि उनके विरुद्ध काम करती है, क्योंकि उन्हें "सकारात्मक कार्रवाई के लाभार्थी" या "कोटा उम्मीदवार" के रूप में पेश किया जाता है। संशोधनों में मानवीय आचरण और भर्ती प्रक्रियाओं के संचालन के माध्यम से भेदभाव को मान्यता दी गई है। वे आरक्षण और योग्यता के द्विआधारी का जोरदार खंडन करते हैं।

ii. अनुच्छेद 14 के तहत उप-वर्गीकरण की अनुमति

76. **चिन्नैया (उपरोक्त)** में, मुद्दों में से एक यह था कि "क्या विवादित अधिनियम अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण या सूक्ष्म वर्गीकरण बनाता है"। न्यायमूर्ति संतोष हेगड़े ने अपनी और दो अन्य न्यायाधीशों की ओर से लिखते हुए कहा कि **एनएम थॉमस (उपरोक्त)** के फैसले के अनुसार, सूची में शामिल सभी जातियों को एक 'वर्ग' के रूप में विशेष दर्जा प्राप्त है और आरक्षण के उद्देश्य के लिए वर्गीकरण पहले से ही मौजूद है। विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि अनुसूचित जातियाँ अपने आप में एक वर्ग हैं और उनका कोई और वर्गीकरण तर्कसंगतता के सिद्धांत का उल्लंघन होगा। न्यायमूर्ति हेगड़े ने कहा कि किसी वर्ग को उप-विभाजित करके "अनुसूचित जातियों के एक छोटे से हिस्से को उसी वर्ग के अन्य सदस्यों की तुलना में अधिक वरीयता" नहीं दी जा सकती। न्यायमूर्ति सेमा ने अपनी सहमति व्यक्त करते हुए कहा कि अनुसूचित जातियों, जो एक समरूप समूह हैं, का आगे वर्गीकरण करना "विपरीत भेदभाव" के समान होगा और यह अनुच्छेद 14 के विपरीत होगा। न्यायमूर्ति सिन्हा ने कहा कि संविधान वंचित समूहों को लाभान्वित समूहों के बराबर लाने के लिए उनके संबंध में अतिरिक्त उपायों की अनुमति

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

देता है, लेकिन जिस वर्ग को अतिरिक्त संरक्षण के लाभ की आवश्यकता है, उनके साथ तब कोई भेदभाव नहीं किया जा सकता, जब दोनों ही अत्यंत पिछड़ेपन और सार्वजनिक सेवा में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व की कसौटी पर खरे उतरते हों। न्यायमूर्ति सिन्हा ने आगे कहा कि राज्य ने उचित वर्गीकरण तथा अधिनियम के उद्देश्य के साथ वर्गीकरण के संबंध को साबित करने का दायित्व पूरा नहीं किया है।

77. **चिन्नैया (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय ने माना कि अनुसूचित जातियों को आरक्षण के प्रयोजन के लिए आगे वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है क्योंकि वे राष्ट्रपति सूची में शामिल होने के कारण आंतरिक रूप से समरूप वर्ग का गठन करते हैं और इस प्रकार, एक वर्ग के रूप में, अनुसूचित जातियों के भीतर समूहों के साथ अलग व्यवहार नहीं किया जा सकता है। संविधान के तहत अनुसूचित जातियों के पहले से विद्यमान वर्गीकरण को देखते हुए, आगे वर्गीकरण और उसके परिणामस्वरूप वरीयता प्रदान करना अनुच्छेद 14 का उल्लंघन माना गया, क्योंकि यह संविधान द्वारा निषिद्ध 'सूक्ष्म वर्गीकरण' के समान होगा। अनुच्छेद 14 और सूक्ष्म वर्गीकरण के इस दृष्टिकोण की सत्यता को समझने के लिए, हमें अनुच्छेद 14 के तहत समानता की गारंटी और उप वर्गीकरण की अनुमति की रूपरेखा का विश्लेषण करना होगा।

a. अनुच्छेद 14 की रूपरेखा

78. अनुच्छेद 14 में दो अभिव्यक्तियाँ हैं – कानून के समक्ष समानता और कानूनों का समान संरक्षण। दोनों ही विषय-वस्तु और व्यापकता में भिन्न हैं। "कानून के समक्ष समानता" – अंग्रेजी कॉमन लॉ से ली गई एक अभिव्यक्ति है, जो क्षेत्र के भीतर किसी भी व्यक्ति के लिए विशेष विशेषाधिकारों की अनुपस्थिति को दर्शाती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि एक ही कानून सभी पर लागू होना चाहिए, बल्कि इसका अर्थ यह है कि एक ही कानून उन सभी पर लागू होना चाहिए जो समान स्थिति में हैं। "कानूनों का समान संरक्षण" का अर्थ है कि समान लोगों के बीच, कानून समान रूप से लागू होने चाहिए। यह राज्य को उन लोगों को उचित रूप से वर्गीकृत करने की शक्ति देता है जो अलग-अलग स्थिति में हैं। "कानूनों के समान संरक्षण" का अधिदेश राज्य पर यह सुनिश्चित करने का सकारात्मक दायित्व डालता है कि सभी को कानूनों का समान संरक्षण प्राप्त हो, तथा किसी को भी इस संरक्षण से अनुचित रूप से वंचित न किया जाए। संक्षेप में, समानता की गारंटी में यह निहित है कि समान परिस्थितियों में रहने वाले सभी व्यक्तियों के साथ समान व्यवहार किया जाना चाहिए। समान परिस्थितियों में समान व्यवहार होना चाहिए। समानता का मतलब एकरूपता नहीं है। राज्य को इस तरह से वर्गीकरण करने की अनुमति है जो भेदभावपूर्ण न हो। वर्गीकरण का सिद्धांत कानूनों के समान संरक्षण की गारंटी देता है। इस दृष्टिकोण के तहत, उपचार की समानता की तुलना में परिणामों या अवसरों की समानता पर ध्यान केंद्रित किया जाता है।

79. संविधान दो शर्तें पूरी होने पर वैध वर्गीकरण की अनुमति देता है। सबसे पहले, एक ऐसा स्पष्ट विभेद होना चाहिए जो एक साथ समूह में शामिल व्यक्तियों को समूह से बाहर रखे गए अन्य व्यक्तियों से अलग कर सके। "समझने योग्य अंतर" वाक्यांश का अर्थ है ऐसा अंतर जिसे समझा जा सके। अंतर को तब समझा जा सकता है जब समूह में शामिल वर्ग और समूह से बाहर रखे गए अन्य लोगों के बीच अंतर करने का कोई पैमाना हो। मानदंड के अभाव में, भेदभाव आधारहीन होगा और इसलिए अनुचित होगा। वर्गीकरण का आधार कानून के प्रावधानों, आस-पास की परिस्थितियों या सामान्य ज्ञान के मामलों से निकाला जा सकता है। वर्गीकरण करते समय, राज्य

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

नुकसान की डिग्री को पहचानने के लिए स्वतंत्र है। हालांकि वर्गीकरण गणितीय सटीकता से होना जरूरी नहीं है, लेकिन समूह में शामिल व्यक्तियों और बाहर रखे गए व्यक्तियों के बीच कुछ अंतर होना चाहिए और यह अंतर वास्तविक और प्रासंगिक होना चाहिए। यदि "थोड़ा या कोई अंतर नहीं है" तो वर्गीकरण अनुचित है। दूसरा, विभेद का कानून द्वारा प्राप्त किये जाने वाले उद्देश्य के साथ तर्कसंगत संबंध होना चाहिए, अर्थात् वर्गीकरण के आधार का वर्गीकरण के उद्देश्य के साथ संबंध होना चाहिए।

b. समानता के एक पहलू के रूप में उप-वर्गीकरण

80. इस न्यायालय के विचारार्थ पहला मुद्दा यह है कि क्या उप-वर्गीकरण का सिद्धांत अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है। यह स्थापित सिद्धांत है कि अनुच्छेद 14 औपचारिक समानता की नहीं बल्कि तथ्यात्मक समानता की गारंटी देता है। इस प्रकार, यदि कानून के उद्देश्य के संदर्भ में व्यक्ति समान स्थिति में नहीं हैं, तो वर्गीकरण की अनुमति है। वर्गीकरण का यही तर्क उप-वर्गीकरण पर भी समान रूप से लागू होता है। कानून द्वारा पहले से ही सीमित उद्देश्य के लिए बनाए गए वर्ग को कानून आगे भी वर्गीकृत कर सकता है, यदि वह किसी अन्य उद्देश्य के लिए विषम है। इस न्यायालय ने कई निर्णयों में माना है कि किसी वर्ग के भीतर ऐसा वर्गीकरण अनुच्छेद 14 के तहत वैध है।

81. उप-वर्गीकरण के दायरे की रूपरेखा निर्धारित करने के लिए यह निर्धारित करना आवश्यक है कि क्या वर्ग एक एकीकृत समरूप वर्ग है। ऑल इंडिया स्टेशन मास्टर्स एंड असिस्टेंट स्टेशन मास्टर्स एसोसिएशन बनाम जनरल मैनेजर, सेंट्रल रेलवे मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ के समक्ष मुद्दा यह था कि क्या स्टेशन मास्टर के उच्च पद पर पदोन्नति के उद्देश्य से 'रोड-साइड स्टेशन मास्टर्स' को गार्डों से अलग किया जा सकता है। इस मुद्दे का सकारात्मक उत्तर देते हुए न्यायालय ने अवधारित किया कि स्टेशन मास्टर और गार्ड एक एकीकृत वर्ग नहीं हैं, क्योंकि उनकी भर्ती और प्रशिक्षण अलग-अलग होता है। इस प्रकार, दो वर्गों के बीच भेद को समानता संहिता का उल्लंघन नहीं माना गया, जिसमें केवल यह अपेक्षा की गई है कि राज्य समान लोगों के साथ समान व्यवहार करेगा। इसी प्रकार, मोहम्मद शुजात अली बनाम भारत संघ मामले में, इस न्यायालय की एक अन्य संविधान पीठ ने माना कि सहायक अभियंता के पद पर पदोन्नति के प्रयोजन के लिए स्नातक और गैर-स्नातक पर्यवेक्षकों के बीच भेद वैध था, क्योंकि दोनों श्रेणियों के बीच कोई एकीकरण नहीं था। दोनों वर्गों के वेतनमान और यहां तक कि नामकरण भी अलग-अलग थे।

82. ऑल इंडिया स्टेशन मास्टर्स (उपरोक्त) और मोहम्मद शुजात अली (उपरोक्त) में, इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया कि क्या एकीकृत वर्ग के भीतर उप वर्गीकरण हो सकता है। यह मुद्दा जम्मू और कश्मीर राज्य बनाम त्रिलोकी नाथ खोसा के मामले में इस न्यायालय के समक्ष निर्णय के लिए आया था। नियमों में यह प्रावधान था कि केवल सहायक अभियंता ही, जिनके पास डिग्री या कुछ अन्य योग्यताएं हों, डिप्टी इंजीनियर के पद पर पदोन्नति के हकदार होंगे। हालांकि, सहायक इंजीनियरों में डिग्री और डिप्लोमा दोनों धारक स्नातक शामिल थे। इनमें से डिप्लोमा धारकों ने इस आधार पर नियम की संवैधानिकता को चुनौती दी कि यह उनकी शैक्षणिक योग्यता के आधार पर उन्हें "सहायक अभियंता" की श्रेणी में वर्गीकृत करता है और एक वर्ग के भीतर ऐसा वर्गीकरण अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है। यह तर्क दिया गया कि यदि विभिन्न स्रोतों से भर्ती

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

किए गए व्यक्तियों को एक वर्ग में एकीकृत किया जाता है, तो उन्हें बाद में उनमें से कुछ के पक्ष में अधिमान्य व्यवहार की अनुमति देने के लिए वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है। इस न्यायालय ने इस नियम की वैधता को बरकरार रखा कि पदोन्नति के उद्देश्य से शैक्षिक योग्यता के आधार पर वर्गीकरण अनुचित नहीं है। न्यायमूर्ति वाई.वी. चंद्रचूड़ (तत्कालीन न्यायमूर्ति) ने पीठ की ओर से लिखते हुए कहा कि वर्गीकरण का पदोन्नति के उद्देश्य के साथ उचित संबंध है, जिसका उद्देश्य इंजीनियरिंग सेवाओं में प्रशासनिक दक्षता हासिल करना है।

83. यह भी प्रस्तुत किया गया कि यदि विभिन्न स्रोतों से भर्ती किए गए व्यक्तियों को एक वर्ग में एकीकृत किया जाता है, तो उस वर्ग के भीतर कोई और वर्गीकरण नहीं किया जा सकता है। इस मामले में, सहायक अभियंता के पद पर सीधी भर्ती के लिए सिविल इंजीनियरिंग में डिग्री होना आवश्यक था। हालांकि, पदोन्नत लोगों को उस सेवा से लिया गया था जो डिग्री और डिप्लोमा दोनों धारकों के लिए खुली थी (बाद वाले के लिए सिविल इंजीनियरिंग की डिग्री की आवश्यकता नहीं थी)। इस प्रकार, यह तर्क दिया गया कि शैक्षिक योग्यता के आधार पर वर्गीकरण, सेवा के स्रोत पर आधारित वर्गीकरण है। इस न्यायालय ने माना कि यद्यपि लोगों को पदोन्नति और सीधी भर्ती जैसे विभिन्न स्रोतों से नियुक्त किया गया था, फिर भी उन्हें सहायक अभियंताओं की एक सामान्य श्रेणी में एकीकृत कर दिया गया। हालांकि, इस वर्ग में एकीकरण के बावजूद, उन्हें शैक्षिक योग्यता के आधार पर वैध रूप से वर्गीकृत किया जा सकता था, क्योंकि यह सेवा के स्रोत के आधार पर वर्गीकरण नहीं था।

84. इस संदर्भ में, इस न्यायालय ने चेतावनी दी कि निर्णय की व्याख्या सूक्ष्म एवं सूक्ष्म वर्गीकरण के औचित्य के रूप में नहीं की जानी चाहिए तथा वर्गीकरण के सिद्धांत को "अगोचर विस्तार" के माध्यम से विकसित नहीं किया जा सकता, जिससे समानता की गारंटी का मूल सार ही कमजोर हो जाए। रोशन लाल टंडन बनाम भारत संघ के निर्णय से अलग हटकर, इस न्यायालय ने **त्रिलोकी नाथ (उपरोक्त)** में टिप्पणी की कि पूर्व में मुद्दा यह था कि क्या एकीकरण के लिए मानदंड (अर्थात् भर्ती का स्रोत) को आगे एकीकरण के लिए मानदंड के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है, जो कि **त्रिलोकी नाथ (उपरोक्त)** में मुद्दा नहीं था। इस प्रकार, त्रिलोकी नाथ (सुप्रा) इस प्रस्ताव के लिए अग्रणी निर्णय है कि एक एकीकृत वर्ग को आगे वर्गीकृत किया जा सकता है यदि वहाँ स्पष्ट अंतर है और यदि इस्तेमाल किए गए मानदंड का प्रावधान के उद्देश्य से संबंध है।

85. यह कोई तय बात नहीं है कि अलग-अलग स्रोतों से नियुक्त व्यक्ति सिर्फ एक पद पर नियुक्ति होने पर ही एकीकृत वर्ग बन जाते हैं। एकीकरण के बाद भी, समूह अन्य उद्देश्यों के लिए अपनी अलग पहचान बनाए रखते हैं। कात्यानी सयाल बनाम भारत संघ मामले में इस न्यायालय ने माना कि प्रतियोगी परीक्षा के माध्यम से भर्ती किए गए रेलवे के सहायक अधिकारी और संघ लोक सेवा आयोग की सिफारिश पर भर्ती किए गए सहायक अधिकारी एकीकृत समरूप वर्ग नहीं बनाते हैं, क्योंकि भर्ती के उद्देश्य, कार्यकाल और यहां तक कि नियुक्ति प्राधिकारी भी अलग-अलग हैं। कर्नल ए.एस. अय्यर बनाम वी. बालसुब्रमण्यम मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ ने सर्वे ऑफ इंडिया के पदोन्नति नियमों को बरकरार रखा, जिसके तहत असैन्य इंजीनियरों की तुलना में सैन्य इंजीनियरों के लिए 50% अधिक पद आरक्षित किए गए थे। न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने पीठ की ओर से लिखते हुए कहा कि सेना के इंजीनियरों को कभी भी उनके नागरिक समकक्षों के साथ भारतीय सर्वेक्षण सेवा में शामिल नहीं किया गया।

86. डी.एस. नाकारा बनाम भारत संघ मामले में इस न्यायालय के निर्णय में उप-वर्गीकरण के मुद्दे पर विचार किया गया है। नाकारा मामले में पेंशन प्रदान करने के लिए पेंशनभोगियों को सेवानिवृत्ति की तिथि के आधार पर

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

दो समूहों में विभाजित करने वाली योजना को चुनौती दी गई थी। संविधान पीठ ने माना कि पेंशनभोगी एक वर्ग हैं। उल्लेखनीय है कि इस न्यायालय ने **त्रिलोकी नाथ (उपरोक्त)** की तरह यह नहीं माना कि उप-वर्गीकरण केवल इसलिए अस्वीकार्य है क्योंकि पेंशनभोगी स्वयं एक वर्ग हैं। उप-वर्गीकरण की अंतर्निहित अनुचितता के विपरीत, उस मामले में वर्गीकरण का विशेष आधार अर्थात् सेवानिवृत्ति की तिथि, पेंशन प्रदान करने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए मनमाना पाया गया। यह माना गया कि यदि वर्गीकरण के इस आधार को वैध मान लिया गया तो इससे उन दो व्यक्तियों के बीच कृत्रिम भेद पैदा हो जाएगा जो एक दूसरे से अड़तालीस घंटे के भीतर सेवानिवृत्त हुए हैं। पीठ की ओर से लिखते हुए न्यायमूर्ति डी ए देसाई ने कहा कि उप-वर्गीकरण की अनुमति है या नहीं, इस पर निर्णय लेते समय न्यायालय को यह भी निर्धारित करना होगा कि कानून के प्रयोजन के लिए यह वर्ग समरूप है या नहीं।

87. **नकारा (उपरोक्त) त्रिलोकी नाथ (उपरोक्त)** से एक कदम आगे जाकर कहते हैं कि उप-वर्गीकरण का दायरा उस मानदण्ड पर निर्भर नहीं करता है जिसका उपयोग समूहों को एक वर्ग में एकीकृत करने के लिए किया जाता है, बल्कि इस मुद्दे पर निर्भर करता है कि क्या वर्ग कानून के विशिष्ट उद्देश्य के लिए समरूप या एकीकृत है। जब कोई कानून किसी वर्ग, जैसे डिप्लोमा और डिग्री धारकों को एकीकृत करता है, तो वह उस वर्ग को उस विशिष्ट कानून के प्रयोजन के लिए एकीकृत करता है, सभी प्रयोजनों के लिए नहीं। इस प्रकार, एक वर्ग जो कानून के उद्देश्य के लिए समान रूप से स्थित नहीं है, उसे आगे वर्गीकृत किया जा सकता है। न्यायालय को किसी वर्ग के उप-वर्गीकरण की वैधता निर्धारित करने के लिए निम्नलिखित परीक्षण का पालन करना चाहिए:

- क. क्या वर्ग विशिष्ट कानून के प्रयोजन के लिए “सजातीय” या “समान रूप से स्थित” है;
- ख. यदि उपर्युक्त ‘क’ का उत्तर सकारात्मक है, तो वर्ग को उप-वर्गीकृत नहीं किया जा सकता;
- ग. यदि उपर्युक्त ‘क’ का उत्तर नकारात्मक है, तो वर्ग को निम्नलिखित मानक की पूर्ति पर उप-वर्गीकृत किया जा सकता है:
 - i. वर्ग को आगे वर्गीकृत करने के लिए एक मानदंड (या समझदार विभेद) होना चाहिए; तथा
 - ii. मानदंड का कानून के उद्देश्य के साथ तर्कसंगत संबंध होना चाहिए।

c. सूक्ष्म वर्गीकरण: उप-वर्गीकरण की सीमाएं

88. अगला मुद्दा जो उठता है वह यह है कि क्या उप वर्गीकरण की कोई सीमाएं हैं। अनेक निर्णयों में इस न्यायालय ने माना है कि राज्य को सूक्ष्म वर्गीकरण नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसे वर्गीकरण समानता की गारंटी को समाप्त कर देंगे (बढ़ावा देने के बजाय) तथा समानता के सिद्धांत के स्थान पर वर्गीकरण का सिद्धांत स्थापित हो जाएगा। उप-वर्गीकरण कब सूक्ष्म-वर्गीकरण के गुण ग्रहण करता है?

89. **नाकारा (उपरोक्त)** मामले में, इस न्यायालय ने संयोगवश यह दर्शाया कि सूक्ष्म वर्गीकरण क्या कहा जा सकता है। इस न्यायालय ने टिप्पणी की कि यदि प्रत्येक पेंशनभोगी को उनकी सेवानिवृत्ति की व्यक्तिगत तिथियों या सेवानिवृत्ति के महीने के आधार पर वर्गीकृत किया जाए, तो यह बहुत सूक्ष्म वर्गीकरण होगा। उल्लेखनीय रूप से, यह राज्य का तर्क नहीं था कि किसी विशेष तिथि को सेवानिवृत्त होने वाला प्रत्येक व्यक्तिगत पेंशनभोगी

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अपने आप में एक वर्ग है या सेवानिवृत्ति की तिथि वर्गीकरण का आधार है। बल्कि, तर्क यह था कि निर्धारित तिथि से पहले सेवानिवृत्त होने वाले लोग एक वर्ग थे, जो उस तिथि के बाद सेवानिवृत्त होने वालों से अलग थे:

“9. क्या पेंशनभोगियों के इस वर्ग को पेंशन के “पात्रता” और “भुगतान” के उद्देश्य के लिए उन लोगों में विभाजित किया जा सकता है जो निश्चित तिथि तक सेवानिवृत्त हुए और जो उस तिथि के बाद सेवानिवृत्त हुए? यदि सेवानिवृत्ति की तिथि को वर्गीकरण के लिए एक वैध मानदंड के रूप में स्वीकार किया जा सकता है, तो सेवानिवृत्ति पर प्रत्येक सरकारी कर्मचारी अपने आप में एक वर्ग का निर्माण करेगा, क्योंकि प्रत्येक की सेवानिवृत्ति की तिथि उसकी जन्म तिथि से संबंधित होती है और एक निश्चित आयु प्राप्त करने पर उसे सेवानिवृत्त होना पड़ता है। तीसरे केन्द्रीय वेतन आयोग की सिफारिशों को भारत सरकार द्वारा स्वीकार किए जाने के बाद ही सेवानिवृत्ति की तारीखें 12 निर्धारित की गई हैं, जो प्रत्येक माह का अंतिम दिन है, जिसमें प्रत्येक सरकारी कर्मचारी की जन्म तिथि पड़ती है। दूसरे शब्दों में, सभी सरकारी कर्मचारी जो किसी निश्चित माह में सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त करने पर जन्म तिथि से संबंधित सेवानिवृत्त होते हैं, वे उस तिथि को सेवानिवृत्त नहीं होंगे, बल्कि माह के अंतिम दिन सेवानिवृत्त होंगे। अब, यदि सेवानिवृत्ति की तारीख वर्गीकरण के लिए एक वैध मानदंड है, तो हर महीने के अंत में सेवानिवृत्त होने वाले लोग स्वयं एक वर्ग बन जाएंगे। यह वर्गीकरण इतना सूक्ष्म है कि इसे किसी भी वैध उद्देश्य के लिए सही नहीं माना जा सकता। क्या यह अनुमेय है या यह अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है? ”

(प्रभाव वर्धित)

90. सभी व्यक्ति एक या दूसरे पहलू में असमान हैं। किसी भी परिस्थिति में, एक व्यक्ति को भी अपने आप में एक वर्ग माना जा सकता है। उस मामले में, यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि कानून सूक्ष्म वर्गीकरण न करें। यह सवाल कि क्या वर्गीकरण सूक्ष्म वर्गीकरण के बराबर है जो अनुच्छेद 14 के तहत अस्वीकार्य है, प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा। हालाँकि, बोधगम्य विभेद के मानक के दो महत्वपूर्ण घटक उप-वर्गीकरण की सीमाएँ निर्धारित करते हैं। इसके दो घटक हैं (क) उद्देश्य; और (ख) विभेदीकरण का तर्कसंगत आधार (या सिद्धांत)। इस न्यायालय ने पहले माना है कि उद्देश्य विभेदन से स्वतंत्र होना चाहिए। न्यायालय ने राज्य को उद्देश्य की पहचान करने में पर्याप्त स्वतंत्रता दी है, जिसमें नुकसान की डिग्री भी शामिल है। विभेदन के अंतर्निहित सिद्धांत को समान डिग्री की स्वतंत्रता नहीं दी गई है। यह पर्याप्त नहीं है कि वर्गीकरण के अंतर्निहित सिद्धांत प्रासंगिक हैं या उद्देश्य से संबंधित हैं। वर्गीकरण के अंतर्निहित सिद्धांत उचित और तर्कसंगत होने चाहिए। **नाकारा (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय ने सेवानिवृत्ति की तिथि के आधार पर लाभार्थी वर्ग को वर्गीकृत करने के औचित्य पर सवाल उठाया था। नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ मामले में सहमति जताते हुए न्यायमूर्ति इंदु मल्होत्रा ने कहा कि “मूल और अपरिवर्तनीय” विशेषताओं के आधार पर विभेदीकरण का सिद्धांत तर्कसंगत नहीं है। उदाहरण के लिए, यदि कानून में यह प्रावधान है कि राज्य के एक विशिष्ट गांव के किसानों का ऋण पूरी तरह माफ कर दिया जाएगा, तो उसे ठोस साक्ष्य प्रस्तुत करके यह साबित करना होगा कि राज्य के एक गांव को अन्य गांवों से अलग करने वाला कोई तर्कसंगत सिद्धांत मौजूद है। इस संदर्भ में, उदाहरण के लिए, राज्य को यह साबित करना होगा कि भूमि का स्थान वर्गीकरण का एक तर्कसंगत सिद्धांत है और फिर बाद में यह साबित करना होगा कि गांव कानून के

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

प्रयोजन के लिए समान रूप से स्थित नहीं है। इस पृष्ठभूमि के साथ, हम इस विशिष्ट मुद्दे का विश्लेषण करने के लिए आगे बढ़ते हैं कि क्या अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण संवैधानिक रूप से स्वीकार्य है।

iii. आरक्षण में उप-वर्गीकरण: बालाजी, वसंत कुमार और इंद्रा साहनी के माध्यम से यात्रा का पता लगाना

91. क्या राज्य आरक्षण के प्रयोजन के लिए किसी वर्ग के भीतर आगे उप-वर्गीकरण कर सकता है, यह मुद्दा पहली बार **एम.आर. बालाजी (उपरोक्त)** में उठा था। मैसूर राज्य ने सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग के निर्धारण के लिए मानदंड अपनाने पर सलाह देने के लिए मैसूर पिछड़ा वर्ग समिति की नियुक्ति की। समिति की रिपोर्ट के आधार पर, राज्य ने शैक्षिक पिछड़ेपन के आधार पर पिछड़े वर्ग को पिछड़ा वर्ग और अधिक पिछड़ा वर्ग में उप-वर्गीकृत करने की सिफारिश की। **एमआर बालाजी (उपरोक्त)** में संविधान पीठ ने पिछड़े वर्ग के उप-वर्गीकरण को असंवैधानिक माना क्योंकि यह: (क) पूरी तरह से जाति पर आधारित था; और (ख) नागरिकों के "सभी" वर्गों के लाभ के लिए उपाय तैयार किए गए थे जो राज्य में सबसे उन्नत वर्ग की तुलना में कम उन्नत हैं जो अनुच्छेद 15 (4) के दायरे में नहीं आता है:

29. इस संबंध में यह जोड़ना आवश्यक है कि पिछड़े वर्गों और अधिक पिछड़े वर्गों के बीच आदेश द्वारा किया गया उप-वर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) के तहत न्यायोचित प्रतीत नहीं होता है। अनुच्छेद 15(4) वास्तविक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए विशेष प्रावधान किए जाने को अधिकृत करता है। पिछड़े वर्गों की दो श्रेणियों को पेश करने में, विवादित आदेश का सार यह है कि राज्य में सबसे उन्नत वर्गों की तुलना में कम उन्नत सभी वर्गों के नागरिकों के लाभ के लिए उपाय तैयार किए जाएं, और हमारी राय में, यह अनुच्छेद 15(4) का दायरा नहीं है। आक्षेपित आदेश द्वारा अपनाई गई पद्धति का परिणाम यह है कि राज्य की लगभग 90% जनसंख्या को पिछड़ा माना गया है, और यह दर्शाता है कि कैसे आदेश वास्तव में राज्य की जनसंख्या को सबसे उन्नत और शेष में विभाजित करता है, और शेष को पिछड़े और अधिक पिछड़े की दो श्रेणियों में रखता है। इसलिए, दो श्रेणियों का वर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) द्वारा उचित नहीं है।"

92. इस दृष्टिकोण की आलोचना न्यायमूर्ति ओ चिन्नाप्पा रेड्डी ने **वसंत कुमार (उपरोक्त)** मामले में की थी। **वसंत कुमार (उपरोक्त)** मामले में, इस न्यायालय को आरक्षण पर अपनी राय देने के लिए आमंत्रित किया गया था, जो उस आयोग के लिए एक दिशानिर्देश के रूप में काम कर सकता है जिसे कर्नाटक सरकार ने शिक्षा और रोजगार क्षेत्रों में आरक्षण के प्रश्न की जांच करने के लिए नियुक्त करने का प्रस्ताव दिया था। अपनी सहमति वाली राय में, न्यायमूर्ति चिन्नाप्पा रेड्डी ने कहा कि सिद्धांत रूप में, आरक्षित वर्ग के भीतर उप-वर्गीकरण वैध है, बशर्ते कि दोनों वर्ग उन्नत वर्ग से बहुत पीछे हों और उनमें से एक वर्ग सबसे पिछड़े वर्ग से आगे हो। विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि पिछड़े वर्ग को पिछड़ा और अधिक पिछड़ा वर्ग में वर्गीकृत करने की वैधता प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर निर्णय के लिए खुली हो सकती है।

93. **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** मामले में एक कार्यालय ज्ञापन को चुनौती दी गई थी, जिसमें सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग के गरीब लोगों को वरीयता देने का मानदंड पेश किया गया था। विद्वान न्यायाधीशों ने "गरीब" शब्द की व्याख्या पर मतभेद किया। न्यायमूर्ति पांडियन ने ज्ञापन में "गरीब" शब्द का अर्थ आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग से लगाया। न्यायमूर्ति बी पी जीवन रेड्डी ने बहुमत संबंधी राय लिखते हुए, "गरीब" शब्द की व्याख्या आर्थिक अर्थ में नहीं बल्कि सामाजिक-आर्थिक अर्थ में की। इस विचलन के कारण उप-वर्गीकरण के मुद्दे पर

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

विचार करते समय विद्वान न्यायाधीशों ने एक अलग दृष्टिकोण अपनाया। न्यायमूर्ति पांडियन ने कहा कि सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग के एक हिस्से को वरीयता देने से वर्ग का दूसरा हिस्सा समाप्त या बहिष्कृत हो जाएगा। विद्वान न्यायाधीश की इस टिप्पणी को पिछली टिप्पणी के साथ पढ़ा जाना चाहिए कि सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग में सामाजिक पिछड़ेपन की एक सामान्य विशेषता होती है, जिसे केवल आर्थिक मानदंडों के आधार पर विभाजित नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार, विद्वान न्यायाधीश ने सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के उप-वर्गीकरण को असंवैधानिक नहीं पाया, बल्कि आर्थिक मानदंडों के आधार पर वर्ग का उप-वर्गीकरण, जो लाभार्थी वर्ग के निर्धारण से अलग है। विद्वान न्यायाधीश के निर्णय का एक अन्य कारण उप-वर्गीकरण का मॉडल था जो कार्यालय ज्ञापन द्वारा निर्धारित किया गया था। कार्यालय ज्ञापन में यह प्रावधान किया गया था कि गरीब वर्ग को किसी वर्ग के लिए आरक्षित सभी सीटों पर वरीयता दी जाएगी, तथा शेष को इससे बाहर रखने की संभावना भी खुली रहेगी।

94. न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने कहा कि पिछड़े वर्ग को पिछड़ा और सर्वाधिक पिछड़ा वर्ग में वर्गीकृत करने में कोई संवैधानिक या कानूनी रोक नहीं है। विद्वान न्यायाधीश ने माना कि उप-वर्गीकरण दो कारणों से वैध है। पहला, एक ही वर्ग में परस्पर पिछड़ापन हो सकता है और ऐसी स्थिति में उप-वर्गीकरण यह सुनिश्चित करता है कि वर्ग का अधिक पिछड़ा व्यक्ति लाभ प्राप्त कर सके। दूसरा, संवैधानिक योजना में स्पष्ट रूप से उप-वर्गीकरण का प्रावधान है। अनुच्छेद 16(4) लाभार्थी वर्ग को केवल "पिछड़े वर्ग" के रूप में पहचानता है, जबकि अनुच्छेद 15(4) स्पष्ट रूप से सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की पहचान करता है। प्रासंगिक अवलोकन नीचे उद्धृत हैं:

803. इस मुद्दे को देखने का एक और तरीका भी है। अनुच्छेद 16(4) केवल एक वर्ग अर्थात् "नागरिकों के पिछड़े वर्ग" को मान्यता देता है। यह अनुच्छेद 15(4) की तरह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बारे में अलग से बात नहीं करता है। फिर भी, यह विवाद से परे है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को भी "नागरिकों के पिछड़े वर्ग" में शामिल किया गया है और उनके पक्ष में अलग से आरक्षण प्रदान किया जा सकता है। यह पूरे देश में एक सर्वमान्य घटना है। इसके पीछे क्या तर्क है? यह है कि अगर अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति और अन्य पिछड़ा वर्ग को एक साथ जोड़ दिया जाए, तो ओबीसी सभी रिक्टियों को ले लेंगे और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को बेसहारा छोड़ देंगे। यही तर्क अधिक पिछड़े और पिछड़े के बीच वर्गीकरण को भी उचित ठहराता है। हमारा यह कहने का मतलब नहीं है – हम दोहरा सकते हैं – कि ऐसा किया जाना चाहिए। हम केवल यह कह रहे हैं कि यदि कोई राज्य ऐसा करना चाहता है, तो यह कानून में अस्वीकार्य नहीं है।"

95. विद्वान न्यायाधीश ने कार्यालय ज्ञापन में "वरीयता" वाक्यांश का अर्थ "न्यायसंगत आबंटन" के रूप में लगाया है, ताकि वरीयता सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग के कम पिछड़े लोगों को लाभ से वंचित न करे।

96. पिछड़े वर्गों के उप-वर्गीकरण के संबंध में, न्यायमूर्ति सावंत ने कहा कि दोनों उप-श्रेणियां अगड़े वर्ग की तुलना में काफी हद तक (तुलनात्मक रूप से नहीं) पिछड़ी होनी चाहिए और उप-श्रेणियों के बीच पिछड़ेपन में पर्याप्त अंतर होना चाहिए। विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि यदि ये दोनों मानदंड पूरे होते हैं, तो उप-वर्गीकरण करना न केवल उचित है, बल्कि अनिवार्य भी है। न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी की राय को दोहराते हुए न्यायमूर्ति सावंत

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

ने कहा कि यदि वरीयता मॉडल को अपनाया जाता है, तो उप-वर्गीकरण से वर्गों का बहिष्कार हो जाएगा, बजाय उस मॉडल के जिसके तहत सबसे पिछड़े वर्गों को कुछ प्रतिशत सीटें आवंटित की जाती हैं।

97. **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में की गई टिप्पणियों में उप-वर्गीकरण के संबंध में निम्नलिखित तीन सिद्धांतों को स्पष्ट किया गया है:

- क. किसी वर्ग के भीतर उप-वर्गीकरण एक संवैधानिक आवश्यकता है, ताकि किसी वर्ग के दो वर्गों के बीच अंतर होने की स्थिति में मौलिक समानता सुनिश्चित की जा सके;
- ख. उप-वर्गीकरण से वर्ग में से किसी एक श्रेणी का बहिष्कार नहीं होना चाहिए। ऐसा मॉडल अपनाया जाना चाहिए जो वर्ग की सभी श्रेणियों को पर्याप्त अवसर प्रदान करे; और
- ग. किसी वर्ग के बीच उप-वर्गीकरण उचित आधार पर होना चाहिए। न्यायमूर्ति सावंत ने माना कि श्रेणियों के बीच अंतर पर्याप्त होना चाहिए। न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने माना कि उप-वर्गीकरण उचित होना चाहिए।

a. इंद्रा साहनी ने अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण को बाहर नहीं रखा

98. **चिन्नैया (उपरोक्त)** मामले में, इस न्यायालय ने टिप्पणी की थी कि अन्य पिछड़ा वर्ग के उप-वर्गीकरण पर **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** मामले के सिद्धांत अनुसूचित जातियों पर लागू नहीं होंगे क्योंकि निर्णय में विशेष रूप से टिप्पणी की गई थी कि इसमें केवल अन्य पिछड़ा वर्ग के उप-वर्गीकरण पर निर्णय दिया जा रहा है, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर नहीं। **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** मामले में दो स्थानों पर न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने टिप्पणियों को अन्य पिछड़ा वर्गों तक सीमित रखा तथा उन्हें अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों तक विस्तारित नहीं किया। अनुच्छेद 16(4) के तहत नागरिकों के पिछड़े वर्ग की पहचान से निपटते हुए, विद्वान न्यायाधीश ने निम्नलिखित टिप्पणियाँ की:

“781. सबसे पहले, हम यह कह सकते हैं कि इस चर्चा के उद्देश्य के लिए, हम अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों को अलग रखते हैं (क्योंकि वे निश्चित रूप से पिछड़े वर्गों में शामिल हैं), सिवाय यह टिप्पणी करने के कि अनुच्छेद 16(4) द्वारा परिकल्पित पिछड़े वर्गों में कुछ जातियाँ शामिल हैं – क्योंकि इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि अनुसूचित जातियों में काफी जातियाँ शामिल हैं।”

99. ये टिप्पणियाँ अनुच्छेद 15(5) के तहत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को लाभार्थियों के एक अलग वर्ग के रूप में मान्यता दिए जाने और अनुच्छेद 16(4) में उनके अनुपस्थित होने के विशिष्ट संदर्भ में की गई थीं। न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने कहा कि यह स्वीकार किया जाता है कि अनुच्छेद 16(4) में पिछड़े वर्ग में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति शामिल हैं, भले ही प्रावधान में ऐसा स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया है।

100. अनुच्छेद 16(4) के तहत लाभार्थी वर्ग की पहचान में क्रीमी लेयर को शामिल न करने के मुद्दे पर चर्चा करते हुए न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने कहा कि यह चर्चा अन्य पिछड़ा वर्ग तक ही सीमित है और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से इसका कोई संबंध नहीं है। इस टिप्पणी को उस संदर्भ में भी समझना चाहिए जिसमें यह की गई थी। आरक्षण के प्रयोजनों के लिए अन्य पिछड़ा वर्ग की क्रीमी लेयर को बाहर रखने की

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

आवश्यकता पर चर्चा करते हुए, न्यायमूर्ति रेड्डी ने कहा कि सामाजिक पिछड़ापन अनुच्छेद 16(4) के तहत पहचाने गए वर्ग में जोड़ने वाली कड़ी है। विद्वान न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि यदि वर्ग के कुछ सदस्य सामाजिक रूप से आगे हैं तो वर्ग समरूप वर्ग नहीं रहता। इस न्यायालय ने कहा कि आर्थिक उन्नति क्रीमी लेयर को बाहर करने के लिए एक प्रासंगिक मानदंड हो सकता है बशर्ते कि आर्थिक उन्नति इतनी अधिक हो कि सामाजिक उन्नति हो। यह टिप्पणी कि यह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर लागू नहीं होती, इसलिए की गई क्योंकि वे अन्य पिछड़े वर्ग की तुलना में अधिक गंभीर सामाजिक पिछड़ेपन से ग्रस्त हैं। न्यायालय ने इस मुद्दे पर निर्णय करना आवश्यक नहीं समझा कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों की वित्तीय उन्नति से सामाजिक उन्नति होगी या नहीं, क्योंकि **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में मुद्दा केवल अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षण के संबंध में था।

101. अब प्रश्न यह है कि क्या उप-वर्गीकरण के सिद्धांत को अनुसूचित जातियों तक विस्तारित न करने का कोई कारण है, जबकि इस न्यायालय की नौ न्यायाधीशों की पीठ ने पहले ही अनुच्छेद 15 और 16 के अंतर्गत लाभार्थी वर्गों तक इस सिद्धांत को विस्तारित कर दिया है। यह सच है कि अन्य पिछड़ा वर्ग का सामाजिक पिछड़ापन अनुसूचित जातियों के साथ तुलनीय नहीं है, क्योंकि वे अनुसूचित जातियों की तुलना में सामाजिक रूप से अधिक उन्नत हैं। यही कारण है कि संविधान ने अनुच्छेद 15(4) में उन्हें दो अलग-अलग वर्गों में बांटा है। यह भी सच है कि अन्य पिछड़ा वर्ग में शामिल जातियां किसी भी प्रकार के सामाजिक पिछड़ेपन से ग्रस्त नहीं हैं। अन्य पिछड़ा वर्ग में शामिल जातियां एक निश्चित सीमा तक तुलनात्मक पिछड़ेपन से ग्रस्त हैं, लेकिन उनके बीच सामाजिक पिछड़ेपन का स्वरूप भिन्न हो सकता है। इस स्थिति के विपरीत, अनुसूचित जातियां अस्पृश्यता के कारण सामाजिक पिछड़ेपन के एक सामान्य रूप से पीड़ित हैं।

102. यह तर्क देना एक बात है कि अनुसूचित जातियों को अन्य पिछड़ा वर्ग के विपरीत उनकी सीमित विविधता और सामान्य पहचान के आधार पर उप-वर्गीकृत नहीं किया जा सकता। लेकिन यह एक अलग मुद्दा है कि उप-वर्गीकरण के सिद्धांत को अनुसूचित जातियों पर लागू करने की इस आधार पर पूरी तरह से उपेक्षा की जाए कि **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** ने इसके आवेदन को अन्य पिछड़ा वर्ग तक सीमित कर दिया था। हम यह नहीं पाते हैं कि **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में उप-वर्गीकरण पर की गई टिप्पणियों का आशय इसे अन्य पिछड़े वर्गों तक सीमित करना था, तथा अनुसूचित जातियों को इसमें शामिल नहीं किया गया था। उप वर्गीकरण के सिद्धांत को **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** मामले में न्यायिक स्वीकृति दी गई थी ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि मूलभूत समानता का सिद्धांत पूरा हो। उप वर्गीकरण का सिद्धांत अनुसूचित जातियों पर लागू होगा यदि जातियों/समूहों के बीच घटकों की सामाजिक स्थिति तुलनीय नहीं है। आगामी अनुभाग में, हम विश्लेषण करेंगे कि क्या अनुच्छेद 341, काल्पनिक कल्पना के संचालन के माध्यम से एक एकीकृत समरूप वर्ग का निर्माण करता है जिसे आगे वर्गीकृत नहीं किया जा सकता।

iv. अनुच्छेद 341 में कथित कल्पना का अर्थ

103. अनुच्छेद 366(24) अनुसूचित जातियों को उन जातियों, समूहों, नस्लों या जनजातियों के रूप में परिभाषित करता है जिन्हें अनुच्छेद 341(1) के तहत अनुसूचित जातियां माना जाता है। यह प्रावधान उन

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

मानदंडों पर कोई सहायता प्रदान नहीं करता है जिन्हें किसी जाति, समूह, मूलवंश या जनजाति को अनुच्छेद 341 के अंतर्गत अनुसूचित जाति के रूप में अधिसूचित किए जाने के लिए पूरा करना आवश्यक है। परिभाषा खंड केवल अनुच्छेद 341 द्वारा निर्मित काल्पनिक कल्पना को संदर्भित करता है। अनुच्छेद 341(1) भी किसी जाति को अनुसूचित जाति में शामिल करने के लिए मानदंड निर्धारित नहीं करता है। अनुच्छेद 341 का उप-खंड (1) राष्ट्रपति की उस शक्ति का उल्लेख करता है जिसके तहत वह जातियों, मूलवंशों, जनजातियों या इन तीन समूहों के भागों या समूहों को निर्दिष्ट कर सकता है। इस प्रकार निर्दिष्ट किए जाने पर, उन्हें राज्य के संबंध में संविधान के प्रयोजन के लिए अनुसूचित जाति माना जाएगा। प्रतिवादियों ने कहा कि "कल्पित कल्पना" एक समरूप एकीकृत वर्ग बनाती है जिसे आगे वर्गीकृत नहीं किया जा सकता। इस प्रस्तुति की वैधता का विश्लेषण किया जाना चाहिए।

a. चिन्नैया द्वारा अनुच्छेद 341 में कथित काल्पनिकता पर

104. **चिन्नैया (उपरोक्त)** में अपनी राय में, न्यायमूर्ति संतोष हेगड़े ने **एनएम थॉमस (उपरोक्त)** पर अवलम्ब लेते हुए अवधारित किया कि अनुसूचित जातियां, हालांकि विभिन्न जातियों, नस्लों और जनजातियों से ली गई हैं, राष्ट्रपति की अधिसूचना द्वारा एक नया दर्जा प्राप्त करती हैं। न्यायमूर्ति सेमा ने अवधारित किया कि अनुच्छेद 341 (1) के तहत अधिसूचना के माध्यम से अधिसूचित होने के बाद, अनुसूचित जातियों को समरूप दर्जा प्राप्त हो जाता है। विद्वान न्यायाधीश ने तब अवधारित किया कि अधिसूचना का उद्देश्य अनुसूचित जातियों को एक समरूप समूह के रूप में विशेष संरक्षण प्रदान करना था, जिन्हें आंध्र प्रदेश अधिनियम द्वारा जिस तरह से पुनर्समूहीकृत किया गया था, उस तरह से पुनर्समूहीकृत नहीं किया जा सकता। न्यायमूर्ति सिन्हा ने कहा कि अनुसूचित जातियां विशेष संरक्षण के हकदार व्यक्तियों का एक वर्ग हैं और उनके बीच कोई भेदभाव नहीं किया जा सकता, क्योंकि वे सभी अत्यंत पिछड़ेपन और अपर्याप्त प्रतिनिधित्व की कसौटी पर खरे उतरते हैं। उन्होंने विशेष रूप से कहा कि अनुसूचित जातियां "अति पिछड़े नागरिकों का एक एकीकृत वर्ग" हैं।

105. **जरनैल सिंह (उपरोक्त)** में एक मुद्दा यह था कि क्या **नागराज (उपरोक्त)** में दिया गया निर्णय अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर क्रीमी लेयर के बहिष्कार के सिद्धांत को लागू करने के लिए सही था। **जरनैल सिंह (उपरोक्त)** में न्यायालय के समक्ष यह तर्क दिया गया था कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर क्रीमी लेयर सिद्धांत के लागू होने से सूची में संशोधन का प्रभाव पड़ेगा, जो अनुच्छेद 341(2) और 342(2) के तहत स्वीकार्य नहीं है। संविधान पीठ ने कहा कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से क्रीमी लेयर को बाहर करना समानता संहिता के तहत उचित है, क्योंकि क्रीमी लेयर के सदस्यों को अब आरक्षण की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वे "आगे बढ़ गए हैं ताकि वे भारत के अन्य नागरिकों के साथ समान आधार पर हाथ से हाथ मिलाकर आगे बढ़ सकें।" पीठ की ओर से लिखते हुए न्यायमूर्ति नरीमन ने कहा कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण में क्रीमी लेयर के सिद्धांत को लागू करने से अनुच्छेद 341 और 342 के तहत अधिसूचित सूचियों में छेड़छाड़ का प्रभाव नहीं पड़ेगा, क्योंकि पूरी जाति को सूची से बाहर नहीं रखा गया है, बल्कि केवल उन लोगों को बाहर रखा गया है जिन्होंने पिछड़ेपन पर काबू पा लिया है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

106. इस प्रकार, यह निर्धारित करने की आवश्यकता है कि क्या **चित्रैया (उपरोक्त)** में अनुच्छेद 341 के दायरे की व्याख्या सही है। हमें सबसे पहले यह तय करना होगा कि क्या अनुच्छेद 341 एक काल्पनिक कथा बनाता है। दूसरा, यदि ऐसा है, तो अनुच्छेद 341 के तहत बनाई गई कानूनी कथा के उद्देश्य और प्रभाव का विश्लेषण किया जाना चाहिए। यानी, हमें यह तय करना होगा कि क्या कानूनी कल्पना एक समरूप वर्ग बनाती है जिसे आगे वर्गीकृत नहीं किया जा सकता। तीसरा, अनुच्छेद 341 (2) के तहत निषेध का दायरा अनुच्छेद 341 (1) द्वारा बनाई गई कानूनी कल्पना के प्रभाव के संबंध में निर्धारित किया जाना चाहिए।

b. काल्पनिक कथा साहित्य का दायरा

107. “माना जाता है” वाक्यांश का उपयोग किसी कानूनी कल्पना के लिए निर्णायक नहीं है। माना शब्द का उपयोग कई उद्देश्यों के लिए किया जाता है, जैसे कि किसी शब्द के कृत्रिम निर्माण के लिए और अनिश्चित निर्माणों को स्पष्ट करने के लिए, या सीधे तौर पर “माना जाता है” का अर्थ देने के लिए। कानूनी कल्पना अनिवार्य रूप से एक धारणा है कि कुछ तथ्य जो वास्तव में मौजूद नहीं हैं, उन्हें कानून के उद्देश्य के लिए वास्तविक और विद्यमान माना जाएगा। न्यायालयों ने कानूनी कल्पनाओं के संचालन पर दो सिद्धांत विकसित किए हैं। पहला सिद्धांत यह है कि किसी कानूनी कथा को उसके ‘वैध क्षेत्र’ तक ही सीमित रखा जाना चाहिए, अर्थात् उस विशिष्ट उद्देश्य तक जिसके लिए उसे रचा गया हो। बंगाल इम्युनिटी कंपनी लिमिटेड, बिहार राज्य मामले में इस न्यायालय की सात न्यायाधीशों की पीठ ने माना कि कानूनी कल्पनाएं केवल एक निश्चित उद्देश्य के लिए बनाई जाती हैं और उन्हें केवल उस “वैध क्षेत्र” तक ही सीमित रखा जाना चाहिए। उस मामले में अपने निर्णय में, इस न्यायालय ने माना कि संविधान (छठा संशोधन) अधिनियम, 1956 से पहले अनुच्छेद 286(1)(ए) के स्पष्टीकरण में दी गई काल्पनिक धारणा (जिसके अनुसार प्रत्यक्ष बिक्री के कारण बिक्री उस राज्य में हुई मानी जाती थी, जहां माल वितरित किया गया था) केवल अनुच्छेद 286(1)(ए) पर लागू होती थी, अनुच्छेद 286(2) पर नहीं। इस न्यायालय ने माना कि अनुच्छेद 286(1)(ए) का दायरा, जो राज्य को राज्य के बाहर बिक्री पर कर लगाने से रोकता है, अनुच्छेद 286 (2) के दायरे से अलग है, जिसमें कहा गया है कि जब तक कानून द्वारा अन्यथा प्रावधान न किया जाए, राज्य के कानून अंतर-राज्यीय व्यापार या वाणिज्य के दौरान हुई बिक्री या खरीद पर कर नहीं लगा सकते।

108. दूसरा सिद्धांत यह है कि कानूनी कल्पना का दायरा उन परिणामों तक बढ़ाया जाना चाहिए जो उसके निर्माण से “तार्किक रूप से” निकलते हैं। ईस्ट एंड ड्वेलिंग कंपनी लिमिटेड बनाम फिन्सबरी बरो काउंसिल में लॉर्ड एस्क्विथ की राय इस प्रस्ताव के लिए अग्रणी मामला है। लॉर्ड ने कहा कि कानूनी कल्पना का प्रभाव केवल उन तथ्यों को मानने तक सीमित नहीं होना चाहिए जो वास्तविक नहीं हैं, बल्कि कानूनी कल्पना से उत्पन्न होने वाले प्रभावों और परिणामों को समझने के लिए इसका विस्तार किया जाना चाहिए। हालाँकि, एक काल्पनिक कल्पना को जन्म देने वाला कानून किसी कानूनी परिणाम के पक्ष में पूर्वधारणाएं नहीं बना सकता, बल्कि केवल उन तथ्यों के बारे में पूर्वधारणाएं बना सकता है जिनसे कुछ कानूनी परिणाम निकल सकते हैं। दिल्ली क्लॉथ एंड जनरल मिल्स कंपनी लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य मामले में कोटा नगरपालिका सीमा (निरंतर अस्तित्व) वैधीकरण अधिनियम, 1975 की संवैधानिक वैधता को चुनौती दी गई थी। नगर पालिका अधिनियम में नगर

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पालिकाओं के परिसीमन के लिए एक अनिवार्य प्रक्रिया निर्धारित की गई है, जिसमें आपत्तियां आमंत्रित करने के लिए एक सार्वजनिक नोटिस भी शामिल है। राज्य में कोटा नगरपालिका में कुछ गांवों को शामिल करने और बाहर करने में इस अनिवार्य प्रक्रिया का उल्लंघन किया गया। वैधीकरण अधिनियम में प्रावधान किया गया कि नगर पालिका अधिनियम के अनिवार्य प्रावधानों के बावजूद, वे गांव हमेशा से कोटा नगरपालिका की सीमा के भीतर ही विद्यमान माने जाएंगे। न्यायालय ने अवधारित किया कि वैधीकरण अधिनियम के लिए किसी तथ्य को मानने के बजाय किसी कानूनी स्थिति को मानना आवश्यक है, जिससे ऐसे कानूनी परिणाम निकलेंगे। पीठ ने पाया कि यह किसी कल्पना का निर्माण करने की अनुमति नहीं है। अनुच्छेद 341 की व्याख्या उपरोक्त सिद्धांतों के आधार पर की जानी चाहिए।

c. अनुच्छेद 341 कोई काल्पनिक धारणा नहीं बनाता

109. पुनीत राय बनाम दिनेश चौधरी मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष मुद्दा यह था कि क्या प्रतिवादी, जिसने विधानसभा में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सीट के लिए चुनाव लड़ा था, अनुसूचित जाति समुदाय से था। न्यायमूर्ति सिन्हा ने सहमति जताते हुए एक टिप्पणी की कि अनुच्छेद 341(1) एक काल्पनिक कथा बनाता है। हालांकि, यह टिप्पणी निर्णय का अनुपात निर्णायक नहीं है। इसलिए, यह विश्लेषण करने की आवश्यकता है कि क्या अनुच्छेद 341(1) एक काल्पनिक कथा बनाता है।

110. अनुच्छेद 341(1) में तीन भाग हैं। पहला भाग किसी जाति को अनुसूचित जाति के रूप में अधिसूचित करने की प्रक्रिया निर्धारित करता है। राष्ट्रपति, राज्यपाल के परामर्श से (यदि अधिसूचना किसी राज्य के संबंध में है) अनुसूचित जातियों को निर्दिष्ट करने के लिए सशक्त हैं। दूसरे भाग में, अनुच्छेद 366(26) के समान प्रावधान, इस बारे में कुछ स्पष्टता प्रदान करता है कि अनुसूचित जाति के रूप में किसे अधिसूचित किया जा सकता है: जाति, नस्ल या जनजाति या जाति, नस्ल या जनजाति के हिस्से या समूह। तीसरे भाग में "इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियाँ समझी जाएँ" शब्दों का प्रयोग किया गया है, जिसमें एक मूल प्रावधान शामिल है। "माना गया" शब्द के अभाव में, यह प्रावधान केवल एक प्रक्रियात्मक खंड होता, जो राष्ट्रपति को अनुसूचित जातियों को अधिसूचित करने का अधिकार देता। "मान्य" शब्द का उपयोग यह सुनिश्चित करता है कि जातियों या जातियों के समूहों को उन्हें अधिसूचित करने के कार्य द्वारा अनुसूचित जातियों के रूप में माना जाएगा। इस प्रकार, अनुच्छेद 341(2) और 342(2) में 'मान्य' शब्द को शामिल करने से कोई कानूनी कल्पना नहीं बनती है क्योंकि यह कोई कृत्रिम निर्माण प्रदान नहीं करता है। इस हद तक, **पुनीत राय (उपरोक्त)** में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ की टिप्पणियां कि अनुच्छेद 341 (2) एक काल्पनिक धारणा बनाता है, गलत हैं।

111. **मिलिंद (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने कहा कि अनुच्छेद 341(1) का उद्देश्य संविधान के प्रयोजन के लिए अनुसूचित जातियों को मान्यता देना और उनकी पहचान करना है तथा इस बात पर विवाद को रोकना है कि संविधान के तहत लाभों के प्रयोजन के लिए कौन अनुसूचित जाति होगी। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में ऐसी जातियाँ या समूह शामिल हैं जो अस्पृश्यता से लेकर व्यावसायिक अलगाव तक, सामाजिक पिछड़ेपन की विभिन्न डिग्री से पीड़ित हैं। इन जातियों को संविधान द्वारा अलग-अलग वर्गों में बांटा

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

गया है, जैसे अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति, जो सकारात्मक कार्रवाई के माध्यम से लाभ प्रदान करने के उद्देश्य से हाशिए पर होने की डिग्री के आधार पर है। कोई जाति अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति या सामाजिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़ी जाति तभी बनती है जब राष्ट्रपति क्रमशः अनुच्छेद 341, 342 और 342 ए के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए इस आशय की अधिसूचना जारी करते हैं। इस प्रकार, यह तर्क दिया जा सकता है कि प्रावधान में “माना गया” शब्द, सूचियों में शामिल जातियों के लिए एक संवैधानिक पहचान बनाने के लिए एक कानूनी कल्पना बनाता है।

112. यदि यह स्वीकार भी कर लिया जाए कि संवैधानिक पहचान के निर्माण के लिए काल्पनिक कथा का प्रयोग किया जाता है, तो भी काल्पनिक कथा को न तो अन्य उद्देश्यों के लिए विस्तारित किया जा सकता है और न ही यह ऐसे कानूनी परिणाम पैदा कर सकता है जो काल्पनिक कथा से तार्किक रूप से न निकलते हों। प्रतिवादियों के इस तर्क को स्वीकार करते हुए कि एक बार सूची में शामिल हो जाने के बाद, अनुसूचित जातियों की सूची में निर्दिष्ट समुदायों की एकरूपता मान लेना कानूनी कल्पना को ऐसे उद्देश्य तक विस्तारित करने के समान होगा जिसकी परिकल्पना नहीं की गई थी। इस काल्पनिक कथा का उद्देश्य उन जातियों की ‘पहचान’ करना है जो अनुसूचित जातियां हैं। जातियों या समूहों की अनुसूचित जातियों के रूप में पहचान का तार्किक परिणाम यह नहीं है कि इससे एक समरूप इकाई बनती है। अनुसूचित जाति श्रेणी में कुछ जातियों को शामिल करने का उद्देश्य उन्हें अन्य जातियों से अलग करना है जो इस श्रेणी में शामिल नहीं हैं। शामिल किए जाने से स्वचालित रूप से एक समान और आंतरिक रूप से समरूप वर्ग का निर्माण नहीं होता है जिसे आगे वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है। अनुच्छेद 341 अनुसूचित जातियों को अन्य समूहों से अलग करके उनकी पहचान के सीमित उद्देश्य के लिए एक कानूनी कल्पना बनाता है। यह संविधान के उद्देश्य के लिए अनुसूचित जातियों के बीच या अनुसूचित जातियों के बीच विविधता के बारे में कोई मार्गदर्शन नहीं देता है। अनुसूचित जातियों को अन्य श्रेणियों से अलग पहचान प्रदान करने वाली कानूनी कल्पना को अनुसूचित जातियों के बीच आंतरिक मतभेदों के अस्तित्व या गैर-अस्तित्व के बारे में निष्कर्ष निकालने के लिए नहीं बढ़ाया जा सकता है। एकमात्र तार्किक परिणाम यह है कि सूची में शामिल प्रत्येक समूह को वे लाभ प्राप्त होंगे जो संविधान अनुसूचित जातियों को एक वर्ग के रूप में प्रदान करता है।

113. **चिन्नैया (उपरोक्त)** में न्यायमूर्ति संतोष हेगड़े ने कहा कि अनुच्छेद 341 के तहत शक्ति के प्रयोग में राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचित जातियां अपने आप में एक वर्ग बनाती हैं। इस प्रयोजन के लिए, विद्वान न्यायाधीश ने **एनएम थॉमस (उपरोक्त)** मामले में संविधान पीठ की निम्नलिखित टिप्पणियों पर अवलम्ब लिया:

क. न्यायमूर्ति मैथ्यू ने कहा कि अनुसूचित जातियों के सदस्यों को राष्ट्रपति की अधिसूचना द्वारा एक नया दर्जा प्राप्त होता है;

(ख) न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने कहा कि अनुसूचित जातियां हिंदू धर्म की जातियां नहीं हैं, बल्कि वे जातियों, नस्लों, समूहों, जनजातियों, समुदायों या उनके भागों का एक समूह हैं, जो जांच में सबसे निम्न पाए गए हैं और जिन्हें बड़े पैमाने पर राज्य सहायता की आवश्यकता है और जिन्हें राष्ट्रपति द्वारा इस रूप में अधिसूचित किया गया है; और

(ग) न्यायमूर्ति फजल अली ने कहा कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को संविधान में विशेष दर्जा दिया गया है और वे अपने आप में एक वर्ग हैं।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

114. उपरोक्त टिप्पणियों के निहितार्थ को समझने के लिए मामले के संदर्भ को समझना आवश्यक है। **एनएम थॉमस (उपरोक्त)** मामले में अनुसूचित जातियों के सदस्यों को प्रवेश परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए रियायतें देने वाले नियमों को चुनौती दी गई थी। न्यायालय के समक्ष एक मुद्दा यह था कि क्या अनुसूचित जातियों के सदस्यों को दी गई रियायत अनुच्छेद 16(2) का उल्लंघन करती है, क्योंकि यह केवल “जाति” के आधार पर भेदभाव करती है। अनुच्छेद 16(2) द्वारा लगाए गए प्रतिबंध को दूर करने के लिए, विद्वान न्यायाधीशों ने देखा कि अनुसूचित जातियों के पक्ष में सकारात्मक कार्रवाई का प्रावधान किया गया है, जो एक बार अनुच्छेद 341 के तहत शक्ति के प्रयोग में राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचित होने के बाद एक “जाति” नहीं बल्कि एक वर्ग है। राष्ट्रपति की अधिसूचना द्वारा अनुसूचित जाति के रूप में गठित वर्ग में अनेक जातियां शामिल हैं, जिससे एक वर्ग का निर्माण होता है। **एनएम थॉमस (उपरोक्त)** में की गई टिप्पणियां यह कहने से आगे नहीं बढ़तीं कि यह एक समरूप वर्ग है जिसे आगे वर्गीकृत नहीं किया जा सकता। वास्तव में, न्यायमूर्ति मैथ्यू ने अगले ही पैराग्राफ में कहा कि यदि एक वर्ग के भीतर एक समूह को दूसरे समूह से अलग करने वाला कोई स्पष्ट अंतर है तो वर्ग के भीतर आगे भी वर्गीकरण हो सकता है।¹⁶⁸ इसके अतिरिक्त, **एनएम थॉमस (उपरोक्त)** में इस न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण कि अनुसूचित जातियां एक वर्ग हैं क्योंकि उनमें जातियों का एक समूह शामिल है, को **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में नौ न्यायाधीशों की पीठ के फैसले के संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए, जहां इस न्यायालय ने कहा था कि जाति स्वयं एक वर्ग है। इसलिए, हमारा विचार है कि **चिन्नैया (उपरोक्त)** में न्यायमूर्ति हेगड़े द्वारा निकाला गया निष्कर्ष कि **एनएम थॉमस (उपरोक्त)** में उपरोक्त टिप्पणियों के आधार पर अनुसूचित जातियां एक समरूप वर्ग हैं, गलत है।

d. अनुच्छेद 341(1) को अनुच्छेद 341(2) के साथ पढ़ने पर केवल अनुसूचित जातियों की सूची से बहिष्करण और सूची में शामिल करने पर रोक लगती है।

115. **चिन्नैया (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय ने माना कि उप-वर्गीकरण राज्य विधानमंडल द्वारा राष्ट्रपति सूची के साथ छेड़छाड़ के बराबर है, और इसलिए, यह अनुच्छेद 341(2) का उल्लंघन है जो विशेष रूप से संसद को शक्ति प्रदान करता है। अनुच्छेद 341(2) एकमात्र तरीका निर्धारित करता है जिसके तहत अनुच्छेद 341(1) के तहत राष्ट्रपति अधिसूचना को बदला जा सकता है। प्रावधान में यह प्रावधान है कि राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 341(1) के तहत अधिसूचित की गई जातियों, नस्लों या जनजातियों या उनके भागों या समूहों को केवल संसद द्वारा सूची में शामिल या बाहर किया जा सकता है। खंड के उत्तरार्ध में अत्यधिक सावधानी के साथ कहा गया है कि ‘पूर्वोक्त के अलावा’ अधिसूचना में कोई बदलाव नहीं किया जाएगा। प्रावधान इस प्रकार है:

“(2) संसद विधि द्वारा खंड (1) के अधीन जारी अधिसूचना में निर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में किसी जाति, मूलवंश या जनजाति अथवा किसी जाति, मूलवंश या जनजाति के भाग या समूह को सम्मिलित कर सकेगी या उससे बाहर कर सकेगी, किन्तु जैसा कि पूर्वोक्त है, उसके सिवाय उक्त खंड के अधीन जारी अधिसूचना में किसी पश्चातवर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा।”

(प्रभाव वर्धित)

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

116. डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने संविधान के प्रारूप में अनुच्छेद 300 ए और 300 बी (जो संविधान के अनुच्छेद 341 और 342 के अनुरूप हैं) को शामिल करने का प्रस्ताव करते हुए संकेत दिया कि एक बार अधिसूचित होने के बाद, सूची से कोई भी निष्कासन या सूची में कोई भी जोड़ संसद द्वारा किया जाना था, राष्ट्रपति द्वारा नहीं। उन्होंने कहा कि यह सीमा सूची को बाधित करने वाले “राजनीतिक कारकों” को खत्म करने के लिए थी:

“..एकमात्र सीमा जो लगाई गई है वह यह है कि एक बार राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचना जारी कर दी गई है, जिसे निस्संदेह वे प्रत्येक राज्य की सरकार के परामर्श से और उनकी सलाह पर जारी करेंगे, उसके बाद, यदि इस तरह अधिसूचित सूची से कोई निष्कासन किया जाना है या कोई अतिरिक्त सूची बनाई जानी है, तो उसे संसद द्वारा किया जाना चाहिए, राष्ट्रपति द्वारा नहीं। इसका उद्देश्य राष्ट्रपति द्वारा प्रकाशित अनुसूची में गड़बड़ी के मामले में किसी भी तरह के राजनीतिक कारकों को खत्म करना है।”

117. जब तक अनुच्छेद 341(2) के तहत निर्धारित तरीके से संशोधन नहीं किया जाता, अनुच्छेद 341(1) के तहत अधिसूचित राष्ट्रपति सूची इस बात का निर्णायक है कि कौन सा समुदाय अनुसूचित जाति है और इसे उसी रूप में लिया जाना चाहिए। अनुच्छेद 341(2) अनुच्छेद 341(1) के तहत प्रकाशित सूची में अनुमेय परिवर्तनों के दायरे को निर्धारित करता है और इन सूचियों में बदलाव करने की शक्ति विशेष रूप से संसद में निहित करता है।

118. अनुच्छेद 341(1) और 342(2) में दोहरे प्रतिषेध हैं: पहला, अनुसूचित जाति के रूप में निर्दिष्टीकरण उस राज्य या क्षेत्र की प्रादेशिक सीमाओं तक सीमित है, जिसके लिए किसी विशेष समूह को अधिसूचित किया गया है। उदाहरण के लिए, आंध्र प्रदेश राज्य के लिए अनुसूचित जाति आदेश के भाग-1 की प्रविष्टि 23 में उल्लेख है: “गोडागल्ली, गोदागुला (श्रीकाकुलम, विजयनगरम और विशाखापत्तनम जिलों में)।” इसलिए, सूचीबद्ध समुदायों (गोडागल्ली और गोदागुला) को प्रविष्टि में नामित जिलों के लिए अनुसूचित जाति के रूप में माना जाता है, न कि पूरे राज्य के लिए। मर्ी चंद्र शेखर राव बनाम डीन, सेठ जीएस मेडिकल कॉलेज मामले में, इस न्यायालय की संविधान पीठ ने इस बात पर विचार किया कि क्या आंध्र प्रदेश में अनुसूचित जनजाति के रूप में मान्यता प्राप्त गौड़ा समुदाय का कोई सदस्य महाराष्ट्र में अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित सीट पर प्रवेश ले सकता है। इसका नकारात्मक उत्तर देते हुए, इस न्यायालय ने कहा कि चूंकि देश भर में जाति समूहों की सामाजिक स्थितियाँ अलग-अलग हैं, इसलिए किसी जाति या जनजाति को पूरे देश के लिए अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के रूप में सामान्यीकृत नहीं किया जा सकता है। इसने माना कि अनुच्छेद 341(1) और 342(1) में “उस राज्य के संबंध में” अभिव्यक्ति को एक राज्य में अनुसूचित जाति के रूप में निर्दिष्ट जाति को दूसरे राज्य में अनुसूचित जातियों के लिए लाभ का हकदार मानकर निरर्थक नहीं बनाया जा सकता, जहां यह निर्दिष्ट नहीं है। बीर सिंह बनाम दिल्ली जल बोर्ड 173 में, इस न्यायालय के समक्ष एक मुद्दा यह था कि क्या अनुच्छेद 16(4) के तहत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सकारात्मक कार्रवाई के प्रावधान करने की राज्य की शक्ति संविधान के अनुच्छेद 341(1) और 342(1) के तहत राष्ट्रपति की शक्ति से प्रभावित होती है। संविधान पीठ ने कहा कि अनुच्छेद 16(4) के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए कोई राज्य अनुसूचित जातियों को दिए जाने वाले लाभ उस जाति को नहीं दे सकता जो अनुच्छेद 341(1) के तहत अधिसूचित राष्ट्रपति सूची में शामिल नहीं है। न्यायालय ने माना कि अनुच्छेद 16(4) के तहत सक्षम प्रावधान को

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अनुच्छेद 341 और 342 के साथ सामंजस्यपूर्ण ढंग से पढ़ा जाना चाहिए। इसलिए, यदि कोई कानून उस राज्य/संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में विशेष रूप से सूचीबद्ध नहीं किए गए समूहों के लिए सकारात्मक कार्रवाई की नीति का विस्तार करता है, तो यह अनुच्छेद 341(2) के अधिदेश को दरकिनार कर देगा और अनुच्छेद 341(1) के अधिदेश के विपरीत सूची का अनुचित विस्तार होगा। इस प्रकार, इस न्यायालय ने माना कि आरक्षण का लाभ उस जाति को नहीं दिया जा सकता जो उस राज्य में अनुसूचित जाति के रूप में गणना में नहीं है, यद्यपि उसे किसी अन्य राज्य के संबंध में राष्ट्रपति सूची में स्थान प्राप्त है।

120. **चिन्नैया (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय ने अनुच्छेद 341(2) की व्याख्या राष्ट्रपति की सूची में “छेड़छाड़” करने की शक्ति पर एक सीमा के रूप में की।¹⁷⁵ अनुच्छेद 341(2) में दो भाग हैं। पहला, यह केवल संसद को किसी जाति या समूह या जाति या समूह के किसी भाग को “शामिल या बहिष्कृत” करने की शक्ति प्रदान करता है, और दूसरा, “जैसा कि पूर्वोक्त है” को छोड़कर, अनुच्छेद 341(1) के तहत राष्ट्रपति द्वारा जारी अधिसूचना किसी अन्य बाद की अधिसूचना द्वारा नहीं बदली जाएगी। अनुच्छेद 342(2) के दायरे को समझने के लिए प्रावधान के दूसरे भाग के अभिप्राय को समझना महत्वपूर्ण है।

121. अनुच्छेद 341(2) के दूसरे भाग को अनुच्छेद 367 के संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए। अनुच्छेद 367 में प्रावधान है कि जब तक संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, संविधान की व्याख्या के लिए सामान्य खंड अधिनियम 1897 उसी प्रकार लागू होगा, जिस प्रकार वह भारत के डोमिनियन के विधानमंडल के अधिनियम की व्याख्या के लिए लागू होता है। सामान्य खंड अधिनियम 1897 की धारा 21 में कहा गया है कि अधिसूचना जारी करने की शक्ति में अधिसूचना में कुछ जोड़ने, उसे संशोधित करने, उसमें परिवर्तन करने या उसे रद्द करने की शक्ति शामिल है। अनुच्छेद 341(1) के साथ अनुच्छेद 367 और जनरल क्लॉज एक्ट 1897 की धारा 21 को पढ़ने पर राष्ट्रपति के पास अधिसूचना में कुछ जोड़ने, उसे संशोधित करने, उसमें बदलाव करने या उसे रद्द करने का अधिकार होगा। अनुच्छेद 341(2) का पहला भाग सूची में शामिल करने और उसमें से कुछ बाहर करने की राष्ट्रपति की शक्ति को हटाता है और इसे संसद के अधिकार क्षेत्र में रखता है। यह शक्ति जनरल क्लॉज एक्ट की धारा 21 में “जोड़ने” या “संशोधन” शब्दों से मिलती है। अनुच्छेद 341(2) का दूसरा भाग यह सुनिश्चित करता है कि राष्ट्रपति के पास सूची में “परिवर्तन” करने की कोई अवशिष्ट शक्ति नहीं है। आम बोलचाल में “परिवर्तन” शब्द का अर्थ बहिष्करण या समावेश से कहीं अधिक व्यापक है। इसमें सूची में आंशिक परिवर्तन करके भी बदलाव करना शामिल है। हालाँकि, अनुच्छेद 341(2) में “भिन्नता” वाक्यांश का अर्थ सूची में शामिल करना और सूची से बाहर करना है, न कि इसके विपरीत। प्रावधान के दूसरे भाग में “पूर्वोक्त के अलावा” वाक्यांश के उपयोग से यह स्पष्ट है। इस प्रकार, अनुच्छेद 341(2) के अनुसार, राष्ट्रपति को अनुच्छेद 341(1) के अंतर्गत अधिसूचित सूची में कुछ शामिल करने या कुछ बाहर करने के माध्यम से उसमें परिवर्तन करने की शक्ति नहीं है।

122. सूची में परिवर्तन करने की संसद की शक्ति में न केवल “किसी जाति, मूलवंश या जनजाति” को बाहर करने या शामिल करने की शक्ति शामिल है, बल्कि “किसी जाति, मूलवंश या जनजाति के भागों या समूहों” को बाहर करने या शामिल करने की शक्ति भी शामिल है। **मिलिंद (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय के समक्ष मुद्दा यह था कि क्या महाराष्ट्र राज्य से संबंधित अनुसूचित जनजाति आदेश में ‘हल्बा/हल्बी’ शीर्षक वाली प्रविष्टि को ‘हल्बा-कोष्ठी’ जनजाति को शामिल करने के लिए पढ़ा जा सकता है। इस न्यायालय ने माना कि राष्ट्रपति की सूची को उसी रूप में पढ़ा जाना चाहिए जैसा वह है और इस बात को स्थापित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं दिया जा

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

सकता है कि अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति की सूची में किसी विशेष समूह को शामिल किया गया है जो विशेष रूप से सूची में शामिल नहीं था। न्यायालय ने माना कि कोई भी अन्य व्याख्या अनुच्छेद 341(2) द्वारा संसद को दी गई शक्ति का उल्लंघन करेगी। न्यायमूर्ति शिवराज वी पाटिल ने खंडपीठ की ओर से लिखते हुए कहा कि जब तक किसी जनजाति को अनुच्छेद 342 के तहत सूची में स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट नहीं किया जाता है, जो कि अनुच्छेद 341 के समरूप है, तब तक कोई जांच नहीं की जा सकती है या यह साबित करने के लिए कोई सबूत पेश नहीं किया जा सकता है कि ऐसी जनजाति, या उसका कोई हिस्सा, राष्ट्रपति के आदेश में शामिल प्रविष्टि के अर्थ में शामिल है। इस न्यायालय ने रेखांकित किया कि राज्यों की शक्ति अनुच्छेद 341(1) के तहत राष्ट्रपति सूची की अधिसूचना से पहले परामर्श के प्रारंभिक चरण में सिफारिशें करने तक सीमित है। इस न्यायालय ने टिप्पणी की कि संविधान राजनीतिक दबाव के कारण सूची में किसी भी तरह के बदलाव को रोकने के लिए संसद में सूची में कोई और बदलाव करने की शक्ति रखता है।

123. अनुच्छेद 341(2) के तहत निषेध यह है कि एक बार जब कोई विशेष जाति, नस्ल, जनजाति या उसका कोई भाग या समूह अनुच्छेद 341(1) के तहत राष्ट्रपति सूची में निर्दिष्ट हो जाता है, तो सूची को उसी रूप में पढ़ा जाएगा, जिसमें कोई जोड़ या घटाव नहीं है। विशेष प्रावधानों का लाभ उस राज्य के संबंध में सूची में शामिल न की गई किसी भी जाति या उपजाति को नहीं दिया जाएगा। अनुच्छेद 341(2) में "शामिल करें" या "बहिष्कृत करें" और "बदलाव नहीं किया जाएगा" शब्दों का उपयोग किया गया है। प्रावधान में निहित ये शब्द स्पष्ट हैं। समावेशन तब होगा जब राज्य कोई ऐसा कानून बनाए जो उस राज्य में अनुसूचित जातियों के लिए निर्धारित लाभों को उस समुदाय तक बढ़ाए जो उस राज्य के लिए अनुसूचित जाति के रूप में सूचीबद्ध नहीं है। यदि राज्य किसी समुदाय को उस राज्य के लिए अधिसूचित सूची में शामिल करने के लिए उपयुक्त समझता है, तो उसके लिए एकमात्र तंत्र यह है कि वह केंद्रीय प्राधिकारियों के समक्ष इस आशय का प्रस्ताव रखे। उचित जांच के बाद, समुदाय को संसद द्वारा सूची में जोड़ा जा सकता है, बशर्ते कि वह संतुष्ट हो कि इस तरह के संशोधन की आवश्यकता है। तब तक, राज्य को अनुसूचित जातियों की सूची को वैसे ही लागू करना होगा जैसा वह है। इस प्रकार, संक्षेप में, अनुच्छेद 341(2) राज्य विधानमंडल को सूची से जातियों को हटाने या जोड़ने से रोकता है। आरक्षण सहित सकारात्मक कार्रवाई के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण सूची में किसी भी जाति या समूह को शामिल या बहिष्कृत नहीं करता है। इस प्रकार, संक्षेप में, अनुच्छेद 341(2) राज्य विधानमंडल को सूची से जातियों को हटाने या जोड़ने से रोकता है। आरक्षण सहित सकारात्मक कार्रवाई के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण किसी भी जाति या समूह को सूची में शामिल या बहिष्कृत नहीं करता है। इस निर्णय की धारा डी(iii) उप-वर्गीकरण के विभिन्न मॉडलों से संबंधित है, ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि उप-वर्गीकरण पर आरक्षण के संचालन से वास्तव में बहिष्करण होता है या नहीं।

v. अनुसूचित जातियों के भीतर परस्पर पिछड़ेपन के ऐतिहासिक और अनुभवजन्य साक्ष्य

124. यह मानते हुए कि अनुच्छेद 341 एक एकीकृत समरूप वर्ग नहीं बनाता है, अब हम यह तय करेंगे कि क्या अनुसूचित जातियों के भीतर जातियों को समूहीकृत करने के लिए कोई समझदारीपूर्ण अंतर है। इसके लिए, यह विश्लेषण करने की आवश्यकता है कि क्या अनुसूचित जातियाँ एक विषम वर्ग हैं। प्रतिवादियों ने दलील दी कि

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अनुसूचित जातियों का कोई उप-वर्गीकरण नहीं हो सकता क्योंकि सभी जातियाँ अस्पृश्यता के आधार पर एक ही तरह के सामाजिक पिछड़ेपन का सामना करती हैं। दूसरी ओर, याचिकाकर्ताओं ने दलील दी कि अनुसूचित जातियों के भीतर भी परस्पर पिछड़ापन मौजूद है।

125. भारतीय संविधान में अनुसूचित जातियों की कोई परिभाषा नहीं दी गई है। अनुच्छेद 366(24) में कहा गया है कि अनुच्छेद 341 के तहत अधिसूचित जातियाँ/समूह अनुसूचित जातियाँ होंगी। हालांकि, न तो अनुच्छेद 341 और न ही अनुच्छेद 366(24) उनकी पहचान के लिए मानदंड निर्धारित करता है। राष्ट्रपति ने संविधान (अनुसूचित जातियाँ) आदेश 1950 जारी किया जो भारत सरकार अधिनियम 1935 के तहत अधिसूचित भारत सरकार (अनुसूचित जातियाँ) आदेश 1936 के लगभग अनुरूप है। अनुसूचित जाति आदेश 1936 में समूहों या जातियों को शामिल करने के मानदंडों की पहचान करना महत्वपूर्ण है।

126. भारत सरकार अधिनियम 1935 में अनुसूचित जातियों की पहचान के लिए मानदंड परिभाषित नहीं किए गए थे। इसकी पहली अनुसूची के खंड 26(1) में अनुसूचित जातियों को उन जातियों के रूप में परिभाषित किया गया था जो "दलित वर्ग" के रूप में जाने जाने वाले व्यक्तियों के वर्गों के अनुरूप थीं:

"अनुसूचित जातियाँ" से तात्पर्य ऐसी जातियों, नस्लों या जनजातियों, या जातियों, नस्लों या जनजातियों के भागों या समूहों से है, जो महामहिम को पूर्व में दलित वर्गों के रूप में ज्ञात व्यक्तियों के वर्गों के अनुरूप प्रतीत होते हैं, जैसा कि महामहिम परिषद द्वारा निर्दिष्ट किया जा सकता है।"

(प्रभाव वर्धित)

127. यह आवश्यक है कि हम दलित वर्गों की पहचान कैसे की गई, इस पर ऐतिहासिक सामग्री का संक्षेप में संदर्भ लें, ताकि यह विश्लेषण किया जा सके कि क्या अनुसूचित जातियाँ एक विषम वर्ग हैं और क्या अनुसूचित जातियों के भीतर उप-श्रेणियों को अलग करने वाला कोई स्पष्ट अंतर है।

a. दलित वर्गों की पहचान

128. वर्ष 1916 में भारतीय विधान परिषद में दलित वर्गों की परिभाषा पर सवाल उठाया गया। चर्चा के दौरान यह सुझाव दिया गया कि अभिव्यक्ति में अपराधी और घुमंतू जनजातियों, आदिवासी जनजातियों और अछूतों को भी शामिल किया जाना चाहिए। 1917 में, शिक्षा आयुक्त सर हेनरी शार्प ने दलित वर्गों की एक सूची तैयार की जिसमें आदिवासी या पहाड़ी जनजातियाँ, दलित वर्ग और आपराधिक जनजातियाँ शामिल थीं। सूची तैयार करते समय, सर हेनरी ने कहा कि दलित वर्गों में "[...] वे समुदाय शामिल हैं जो जाति के दायरे से पूरी तरह बाहर नहीं हैं, लेकिन पिछड़े और शैक्षिक रूप से गरीब और तिरस्कृत हैं और मुसलमानों के कुछ वर्ग भी हैं। कुछ लोगों ने इसे केवल शैक्षिक रूप से पिछड़ा हुआ समझा है।"

129. वर्ष 1919 में साउथबोरो फ्रैंचाइज कमेटी ने दलित वर्ग को परिभाषित करने के लिए अस्पृश्यता की कसौटी को अपनाया। भारतीय मताधिकार समिति 1932 को अन्य बातों के साथ-साथ यह पता लगाने के लिए नियुक्त किया गया था कि क्या दलित वर्गों को अलग निर्वाचन क्षेत्र प्रदान किया जाना चाहिए। समिति को "दलित वर्गों" की परिभाषा पर भी पहुंचना था। समिति ने "दलित वर्ग" वाक्यांश की व्याख्या 'अस्पृश्यता वर्ग' के रूप में की,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अर्थात् वह वर्ग जिसका स्पर्श या संपर्क प्रदूषण का कारण माना जाता है जैसा कि संयुक्त प्रांत में मौजूद है। रिपोर्ट में कहा गया कि दलित वर्गों में “आदिम या आदिवासी जनजातियाँ शामिल नहीं होनी चाहिए और न ही उन हिंदुओं को शामिल किया जाना चाहिए जो केवल आर्थिक रूप से गरीब हैं और अन्य तरीकों से पिछड़े हैं लेकिन अछूत नहीं माने जाते हैं।” समिति ने हटन द्वारा तैयार किए गए अस्पृश्यता के परीक्षणों को स्वीकार कर लिया। हटन ने 1931 में एक जनगणना रिपोर्ट प्रस्तुत की थी जिसके अनुसार दलित जातियों को ऐसी जातियों के रूप में परिभाषित किया गया था, जिनके साथ संपर्क करने के लिए शुद्धिकरण की आवश्यकता होती है। यह निर्धारित करने के लिए कि क्या जाति अछूत जाति है, जो निर्देश दिए गए थे, वे इस प्रकार थे:

“मैंने दलित जातियों की व्याख्या ऐसी जातियों के रूप में की है, जिनके संपर्क में आने से उच्च जाति के हिंदुओं का शुद्धिकरण होता है। इसका उद्देश्य यह नहीं है कि इस शब्द का किसी व्यवसाय से कोई संबंध हो, बल्कि इसका तात्पर्य उन जातियों से है, जिन्हें हिंदू समाज में अपनी पारंपरिक स्थिति के कारण मंदिरों में प्रवेश से वंचित रखा जाता है, उदाहरण के लिए, या उन्हें अलग कुओं का उपयोग करना पड़ता है या उन्हें स्कूल के अंदर बैठने की अनुमति नहीं होती है, बल्कि उन्हें बाहर रहना पड़ता है या जो इसी तरह की सामाजिक अक्षमताओं से पीड़ित हैं। ये अक्षमताएं भारत के विभिन्न भागों में अलग-अलग हैं और दक्षिण भारत में कहीं और की तुलना में कहीं अधिक गंभीर हैं।”

130. यह निर्धारित करने के लिए कि क्या जाति अस्पृश्यता का सामना करती है, निम्नलिखित परीक्षणों पर विचार करने का निर्देश दिया गया:

क. क्या प्रश्रगत जाति या वर्ग की सेवा स्वच्छ ब्राह्मणों द्वारा की जा सकती है;

ख. क्या प्रश्रगत जाति या वर्ग की सेवा नाइयों, पानी ढोने वालों, दर्जी आदि द्वारा की जा सकती है, जो सवर्ण हिंदुओं की सेवा करते हैं;

ग. क्या प्रश्रगत जाति संपर्क या निकटता से उच्च जाति के हिंदू को अपवित्र करती है;

घ. क्या प्रश्रगत जाति या वर्ग ऐसा है जिसके हाथों से सवर्ण हिंदू पानी ले सकता है;

ङ. क्या प्रश्रगत जाति या वर्ग सार्वजनिक सुविधाओं जैसे सड़क, घाट, कुएं या स्कूल का उपयोग करने से वंचित है;

च. क्या प्रश्रगत जाति या वर्ग हिंदू मंदिरों के उपयोग से वंचित है;

छ. क्या सामान्य सामाजिक व्यवहार में किसी जाति या वर्ग का सुशिक्षित सदस्य समान शैक्षणिक योग्यता वाले उच्च जाति के लोगों द्वारा समान माना जाएगा;

ज. क्या संबंधित जाति या वर्ग केवल अपनी अज्ञानता, निरक्षरता या गरीबी के कारण दबा हुआ है और यदि ऐसा न होता तो वह किसी सामाजिक नियोग्यता के अधीन नहीं होता; तथा

झ. क्या वह अपनाए गए व्यवसाय के कारण दबा हुआ है और यदि वह व्यवसाय न होता तो वह किसी सामाजिक नियोग्यता के अधीन नहीं होता।

131. हालांकि जिस परीक्षण का इस्तेमाल करने का प्रस्ताव किया गया था वह अस्पृश्यता का था, लेकिन ऊपर दिए गए मानदंड और विशेष रूप से मानदंड (च), (छ) और (ज) संकेत देते हैं कि सामाजिक अक्षमता के अन्य रूप जिन्हें सख्ती से अस्पृश्यता तक सीमित नहीं किया जा सकता है, उन पर भी विचार किया गया। रिपोर्ट ने

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

माना कि अस्पृश्यता की डिग्री के आधार पर प्रतिबंधों की डिग्री में भिन्नता हो सकती है। उदाहरण के लिए, कुछ जातियों को मंदिर में प्रवेश से वंचित किया गया हो सकता है, जबकि अन्य जातियों को मंदिर के आंतरिक गर्भगृह में प्रवेश से वंचित किया गया हो।

132. असम द्वारा प्रस्तुत नोट उन जातियों के बीच विविधता पर प्रकाश डालता है जो अस्पृश्यता का सामना करती हैं। नोट में कहा गया है कि मद्रास में जिस तरह की अस्पृश्यता थी, जहाँ अछूत के स्पर्श से तत्काल शुद्धिकरण की आवश्यकता होती थी, असम में नहीं थी। असम के जनगणना अधीक्षक श्री मौलान ने दलित वर्ग (जिसे उन्होंने "बाहरी जातियाँ" कहा) को उन जातियों के रूप में परिभाषित किया है, जिनके लिए पानी स्वीकार्य नहीं है और इसके अलावा वे शिक्षा, धन, प्रभाव या अपने पारंपरिक व्यवसायों से जुड़े किसी कारण से इतने वंचित हैं कि उन्हें कोई और सामाजिक विशेषाधिकार प्राप्त करने से रोका जाता है। अधीक्षक ने आगे लिखा कि जल-अचल (यानी वे लोग जिनका पानी स्वीकार्य नहीं था) में भी प्रभावशाली और धनी जातियाँ हैं। नोट में कुछ जातियों के साथ होने वाली अस्पृश्यता को अन्य अछूत जातियों से अलग बताया गया है:

"हालाँकि, बाहरी जातियाँ स्वयं एक-दूसरे के साथ समान व्यवहार करने की दोषी हैं और एक बाहरी जाति जो स्वयं को दूसरी बाहरी जाति की तुलना में उच्च सामाजिक स्तर पर मानती है, वह बाहरी जातियों के प्रति ठीक वैसा ही रवैया अपनाती है जैसा उच्च जातियाँ अपनाती हैं। हाल ही में सुनामगंज में घटित एक मामले से यह बात स्पष्ट होती है। वहाँ के स्थानीय नाविक (जाति से पत्नी) पर मुर्ची को नाव चलाने से मना करने के लिए मुकदमा चलाया गया था और यह हमेशा से ही प्रथा रही है कि अगर कोई मुर्ची नदी पार करना चाहता है तो उसे नाव का चप्पू दे दिया जाता है ताकि वह खुद नाव चलाकर नदी पार कर सके।"

133. महारों पर असम के अधीक्षक के नोट ने इस बिंदु को और स्पष्ट किया कि विभिन्न जातियों के सदस्यों द्वारा सामना की जाने वाली अस्पृश्यता में कोई "एकरूपता" नहीं थी। नोट में स्पष्ट किया गया कि महारों को दलित वर्ग की सूची में शामिल किया गया था, हालाँकि वे सीमित अर्थों में जल-चाल थे, जैसे कि अगड़ी जाति का व्यक्ति "महार द्वारा पानी से भरा हुक्का पी सकता है"। उन्हें इसलिए शामिल किया गया क्योंकि वे धूम्रपान संबंधी आवश्यकताओं को छोड़कर हर मामले में अछूत थे और वे सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े समुदाय थे:

"मैंने गहन और सावधानीपूर्वक जांच की है और इस पर आम सहमति है कि महार जल-चाल नहीं हैं और एक दलित वर्ग हैं। राजा सुबिद नारायण द्वारा धूम्रपान की आवश्यकता के लिए ही जल-चावल बनाने की कहानी सच प्रतीत होती है। यदि महार लोग जल-चाल हैं, तो वे केवल इस अर्थ में जलचाल हैं कि उच्च जाति का व्यक्ति किसी महार द्वारा पानी से भरा हुक्का पी सकता है। इस उपखंड में महारों में एक भी स्नातक नहीं है और एक भी मैट्रिक पास नहीं है। स्कूलों के डिप्टी इंस्पेक्टर की रिपोर्ट के अनुसार, पूरे उपखंड में उन्हें केवल तीन शिक्षित महारा मिले हैं, जो प्राथमिक और माध्यमिक अंग्रेजी स्कूलों में स्थानीय भाषा के शिक्षक के रूप में काम कर रहे हैं। इसलिए महारा सामाजिक और शैक्षिक दोनों ही दृष्टि से पिछड़े हुए हैं।"

134. मद्रास द्वारा तैयार की गई सूची में उल्लेख किया गया है कि जिन जातियों पर "अस्पृश्यता का तकनीकी कलंक" लागू नहीं होता है, उन्हें सूची से बाहर रखा गया है। असम द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण के साथ तुलना करने पर यह दृष्टिकोण, अस्पृश्यता के मानक की कठोरता के संबंध में भिन्न होता है। यह स्पष्ट है कि अस्पृश्यता

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

का कोई एक "रूप" नहीं है। अस्पृश्यता, सामाजिक विकलांगता के अन्य रूपों की तरह, डिग्री और गंभीरता में भिन्न होती है।

135. हटन द्वारा निर्धारित अस्पृश्यता की पहचान के लिए परीक्षणों के आधार पर, प्रांतीय समिति ने दलित वर्गों के प्रांतीय अनुमान तैयार किए। मद्रास, बॉम्बे और मध्य प्रांत में, दलित वर्गों के अनुमान पर प्रांतीय समितियों और स्थानीय सरकारों के बीच आम सहमति थी क्योंकि हिंदू समुदायों के दलित और अन्य वर्गों के बीच अंतर स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया था। दूसरी ओर, बिहार, उड़ीसा और असम के राज्यों ने अस्पृश्यता का सामना करने वाली जातियों को निर्धारित करते समय पाया कि राज्यों में अस्पृश्यता उसी रूप में मौजूद नहीं थी, जैसी कि दक्षिण भारत में थी।

136. श्री एस.बी. रामबे, श्री सी.वाई. चिंतामणि और श्री आर.आर. बखले ने दलित वर्गों पर असहमति का नोट प्रस्तुत किया, जिसमें उन्होंने दावा किया कि अस्पृश्यता के लिए परीक्षण एकरूपता के साथ लागू नहीं किए गए थे।¹⁹² उन्होंने देखा कि अस्पृश्यता केवल मद्रास, बॉम्बे और मध्य प्रांत में ही मौजूद थी। उन्होंने दावा किया कि अन्य राज्यों में अस्पृश्यता किसी व्यक्ति का सहायक नहीं बल्कि उनका व्यवसाय था और इसलिए, उन जातियों को दलित वर्गों की सूची में शामिल नहीं किया जाना चाहिए था।¹⁹³ यहीं पर डॉ. बी.आर. अंबेडकर द्वारा दलित वर्गों पर प्रस्तुत नोट विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि यह उन जातियों के भीतर विविधता को समाहित करता है जो अस्पृश्यता से पीड़ित हैं।

137. डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने इस बात पर जोर दिया कि दलित वर्ग की पहचान के लिए एक समान मानदंड लागू करना अनुचित होगा। डॉ. अंबेडकर ने कहा कि अस्पृश्यता के परीक्षणों में अंतर अछूतों की स्थितियों में अंतर को नहीं दर्शाता है क्योंकि दोनों मानकों के पीछे की धारणा एक ही होगी, कि कुछ जातियों के लोगों से बातचीत करना या उन्हें छूना गरिमा के खिलाफ है। उन्होंने कहा कि जिस कठोरता के साथ अस्पृश्यता का अभ्यास किया जाता है, उसमें अंतर ऐसी प्रथा की धारणा को खत्म नहीं करता है। इससे पता चलता है कि दलित वर्गों की पहचान अस्पृश्यता की धारणा के आधार पर की गई थी, न कि शब्द के शाब्दिक अर्थ में। शाब्दिक परीक्षण के बजाय काल्पनिक परीक्षण अपनाने का प्रभाव यह है कि दलित वर्गों में शामिल सभी जातियों की सामाजिक स्थिति एक समान नहीं है। हालाँकि भारत सरकार (अनुसूचित जातियाँ) आदेश 1936 हटन या प्रांतीय मताधिकार समितियों द्वारा प्रकाशित सूची के बिल्कुल अनुरूप नहीं था, लेकिन सूची में शामिल किए गए और बहिष्कृत किए गए लोग मोटे तौर पर एक जैसे थे।

138. वर्ग के भीतर विविधता संविधान (अनुसूचित जातियाँ) आदेश 1950 से भी स्पष्ट है, जहां कुछ जातियों को विशिष्ट इलाकों में अनुसूचित जातियों के रूप में अधिसूचित किया गया है। उदाहरण के लिए, मध्य प्रदेश राज्य में, पच्चीस जातियों में से केवल नौ ही पूरे राज्य में अनुसूचित जातियाँ हैं। अनुसूचित जातियों की पहचान के लिए इस्तेमाल किए गए मानदंड से ही पता चलता है कि प्रयास उन सभी जातियों को शामिल करने का नहीं था जो समान रूप से अस्पृश्यता से पीड़ित थीं। इस प्रकार, अनुसूचित जातियाँ एक समरूप वर्ग नहीं हैं।

b. विविधता का अनुभवजन्य साक्ष्य

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

139. क्षेत्रीय शोधकर्ताओं ने यह भी माना है कि अनुसूचित जातियाँ एक समरूप वर्ग नहीं हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि अनुसूचित जातियों की कुछ जातियाँ न केवल अगड़ी जातियों की तुलना में सामाजिक रूप से पिछड़ी हैं, बल्कि अनुसूचित जातियों में भी पिछड़ी हैं। एएम शाह बताते हैं कि गुजरात में दलित जातियों और अगड़े वर्ग के बीच की तुलना में दो दलित जातियों के बीच बहुत कम बातचीत थी। लेखक ने देखा कि दलितों के पुजारियों को दलित जातियों में उच्च स्थान दिया गया है और सफाईकर्मियों को सबसे निचले स्थान पर रखा गया है, जबकि चमड़े के कामगार और रस्सी बनाने वाले मध्यस्थ पदों पर हैं:

“संक्षेप में कहें तो दलितों ने सामान्य जाति पदानुक्रम के मॉडल पर ही अपने बीच पदानुक्रम स्थापित कर लिया है। शीर्ष पर गरोड़ा (संस्कृत शब्द 'गुरु' से उत्पन्न) की एक छोटी जाति है, जो अन्य दलित जातियों के लिए पुजारी हैं, [...] इसी तरह, जिस तरह उंची जातियों के लिए भाटों की जातियां होती हैं, उसी तरह दलित भिक्षुओं की एक भाट जाति होती है जिसे डेड बावा या साधु कहा जाता है। गरुड़, तुरी बारोट और डेड साधुओं को कुछ खास पवित्रता दी जाती है। भंगी (मैला ढोने वाले) पदानुक्रम में सबसे निचले स्तर पर हैं और सबसे वंचित हैं। गरोड़ा और भंगी के बीच एक बड़ी जाति है, जिसका उच्च स्तर पारंपरिक रूप से वणकर (बुनकर) है और निचला स्तर धेड (छोटे नौकर) है। [...] चमार (चमड़े का काम करने वाले) और सेनवा (रस्सी बनाने वाले) वांकर कम-डेडा और भंगियों के बीच मध्यवर्ती स्थिति में हैं। भंगी सबसे अधिक उत्पीड़ित हैं।”

140. रॉबर्ट एफ कैनेडी सेंटर फॉर जस्टिस एंड ह्यूमन राइट्स ने नवसर्जन (दलितों के अधिकारों को बढ़ावा देने वाला एक संगठन) के साथ मिलकर गुजरात के 1589 गांवों में जातिगत भेदभाव पर एक व्यापक अध्ययन किया। उनके द्वारा की गई जनगणना में क्षैतिज भेदभाव के परिणाम सामने आए, जिसके तहत कुछ दलित जातियां अन्य दलित जातियों के खिलाफ अस्पृश्यता का अभ्यास करती हैं। अध्ययन में पाया गया कि भोजन, पानी और धर्म से संबंधित अस्पृश्यता की प्रथा दलितों के भीतर भी पाई जाती है। उदाहरण के लिए, निचली उपजाति के दलितों को भोजन के दौरान बाकी दलित समुदाय के साथ बैठने से रोका जाता था। जब वे उच्च उपजाति के घर जाते थे तो उन्हें चाय नहीं दी जाती थी। यह भी पाया गया कि केवल बारह प्रतिशत गांवों में ही निचली उपजाति के दलित को उच्च उपजाति के दलित के घर से पानी मिल सकता है। अध्ययन में यह भी पाया गया कि अध्ययन किए गए 92.4 प्रतिशत गांवों में सभी दलितों को दलित कब्रिस्तानों तक पहुंच नहीं थी और 79 प्रतिशत गांवों में निचली उपजातियों को दलित मंदिरों में प्रवेश से वंचित रखा गया था।

141. इसी प्रकार, तमिलनाडु में, जब एक अरुंधथियार पुरुष और एक परैयार महिला (दोनों जातियां अनुसूचित जाति की सूची में आती हैं) भाग गए, तो महिला के परिवार ने कथित तौर पर बदले में पुरुष के परिवार की महिलाओं के साथ बलात्कार किया। आंध्र प्रदेश में अनुसूचित जातियों के भीतर असमानता का भी अध्ययन किया गया है। उमा रामास्वामी ने माला और मडिगा जातियों के सदस्यों की सामाजिक स्थिति की तुलना करके अनुसूचित जातियों के भीतर असमानता का पता लगाया है। मडिगा लोग पारंपरिक रूप से चमड़े का काम करते हैं, जिसे मालाओं के बुनाई के काम की तुलना में कम दर्जा दिया जाता है। लेखक ने कहा है कि दोनों जातियों के लोग न तो एक ही बस्ती में रहते हैं और न ही वे एक ही कुएं से पानी भरते हैं। अध्ययन में पाया गया कि जातियों के बीच पदानुक्रम का असर शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक गतिविधियों में उनकी सापेक्ष प्रगति पर पड़ा। 1961

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

में, 10 प्रतिशत माला साक्षर थे जबकि मडिगा 5.1 प्रतिशत साक्षर थे। 1971 में, माला लोगों में साक्षर लोगों का अनुपात 12.9 प्रतिशत हो गया, जबकि मादिगा लोगों में यह 6.2 प्रतिशत था। लेखक ने कहा कि माला जाति के भीतर भी पदानुक्रम मौजूद है। माला जंगम और माला देसारी पुरोहित जातियाँ हैं और माला पिछड़ी जातियों के आध्यात्मिक सलाहकार हैं। माला पिछड़ी जातियों में माला जंगम सबसे ऊपर है, उसके बाद माला पंबाला, मस्ती और गुरा माला हैं। उप-जातियाँ भी आपस में अस्पृश्यता के नियमों का पालन करती हैं:

"कुछ नियम हैं जो दलितों के भोजन, पानी लेने और मंदिरों में जाने पर प्रतिबंध लगाते हैं। माला, उच्च जाति के दलित, भारत के ग्रामीण इलाकों में रहने वाले निचली जाति के दलित मदिगा से भोजन या पानी नहीं लेते हैं। माला जंगम, माला दासरी और मिथल अय्यालवार माला, मदिगा और दक्कल से खाना या पीना नहीं खाते हैं। इसी तरह अन्य जातियाँ इन जातियों से पका हुआ भोजन या पानी नहीं लेती हैं। माला और मादिगा के अलग-अलग कुएँ और मंदिर हैं। माला मस्तू, गुरम माला और मादिगा से भोजन और पानी नहीं लेते हैं। लेकिन ये सभी जातियाँ माला के पुजारी वर्ग से भोजन और पानी लेती हैं। सिंगारी, जो मादिगाओं के गुरु हैं, मादिगाओं या अन्य उप-जातियों द्वारा छुए गए या पकाए गए भोजन को खाने से सख्ती से परहेज करते हैं। हालांकि, मादिगा उप-जाति में बिंदला को उच्च सामाजिक दर्जा प्राप्त है। उच्च जातियाँ बिंदलाओं से पका हुआ भोजन या पानी नहीं लेती हैं। शक्ति (शक्ति) के उपासक होने के कारण वे अपनी उप-जातियों के हाथों से भोजन या पानी नहीं लेते, क्योंकि वे खुद को पवित्र मानते हैं। सिंधु, मडिगाओं की मनोरंजक जाति "दक्कलों से भोजन या पानी नहीं लेती, लेकिन उनका भोजन या पानी मडिगाओं के लिए स्वीकार्य है। सामाजिक पदानुक्रम में सबसे निचले सामाजिक दर्जे पर रहने वाले दक्कल विश्व ब्रह्मा को छोड़कर सभी जातियों से भोजन और पानी स्वीकार करते हैं। दक्कल जाति का खाना या पानी किसी दूसरी जाति को स्वीकार्य नहीं है। दक्कल जाति के लोगों को मदिगा के घरों के बाहर खड़े होकर खाना या पानी पीना पड़ता है। इसलिए ऊंची जाति के दलित एक साथ बैठकर खाना या शराब नहीं पीते। ये समानताएं आंध्र प्रदेश में अनुसूचित जातियों के भीतर पंचम पदानुक्रम और विषम जातिगत विभाजन की नींव की ओर इशारा करती हैं।"

142. अनुभवजन्य साक्ष्य दर्शाते हैं कि अनुसूचित जातियों के भीतर भी असमानता है। अनुसूचित जातियाँ एक समरूप एकीकृत वर्ग नहीं हैं।

vi. अनुच्छेद 15 और 16 के अंतर्गत उप-वर्गीकरण करने की राज्य की शक्ति

143. अनुच्छेद 16(4) राज्य को "नागरिकों के किसी भी पिछड़े वर्ग" के पक्ष में नियुक्तियों या पदों में आरक्षण के लिए प्रावधान करने की सक्षम शक्ति प्रदान करता है। अनुच्छेद 15(4) के विपरीत यह प्रावधान अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के बीच भेद नहीं करता है। **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय ने सामाजिक पिछड़ेपन के संदर्भ में पिछड़े वर्ग को परिभाषित किया। सामाजिक पिछड़ापन जाति, लिंग और विकलांगता जैसी कई पहचानों के कारण होता है। हालाँकि, इन कई

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पहचानों के कारण होने वाला पिछड़ापन सामूहिक रूप से अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजनों के लिए पिछड़े वर्ग के दायरे में आता है, लेकिन राज्य वर्ग के बीच विविधता को पहचानने और इस उद्देश्य से निपटने के लिए महिलाओं और अनुसूचित जातियों को अलग से आरक्षण प्रदान करने के लिए स्वतंत्र है।

144. अनुच्छेद 15(4) नागरिकों के “किसी” सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग या “अनुसूचित जातियों” और “अनुसूचित जनजातियों” के उत्थान के लिए “कोई” विशेष प्रावधान करने की राज्य की शक्ति को मान्यता देता है। अनुच्छेद 15(5) में भी इसी तरह के शब्द हैं। इस न्यायालय के समक्ष यह प्रस्तुत किया गया कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पहले “किसी” वाक्यांश के विपरीत सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग के पहले “कोई” पूर्वसर्ग का उपयोग यह दर्शाता है कि अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ एक समरूप एकीकृत वर्ग हैं। हम इस प्रस्तुति से सहमत नहीं हैं। यह प्रावधान राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए “कोई” विशेष प्रावधान करने की शक्ति प्रदान करता है। इस प्रकार, यह राज्य की व्यापक शक्ति को मान्यता देता है कि वह मूल समानता को सुरक्षित करने के लिए कई तरह के साधनों का उपयोग कर सकता है। इसमें अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण शामिल होगा।

145. उप-वर्गीकरण के लिए परीक्षण का पहला चरण यह है कि क्या अनुसूचित जातियाँ सभी उद्देश्यों के लिए एक समरूप एकीकृत वर्ग बनाती हैं। हमने ऊपर माना है कि भले ही अनुच्छेद 341 एक काल्पनिक कल्पना बनाता है, लेकिन प्रावधान एक एकीकृत वर्ग नहीं बनाता है जिसे आगे उप-वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है। प्रावधान केवल कुछ जातियों या समूहों या उनके भागों को अनुसूचित जातियों नामक समूह में रखता है। अनुसूचित जातियों के भीतर जातियाँ या समूह संवैधानिक पहचान के सीमित उद्देश्य के लिए एक एकीकृत वर्ग बनाते हैं। वे किसी अन्य उद्देश्य के लिए एक एकीकृत वर्ग नहीं बनाते हैं। हमने ऐतिहासिक और अनुभवजन्य साक्ष्य के माध्यम से यह भी स्थापित किया है कि अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचित अनुसूचित जातियाँ एक विषम वर्ग हैं जहाँ वर्ग के भीतर समूह सामाजिक पिछड़ेपन की अलग-अलग डिग्री से पीड़ित हैं। इस प्रकार, पहला परीक्षण संतुष्ट है।

146. अनुच्छेद 15 और 16 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए राज्य सामाजिक पिछड़ेपन की विभिन्न डिग्री की पहचान करने और पहचाने गए नुकसान की विशिष्ट डिग्री को प्राप्त करने के लिए विशेष प्रावधान (जैसे आरक्षण) प्रदान करने के लिए स्वतंत्र है। यदि अनुसूचित जातियाँ कानून के उद्देश्यों (या पहचाने गए विशिष्ट नुकसान) के लिए समान रूप से स्थित नहीं हैं, तो अनुच्छेद 15, 16 और 341 में ऐसा कुछ भी नहीं है जो राज्य को वर्ग पर उप-वर्गीकरण के सिद्धांत को लागू करने से रोकता है। इस प्रकार, अनुसूचित जातियों को आगे वर्गीकृत किया जा सकता है यदि: (क) भेदभाव के लिए एक तर्कसंगत सिद्धांत है; और (ख) यदि तर्कसंगत सिद्धांत का उप-वर्गीकरण के उद्देश्य से संबंध है।

147. **चित्रैया (उपरोक्त)** मामले में इस न्यायालय के समक्ष एक मुद्दा यह था कि क्या राज्य के पास उप-वर्गीकरण करने की विधायी क्षमता है। न्यायमूर्ति संतोष हेगड़े ने कहा कि अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के तहत आरक्षण प्रदान करने के आदेश को पूरा करने के बाद, अधिनियम राज्य की विधायी क्षमता से परे थे क्योंकि – सबसे पहले, कानून का प्राथमिक उद्देश्य उपजातियों का समूह बनाना था और आरक्षण का आवंटन केवल परिणामी था और दूसरा, राज्य सूची II की प्रविष्टि 41 और सूची III (सातवीं अनुसूची की) की प्रविष्टि 25 के तहत क्रमशः राज्य सेवाओं और शिक्षा से संबंधित अनुसूचित जातियों की सूची को विभाजित नहीं कर सकता

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

था। न्यायमूर्ति सिन्हा ने कहा कि अनुच्छेद 246 के तहत राज्य विधानसभाओं की विधायी क्षमता संविधान के अन्य प्रावधानों, अर्थात् संविधान के अनुच्छेद 341 के अधीन है।

148. **चित्रैया (उपरोक्त)** में दिए गए मत विधायी क्षमता के मुद्दे को, जो अनुच्छेद 245 और 246 के लिए संदर्भित है, अनुच्छेद 15 और 16 के तहत मौलिक समानता सुनिश्चित करने की शक्ति के साथ मिला देते हैं। सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ा गया अनुच्छेद 245 राज्य विधानमंडलों और संसद की विधायी क्षमता निर्धारित करता है। अनुच्छेद 15(4) और 16(5) अनुसूचित जातियों सहित पिछड़े वर्ग की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान करने की राज्य की शक्ति को मान्यता देते हैं। ये प्रावधान राज्य को उन वर्गों पर सकारात्मक कार्रवाई का लाभ प्रदान करने की अनुमति देते हैं, जहां यह सबसे अधिक आवश्यक है। इस प्रकार, आरक्षण सहित सकारात्मक कार्रवाई के उद्देश्य से अनुसूचित जातियों को उप-वर्गीकृत करने की राज्य की शक्ति क्रमशः शैक्षणिक संस्थानों और नियुक्तियों के मामले में अनुच्छेद 15(4) और 16(5) में पाई जा सकती है।

vii. उप-वर्गीकरण के लिए मानदंड

149. अनुच्छेद 15(4) और 16(4) में विशेष प्रावधानों का उद्देश्य लाभार्थी वर्ग को मौलिक समानता प्रदान करना है। वर्ग के भीतर परस्पर पिछड़ापन मौलिक समानता प्राप्त करने में बाधा है। उप-वर्गीकरण मौलिक समानता प्राप्त करने के साधनों में से एक है। लेकिन महत्वपूर्ण सवाल यह है कि अनुसूचित जाति के भीतर श्रेणियों को अलग करने के लिए तर्कसंगत सिद्धांत क्या होना चाहिए? क्या यह अस्पृश्यता या किसी भी तरह के परस्पर सामाजिक पिछड़ेपन के रूप पर आधारित होना चाहिए? हम निर्णय के इस भाग में उप-वर्गीकरण के लिए उपयोग किए जाने वाले तर्कसंगत सिद्धांत पर चर्चा करेंगे।

150. इस प्रावधान को लाभार्थी वर्ग के दृष्टिकोण से समझना महत्वपूर्ण है, जिसके उत्थान के लिए इसे अपनाया गया है, ताकि विभेदीकरण के लिए तर्कसंगत सिद्धांत को स्पष्ट किया जा सके। हालाँकि अनुच्छेद 15(4) और 16(4) दोनों में इस हद तक समानता है कि वे राज्य को सकारात्मक कार्रवाई नीतियाँ प्रदान करने में सक्षम बनाते हैं, लेकिन प्रावधानों की भाषा में कुछ असमानताएँ मौजूद हैं। सबसे पहले, अनुच्छेद 15(4) और 16(4) अलग-अलग क्षेत्रों से संबंधित हैं। अनुच्छेद 15(4) एक सामान्य प्रावधान है जो इस बात को मान्यता देकर मौलिक समानता के सिद्धांत को प्रभावी बनाता है कि गैर-भेदभाव प्रावधान राज्य को लाभार्थी वर्ग की उन्नति के लिए “कोई विशेष प्रावधान” करने से नहीं रोकेंगे। दूसरी ओर, अनुच्छेद 16(4) विशेष रूप से सार्वजनिक रोजगार के मामलों से संबंधित है। दूसरे, अनुच्छेद 16(4) केवल आरक्षण से संबंधित है जबकि अनुच्छेद 15(4) सकारात्मक कार्रवाई के अन्य रूपों को मान्यता देता है। अनुच्छेद 15(4) अनुच्छेद 16(4) की तुलना में व्यापक और सर्वव्यापी है। तीसरा, अनुच्छेद 15(4) के तहत लाभार्थी वर्ग “सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा” होना चाहिए, जबकि अनुच्छेद 16(4) के तहत वर्ग एक पिछड़ा वर्ग है जिसका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को अनुच्छेद 15(4) में स्पष्ट रूप से शामिल किया गया है, जबकि अनुच्छेद 16(4) में उन्हें “पिछड़े वर्ग” में शामिल किया गया है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

151. प्रावधानों के दायरे पर चर्चा करते समय जिन मुद्दों पर निर्णय लिया जाना चाहिए, उनमें से एक यह है कि क्या अनुच्छेद 15(4) और 16(4) में लाभार्थी वर्ग अलग-अलग हैं। इस मुद्दे पर निम्नलिखित के संदर्भ में निर्णय लिया जाना चाहिए:

क. अनुच्छेद 15(4) में “सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े” शब्दों का उपयोग; और

ख. अनुच्छेद 16(4) में “पर्याप्त प्रतिनिधित्व” शब्दों का उपयोग।

a. “पिछड़ा वर्ग” का अर्थ

152. अनुच्छेद 15(4), अनुच्छेद 16(4) के विपरीत, यह प्रावधान करता है कि प्रावधान के प्रयोजनों के लिए लाभार्थी वर्ग सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ा होना चाहिए। **बालाजी (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय ने माना कि अनुच्छेद 15(4) के तहत लाभार्थी वर्ग सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा होना चाहिए। न्यायमूर्ति गर्जेन्द्रगडकर ने कहा कि सामाजिक रूप से पिछड़े वर्ग का निर्धारण करने के लिए जाति, व्यवसाय और गरीबी महत्वपूर्ण कारक हैं। जानकी प्रसाद परिमू बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य मामले में इसे दोहराया गया। इस न्यायालय के लिए लिखते हुए न्यायमूर्ति डी जी पालेकर ने सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन के बीच संबंधों पर एक महत्वपूर्ण टिप्पणी की। विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि यद्यपि अनुच्छेद 15(4) के तहत पिछड़े वर्ग की पहचान करने के लिए ‘सामाजिक’ और ‘शैक्षणिक’ शब्दों का संचयी रूप से उपयोग किया जाता है, “यदि एक वर्ग समग्र रूप से शैक्षिक रूप से उन्नत है तो वह आम तौर पर उस वर्ग पर शिक्षा के सुधारात्मक प्रभाव के कारण सामाजिक रूप से भी उन्नत होता है”। सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन के बीच संबंध, जहां सामाजिक पिछड़ापन शैक्षिक पिछड़ेपन में योगदान देता है, को **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में दोहराया गया था। इस प्रकार, हालांकि लाभार्थी वर्ग की पहचान करने के प्रयोजनार्थ सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग के मानदंडों को संचयी रूप से पढ़ा जाना चाहिए, फिर भी वे परस्पर अनन्य अवधारणाएं नहीं हैं। इनमें कार्य-कारण सम्बन्ध है, जहां किसी वर्ग का शैक्षिक पिछड़ापन उसके सामाजिक पिछड़ेपन का प्रभाव है।

153. अगला मुद्दा यह है कि क्या अनुच्छेद 15(4) और अनुच्छेद 16(4) में लाभार्थी वर्ग समान हैं, भले ही अनुच्छेद 15(4) के विपरीत, अनुच्छेद 16(4) में “सामाजिक” और “शैक्षणिक” जैसे अर्थक शामिल नहीं हैं। **जानकी प्रसाद परिमू (उपरोक्त)** मामले में इस न्यायालय ने सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन की आवश्यकता को अनुच्छेद 16(4) में शामिल किया। वसंत कुमार बनाम कर्नाटक राज्य 208 मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ ने इसे दोहराया। हालांकि, **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** मामले में, न्यायमूर्ति बी पी जीवन रेड्डी ने चार न्यायाधीशों (मुख्य न्यायाधीश कनिया, न्यायमूर्ति वेंकटचलैया, न्यायमूर्ति ए एम अहमदी और स्वयं) की ओर से बोलते हुए कहा कि इस धारणा का कोई आधार नहीं है। विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि अनुच्छेद 16(4) बहुत बड़े वर्ग पर लागू होता है। सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा वर्ग उन श्रेणियों में से एक है, जिस पर अनुच्छेद 16(4) लागू होता है। सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग उस व्यापक वर्ग में शामिल हैं जिस पर अनुच्छेद 16(4) लागू होता है। न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने यह भी माना कि अनुच्छेद 16(4) में शैक्षणिक पिछड़ेपन को पढ़ना, जो किसी भी स्तर पर नियुक्तियों में आरक्षण से संबंधित है, उचित नहीं होगा:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

“787. [...] अनुच्छेद 16(4) में “नागरिकों का पिछड़ा वर्ग” अनुसूचित जनजातियों, अनुसूचित जातियों और सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों सहित नागरिकों के सभी अन्य पिछड़े वर्गों को शामिल करता है। इस प्रकार, कुछ वर्ग जो अनुच्छेद 15(4) के लिए अर्हता प्राप्त नहीं कर सकते हैं, वे अनुच्छेद 16(4) के लिए अर्हता प्राप्त कर सकते हैं। वे अनुच्छेद 15(4) के लिए अर्हता प्राप्त नहीं कर सकते हैं, लेकिन वे अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजनों के लिए नागरिकों के पिछड़े वर्ग के रूप में अर्हता प्राप्त कर सकते हैं। [...] इस प्रकार, अनुच्छेद 340 में संदर्भित सामाजिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़ा वर्ग उन श्रेणियों में से केवल एक है जिनके लिए अनुच्छेद 16(4) अधिनियमित किया गया था: अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 340 द्वारा परिकल्पित वर्ग की तुलना में बहुत बड़े वर्ग पर लागू होता है। इस प्रकार, यह कहना सही नहीं होगा कि अनुच्छेद 16(4) में ‘नागरिकों का पिछड़ा वर्ग’ अनुच्छेद 15(4) में सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के समान है। ऐसा कहने का मतलब होगा अनुच्छेद 16(4) जैसे लाभकारी प्रावधान में सीमाएं जोड़ना। इसके अलावा, जब राज्य सेवाओं में नियुक्तियों/पदों में आरक्षण की बात की जाती है – जिसका मतलब यह हो सकता है कि किसी भी स्तर पर शैक्षिक पिछड़ेपन पर जोर देना उचित नहीं हो सकता है।

154. उपरोक्त अवलोकन को शून्य में नहीं पढ़ा जाना चाहिए। न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी द्वारा अवलोकन का अभिप्राय अगले पैराग्राफ में स्पष्ट किया गया है, जहाँ विद्वान न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि यद्यपि शैक्षिक पिछड़ेपन को मानदंड के रूप में बाहर नहीं रखा जा सकता है, सामाजिक पिछड़ेपन ने शैक्षिक पिछड़ेपन का कारण अवश्य बनाया होगा:

“788. [...] यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि भारतीय संदर्भ में, सामाजिक पिछड़ापन शैक्षिक पिछड़ेपन को जन्म देता है और ये दोनों मिलकर गरीबी को जन्म देते हैं – जो बदले में सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन को जन्म देता है और कायम रखता है। वे एक दूसरे पर अत्याचार करते हैं और एक दुष्चक्र बनाते हैं। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि स्वतंत्रता तक प्रशासनिक तंत्र में लगभग पूरी तरह से ‘उच्च’ जातियों के लोग ही शामिल थे। शूद्रों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों तथा मुसलमानों और ईसाइयों में अन्य समान पिछड़े सामाजिक समूहों को प्रशासनिक तंत्र में व्यावहारिक रूप से प्रवेश नहीं था। यह वह असंतुलन था जिसे ऐसे पिछड़े वर्गों के पक्ष में आरक्षण प्रदान करके दूर करने का प्रयास किया गया था। [...] तदनुसार, हमारा मत है कि अनुच्छेद 16(4) द्वारा परिकल्पित पिछड़ापन मुख्य रूप से सामाजिक पिछड़ापन है। यह कहना सही नहीं होगा कि अनुच्छेद 16(4) के तहत पिछड़ापन सामाजिक और शैक्षिक दोनों होना चाहिए।”

155. **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में, न्यायमूर्ति पांडियन ने नागरिकों के पिछड़े वर्ग को “सामान्य लक्षणों या विशेषताओं वाले व्यक्तियों के समूह के रूप में परिभाषित किया, साथ ही पिछड़े सामाजिक, भौतिक (आर्थिक) और बौद्धिक (शैक्षणिक) विकास के साथ इस अर्थ में कि इतनी बुद्धि और क्षमता न होने पर भी वे अनुच्छेद 16(4) के तहत ‘नागरिकों के किसी भी पिछड़े वर्ग’ के दायरे में आएंगे”। विद्वान न्यायाधीश ने आगे स्पष्ट किया कि पिछड़े वर्ग की पहचान करने में “प्राथमिक विचार” सामाजिक पिछड़ापन है। न्यायमूर्ति सावंत ने यह भी कहा

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कि अनुच्छेद 16(4) के तहत लाभार्थी वर्ग की पहचान करने में सामाजिक पिछड़ेपन को महत्व दिया जाना चाहिए। न्यायमूर्ति सावंत ने कहा कि लाभार्थी वर्ग की पहचान का मानदंड यह है कि क्या वह सामाजिक रूप से पिछड़ा है और क्या जो वर्ग शैक्षणिक और आर्थिक रूप से पिछड़ा है, वह अपने सामाजिक पिछड़ेपन के कारण ऐसा है।

156. न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह ने एक अलग दृष्टिकोण अपनाया। विद्वान न्यायाधीश ने माना कि अनुच्छेद 15(4) और 16(4) में लाभार्थी वर्ग अलग-अलग हैं। न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह ने कहा कि अनुच्छेद 15(4) में लाभार्थी वर्ग के निर्धारण के विपरीत, जिसे सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा होना चाहिए, अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजनों के लिए पहचाने गए वर्ग को पिछड़ा होना आवश्यक नहीं है क्योंकि:

क. संविधान सभा की बहस से संकेत मिलता है कि अनुच्छेद 16(4) के तहत आरक्षण का उद्देश्य उन समुदायों को पहुंच प्रदान करना है, जिन्हें राज्य के प्रशासन में 'नजर' नहीं आई है। अनुच्छेद 16(4) में "पिछड़ा" शब्द को शामिल करने का उद्देश्य – जिसे प्रारंभिक मसौदे में जगह नहीं मिली – केवल आरक्षित पदों के लिए दावेदारों की संख्या को कम करना था;

ख. राज्य की सेवाओं में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व अनुच्छेद 16(4) के तहत लाभार्थी वर्ग की पहचान के लिए एकमात्र कसौटी है। अपर्याप्त प्रतिनिधित्व की पहचान व्यवसाय, आर्थिक मानदंड, पारिवारिक आय, राजनीतिक पीड़ितों, सीमावर्ती क्षेत्रों, पिछड़े क्षेत्रों, राज्य सेवाओं से बाहर रखे गए समुदायों या किसी अन्य माध्यम से की जा सकती है। 'पिछड़े वर्ग' को उन वर्गों से अलग किया जाना चाहिए जिनका अपर्याप्त प्रतिनिधित्व है;

ग. पिछड़े वर्ग को पर्याप्त प्रतिनिधित्व वाले और अपर्याप्त प्रतिनिधित्व वाले में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता। जिस वर्ग का पर्याप्त प्रतिनिधित्व है, उसे पिछड़ा नहीं माना जा सकता। पिछड़े वर्ग के संबंध में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व के गुणक को पढ़ने से पूर्व अभिव्यक्ति निरर्थक हो जाएगी; तथा

घ. संविधान ने जब भी "कमजोर वर्गों" को संरक्षण प्रदान किया है, तो उसमें अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है।

157. न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह की राय के विपरीत, जिन्होंने माना कि अनुच्छेद 16(4) में वर्ग का निर्धारण करने वाला चरित्र पिछड़ापन नहीं बल्कि प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता है, इंद्रा साहनी मामले में बहुमत (न्यायमूर्ति रेड्डी ने चार न्यायाधीशों, न्यायमूर्ति पांडियन और न्यायमूर्ति सावंत के लिए लिखा) ने माना कि "पिछड़े वर्ग" की पहचान करने के लिए जिस प्रमुख कारक को नियोजित किया जाना चाहिए वह सामाजिक पिछड़ापन होना चाहिए। बहुमत ने यह भी माना कि अनुच्छेद 16(4) में पिछड़ा वर्ग अनुच्छेद 15(4) के तहत पहचाने गए सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग में शामिल है। इस प्रकार, अनुच्छेद 15(4) और 16(4) दोनों का उद्देश्य सामाजिक रूप से पिछड़े वर्ग को ऊपर उठाकर वास्तविक समानता सुनिश्चित करना है।

b. राज्य की सेवाओं में प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता

158. लाभार्थियों की पहचान का मुद्दा जो आरक्षण के दायरे को प्रभावित करेगा, वह यह है कि क्या वर्ग पिछड़ा है और उसका प्रतिनिधित्व अपर्याप्त है। यानी, क्या वे परस्पर अनन्य योग्यताएं हैं। **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

न्यायमूर्ति सावंत ने सहमति व्यक्त करते हुए कहा कि केवल उन वर्गों को ही अनुच्छेद 16(4) के तहत आरक्षण प्रदान किया जाना चाहिए जिनका प्रतिनिधित्व अपर्याप्त है। विद्वान न्यायाधीश की राय में, पिछड़ा वर्ग तब लाभार्थी नहीं रह जाएगा जब उस वर्ग का पर्याप्त प्रतिनिधित्व हो जाएगा। यह अवलोकन इस तर्क के अनुरूप है कि प्रावधान का लक्ष्य, जो पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना है, प्राप्त हो जाने के बाद आरक्षण प्रदान नहीं किया जाना चाहिए।

159. इस मुद्दे को समझने के लिए, यह आवश्यक है कि हम अल्पसंख्यकों की उप समिति और मौलिक अधिकारों की उप-समिति की बहसों का संदर्भ लें ताकि अनुच्छेद 16(4) में “अपर्याप्त प्रतिनिधित्व” वाक्यांश को शामिल करने का कारण पता चल सके। 13 दिसंबर 1946 को श्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा प्रस्तुत उद्देश्य प्रस्ताव में अल्पसंख्यकों, पिछड़े और आदिवासी क्षेत्रों तथा दलित और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए पर्याप्त सुरक्षा प्रदान करने का संकल्प लिया गया था। मौलिक अधिकारों पर उप-समिति द्वारा प्रस्तुत पहली मसौदा रिपोर्ट में समानता प्रावधान में पिछड़े समुदाय या अल्पसंख्यकों के लिए सीटों के आरक्षण का प्रावधान नहीं था। हालाँकि रिपोर्ट में भेदभाव विरोधी और समान अवसर पर जोर देने वाले प्रावधान शामिल थे, लेकिन इसने सकारात्मक कार्रवाई के लिए सक्षम प्रावधान की सिफारिश नहीं की। अल्पसंख्यकों पर उप-समिति ने मौलिक अधिकार उप-समिति के साथ मिलकर यह निर्धारित करने के लिए अनुशंसित खंडों की जांच करने का फैसला किया कि क्या अल्पसंख्यक अधिकारों की रक्षा के लिए उनमें से किसी में संशोधन की आवश्यकता है। चर्चा के दौरान श्री केएम मुंशी ने कहा कि सार्वजनिक नौकरियों में अल्पसंख्यकों के लिए आरक्षण की व्यवस्था करनी होगी। भेदभाव विरोधी प्रावधान को आरक्षण के प्रावधान के साथ किस तरह से बेहतर ढंग से जोड़ा जाए, इस पर सिफारिशें देने के लिए एक सलाहकार समिति का गठन किया गया। अल्पसंख्यकों संबंधी उप समिति ने सिफारिश की कि हाशिए पर पड़े समुदायों के प्रतिनिधित्व के दावों को पूरा करने के लिए एक प्रावधान जोड़ा जाना चाहिए।

160. चर्चा के बाद सलाहकार समिति का प्रतिनिधित्व करते हुए डॉ. अंबेडकर ने निम्नलिखित प्रावधान को शामिल करने का सुझाव दिया:

“इसमें निहित कोई भी बात राज्य को राज्य द्वारा निर्धारित वर्गों के पक्ष में सार्वजनिक सेवाओं में आरक्षण के लिए प्रावधान करने से नहीं रोकेगी।”

(प्रभाव वर्धित)

161. मौलिक अधिकारों पर उप-समिति ने उपरोक्त खंड से संबंधित दो मुद्दों पर बहस की। पहला, क्या लाभार्थियों को दर्शाने के लिए “अल्पसंख्यक” या “वर्ग” शब्द का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। बहस से संकेत मिलता है कि “अल्पसंख्यक” के बजाय “वर्ग” शब्द को प्राथमिकता दी गई क्योंकि बाद वाले का एक विशिष्ट अर्थ है, यानी धार्मिक या राजनीतिक अल्पसंख्यक और इससे वे वर्ग बाहर हो जाएँगे जो बहुसंख्यक हैं लेकिन अभी तक उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं हुआ है। इसका कारण डॉ. अंबेडकर ने राज्यों और अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर ज्ञापन और मसौदा लेखों के अनुलग्नक में सबसे अच्छी तरह से समझाया है, जहां उन्होंने कहा कि “धार्मिक संबद्धता को संवैधानिक सुरक्षा के लिए निर्णायक कारक बनाना इस तथ्य की अनदेखी करना है कि धार्मिक संबद्धता के साथ सामाजिक अलगाव और भेदभाव की तीव्र डिग्री हो सकती है”।

162. दूसरा मुद्दा यह था कि क्या प्रावधान को “पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व” वाक्यांश के साथ योग्य बनाया जाना चाहिए। कुछ सदस्यों ने आशंका व्यक्त की कि “पर्याप्त प्रतिनिधित्व” वाक्यांश का उपयोग मुकदमेबाजी बन

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

जाएगा। इस आशंका के बावजूद, राज्य के विवेक को प्रतिबंधित करने के लिए वाक्यांश को बरकरार रखा गया क्योंकि “अल्पसंख्यक” नहीं बल्कि “वर्ग” वाक्यांश को अपनाया गया था। “पर्याप्त प्रतिनिधित्व” शब्द के बिना, खंड में पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व वाले बहुसंख्यकों के लिए आरक्षण भी शामिल होता, जिनके लिए लाभ का इरादा नहीं था। हालाँकि, “पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व” वाक्यांश को “वर्ग” वाक्यांश के साथ शामिल करने से, प्रावधान का लाभ उन वर्गों तक विस्तारित होता है जिन्हें ‘बहुसंख्यक’ माना जा सकता है, लेकिन अभी तक अपर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व किया गया है।

163. मौलिक अधिकारों पर उप-समिति और अल्पसंख्यकों पर उप-समिति में हुई बहस से संकेत मिलता है कि आरक्षण के लाभार्थी वे वर्ग हैं जिनका “पर्याप्त प्रतिनिधित्व” नहीं है और इसमें वे वर्ग भी शामिल हो सकते हैं जो संख्यात्मक रूप से बहुसंख्यक हैं। आरक्षण के प्रावधान अब न केवल अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के लिए उपलब्ध हैं, बल्कि सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए भी उपलब्ध हैं, जो संख्यात्मक रूप से धार्मिक बहुसंख्यक हैं। उप-समिति द्वारा प्रसारित मसौदे में “वर्ग” से पहले “पिछड़ा” शब्द अनुपस्थित था। यह शब्द मसौदा संविधान के अनुच्छेद 10 में शामिल किया गया था। पर्याप्त प्रतिनिधित्व के साथ पिछड़े शब्द को शामिल करने से लाभार्थी वर्ग का दायरा स्पष्ट हो जाता है।

164. डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने संविधान सभा में कहा कि संविधान के प्रारूप के अनुच्छेद 10 [भारत के संविधान के अनुच्छेद 16] के तहत आरक्षण उन लोगों को दिया जाता है, जिन्हें प्रशासन पर “उचित नज़र” नहीं पड़ी है, क्योंकि ऐतिहासिक रूप से इसे कुछ समुदायों द्वारा नियंत्रित किया गया है। डॉ. अंबेडकर की उपरोक्त टिप्पणियों का उल्लेख करते हुए, न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में कहा कि अनुच्छेद 16 (4) का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि पिछड़े वर्गों को राज्य की सत्ता में भागीदारी का अवसर मिले।

165. ऊपर दिए गए तर्कों से यह स्पष्ट है कि आरक्षण खंड का उद्देश्य कुछ “वर्गों” के सार्वजनिक सेवाओं में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व को दूर करना है। अपर्याप्त प्रतिनिधित्व का कारण दो गुना हो सकता है। सबसे पहले, यह उन कानूनों का परिणाम हो सकता है जो स्पष्ट रूप से कुछ वर्गों को अच्छे, यानी सार्वजनिक सेवा में पदों तक पहुँचने से बाहर रखते हैं। दूसरा, यह किसी वर्ग को कानून द्वारा स्पष्ट रूप से नहीं बल्कि सामाजिक बहिष्कार के माध्यम से बाहर रखे जाने का परिणाम हो सकता है। किसी वर्ग को उन कौशलों तक पहुँचने से सामाजिक रूप से बाहर रखा जा सकता है जो अच्छे को प्राप्त करने के लिए प्रासंगिक हैं। ये प्रतिबंध या तो सामाजिक और अनौपचारिक या कानूनी और औपचारिक प्रतिबंधों के रूप में हो सकते हैं।

166. **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने कहा कि अनुच्छेद 16(4) के तहत आरक्षण प्राप्त करने के लिए किसी वर्ग को न केवल पिछड़ा वर्ग होना चाहिए, बल्कि राज्य की सेवाओं में उसका प्रतिनिधित्व भी अपर्याप्त होना चाहिए। इस प्रकार, लाभार्थी वर्ग का निर्धारण केवल इस आधार पर नहीं किया जाना चाहिए कि वह वर्ग राज्य की सेवाओं में संख्यात्मक रूप से अल्पसंख्यक है या बहुसंख्यक। इसके बजाय ध्यान उन वर्गों की पहचान करने पर है जिन्हें सार्वजनिक सेवाओं से संयोग या पसंद के कारण नहीं बल्कि पदानुक्रम की प्रणाली के संचालन के कारण बाहर रखा गया है। इस प्रकार, अनुच्छेद 16(4) में “पिछड़े” और “पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व नहीं” दोनों वाक्यांशों की अनुच्छेद 16(4) के तहत लाभार्थी वर्ग का निर्धारण करने में परस्पर अनन्य तरीके से व्याख्या नहीं की जा सकती। अनुच्छेद 16(4) का उद्देश्य उन वर्गों को शामिल करना है जिनका

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पिछड़ेपन के कारण अपर्याप्त प्रतिनिधित्व किया गया है। इस प्रकार, अपर्याप्त प्रतिनिधित्व की आवश्यकता को पिछड़ेपन की आवश्यकता से अलग नहीं किया जा सकता।

c. “प्रभावी” प्रतिनिधित्व की आवश्यकता

167. परम्परागत रूप से, राज्य ने यह आकलन किया है कि क्या वर्ग का पर्याप्त प्रतिनिधित्व है, राज्य की कुल जनसंख्या के साथ सेवाओं में वर्ग के प्रतिनिधित्व की तुलना करके। तथापि, प्रतिनिधित्व की पर्याप्तता का निर्धारण केवल संख्यात्मक दृष्टिकोण से किया जाता है, तथा पदों के सापेक्ष प्रतिनिधित्व जैसे कारकों को ध्यान में नहीं रखा जाता, तो इससे प्रावधान का उद्देश्य कमजोर हो जाएगा। अनुच्छेद 16(4) का उद्देश्य राज्य की सेवाओं में पदों और ग्रेडों में वर्ग का प्रभावी प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना है। सामाजिक रूप से पिछड़े वर्ग सामाजिक स्तर पर सबसे निचले पायदान पर हैं, मुख्य रूप से इसलिए क्योंकि सामाजिक नियमों के तहत वर्ग को पारंपरिक व्यवसाय दिया गया है। उदाहरण के लिए, कुछ दलित जातियों को सफाईकर्मों जाति माना जाता है। आरक्षण के प्रावधान के बावजूद, पिछड़े वर्गों के लिए समाज द्वारा उन्हें दिए गए पारंपरिक व्यवसाय को छोड़ना और सबसे निचले स्तर पर भी अवसरों का अनुकूलन करना बहुत मुश्किल है। निचले ग्रेड में उनके प्रतिनिधित्व के साथ वर्ग द्वारा सामना किए जाने वाले संघर्ष गायब नहीं होते हैं। प्रयास यह है कि पदों पर सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों का सही और प्रभावी प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया जाए।

168. सभी पदों और श्रेणियों में वास्तविक और प्रभावी प्रतिनिधित्व के अवसर सृजित किए जाने चाहिए। इस प्रावधान का उद्देश्य मौजूदा सामाजिक पदानुक्रम का अनुकरण करना नहीं है, जहां निम्न श्रेणी के पदों पर सामाजिक रूप से पिछड़े लोग काबिज हैं, जबकि पर्यवेक्षी और प्रबंधकीय पदों पर उन्नत वर्ग का कब्जा बना हुआ है। यदि अनुच्छेद 16(4) के उद्देश्य को सही मायने में प्राप्त करना है तो प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता का निर्धारण केवल राज्य की सेवाओं में पिछड़े वर्ग के सदस्यों की कुल संख्या के आधार पर नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि विभिन्न पदों पर वर्ग के प्रतिनिधित्व का आकलन करके किया जाना चाहिए।

169. **रंगाचारी (उपरोक्त)** में इस न्यायालय के विचारार्थ “पर्याप्त प्रतिनिधित्व” वाक्यांश का अर्थ आया। बहुमत के लिए लिखते हुए, न्यायमूर्ति गजेंद्रगडकर ने कहा कि पर्याप्त प्रतिनिधित्व का अर्थ केवल संख्यात्मक प्रतिनिधित्व ही नहीं बल्कि गुणात्मक प्रतिनिधित्व भी है:

“25. [...] यह पूर्व शर्त या तो सेवाओं में प्रतिनिधित्व की संख्यात्मक अपर्याप्तता या प्रतिनिधित्व की गुणात्मक अपर्याप्तता को संदर्भित कर सकती है। सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए न केवल यह आवश्यक है कि उन्हें सेवाओं के निम्नतम स्तर पर पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिले, बल्कि यह भी आवश्यक है कि उन्हें सेवाओं में चयन पदों पर भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त करने की आकांक्षा हो। इस संदर्भ में, “पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व” शब्द में “आकार” के साथ-साथ “मूल्य”, संख्या और साथ ही नियुक्तियों की प्रकृति के विचार भी शामिल हैं और इसलिए इसमें न केवल संख्यात्मक परीक्षण बल्कि गुणात्मक परीक्षण भी शामिल है। इस प्रकार संख्यात्मक और गुणात्मक परीक्षण के माध्यम से किसी भी सेवा में पिछड़े वर्गों के प्रतिनिधित्व की पर्याप्तता या अनुपस्थिति का आकलन किया जा सकता है।”

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(प्रभाव वर्धित)

170. दूसरी ओर, न्यायमूर्ति वांचू और न्यायमूर्ति राजगोपाल अयंगर ने कहा कि 'पर्याप्त प्रतिनिधित्व' वाक्यांश केवल मात्रात्मक अर्थ में प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता का अर्थ व्यक्त करता है और समानता का कोई विचार नहीं देता है। त्रिलोकी नाथ बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य (I) मामले में, जम्मू और कश्मीर के मुसलमानों को 50 प्रतिशत सीटें, जम्मू के हिंदुओं को शेष पचास प्रतिशत सीटों में से 60 प्रतिशत और कश्मीरी पंडितों को 50 प्रतिशत में से शेष 40 प्रतिशत सीटें प्रदान करने वाली आरक्षण नीति को चुनौती दी गई थी। राज्य ने तर्क दिया कि अनुच्छेद 16(4) के तहत लाभार्थी वर्ग के पिछड़ेपन का एकमात्र मापदंड राज्य की सेवाओं में प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता है। संविधान पीठ ने इस तर्क को खारिज करते हुए कहा कि यदि इसे स्वीकार कर लिया जाता है तो इसका लाभ केवल उन 'अमीर और सुसंस्कृत' लोगों को मिलेगा जो सामाजिक और शैक्षणिक रूप से उन्नत हैं।

171. न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने भी **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में "पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व" वाक्यांश की मूल्य-आधारित व्याख्या अपनाई। विद्वान न्यायाधीश ने माना कि प्रतिनिधित्व की पर्याप्तता निर्धारित करने का मुख्य परीक्षण "प्रशासन में प्रभावी प्रतिनिधित्व या प्रभावी आवाज" है, न कि केवल संख्यात्मक उपस्थिति। इस दृष्टिकोण से, प्रभावी प्रतिनिधित्व तभी प्राप्त किया जा सकता है, जब प्रशासन में सभी स्तरों या पदों पर पर्याप्त प्रतिनिधित्व हो। न्यायमूर्ति सावंत ने भी इसी तरह का दृष्टिकोण अपनाया।

172. हम इस पहलू पर **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी और **रंगाचारी (उपरोक्त)** में न्यायमूर्ति गजेंद्रगडकर की राय से पूरी तरह सहमत हैं, जिस पर वर्तमान खंड में चर्चा की जा रही है। पर्याप्त प्रतिनिधित्व का मतलब है सार्थक और प्रभावी प्रतिनिधित्व। सार्वजनिक सेवाओं का क्षेत्र आरक्षण के लिए संवैधानिक रूप से मान्यता प्राप्त क्षेत्र है क्योंकि राज्य के प्रशासनिक तंत्र का हिस्सा होना अपने आप में सामाजिक शक्ति का सूचक है। इसी कारण से संविधान ने, जब इसे अपनाया गया था, विधायिका में आरक्षण की गारंटी दी थी। हालाँकि, सार्वजनिक सेवा के क्षेत्र में सामाजिक शक्ति में एक पदानुक्रम मौजूद है। पिरामिड में जो पद ऊपर हैं, वे ऐसे पद हैं जो अधिक अधिकार रखते हैं। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि राज्य में तृतीय श्रेणी और चतुर्थ श्रेणी के पदों पर एक निश्चित वर्ग के सदस्य हैं, जबकि अधिकार और शक्ति के उच्च पदों पर एक निश्चित वर्ग के सदस्य हैं। प्रतिनिधित्व का यह जनसांख्यिकीय, यदि सेवा को एक पूरी इकाई के रूप में लिया जाता है, तो क्षेत्र के भीतर बनी रहने वाली असमानता की यथार्थवादी तस्वीर नहीं पेश करता है। यदि संख्यात्मक प्रतिनिधित्व को संकेतक के रूप में उपयोग किया जाता है, तो प्रतिनिधित्व के लिए प्रावधान उन वर्गों के पक्ष में करना होगा जो वर्ग III और वर्ग IV में प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं जो प्रावधान के उद्देश्य के अनुरूप नहीं हैं। वास्तव में, यह असमान सामाजिक संरचनाओं के अस्तित्व का एक और संकेतक होगा जहां पिछड़े वर्गों के सदस्य अधिक उन्नत लोगों के अधिकार और शक्ति के अधीन हैं। इस प्रकार, 'अपर्याप्त प्रतिनिधित्व' वाक्यांश की संख्यात्मक-प्रतिनिधित्व केंद्रित व्याख्या प्रावधान के उद्देश्य को पूरा नहीं करती है।

173. उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के तहत लाभार्थी वर्ग की पहचान करने के उद्देश्य और मानदंड के संबंध में निम्नलिखित सिद्धांतों को संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है:

क. अनुच्छेद 15(4) में लाभार्थी वर्ग सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा वर्ग होना चाहिए।

"सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा" परस्पर अनन्य अवधारणाएँ नहीं हैं। यह वाक्यांश

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

समाजशास्त्रीय वास्तविकता की संवैधानिक मान्यता का गठन करता है कि शैक्षणिक पिछड़ापन वर्ग के सामाजिक पिछड़ेपन के कारण होता है;

ख. अनुच्छेद 16(4) में लाभार्थी वर्ग, अनुच्छेद 15(4) के अंतर्गत वर्ग के समान, मुख्य रूप से सामाजिक रूप से पिछड़ा होना चाहिए। दोनों प्रावधानों का उद्देश्य सामाजिक रूप से पिछड़े समुदायों को अवसर की पर्याप्त समानता सुनिश्चित करना है। अनुच्छेद 16(4) में लाभार्थी वर्ग अनुच्छेद 15(4) के अंतर्गत सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों को शामिल करता है;

ग. अनुच्छेद 16(4) में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व की योग्यता पिछड़ेपन की आवश्यकता से परस्पर अनन्य नहीं है। राज्य की सेवाओं में वर्ग का अपर्याप्त प्रतिनिधित्व सामाजिक पिछड़ेपन के कारण होना चाहिए; तथा

(घ) प्रतिनिधित्व की पर्याप्तता का निर्धारण संख्यात्मक प्रतिनिधित्व के आधार पर नहीं बल्कि प्रभावी प्रतिनिधित्व के मानक के आधार पर किया जाना चाहिए।

d. उप-वर्गीकरण के लिए मानदंड

174. यह हमें अगले प्रश्न की ओर ले जाता है। लाभार्थी वर्गों के भीतर उप-वर्गीकरण के लिए तर्कसंगत आधार क्या होना चाहिए? चूंकि अनुच्छेद 15(4) और 16(4) का उद्देश्य सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों की अवसर की समानता सुनिश्चित करना है, इसलिए किसी वर्ग (चाहे वह अन्य पिछड़ा वर्ग हो या अनुसूचित जाति या जनजाति) के भीतर उप-वर्गीकरण के लिए मानदंड सामाजिक पिछड़ेपन का संकेतक होना चाहिए। वर्गीकरण के लिए मानदंड को परस्पर सामाजिक पिछड़ेपन के आधार पर वर्ग को अलग करना चाहिए। परस्पर पिछड़ेपन की पहचान एक ही या अलग पहचान के आधार पर की जा सकती है। राज्य ने अन्य पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की पहचान की है। यहां, राज्य समान पहचान के आधार पर उप-वर्गीकरण करता है, यानी जातिगत पहचान के कारण सामाजिक पिछड़ापन। क्षैतिज आरक्षण उन वर्गों को प्रदान किया जाता है जो जाति के अलावा लिंग और विकलांगता जैसी अन्य पहचानों के कारण पिछड़ेपन का सामना करते हैं। यहां, राज्य ने एक अलग पहचान के आधार पर उप-वर्गीकरण किया है।

175. यद्यपि अनुच्छेद 16(4) केवल सामूहिक रूप से “पिछड़े वर्ग” को संदर्भित करता है, अनुसूचित जातियों को विभेदित किया जाता है क्योंकि वे अस्पृश्यता के रूप में सामाजिक पिछड़ेपन से पीड़ित हैं जो शैक्षिक और आर्थिक पिछड़ेपन का कारण बनता है। अनुसूचित जनजातियों को एक अलग वर्ग के रूप में वर्गीकृत किया गया है क्योंकि वे बाकी आबादी से अपने स्थानिक और सांस्कृतिक अलगाव के कारण सामाजिक पिछड़ेपन से पीड़ित हैं। चूंकि राज्य अंतर-पिछड़ेपन को निर्धारित करने के लिए किसी भी मानदंड का उपयोग कर सकता है, इसलिए यह आवश्यक नहीं है कि उप-वर्गीकरण के मानदंड और वर्ग को अन्य वर्गों से अलग करने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले मानदंड समान हों। यानी, अगर अनुसूचित जातियों को पिछड़े वर्ग के रूप में पहचानने का मानदंड अस्पृश्यता है, तो यह आवश्यक नहीं है कि समूह को केवल तभी उप-वर्गीकृत किया जा सकता है जब समान पहचान (यानी अस्पृश्यता) के कारण अंतर-पिछड़ापन हो।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

176. अनुसूचित जातियाँ जातियों, नस्लों या जनजातियों या समूहों, नस्लों या जनजातियों के भागों का एक संग्रह हैं। जाति इस अर्थ में एक इकाई है कि इसमें लोगों का एक समरूप समूह शामिल है और यह पिछड़ेपन का सूचक भी है क्योंकि यह एक व्यावसायिक समूह है। जाति और व्यवसाय के बीच संबंध अभी भी कायम है, खास तौर पर ग्रामीण इलाकों में। **बालाजी (उपरोक्त)** से लेकर **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** तक कई मामलों में इस स्थिति को स्पष्ट किया गया है। एक जाति जिसका पारंपरिक व्यवसाय मैला ढोना है और दूसरी जाति जिसका पारंपरिक व्यवसाय बुनाई है, दोनों को अस्पृश्यता का कलंक झेलना पड़ सकता है। हालाँकि, जिस जाति का पारंपरिक व्यवसाय मैला ढोना है, वह जाति-व्यवसाय-गरीबी संबंध के कारण बुनकर जाति की तुलना में सामाजिक रूप से अधिक पिछड़ी होगी।

177. राज्य अनुसूचित जातियों के भीतर परस्पर सामाजिक पिछड़ेपन की पहचान कैसे करता है? जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, परस्पर पिछड़ेपन की पहचान, अन्य बातों के साथ-साथ, प्रभावी प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता के आधार पर की जा सकती है। हालाँकि, यह साबित करना होगा कि किसी जाति के प्रभावी प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता उसके सामाजिक पिछड़ेपन के कारण है। मुझे अपने विद्वान भाई, न्यायमूर्ति गवई की विद्वत्तापूर्ण राय पढ़ने का लाभ मिला है। मेरे विद्वान भाई और मैं इस बात से सहमत हैं कि राज्य को यह साबित करना होगा कि अनुसूचित जातियों के बड़े समूह से अलग किया गया समूह/जाति अधिक वंचित है और उसका प्रतिनिधित्व अपर्याप्त है।

viii. उप-वर्गीकरण की सीमाएं

178. यह मानते हुए कि आरक्षण के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण वैध है और आगे वर्गीकरण के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले मानदंड को निर्धारित करने के बाद, अगला मुद्दा जो हमारे विचार के लिए आता है वह है इसका दायरा। इस खंड में, हम निम्नलिखित मुद्दों का उत्तर देंगे:

क. क्या राज्य को उप-वर्गीकृत वर्गों में से प्रत्येक के लिए सीटें निर्धारित करनी चाहिए या वरीयता मॉडल का पालन करना चाहिए; और

ख. क्या राज्य अनुसूचित जातियों की सूची में प्रत्येक जाति के लिए सीटें या वरीयता आवंटित कर सकता है।

इस धारा का उद्देश्य राज्य के लिए कोई कठोर मानदंड निर्धारित करना नहीं है। हमारा विश्लेषण नीतिगत मामलों पर ध्यान दिए बिना व्यापक संवैधानिक मानदंड निर्धारित करेगा।

a. विशेष प्रावधानों का मॉडल

179. विचार के लिए एक महत्वपूर्ण मुद्दा उप-वर्गीकृत वर्गों के लिए आरक्षण के मॉडल के संबंध में है। उप-वर्गीकृत जातियों के लिए सीटें आरक्षित करते समय राज्य दो मॉडल अपना सकता है। यह विश्लेषण करने की आवश्यकता है कि क्या दोनों तरीके संवैधानिक हैं।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

180. पहले मॉडल में, जो वर्ग सामाजिक रूप से अधिक पिछड़े हैं, उन्हें अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सभी सीटों पर वरीयता दी जाती है। इस मॉडल के दो रूप हैं। पहले रूप में, अनुसूचित जातियों की श्रेणी के लिए आरक्षित सभी सीटों पर कुछ जातियों को वरीयता दी जाती है। दूसरे शब्दों में, उप-वर्गीकृत वर्ग को सेब का पहला निवाला मिलेगा। दूसरे रूप में, उप-वर्गीकृत वर्ग को सीटों के एक निश्चित प्रतिशत पर वरीयता मिलेगी। कोई भी खाली सीट अन्य श्रेणियों के लिए उपलब्ध होगी।

181. दूसरे मॉडल में सीटें कुछ जातियों के लिए विशेष रूप से उपलब्ध होंगी। विशेष मॉडल वरीयता मॉडल से इस सीमित सीमा तक भिन्न है कि पहले मॉडल में, जो सीटें नहीं भरी जाती हैं, उन्हें अगले वर्ष उसी जाति द्वारा भरा जाएगा जबकि दूसरे मॉडल में, जो सीटें नहीं भरी जाती हैं, उन्हें उसी वर्ग की अन्य जातियों के लिए उपलब्ध कराया जाएगा। इस मॉडल में भी दो भिन्नताएं हैं। पहले मॉडल में, उप-वर्गीकृत वर्ग के लिए कुछ प्रतिशत सीटें आरक्षित होंगी और राज्य अगले वर्ष उसी वर्ग द्वारा भरी जाने वाली खाली सीटों को, यदि कोई हो, आगे ले जाएगा। दूसरे मॉडल में, सभी सीटें उस श्रेणी की एक निश्चित जाति के लिए विशेष रूप से उपलब्ध होंगी और राज्य खाली सीटों को आगे ले जाएगा।

182. वरीयता या अनन्य मॉडल असंवैधानिक है या नहीं, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि परिवर्तन प्रभावी रूप से अनुच्छेद 341(1) के अंतर्गत राष्ट्रपति द्वारा उस राज्य के संबंध में अनुसूचित जाति के रूप में अधिसूचित किसी जाति को बाहर करता है या नहीं। वरीयता मॉडल के संबंध में, पहला बदलाव जिसके द्वारा कुछ जातियों को सभी सीटों पर वरीयता दी जाती है, एक असंवैधानिक दृष्टिकोण होगा क्योंकि इस बात की संभावना है कि अनुसूचित जातियों के वर्ग के भीतर अन्य श्रेणियों को बाहर रखा गया है। उदाहरण के लिए, यदि राज्य अनुसूचित जातियों के रूप में वर्गीकृत तीस जातियों में से तीन को अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सभी सीटों पर वरीयता देता है, तो यह संभव है कि तीनों जातियाँ अपनी वरीयता का प्रयोग करें और सभी सीटें भर लें। इससे ऐसी स्थिति पैदा होगी कि अनुसूचित जातियों के रूप में वर्गीकृत अन्य सत्ताईस जातियाँ आरक्षण के लाभ से बाहर हो जाएँगी। यह मॉडल मनमाना और अनुचित भी होगा क्योंकि अन्य पिछड़े वर्ग जो अनुसूचित जातियों के रूप में वर्गीकृत जातियों की तुलना में सामाजिक रूप से उन्नत हैं, उन्हें आरक्षण का लाभ मिलेगा लेकिन अनुसूचित जातियों के भीतर की जातियों या समूहों को नहीं। अनुसूचित जातियों के रूप में वर्गीकृत जातियों को लाभ प्राप्त करने का अवसर दिया जाना चाहिए। यदि नहीं, तो यह प्रावधान उनके उद्देश्यों के लिए निरर्थक हो जाएगा।

183. हालाँकि, पहले मॉडल का दूसरा रूपांतर अनुच्छेद 341(2) के दायरे के अनुसार अलग तरीके से रखा गया है। दूसरे रूपांतर में, कुछ जातियों को सीटों के एक निश्चित प्रतिशत पर ही वरीयता दी जाती है। इस प्रकार, जिन जातियों को वरीयता नहीं दी जाती है, लेकिन जो अनुसूचित जातियों की सूची में शामिल हैं, वे सीटों के एक निश्चित प्रतिशत के लिए प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम होंगी। उन सीटों के अलावा, उन्हें उप-वर्गीकृत जाति के लिए आरक्षित सीटों के प्रतिशत के लिए प्रतिस्पर्धा करने का अवसर मिल सकता है, अगर वे खाली रह जाती हैं। इस प्रकार, इस मॉडल का अनुसूचित जातियों की सूची में से किसी भी जाति को बाहर करने का प्रभाव नहीं है।

184. पहले और दूसरे मॉडल के बीच अंतर यह है कि अधिक पिछड़े उप-श्रेणी की खाली पड़ी रिक्तियों को किस तरीके से भरा जाना है। पहले मॉडल में, अधिक पिछड़े उप-श्रेणी को केवल कुछ प्रतिशत सीटों के लिए वरीयता दी जाती है, जबकि दूसरे मॉडल में, सीटों का एक प्रतिशत विशेष रूप से उनके लिए उपलब्ध होता है और खाली

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पड़ी सीटें, यदि कोई हों, तो वर्ग की अधिक उन्नत श्रेणी द्वारा भरी जाने के लिए उपलब्ध नहीं होंगी। राज्य खाली पड़ी रिक्तियों को अगले वर्ष के लिए आगे बढ़ा सकता है जो उसी श्रेणी के लिए उपलब्ध होंगी जिसके लिए सीटें आरक्षित थीं।

185. अनुच्छेद 16(4-बी) में प्रावधान है कि राज्य वर्ष की उन रिक्तियों को, जो अनुच्छेद 16(4) और 16(4-ए) के तहत वर्गों द्वारा भरे जाने के लिए आरक्षित थीं, अगले वर्ष या वर्षों में आगे ले जाने पर विचार कर सकता है। प्रावधान में यह भी प्रावधान है कि उस वर्ष की कुल रिक्तियों पर पचास प्रतिशत आरक्षण की अधिकतम सीमा निर्धारित करने के लिए बाद के वर्ष की रिक्तियों के साथ रिक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

186. अनुच्छेद 16(4-बी) वर्ग और उपवर्गीकृत वर्गों के बीच कोई अंतर नहीं करता है। प्रावधान में कहा गया है कि राज्य संविधान के अनुच्छेद 16(4) और 16(4-ए) के तहत भरे जाने के लिए आरक्षित खाली सीटों की रिक्तियों को आगे बढ़ा सकता है। जैसा कि पिछले खंड में कहा गया है, अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण करने की राज्य की शक्ति अनुच्छेद 16(4) से जुड़ी है। इसके अलावा, खाली रह गई सीटें किसी भी तरह से अनुसूचित जातियों की अन्य उप-श्रेणियों के लिए उपलब्ध सीटों को कम नहीं करेंगी। **नागराज (उपरोक्त)** में अनुच्छेद 16(4-बी) की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा गया था। इस प्रकार, राज्य को अनुच्छेद 16(4-बी) के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करने से रोकने का कोई कारण नहीं है, जो किसी विशिष्ट उप-श्रेणी के लिए आरक्षित रिक्तियों को आगे बढ़ाती है। ऐसा प्रयोग कानूनी और वैध होगा।

187. पहले मॉडल की तरह, विशेष मॉडल की संवैधानिकता उप-वर्गीकृत जातियों के लिए आरक्षण के प्रतिशत पर निर्भर करती है। उप-वर्गीकरण का मॉडल असंवैधानिक होगा यदि यह कुछ अनुसूचित जातियों को लाभ से बाहर रखता है। यह, वरीयता मॉडल के पहले संस्करण के समान, अनुच्छेद 341 (2) का उल्लंघन करेगा, और इस प्रकार असंवैधानिक होगा। हालाँकि, विशेष मॉडल का दूसरा संस्करण जिसमें केवल एक निश्चित प्रतिशत सीटें उप-वर्गीकृत जातियों को विशेष रूप से आवंटित की जाती हैं, संवैधानिक होगा। उदाहरण के लिए, यदि अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सीटों में से दस प्रतिशत अनुसूचित जातियों में अधिक पिछड़े लोगों के लिए आरक्षित हैं, तो अन्य जातियों को शेष नब्बे प्रतिशत सीटों के लिए प्रतिस्पर्धा करने का मौका मिलेगा, इस प्रकार, किसी भी जाति को बाहर नहीं रखा जाएगा। एकमात्र परीक्षण यह है कि क्या नीति के संचालन का अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सीटों के लिए प्रतिस्पर्धा करने वाली जातियों या समूहों की संभावना को समाप्त करने का प्रभाव है।

188. जैसा कि हमने ऊपर उल्लेख किया है, अनुच्छेद 341(2) स्पष्ट रूप से संसद को छोड़कर किसी भी अन्य द्वारा अनुसूचित जातियों की सूची में शामिल करने या उससे बाहर करने पर रोक लगाता है। समावेशन राज्य में अनुसूचित जातियों के लिए निर्धारित लाभों को उस समुदाय तक पहुंचाने के माध्यम से हो सकता है, जिसका राज्य अनुसूचित जाति सूची में विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया गया है (जैसा कि **मिलिंद (उपरोक्त)** में मामला था), इसे प्रगणित प्रविष्टि के एक भाग के रूप में पढ़कर या इसे प्रगणित प्रविष्टि के पर्याय के रूप में पढ़कर। ऐसा कोई भी काम राज्यों या न्यायालयों के लिए खुला नहीं है। अनुसूचित जातियों और जनजातियों की सूची में नाम जोड़ने या हटाने का अधिकार केवल संसद को है। जैसा कि डॉ. अंबेडकर ने भी संकेत दिया था, निषेध का जोर सूची में किसी प्रविष्टि को समाप्त करने या उसमें कोई प्रविष्टि जोड़ने पर प्रतिबंध है। ऐसा निष्कासन या जोड़ना, यह आशंका थी कि अल्पकालिक चुनावी लाभ की उम्मीद में राजनीतिक गणनाओं से उत्पन्न हो सकता है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

इसलिए, सूची में इस तरह के बदलाव करने का विशेष अधिकार केवल संसद को ही है। राज्य द्वारा किया गया कोई भी विधायी प्रयास जिसमें अनिर्दिष्ट समुदायों को शामिल नहीं किया जाता है या उस राज्य पर लागू अनुसूचित जातियों की सूची से निर्दिष्ट समुदायों को बाहर नहीं किया जाता है, संविधान के अनुच्छेद 341(2) का उल्लंघन नहीं करता है।

189. राज्य को उप-वर्गीकरण के माध्यम से सीटें आरक्षित करते समय ऊपर चर्चित दो स्वीकार्य मॉडलों में से किसी एक को अपनाने का अधिकार है। दोनों मॉडलों में से किसी एक को चुनने का राज्य का निर्णय कई बातों पर निर्भर करेगा जैसे कि कुछ जातियों की अन्य जातियों की तुलना में पिछड़ेपन की डिग्री और अनुसूचित जातियों (अनुसूचित जातियों की अधिक पिछड़ी जातियाँ और अन्य दोनों) से संबंधित योग्य उम्मीदवारों की कुल संख्या।

190. संवैधानिक चुनौती का सामना करने पर राज्य द्वारा अपनाई गई कार्यवाही न्यायिक समीक्षा के अधीन होगी। जहां कार्यवाही को चुनौती दी जाती है, वहां राज्य को अपनी कार्यवाही के आधार को उचित ठहराना होगा। उप-वर्गीकरण का आधार और जिस मॉडल का पालन किया गया है, उसे राज्य द्वारा एकत्र किए गए अनुभवजन्य आंकड़ों के आधार पर उचित ठहराया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, जबकि राज्य उप-वर्गीकरण की प्रक्रिया शुरू कर सकता है, उसे राज्य की सेवाओं में पिछड़ेपन और प्रतिनिधित्व के स्तर से संबंधित मात्रात्मक और प्रदर्शन योग्य आंकड़ों के आधार पर ऐसा करना चाहिए। दूसरे शब्दों में, यह केवल अपनी सनक या राजनीतिक लाभ के लिए काम नहीं कर सकता। राज्य का निर्णय न्यायिक समीक्षा के लिए उत्तरदायी है। जब इसकी कार्यवाही को अनुच्छेद 226 के तहत या अनुच्छेद 32 के तहत इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी जाती है, तो राज्य को अपने निर्णय के लिए औचित्य और तर्क प्रदान करना चाहिए। राज्य की कोई भी कार्यवाही स्पष्ट रूप से मनमानी नहीं हो सकती। यह उप-वर्गीकरण के मूल में मौजूद स्पष्ट अंतर पर आधारित होनी चाहिए। उप-वर्गीकरण का आधार प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य से उचित संबंध होना चाहिए।

b. जाति-वर्ग की पहली

191. एक मुद्दा यह उठता है कि क्या राज्य वर्ग के भीतर प्रत्येक जाति के लिए विशेष प्रावधान प्रदान कर सकता है। **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में, राज्य ने अन्य पिछड़ी जातियों को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया – पिछड़ा वर्ग और अधिक पिछड़ा वर्ग। इस प्रकार, वर्ग को केवल दो श्रेणियों में विभाजित किया गया था। क्या प्रत्येक जाति को सीटों के प्रतिशत में वरीयता या आरक्षण प्रदान करके अनुसूचित जातियों को वर्गीकृत करना स्वीकार्य है?

192. अनुच्छेद 15(4) और 16(4) दोनों ही जातियों के आधार पर आरक्षण को सक्षम नहीं करते हैं, बल्कि केवल वर्गों के आधार पर आरक्षण को सक्षम करते हैं। अनुच्छेद 15(4) और 16(4) में “जाति” के उपयोग की अनुपस्थिति और अनुच्छेद 15(2) और 16(2) में इसके उपयोग के कारण न्यायालयों ने माना कि जाति आरक्षण का एकमात्र आधार नहीं हो सकती।²³⁸ हालांकि, जैसा कि मार्क गैलेंटर ने उल्लेख किया है, न्यायालय ने जाति के दो अलग-अलग उपयोगों को एक इकाई या वर्ग के रूप में और पिछड़ेपन के मानदंड के रूप में गलत तरीके से मिला दिया था।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

193. **बालाजी (उपरोक्त)** में सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन के निर्धारण के मानदंड पर सवाल उठाया गया था। इस न्यायालय ने माना कि सामाजिक पिछड़ेपन के निर्धारण के लिए जाति एक प्रासंगिक विचार है। हालाँकि, न्यायालय ने कहा कि जाति लाभार्थी वर्ग के निर्धारण का एकमात्र आधार नहीं हो सकती क्योंकि इससे जातियों की बुराई बनी रहेगी। नागन गौड़ा रिपोर्ट से असहमति जताते हुए न्यायमूर्ति गजेन्द्रगडकर ने पीठ की ओर से लिखते हुए कहा कि जाति नहीं बल्कि आर्थिक पिछड़ापन सामाजिक पिछड़ेपन का अंतिम कारण है। पिछड़े वर्ग को निर्धारित करने के लिए एक मानदंड के रूप में जाति की अनुमति की यह व्याख्या चित्रलेखा बनाम मैसूर राज्य में स्वीकृत की गई थी। पी राजेंद्रन बनाम मद्रास राज्य में, इस न्यायालय ने **चित्रलेखा (उपरोक्त)** और **एमआर बालाजी (उपरोक्त)** में अपनाए गए दृष्टिकोण से अलग हटकर कहा कि जाति एक वर्ग है क्योंकि यह एक समरूप "इकाई" है। **पी राजेंद्रन (उपरोक्त)** मामले में अपनाए गए दृष्टिकोण को बाद में **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** मामले में नौ न्यायाधीशों की पीठ द्वारा अनुमोदित किया गया, जहां इस न्यायालय ने कहा कि सामाजिक रूप से पिछड़े वर्ग का निर्धारण करने के लिए, एक जाति को एक इकाई के रूप में पहचाना जा सकता है क्योंकि वह समरूप है और फिर पिछड़ेपन के मानदंड उस पर लागू किए जा सकते हैं।

194. संविधान किसी जाति को सीटों का प्रतिशत आवंटित करने पर रोक नहीं लगाता है क्योंकि हर जाति एक वर्ग है। हालांकि, राज्य के पास प्रत्येक जाति के बीच परस्पर पिछड़ेपन को साबित करने के लिए पर्याप्त सामग्री होनी चाहिए। राज्य को ठोस सामग्री प्रस्तुत करके यह साबित करना चाहिए कि एक तर्कसंगत सिद्धांत है जो वर्ग में शामिल समूहों और बहिष्कृत समूहों के बीच अंतर करता है। हालांकि, तर्कसंगत सिद्धांत का उद्देश्य से संबंध तभी होगा जब सिद्धांत वर्ग के परस्पर सामाजिक पिछड़ेपन की पहचान कर सके। उदाहरण के लिए, यदि राज्य धोबी जाति और नाई जाति के लिए सीटों का एक अलग प्रतिशत आवंटित करता है, तो उसे यह साबित करना होगा कि ये दोनों जातियाँ सामाजिक पिछड़ेपन के विभिन्न स्तरों से पीड़ित हैं। राज्य के लिए केवल दो जातियों के पारंपरिक व्यवसाय में अंतर के आधार पर वर्गीकरण करना पर्याप्त नहीं है। बल्कि, राज्य को मात्रात्मक आंकड़ों के आधार पर यह साबित करना चाहिए कि जातियाँ सामाजिक पिछड़ेपन के विभिन्न स्तरों से पीड़ित हैं। राज्य को राज्य की सेवाओं में जाति के प्रभावी प्रतिनिधित्व पर डेटा प्रस्तुत करके भी इसका समर्थन करना चाहिए।

195. यद्यपि प्रत्येक जाति के आधार पर उप-वर्गीकरण स्वीकार्य है, लेकिन हमारा मानना है कि ऐसी स्थिति कभी नहीं हो सकती है जहाँ प्रत्येक जाति के लिए अलग-अलग सीटें आवंटित की जाएँ। यद्यपि प्रत्येक जाति एक अलग इकाई है, लेकिन उनमें से प्रत्येक द्वारा झेली जाने वाली सामाजिक पिछड़ापन इतनी अलग नहीं है कि राज्य को प्रत्येक जाति के लिए सीटें आरक्षित करने की आवश्यकता हो। यदि दो या अधिक वर्गों का सामाजिक पिछड़ापन तुलनीय है, तो उन्हें आरक्षण के प्रयोजनों के लिए एक साथ समूहीकृत किया जाना चाहिए।

ix. न्यायिक समीक्षा का प्रयोजन

196. आरक्षण नीतियों की न्यायिक समीक्षा का दायरा **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में निर्धारित किया गया था। न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने कहा कि आरक्षण पाने के लिए किसी वर्ग का पिछड़ा होना और राज्य के अधीन सेवाओं में उसका अपर्याप्त प्रतिनिधित्व होना ज़रूरी है। **नागराज (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय ने माना कि पिछड़ापन वस्तुनिष्ठ मानकों पर आधारित होना चाहिए जबकि प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता तथ्यात्मक रूप से मौजूद होनी

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

चाहिए। न्यायालय ने माना कि राज्य को पिछड़ेपन और प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता को साबित करने के लिए मात्रात्मक डेटा प्रस्तुत करना चाहिए। यह मानक आरक्षण के उद्देश्य से समूहों को वर्गीकृत करने के लिए लागू होता है और समूह के भीतर उप-वर्गीकरण के लिए भी समान रूप से लागू होगा क्योंकि यह अंतर और असमानता के समान सिद्धांत पर आधारित है।

197. अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के उप-वर्गीकरण की न्यायिक समीक्षा के दायरे पर चर्चा करते समय दो प्रमुख विचार सामने आते हैं। पहला, क्या राज्य को अंतर-पिछड़ापन साबित करना चाहिए, क्योंकि **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में कानून की स्थिति यह है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पिछड़ेपन को साबित करने की आवश्यकता नहीं है। दूसरा, क्या अनुसूचित जातियों के अधिक पिछड़े लोगों के प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता को साबित किया जाना चाहिए।

a. परस्पर पिछड़ापन

198. **इन्द्रा साहनी (उपरोक्त)** मामले में इस न्यायालय ने माना कि सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन की आवश्यकता अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर लागू नहीं की जा सकती, क्योंकि वे निस्संदेह नागरिकों के पिछड़े वर्ग में आते हैं। जरनैल सिंह बनाम लक्ष्मी नारायण गुप्ता मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ के समक्ष एक मुद्दा यह था कि क्या **नागराज (उपरोक्त)** मामले में राज्य को पिछड़ेपन को दर्शाने वाले मात्रात्मक आंकड़े एकत्र करने की आवश्यकता बताना, **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** मामले में दिए गए निर्णय के विपरीत है, जहां इस न्यायालय ने कहा था कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पिछड़ेपन को साबित करने की आवश्यकता नहीं है। **जरनैल सिंह (उपरोक्त)** मामले में, इस न्यायालय ने माना कि **नागराज (उपरोक्त)** में की गई टिप्पणियां कि राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पिछड़ेपन को साबित करने के लिए मात्रात्मक डेटा एकत्र करने की आवश्यकता है, कानून की दृष्टि से गलत है क्योंकि यह **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** मामले के विपरीत है।

199. **इन्द्रा साहनी (उपरोक्त)** में लिए गए निर्णय में राज्य को यह साबित करने से छूट दी गई है कि अनुच्छेद 15 और 16 के तहत लाभ प्राप्त करने के लिए अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां पिछड़ी हैं। ये टिप्पणियां राज्य को आरक्षण के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के भीतर उप-वर्गीकरण के निर्णय को उचित ठहराने से छूट नहीं देती हैं। उप-वर्गीकरण का आधार यह है कि वर्ग के भीतर कुछ जातियां या समूह अधिक पिछड़े हैं। इस प्रकार, हालांकि राज्य को अनुसूचित जातियों/जनजातियों के सम्पूर्ण वर्ग के पिछड़ेपन को साबित करने के लिए मात्रात्मक आंकड़े एकत्र करने की आवश्यकता नहीं है, फिर भी उसे वर्ग के भीतर पारस्परिक पिछड़ेपन को साबित करने के लिए आंकड़े एकत्र करने की आवश्यकता है, जहां वह वर्ग के भीतर उप-वर्गीकरण करना चाहता है।

b. प्रतिनिधित्व की पर्याप्तता

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

200. न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में उल्लेख किया कि किसी वर्ग का अपर्याप्त प्रतिनिधित्व है या नहीं, यह मुद्रा राज्य की व्यक्तिपरक संतुष्टि के अंतर्गत आता है, जो "राज्य की राय में" वाक्यांश के प्रयोग से स्पष्ट है, और कार्यकारी कार्रवाई की व्यक्तिपरक संतुष्टि की न्यायिक समीक्षा बेरियम केमिकल्स बनाम कंपनी लॉ बोर्ड में निर्धारित मानक के आधार पर की जानी चाहिए। **बेरियम केमिकल्स (उपरोक्त)** मामले में, इस न्यायालय की संविधान पीठ ने प्रशासनिक कार्रवाइयों की वैधता का निर्धारण करते हुए यह माना था कि यद्यपि राज्य द्वारा राय का निर्माण उसकी व्यक्तिपरक संतुष्टि पर आधारित हो सकता है, राज्य उन परिस्थितियों के आधार पर कार्य नहीं कर सकता है जिनके बारे में वह 'सोचता है' कि वे मौजूद हैं। ऐसी स्पष्ट परिस्थितियां होनी चाहिए जो राज्य द्वारा किसी निश्चित निष्कर्ष को योग्य ठहराएं, और ऐसी परिस्थितियों का कम से कम प्रथम दृष्टया अस्तित्व में होना दर्शाया जाना चाहिए। पिछले खंड में, हमने माना है कि प्रभावी प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता अंतर-पिछड़ेपन को निर्धारित करने का एक मानदंड है। इसलिए, उस उद्देश्य के लिए मात्रात्मक डेटा प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

201. **नागराज (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय ने कहा कि राज्य को न्यायालय को यह संतुष्टि दिलाने के लिए मात्रात्मक डेटा प्रस्तुत करना चाहिए कि आरक्षण "किसी विशेष वर्ग या वर्गों के पदों में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता के कारण" आवश्यक है। हालाँकि, बाद के पैराग्राफों में, इस न्यायालय ने माना कि यह सुनिश्चित करने के लिए कि किसी वर्ग या समूह का पर्याप्त प्रतिनिधित्व है या नहीं, कैडर की संख्या को एक इकाई के रूप में लिया जाना चाहिए। ये टिप्पणियां **आरके सभरवाल (सुप्रा)** मामले की पृष्ठभूमि में की गई थीं, जहां इस न्यायालय ने कहा था कि यह निर्धारित करने के लिए कि कोटा सीमा का उल्लंघन हुआ है या नहीं, पूरी कैडर संख्या को ध्यान में रखा जाना चाहिए। प्रासंगिक टिप्पणियां इस प्रकार हैं:

"82. संवैधानिक संशोधनों के दायरे पर विचार करने से पूर्व हमें इंद्रा साहनी [1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1: (1992) 22 एटीसी 385] और आर.के. सभरवाल [(1995) 2 एससीसी 745: 1995 एससीसी (एल एंड एस) 548: (1995) 29 एटीसी 481] के निर्णयों को दोबारा याद करने की जरूरत है। पहले मामले में बहुमत ने माना कि 50% नियम हर साल लागू होना चाहिए अन्यथा ऐसा हो सकता है कि अगर पूरी कैडर ताकत को एक इकाई के रूप में लिया जाए तो खुली प्रतिस्पर्धा चैनल बंद हो सकता है। हालांकि, आरके सभरवाल [(1995) 2 एससीसी 745: 1995 एससीसी (एल एंड एस) 548: (1995) 29 एटीसी 481] में इस न्यायालय ने कहा कि यह निर्धारित करने के लिए कि कोटा सीमा तक आरक्षण प्राप्त हुआ है या नहीं, पूरी कैडर ताकत को ध्यान में रखा जाना चाहिए। यह स्पष्ट किया गया कि इंद्रा साहनी [1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1: (1992) 22 एटीसी 385] में निर्णय प्रारंभिक नियुक्तियों तक ही सीमित था न कि पदोन्नति तक। कैडर संख्या को भरने के लिए रोस्टर का संचालन, अपने आप में, यह सुनिश्चित करता है कि आरक्षण 50% की अधिकतम सीमा के भीतर रहे।

83. हमारे विचार में, उचित सरकार को रोस्टर के संचालन में कैडर की संख्या को एक इकाई के रूप में लागू करना होगा ताकि यह पता लगाया जा सके कि किसी दिए गए वर्ग/समूह का सेवा में पर्याप्त प्रतिनिधित्व है या नहीं। एक इकाई के रूप में कैडर की संख्या यह भी सुनिश्चित

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

करती है कि 50% की ऊपरी सीमा का उल्लंघन न हो। इसके अलावा, रोस्टर पद-विशिष्ट होना चाहिए न कि रिक्ति आधारित।"

(प्रभाव वर्धित)

202. इस मोड़ पर, यह महत्वपूर्ण है कि हम **नागराज (उपरोक्त)** में ऊपर उद्धृत टिप्पणियों को स्पष्ट करें। **नागराज (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय ने आरके सभरवाल के फैसले का हवाला देते हुए कहा कि प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता का निर्धारण करने के लिए कैडर को एक इकाई के रूप में लिया जाना चाहिए। हालांकि, जिस संदर्भ में **आरके सभरवाल (उपरोक्त)** ने कहा कि कैडर को एक इकाई के रूप में माना जाना चाहिए, वह अलग था। उस मामले में, दो मुद्दों पर विचार किया गया था। पहला, क्या पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण का प्रतिशत निर्धारित करते समय सामान्य श्रेणी में पिछड़े वर्गों की नियुक्तियों को भी गिना जाना चाहिए। दूसरा, क्या अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के लिए निर्धारित पदों को भर देने पर आरक्षण पूर्ण हो जाता है। दूसरे मुद्दे का उत्तर देते हुए इस न्यायालय ने कहा कि आरक्षण विभाग में बनाए गए रोस्टर के अनुसार संचालित होना चाहिए, जो हर साल एक चालू खाता होगा ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि अत्यधिक आरक्षण न हो। इस न्यायालय ने संवर्ग आधारित रिक्ति की गणना की कार्यप्रणाली को इस प्रकार समझाया: विशिष्ट क्रम संख्या में आने वाले पद प्रत्येक वर्ग को आवंटित आरक्षित सीटें होंगी और जब कोई आरक्षित सीट रिक्त होती है, तो उसे उसी श्रेणी के व्यक्ति द्वारा भरा जाना चाहिए:

5. [...] आलोचना निर्देशों में "चालू खाते" की अवधारणा की इस प्रकार व्याख्या की जानी चाहिए कि इससे अत्यधिक आरक्षण की स्थिति उत्पन्न न हो। "16% पद ..." अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों के सदस्यों के लिए आरक्षित हैं। 100 पदों के एक समूह में क्रम संख्या 1, 7, 15, 22, 30, 37, 44, 51, 58, 65, 72, 80, 87 और 91 पर आने वाले पदों को अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित और रोस्टर में चिह्नित किया गया है। रोस्टर बिन्दु 26 और 76 पिछड़े वर्ग के सदस्यों के लिए आरक्षित हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जब किसी संवर्ग में भर्ती शुरू होती है तो रोस्टर में निर्धारित 14 पद अनुसूचित जातियों के सदस्यों में से भरे जाने हैं। उदाहरण के लिए, किसी संवर्ग में पहला पद अनुसूचित जाति को मिलना चाहिए तथा उसके बाद उक्त वर्ग 7 वें, 15 वें, 22 वें तथा उसके बाद 91 वें पद तक का हकदार होगा। जब किसी संवर्ग में कुल पदों को रोस्टर के संचालन द्वारा भरा जाता है, तो उक्त अनुदेशों द्वारा परिकल्पित परिणाम प्राप्त होता है। दूसरे शब्दों में, 100 पदों के एक संवर्ग में जब अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों के लिए रोस्टर में निर्धारित पदों को भर दिया जाता है तो आरक्षित श्रेणियों के लिए प्रदत्त आरक्षण का प्रतिशत प्राप्त हो जाता है। हम इसके बाद रोस्टर को संचालित करने का कोई औचित्य नहीं देखते हैं। "रनिंग अकाउंट" केवल तब तक संचालित होना चाहिए जब तक कि विवादित निर्देशों के तहत प्रदान किया गया कोटा पूरा न हो जाए, उसके बाद नहीं। [...] जब भी किसी विशेष पद पर कोई रिक्ति होती है, चाहे वह स्थायी हो या अस्थायी, तो उसे रोस्टर में उस श्रेणी में से भरा जाना चाहिए जिससे वह पद संबंधित है। उदाहरण के लिए, रोस्टर बिन्दु 1, 7, 15 पर पद धारण करने वाले अनुसूचित जाति के व्यक्ति यदि सेवानिवृत्त हो जाते हैं तो इन स्थानों को अनुसूचित जाति के व्यक्तियों में से भरा जाना है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

इसी प्रकार, यदि बिन्दु 8 से 14 या 23 से 29 पर पद धारण करने वाले व्यक्ति सेवानिवृत्त होते हैं तो ये स्थान सामान्य श्रेणी में से भरे जाएंगे। इस प्रक्रिया का पालन करने से आरक्षण के प्रतिशत में न तो कमी होगी और न ही अधिकता होगी।

203. **नागराज (उपरोक्त)** में यह निष्कर्ष कि **आर.के.सभरवाल (उपरोक्त)** में की गई उपरोक्त टिप्पणियों के आधार पर आरक्षण की अपर्याप्तता निर्धारित करने के लिए कैडर को एक इकाई के रूप में लिया जाना चाहिए, हमारी सम्मानजनक राय में, गलत है। आरक्षित और खुली सीटों के बीच संतुलन बनाने के लिए रोस्टर तैयार करने के उद्देश्य से ही कैडर को एक इकाई के रूप में माना गया था। इस न्यायालय ने यह नहीं माना कि प्रतिनिधित्व की पर्याप्तता निर्धारित करने के उद्देश्य से कैडर को एक इकाई के रूप में इस्तेमाल किया जाना चाहिए। वास्तव में, **आरके सभरवाल (उपरोक्त)** इसके विपरीत कहते हैं। **आर.के.सभरवाल (उपरोक्त)** ने कहा कि राज्य सरकार प्रतिनिधित्व की पर्याप्तता निर्धारित करते समय किसी विशेष पिछड़े वर्ग की कुल जनसंख्या और राज्य सेवाओं में उसके प्रतिनिधित्व को ध्यान में रख सकती है:

204. इस प्रकार, उपर्युक्त चर्चा के मद्देनजर, अनुच्छेद 16(4) के तहत उप-वर्गीकरण करने की शक्ति के वैध प्रयोग के लिए राज्य को राज्य की सेवाओं में उप-श्रेणियों के प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता के संबंध में मात्रात्मक डेटा एकत्र करना आवश्यक है। जैसा कि पिछले खंड में कहा गया है, प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता पिछड़ेपन का सूचक है और इस प्रकार, प्रतिनिधित्व निर्धारित करने के लिए संवर्ग को एक इकाई के रूप में उपयोग करना, सूचक के उद्देश्य को ही बदल देता है। राज्य को यह निर्णय लेते समय कि क्या वर्ग का पर्याप्त प्रतिनिधित्व है, पर्याप्तता की गणना मात्रात्मक प्रतिनिधित्व के आधार पर नहीं बल्कि प्रभावी प्रतिनिधित्व के आधार पर करनी चाहिए।

E. निष्कर्ष

205. उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, हमारे निष्कर्ष निम्नलिखित हैं:

(क). संविधान का अनुच्छेद 14 किसी वर्ग के उप-वर्गीकरण की अनुमति देता है, जो कानून के प्रयोजन के लिए समान स्थिति में नहीं है। उप-वर्गीकरण की वैधता का परीक्षण करते समय न्यायालय को यह निर्धारित करना होगा कि क्या यह वर्ग उप-वर्गीकरण के उद्देश्य को पूरा करने के लिए एक समरूप एकीकृत वर्ग है। यदि वर्ग को उद्देश्य के लिए एकीकृत नहीं किया गया है, तो वर्ग को दो-आयामी बोधगम्य विभेदक मानक की पूर्ति पर आगे वर्गीकृत किया जा सकता है;

(ख). **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय ने उप वर्गीकरण के आवेदन को केवल अन्य पिछड़ा वर्ग तक सीमित नहीं किया। इस न्यायालय ने अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के तहत लाभार्थी वर्गों पर सिद्धांत के आवेदन को बरकरार रखा;

(ग). अनुच्छेद 341(1) कोई काल्पनिक कल्पना नहीं बनाता है। प्रावधान में "माना गया" वाक्यांश का प्रयोग इस आशय से किया गया है कि राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचित जातियों या समूहों को अनुसूचित जातियों के रूप में माना जाएगा। यदि यह स्वीकार भी कर लिया जाए कि संवैधानिक पहचान के निर्माण के लिए इस काल्पनिक कथा का प्रयोग किया गया है, तो इसका एकमात्र तार्किक परिणाम यह होगा कि

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

सूची में शामिल जातियों को वे लाभ प्राप्त होंगे जो संविधान अनुसूचित जातियों को प्रदान करता है। प्रावधान के संचालन से एक एकीकृत समरूप वर्ग का निर्माण नहीं होता है;

(घ). अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण अनुच्छेद 341(2) का उल्लंघन नहीं करता है, क्योंकि जातियों को सूची में शामिल या बाहर नहीं रखा गया है। उप-वर्गीकरण केवल तभी प्रावधान का उल्लंघन करेगा जब अनुसूचित जातियों की कुछ जातियों या समूहों को उस वर्ग के लिए आरक्षित सभी सीटों पर वरीयता या विशेष लाभ प्रदान किया जाता है;

(ङ). ऐतिहासिक और अनुभवजन्य साक्ष्य दर्शाते हैं कि अनुसूचित जातियां सामाजिक रूप से एक विषम वर्ग हैं। इस प्रकार, अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए राज्य अनुसूचित जातियों को आगे वर्गीकृत कर सकता है यदि (क) भेदभाव के लिए एक तर्कसंगत सिद्धांत मौजूद है; और (ख) तर्कसंगत सिद्धांत का उप-वर्गीकरण के उद्देश्य के साथ संबंध है; और

(च). **चिन्नैया (उपरोक्त)** में दिया गया निर्णय कि अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण अस्वीकार्य है, इसलिए खारिज किया जाता है। अनुसूचित जातियों के उप-वर्गीकरण का दायरा नीचे संक्षेप में दिया गया है:

- i. उप-वर्गीकरण सहित किसी भी प्रकार की सकारात्मक कार्रवाई का उद्देश्य पिछड़े वर्गों के लिए अवसर की पर्याप्त समानता प्रदान करना है। राज्य, अन्य बातों के साथ-साथ, कुछ जातियों के अपर्याप्त प्रतिनिधित्व के आधार पर उप-वर्गीकरण कर सकता है। हालाँकि, राज्य को यह स्थापित करना होगा कि किसी जाति/समूह का प्रतिनिधित्व अपर्याप्त होने का कारण उसका पिछड़ापन है;
- ii. राज्य को “राज्य की सेवाओं” में प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता पर डेटा एकत्र करना चाहिए क्योंकि इसका उपयोग पिछड़ेपन के संकेतक के रूप में किया जाता है; तथा
- iii. संविधान का अनुच्छेद 335, अनुच्छेद 16(1) और 16(4) के तहत शक्ति के प्रयोग पर कोई सीमा नहीं है। बल्कि, यह सार्वजनिक सेवाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावों पर विचार करने की आवश्यकता की पुनःपुष्टि है। प्रशासन की दक्षता को उस तरीके से देखा जाना चाहिए जो अनुच्छेद 16(1) के अनुसार समावेशिता और समानता को बढ़ावा दे।

206. रजिस्ट्री को निर्देश दिया जाता है कि वह मामले को उचित पीठ के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए मुख्य न्यायाधीश से प्रशासनिक निर्देश प्राप्त करें।

न्यायमूर्ति बी.आर. गवई

अनुक्रमणिका

I.	पृष्ठभूमि	पैरा 1 से 7
II.	अनुच्छेद 341, अनुच्छेद 342 और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए राष्ट्रपति का आदेश	पैरा 8 से 49

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

III.	न्यायिक उद्धरण	पैरा 50 से 168
A.	एम.आर. बालाजी बनाम मैसूर राज्य	पैरा 52 से 62
B.	केरल राज्य बनाम एन.एम. थॉमस	पैरा 63 से 99
C.	अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ (रेलवे) बनाम भारत संघ	पैरा 100 से 122
D.	के.सी. वसंत कुमार बनाम कर्नाटक राज्य	पैरा 123 से 134
E.	इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ	पैरा 135 से 147
F.	ई.वी. चिन्नैया बनाम ए.पी. राज्य	पैरा 148 से 162
G.	एम. नागराज बनाम भारत संघ	पैरा 163 से 164
H.	जरनैल सिंह बनाम लक्ष्मी नारायण गुप्ता	पैरा 165 से 168
IV.	वर्तमान संदर्भ	पैरा 169 से 171
V.	सोच-विचार	पैरा 172 से 271
VI.	आगे का रास्ता	पैरा 272 से 295
VII.	निष्कर्ष	पैरा 296

मैंने भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा लिखित विद्वत्तापूर्ण एवं शोधपरक निर्णय को पढ़ा है। मैं भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा व्यक्त विचारों से सहमत हूँ। मामले के महत्व को ध्यान में रखते हुए, मैं इस अलग निर्णय के माध्यम से अपनी राय व्यक्त करना उचित समझता हूँ।

चूंकि पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के तथ्यों और प्रस्तुतियों पर भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश के निर्णय में विस्तृत रूप से विचार किया गया है, इसलिए पुनरावृत्ति से बचने के लिए, मैंने उनका उल्लेख नहीं किया है।

I. पृष्ठभूमि

"तीसरी बात जो हमें करनी चाहिए वह यह है कि हमें केवल राजनीतिक लोकतंत्र से संतुष्ट नहीं होना चाहिए। हमें अपने राजनीतिक लोकतंत्र को सामाजिक लोकतंत्र भी बनाना चाहिए। राजनीतिक लोकतंत्र तब तक नहीं टिक सकता जब तक कि उसके आधार पर सामाजिक लोकतंत्र न हो। सामाजिक लोकतंत्र का क्या मतलब है? इसका मतलब है एक ऐसी जीवन शैली जो स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व को जीवन के सिद्धांतों के रूप में मान्यता देती है। स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के इन सिद्धांतों को त्रिमूर्ति में अलग-अलग तत्वों के रूप में नहीं माना जाना चाहिए। वे त्रिमूर्ति का एक संघ बनाते हैं, इस अर्थ में कि एक को दूसरे से अलग करना लोकतंत्र के मूल उद्देश्य को पराजित करना है। स्वतंत्रता को समानता से अलग नहीं किया जा सकता, समानता को स्वतंत्रता से अलग नहीं किया जा सकता। न ही स्वतंत्रता और समानता को भाईचारे से अलग किया जा सकता है। समानता के बिना, स्वतंत्रता बहुत से लोगों पर कुछ लोगों की सर्वोच्चता पैदा करेगी। स्वतंत्रता के बिना समानता व्यक्तिगत पहल को खत्म कर देगी।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

भाईचारे के बिना, स्वतंत्रता और समानता चीजों का स्वाभाविक क्रम नहीं बन सकती। इन्हें लागू करने के लिए एक प्रहरी की आवश्यकता होगी। हमें इस तथ्य को स्वीकार करना होगा कि भारतीय समाज में दो चीजों का पूर्ण अभाव है। इनमें से एक है समानता। सामाजिक धरातल पर, भारत में हमारा समाज श्रेणीबद्ध असमानता के सिद्धांत पर आधारित है, जिसका अर्थ है कुछ लोगों के लिए उन्नति और दूसरों के लिए अवनति। आर्थिक धरातल पर, हमारे पास एक ऐसा समाज है जिसमें कुछ लोगों के पास अपार संपत्ति है जबकि कई लोग घोर गरीबी में जीवन जी रहे हैं। 26 जनवरी 1950 को, हम विरोधाभासों के जीवन में प्रवेश करने जा रहे हैं। राजनीति में समानता होगी और सामाजिक और आर्थिक जीवन में असमानता होगी। राजनीति में हम एक व्यक्ति एक वोट और एक वोट एक मूल्य के सिद्धांत को मान्यता देंगे। अपने सामाजिक और आर्थिक जीवन में, हम अपनी सामाजिक और आर्थिक संरचना के कारण, एक व्यक्ति एक मूल्य के सिद्धांत को नकारते रहेंगे। हम कब तक विरोधाभासों से भरी जिंदगी जीते रहेंगे? हम कब तक अपने सामाजिक और आर्थिक जीवन में समानता को नकारते रहेंगे? अगर हम लंबे समय तक इसे नकारते रहेंगे, तो हम अपने राजनीतिक लोकतंत्र को खतरे में डाल देंगे। हमें इस विरोधाभास को जल्द से जल्द दूर करना होगा, नहीं तो असमानता से पीड़ित लोग राजनीतिक लोकतंत्र के ढांचे को नष्ट कर देंगे, जिसे इस विधानसभा ने इतनी मेहनत से बनाया है।”

1. ये चेतावनी के शब्द हैं, जो भारतीय संविधान के मुख्य वास्तुकार डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने 25 नवंबर 1949 को संविधान के अंतिम मसौदे पर बहस का जवाब देते हुए अपने भाषण में कहे थे। यह 26 नवंबर 1949 से पहले का दिन था, जिस दिन संविधान सभा ने हमारे देश को हर भारतीय के लिए सबसे प्रिय दस्तावेज, "भारत का संविधान" अपनाया, अधिनियमित किया और दिया।
2. उन्होंने चेतावनी दी कि हमें केवल राजनीतिक लोकतंत्र से संतुष्ट नहीं होना चाहिए बल्कि अपने राजनीतिक लोकतंत्र को सामाजिक लोकतंत्र भी बनाना चाहिए। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि सामाजिक लोकतंत्र का अर्थ ऐसी जीवन पद्धति होगी जो स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व को जीवन के सिद्धांतों के रूप में मान्यता देती है। उनके अनुसार, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व, व्यक्तिगत रूप से नहीं बल्कि इन तीनों की त्रिमूर्ति हमारे राजनीतिक लोकतंत्र को सामाजिक लोकतंत्र में परिवर्तित करने के लिए आवश्यक है। उन्होंने देश में सामाजिक और आर्थिक ढांचे को लेकर विरोधाभासों की ओर इशारा किया। उन्होंने चेतावनी दी कि अगर हम लंबे समय तक सामाजिक और आर्थिक जीवन में समानता को नकारते रहेंगे, तो हम अपने राजनीतिक लोकतंत्र को खतरे में डाल देंगे। इसलिए उन्होंने राष्ट्र से अपील की कि इस विरोधाभास को यथाशीघ्र दूर किया जाए। उन्होंने चेतावनी दी कि यदि हम ऐसा नहीं करते हैं, तो असमानता से पीड़ित लोग राजनीतिक लोकतंत्र की उस संरचना को नष्ट कर देंगे, जिसे संविधान सभा ने इतनी मेहनत से बनाया था।
3. इसके दो महीने बाद 26 जनवरी 1950 को भारत का संविधान लागू हुआ। दिनांक 26 नवंबर 2023 को, भारत के संविधान को लागू किए जाने, अपनाए जाने और स्वयं को सौंपे जाने की तारीख से 74 वर्ष पूरे हो जाएंगे। दिनांक 26 जनवरी 2024 को भारत का संविधान लागू होने के 74 वर्ष पूरे हो जाएंगे। अब हम अपने गणतंत्र के 75 वें वर्ष में हैं।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

4. पिछले 75 वर्षों से सामाजिक और आर्थिक समानता प्राप्त करने की दिशा में एक कदम आगे बढ़ा है। उन लाखों नागरिकों को सामाजिक और आर्थिक न्याय दिलाने के प्रयास किए गए हैं, जो सदियों से चले आ रहे भेदभाव और अमानवीय व्यवहार के कारण जीवन की मुख्यधारा में आने के वैध अधिकार से वंचित थे। अनुच्छेद 14, 15 और 16 की त्रिमूर्ति के साथ-साथ अनुच्छेद 46, 335, 338, 341 और 342 ने सामाजिक और आर्थिक समानता की ओर बढ़ने का एक साधन प्रदान किया है; वंचितों को विशेष उपचार देने के लिए सकारात्मक कार्रवाई पर जोर दिया गया है ताकि वे आगे बढ़ सकें; शिक्षा के मामलों में और सार्वजनिक रोजगार के मामलों में आरक्षण प्रदान करके इन पिछड़े वर्गों को विशेष उपचार प्रदान किया गया है।

5. वर्तमान मामले में अनुसूचित जातियों के समूह में विभिन्न वर्गों के बीच विवाद उत्पन्न हुआ है, जो दावा करते हैं कि वे अधिक वंचित हैं और इसलिए उस समूह में अधिक लाभप्रद होने के कारण अधिक विभेदक व्यवहार की मांग करते हैं। इसके विपरीत, उनके अंदर के प्रतिद्वंद्वी वर्गों का दावा है कि एक बार जब वर्गों को अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों की राष्ट्रपति सूची में शामिल कर लिया जाता है, तो वे समरूप समूह का हिस्सा बन जाते हैं, और संविधान के तहत आगे वर्गीकरण की अनुमति नहीं है।

6. बड़े समूह के अधिक सुविधा संपन्न लोगों की तुलना में वंचित लोगों द्वारा अधिक विशेषाधिकार प्राप्त करने की चाहत वर्तमान संदर्भ में विचारणीय है।

7. ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य एवं अन्य के मामले में इस न्यायालय की 5 न्यायाधीशों की पीठ ने अवधारित किया है कि राष्ट्रपति सूची में सूचीबद्ध पिछड़े वर्गों में अधिक पिछड़ेपन के आधार पर इस तरह का आगे वर्गीकरण स्वीकार्य नहीं है। हालाँकि, पंजाब राज्य और अन्य बनाम दविंदर सिंह और अन्य के मामले में इस न्यायालय की एक अन्य 5-न्यायाधीशों की पीठ ने **ईवी चिन्नैया (उपरोक्त)** के दृष्टिकोण पर संदेह किया है और मामले को एक बड़ी बेंच को भेज दिया है। इस तरह ये मामले हमारे सामने विचार के लिए आए।

अनुच्छेद 341, अनुच्छेद 342 और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए राष्ट्रपति का आदेश

8. हमारे समक्ष प्रस्तुत प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों की सराहना करते हुए, यह ध्यान देने योग्य बात है कि एक ओर जहां भारत के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति का संघर्ष चल रहा था, वहीं दूसरी ओर, सदियों से व्याप्त सामाजिक भेदभाव के कारण, सामाजिक सुधारों की खोज भी चल रही थी।

9. शुरुआत में, ईसाई मिशनरियों द्वारा समाज के गरीब और दलित वर्ग का वर्णन करने के लिए अक्सर इस्तेमाल किया जाने वाला नाम 'दलित वर्ग' था। अछूत जातियों, आदिवासी जनजातियों और अन्य पिछड़े समुदायों की एक विस्तृत श्रृंखला को इस लेबल के तहत एक साथ रखा गया था। 1909 में, गोपाल कृष्ण गोखले और एनी बेसेंट जैसे नेताओं ने भी भारत में निम्न जाति या हाशिए पर पड़े समुदायों को 'दलित वर्ग' के रूप में संदर्भित किया। बेसेंट ने भारत में 'दलित वर्गों' की तुलना इंग्लैंड के 'डूबे हुए दसवें हिस्से' यानी अकुशल मजदूर, सफाईकर्मी, सड़क से कूड़ा हटाने वाला, कैजुअल डॉक मजदूर आदि से की, जो उस देश की आबादी का 10% हिस्सा थे। हालाँकि, 1918 तक 'दलित वर्ग' शब्द का इस्तेमाल केवल निम्न जाति के हिंदुओं के लिए किया जाने लगा, जो अस्पृश्यता के कलंक से पीड़ित थे। 'दलित वर्ग' में 'वर्ग' शब्द वास्तव में जाति का पर्याय बन गया था।

10. वर्ष 1891 की जनगणना रिपोर्ट से शुरुआत करना उचित होगा। इसमें जातियों, जनजातियों और उप-विभागों सहित जातियों की गणना के तरीके का उल्लेख है। इसमें 60 श्रेणियों में विभाजित व्यवसाय के आधार पर

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

वर्गीकरण की योजना का भी उल्लेख है। फिर उक्त रिपोर्ट इन 60 श्रेणियों को 21 समूहों में पुनर्गठित करती है। उक्त रिपोर्ट में राजपूतों और जाटों को जनजातियों के रूप में संदर्भित किया गया है, जो जातियों से बड़ी हैं। वर्ग VII “चमड़ा श्रमिक और निचले गांव के नौकर” से संबंधित है और इसमें निम्नलिखित समूह शामिल हैं:

“40. चमड़ा श्रमिक

41. चौकीदार और गांव के नौकर

42. सफाई कर्मचारी”

11. इसके बाद भारतीय वैधानिक आयोग की रिपोर्ट, 1930 आती है। भाग I के अध्याय 4 का शीर्षक है “जाति और दलित वर्ग”। रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जाति को “भारतीय सामाजिक ताने-बाने की नींव” के रूप में वर्णित किया गया है। इसमें आगे कहा गया है कि प्रत्येक हिंदू अनिवार्य रूप से अपने माता-पिता की जाति से संबंधित है, और वह अनिवार्य रूप से उसी जाति में रहता है। इसमें कहा गया है कि धन संचय और प्रतिभा का प्रयोग उसकी जाति की स्थिति को नहीं बदल सकता; और उसकी जाति से बाहर विवाह निषिद्ध है या उसे बहुत हतोत्साहित किया जाता है। इसमें आगे कहा गया है कि कुछ मामलों में, जाति के नियम का अनुप्रयोग लगभग अपने सदस्यों की आजीविका के साधनों को निर्धारित करता है; वास्तव में, कई जातियाँ व्यावसायिक संघों की प्रकृति का हिस्सा हैं। इसमें कहा गया है कि जाति व्यवस्था, जिसकी उत्पत्ति सामाजिक संबंधों में औपचारिक शुद्धता के संरक्षण और रक्त के मिश्रण को सीमित करने के लिए बनाए गए नियमों में हुई हो सकती है, युगों के दौरान एक ऐसी संस्था के रूप में विकसित हो गई है जो प्रत्येक व्यक्ति को उसका कर्तव्य और रूढ़िवादी हिंदू धर्म में उसका स्थान सौंपती है। हालाँकि, एक ही जाति के सदस्यों को एक साथ लाने वाली सीमा उन्हें अन्य जातियों को शामिल करने वाले असंख्य डिब्बों से अलग करने का काम भी करती है। इसमें आगे कहा गया है कि इसके परिणामस्वरूप हिंदू समाज का एक कठोर और विस्तृत विभाजन हुआ है जो मुसलमानों और ईसाइयों के बीच समानतावादी विचारों के सिद्धांत के बिल्कुल विपरीत है। 12. रिपोर्ट का पैराग्राफ 53 “दलित वर्गों” से संबंधित है। इसमें कहा गया है कि दलित वर्ग ब्रिटिश भारत की कुल आबादी का लगभग 20% या हिंदू आबादी का लगभग 30% है। वे हिंदू धार्मिक और सामाजिक व्यवस्था के भीतर सबसे निचली जातियाँ मानी जाती हैं। इसमें आगे कहा गया है कि मूल रूप से ये जातियाँ आंशिक रूप से “कार्यात्मक” प्रतीत होती हैं, जिनमें वे लोग शामिल हैं जो अस्वच्छ या अपमानजनक माने जाने वाले व्यवसायों का पालन करते हैं, जैसे मैला ढोना या चमड़े का काम करना, और आंशिक रूप से “आदिवासी”, यानी, आदिवासी जनजातियाँ जो हिंदू धर्म में शामिल हो गईं और एक अशुद्ध जाति में परिवर्तित हो गईं। इसमें आगे कहा गया है कि उनकी आवश्यक विशेषता यह है कि रूढ़िवादी हिंदू धर्म के सिद्धांतों के अनुसार, वे हिंदू व्यवस्था के भीतर होते हुए भी “अछूत” हैं – अर्थात्, वे अन्य सभी हिंदुओं के लिए स्पर्श द्वारा प्रदूषण का कारण बनते हैं और भोजन या पानी को अपवित्र करते हैं। उन्हें एक सामान्य हिंदू मंदिर के अंदर जाने से मना किया जाता है। इसमें कहा गया है कि वे न केवल हिंदू सामाजिक और धार्मिक व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर हैं, बल्कि कुछ व्यक्तिगत अपवादों के साथ आर्थिक पैमाने पर भी सबसे निचले पायदान पर हैं और आम तौर पर काफी अशिक्षित हैं। रिपोर्ट से पता चलता है कि आम तौर पर गांवों में उन्हें एक अलग घर में अलग रखा जाता है और अक्सर ऐसा खाना खाते हैं जिसे समुदाय का कोई अन्य वर्ग छू भी नहीं सकता।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

13. उनमें से एक बड़ा हिस्सा भूमिहीन कृषि मजदूर हैं जिन्हें किसानों द्वारा कम पारिश्रमिक पर काम पर रखा जाता है। इसमें कहा गया है कि किसी कारखाने में एक विशेष शेड को दलित वर्ग के श्रमिकों के लिए आरक्षित करना असामान्य नहीं था।

14. रिपोर्ट का पैराग्राफ 54 “अछूतों की विकलांगता” से संबंधित है। इसमें कहा गया है कि अछूतों को उनकी अछूतता के कारण धार्मिक के अलावा अन्य वास्तविक अक्षमताएं भारत के विभिन्न भागों में बहुत भिन्न हैं, न केवल एक प्रांत से दूसरे प्रांत में, बल्कि एक ही प्रांत के विभिन्न भागों में और कभी-कभी एक ही जिले के विभिन्न भागों में भी। इसमें कहा गया है कि दो सबसे व्यापक कठिनाइयाँ पानी और स्कूलों के बारे में हैं। इसमें कहा गया है कि कई स्थानों पर अछूतों को अन्य जातियों द्वारा उपयोग किए जाने वाले कुओं या तालाबों तक पहुँच से वंचित करना प्रथागत था और जब स्थानीय अधिकारियों द्वारा सार्वजनिक निधियों से जल आपूर्ति का एक नया स्रोत प्रदान किया गया, तो अछूतों को इसका उपयोग करने की व्यवस्था करने में अक्सर बड़ी कठिनाई हुई। रिपोर्ट में इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि यदि कोई गांव नदी से पानी खींचता है, तो अछूतों को अपनी आपूर्ति नीचे किसी दूसरे स्थान से लेनी होगी। कई स्थानों पर अछूतों के बच्चों को या तो सामान्य स्कूलों से पूरी तरह से बाहर रखा जाता है, हालांकि उन्हें पूरी तरह या आंशिक रूप से सार्वजनिक निधि से प्रदान किया जाता है, अन्यथा उन्हें अलग बैठना पड़ता है। कुछ मामलों में, अछूत बच्चों को कक्षा के बाहर खड़े होकर कक्षाओं में भाग लेने की आवश्यकता होती है। रिपोर्ट में इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि प्रशासक या राजनीतिक सुधारक की कठिनाई इस तथ्य से बहुत बढ़ गई थी कि अछूतों का बड़ा समूह अभी भी अपनी नियति को स्वाभाविक और अपरिहार्य मानता है। रिपोर्ट में कहा गया है कि हिंदू धर्म के अंदर उनकी स्थिति वास्तव में दयनीय है, लेकिन फिर भी वे भुखमरी के कगार पर जी रहे हैं और उनके भाग्य में सुधार की कोई उम्मीद नहीं है। रिपोर्ट में इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि प्रशासक या राजनीतिक सुधारक की कठिनाई इस तथ्य से बहुत बढ़ गई थी कि अछूतों का बड़ा समूह अभी भी अपनी नियति को स्वाभाविक और अपरिहार्य मानता है। रिपोर्ट में कहा गया है कि हिंदू धर्म के अंदर उनकी स्थिति वास्तव में दयनीय है, लेकिन फिर भी वे भुखमरी के कगार पर जी रहे हैं और उनके भाग्य में सुधार की कोई उम्मीद नहीं है।

15. रिपोर्ट के पैराग्राफ 55 में इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि मद्रास और खास तौर पर मालाबार में दलित वर्ग की स्थिति सबसे गंभीर थी। मालाबार में अभी भी “अप्राप्यता” की परिघटना पाई जाती है, यानी अछूतों को उच्च जाति के हिंदू से एक निश्चित दूरी के भीतर नहीं जाना चाहिए और उन्हें रास्ता छोड़ने के लिए सड़क छोड़नी पड़ती है, और यहां तक कि प्रदूषण के खतरे की चेतावनी देने के लिए चिल्लाना भी पड़ता है। रिपोर्ट में कहा गया है कि मद्रास के दूसरे हिस्से में स्थानीय प्राधिकारी ने सड़कों की मरम्मत के लिए अछूत मजदूरों को नियुक्त करने के बजाय उन्हें बिना मरम्मत के ही छोड़ देना बेहतर समझा।

16. रिपोर्ट में आगे बताया गया है कि बॉम्बे और मध्य प्रांतों में भी स्थिति कमोबेश मद्रास जैसी ही थी। रिपोर्ट में बॉम्बे प्रेसीडेंसी में नासिक और पूना से आए टेलीग्राम का भी जिक्र है, जिसमें कुछ अछूतों की ओर से हिंदू मंदिरों में प्रवेश का दावा करने के लिए संगठित कार्रवाई की गई थी।

17. यह उल्लेख करना अनुचित नहीं होगा कि इसी अवधि में डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने अछूतों के लिए जल निकायों को खोलने और अछूतों को भी मंदिरों में प्रवेश की अनुमति देने के लिए आंदोलन शुरू किया था। ऐसा ही

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

एक आंदोलन 20 मार्च 1927 को महाड में 'चावदर टैंक' नामक एक सार्वजनिक तालाब के लिए हुआ था और दूसरा 2 मार्च 1930 को नासिक में कालाराम मंदिर में प्रवेश करने का प्रयास था।

18. रिपोर्ट में आगे कहा गया है कि बंगाल, बिहार, उड़ीसा और संयुक्त प्रांत में, यद्यपि अछूत जातियों के लोग बड़ी संख्या में थे, फिर भी सामान्यतः वे दक्षिण की तरह इतनी व्यापक या इतनी गम्भीर रूप से पीड़ित नहीं दिखते। हालाँकि, रिपोर्ट में कहा गया है कि समस्या इन क्षेत्रों में भी मौजूद थी। रिपोर्ट में अछूतों की आबादी का अनुमानित प्रतिशत भी दिया गया है। रिपोर्ट में उन आदिवासियों को शामिल नहीं किया गया है जो हिंदू धर्म से बाहर हैं।

19. अगला दस्तावेज़ जिसका उल्लेख ज़रूरी है, वह है 'भारत की जनगणना 1931'। उक्त रिपोर्ट में 'आदिम जनजातियाँ' शब्द गढ़ा गया है, जो पहाड़ियों, जंगलों और अन्य खानाबदोश समूहों में निवास करती हैं। ये आदिम जनजातियाँ अनुसूचित जनजातियों के लिए आधार प्रदान करती हैं। इसमें यह भी उल्लेख किया गया है कि पहले दलित वर्ग को अब अनुसूचित जाति कहा जाता है।

20. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि जहां पहाड़ियों, जंगलों और दूरदराज के इलाकों में रहने वाली आदिम जनजातियाँ अनुसूचित जनजातियों के लिए आधार प्रदान करती हैं, वहीं तथाकथित दलित वर्ग जिन्हें अस्पृश्यता के कारण ऐसा माना जाता है, अनुसूचित जातियों के लिए आधार प्रदान करते हैं। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि 1931 की जनगणना रिपोर्ट आज भी अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्रोत सामग्री बनी हुई है।

21. इसके बाद भारत सरकार अधिनियम, 1935 आता है (एतस्मिन्पश्चात् "1935 अधिनियम" के रूप में सन्दर्भित)। 1935 अधिनियम का भाग-II "भारतीय संघ" से संबंधित है। इसका अध्याय-I "संघ की स्थापना और भारतीय राज्यों के विलय" से संबंधित है। 1935 अधिनियम की धारा 5 "भारतीय संघ की घोषणा" से संबंधित है और 1935 अधिनियम की धारा 6 "भारतीय राज्यों के विलय" से संबंधित है। 1935 अधिनियम की धारा 5 की उपधारा (2) के खंड (ए) में प्रावधान है कि राज्य, जिनके शासक, इस अधिनियम की पहली अनुसूची के भाग II में निहित प्रावधानों के अनुसार, राज्य सभा के कम से कम बावन सदस्यों को चुनने के हकदार होंगे। 1935 अधिनियम की धारा 5 की उपधारा (2) के खंड (बी) में प्रावधान है कि राज्य, जिनकी कुल जनसंख्या, जैसा कि उक्त प्रावधानों के अनुसार निर्धारित की गई है, राज्यों की कुल जनसंख्या की कम से कम आधी है, संघ में शामिल हो गए हैं।

22. 1935 अधिनियम की धारा 18 "संघीय विधानमंडल के गठन" से संबंधित है। धारा 18 की उपधारा (3) में प्रावधान है कि राज्य परिषद और संघीय विधानसभा को प्रदान किए जाने वाले प्रतिनिधियों का चयन 1935 अधिनियम की पहली अनुसूची में निहित प्रावधानों के अनुसार किया जाएगा।

23. इसी प्रकार, 1935 अधिनियम की धारा 60 "प्रांतीय विधानमंडलों के गठन" से संबंधित है। 1935 अधिनियम की धारा 61 "प्रांतीय विधानमंडलों के चैंबरों की संरचना" के बारे में प्रावधान करती है। धारा 61 की उपधारा (1) में प्रावधान किया गया है कि किसी प्रांत के विधानमंडल के चैंबर या चैंबरों की संरचना वैसी ही होगी जैसी 1935 अधिनियम की पांचवीं अनुसूची में उस प्रांत के संबंध में निर्दिष्ट है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

24. 1935 के अधिनियम की पहली अनुसूची में “संघीय विधानमंडल की संरचना” का प्रावधान किया गया था। इसके खंड 4 में अन्य बातों के साथ-साथ अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधियों के लिए सीटों का प्रावधान किया गया है।

25. 1935 अधिनियम की प्रथम अनुसूची के खंड 8 को पुनः उद्धृत करना प्रासंगिक होगा, जो इस प्रकार है:

“8. किसी भी प्रांत में, जिसे अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधि द्वारा भरी जाने वाली सीट आवंटित की जाती है, उस सीट को भरने के लिए किसी व्यक्ति का चयन उन जातियों के सदस्यों द्वारा किया जाएगा जो उस प्रांत के विधानमंडल के सदन या, जैसा भी मामला हो, किसी भी सदन में सीटें रखते हैं।”

26. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि 1935 के अधिनियम में यह प्रावधान किया गया था कि किसी भी प्रांत में जहां सीटें अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधियों द्वारा भरी जानी हैं, जहां उन्हें आवंटित किया गया है, उन जातियों के सदस्यों द्वारा चुना जाएगा जो उस प्रांत के विधानमंडल के सदन या किसी भी सदन में सीटें रखते हैं।

27. प्रथम अनुसूची का खंड 18 “संघीय विधानसभा” से संबंधित है।

28. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि 1935 के अधिनियम की प्रथम अनुसूची का खंड 18, अन्य बातों के साथ-साथ अनुसूचित जातियों के सदस्यों के लिए आरक्षित सीटों से संबंधित है।

29. 1935 के अधिनियम की पहली अनुसूची का खंड 26 व्याख्या खंड है। इसमें अनुसूचित जातियों को इस प्रकार परिभाषित किया गया है:

“अनुसूचित जातियों” से तात्पर्य ऐसी जातियों, नस्लों या जनजातियों या जातियों, नस्लों या जनजातियों के भागों या समूहों से है, जो महामहिम को परिषद में “दलित वर्गों” के रूप में जाने जाने वाले व्यक्तियों के वर्गों के अनुरूप प्रतीत होते हैं, जैसा कि महामहिम परिषद में निर्दिष्ट कर सकते हैं;”

30. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि 1935 के अधिनियम में ‘अनुसूचित जातियों’ को ऐसी जातियों, मूलवंशों या जनजातियों अथवा जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के भागों या समूहों के रूप में परिभाषित किया गया है, जो जातियां, मूलवंश, जनजातियां, भाग या समूह हैं, जो महामहिम को उन व्यक्तियों के वर्गों के अनुरूप प्रतीत होते हैं, जिन्हें पूर्व में ‘दलित वर्ग’ के रूप में जाना जाता था, जैसा कि महामहिम परिषद द्वारा निर्दिष्ट किया जा सकता है।

31. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि “अनुसूचित जातियों” की परिभाषा को “दलित वर्गों” से जोड़ा जा सकता है, जिन्हें पहले सामान्य अर्थ में प्रयोग किया जाता था और फिर से अस्पृश्यता से पीड़ित सबसे पिछड़े लोगों से जोड़ा जाता था।

32. इसके बाद भारत सरकार (अनुसूचित जातियां) आदेश, 1936 (एतस्मिन्पश्चात् “1936 आदेश” के रूप में सन्दर्भित) आता है, दिनांक जिसे 30 अप्रैल 1936 को अधिसूचित किया गया था। उक्त आदेश का संदर्भ देना प्रासंगिक होगा, जो इस प्रकार है:

“भारत सरकार (अनुसूचित जाति) आदेश, 1936

बकिंघम पैलेस के दरबार में

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

30 अप्रैल, 1936

उपस्थित,

राजा की सबसे उत्कृष्ट परिषद

जबकि भारत सरकार अधिनियम, 1935 की पहली, पांचवीं और छठी अनुसूची में कुछ प्रावधानों द्वारा, महामहिम को सपरिषद में उन जातियों, मूलवंशों या जनजातियों अथवा जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के भागों या समूहों को निर्दिष्ट करने का अधिकार है, जिन्हें उन अनुसूचियों के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियों के रूप में माना जाना है:

और इस आदेश का प्रारूप उक्त अधिनियम की धारा तीन सौ नौ की उपधारा (1) के उपबंधों के अनुसार संसद के समक्ष रखा गया था और संसद के दोनों सदनों द्वारा यह प्रार्थना करते हुए अभिभाषण प्रस्तुत किया गया है कि इस आदेश के निबंधनों के अनुसार आदेश बनाया जाए:

अब, अतः, महामहिम, उक्त शक्तियों और उस संबंध में उन्हें सक्षम करने वाली अन्य सभी शक्तियों का प्रयोग करते हुए, अपनी प्रिवी काउंसिल की सलाह से, निम्नलिखित आदेश देने की कृपा करते हैं, और इसके द्वारा आदेश दिया जाता है:-

1. इस आदेश को "भारत सरकार (अनुसूचित जातियां) आदेश, 1936" के रूप में उद्धृत किया जा सकता है।

2. इस आदेश के प्रावधानों के अधीन, भारत सरकार अधिनियम, 1935 की पहली, पांचवीं और छठी अनुसूची के प्रयोजनों के लिए, इस आदेश की अनुसूची के भाग 1 से 9 में निर्दिष्ट जातियां, मूलवंश या जनजातियां अथवा जातियों, मूलवंश या जनजातियों के भाग या उनमें समूह, उन प्रांतों में जिनसे वे भाग क्रमशः संबंधित हैं, अनुसूचित जातियां समझी जाएंगी, जहां तक उनके सदस्य उस अनुसूची के उन भागों में क्रमशः उनके संबंध में निर्दिष्ट इलाकों में निवास करते हैं।

3. पिछले पैराग्राफ में किसी बात के होते हुए भी-

(क) कोई भी भारतीय ईसाई अनुसूचित जाति का सदस्य नहीं समझा जाएगा;

(ख) बंगाल में कोई भी व्यक्ति जो बौद्ध धर्म या किसी आदिवासी धर्म को मानता है, किसी अनुसूचित जाति का सदस्य नहीं समझा जाएगा; और यदि कोई प्रश्न उठता है कि कोई विशिष्ट व्यक्ति बौद्ध धर्म या किसी आदिवासी धर्म को मानता है या नहीं, तो उस प्रश्न का निर्धारण उन उत्तरों के अनुसार किया जाएगा जो वह निर्धारित तरीके से ऐसे प्रश्नों के लिए देगा।

4. इस आदेश में "भारतीय ईसाई" पद का वही अर्थ है जो भारत सरकार अधिनियम, 1935 की प्रथम अनुसूची के भाग 1 के प्रयोजनों के लिए है, और "निर्धारित" पद का अर्थ बंगाल के राज्यपाल द्वारा अपने व्यक्तिगत निर्णय द्वारा बनाए गए नियमों द्वारा निर्धारित है।

5. इस आदेश की अनुसूची में किसी भी प्रभाग, जिला, उपखंड, तहसील या नगरपालिका के प्रति किसी संदर्भ को उस प्रभाग, जिला, उपखंड, तहसील या नगरपालिका के प्रति संदर्भ के रूप में समझा जाएगा जो जुलाई, उन्नीस सौ छत्तीस के 1 दिन को विद्यमान थी।

सूची

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

भाग I- मद्रास

(1) पूरे प्रांत में अनुसूचित जातियां:-

आदि-आंध्र	गोसांगी	पैडी
आदि-द्रविड़	हड्डी	पैदा
आदि-कर्नाटक	हसला	पाकी
अजिला	होलेया	पल्लन
अरुनथुथियार	जगली	पंबदा
बैरा	जम्बुवुलु	पामिडी
बाकुडा	कल्लडी	पंचमा
बंदी	कनकन	पनियान
बारीकि	कोडालो	पन्नियांदी
बट्टादा	कूसा	परैयान
बावुरी	कोरगा	परावन
बेलारा	कुदुंबन	पुलायन
ब्यागरी	कुरावन	पुथिराई
		वन्नन
चचाति	मदारी	राणैयार
चक्किलियान	मडिगा	रेली
चलावडी	मैला	समग्र
चमार	माला	सांबन
चांडाला	माला दासु	सापारी
चेरुमन	मातंगी	सेम्मन
दंदासी	मोगेर	थोटी
देवंद्रकुलथन	मुची	तिरुवल्लुवर
घासी	मुंडाला	वल्लुवन
गोदागली	नालकेयवा	वाल्मिकी
गोदारी	नायडी	वेट्टुवन
गोड्डा	पागा दाई	

(2) प्रांत की विधान सभा के लिए पिछड़े क्षेत्रों और पिछड़ी जनजातियों के प्रतिनिधि के चुनाव के लिए भारत सरकार अधिनियम, 1935 के तहत गठित किसी विशेष निर्वाचन क्षेत्र को छोड़कर पूरे प्रांत में अनुसूचित जातियां:-

अरनादान	कट्टुनायकन	कुरुमान
डोम्बो	कुडिया	मालासर

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कदन	कुडुबी	माविलन
करिम्पलान	कुरिचन	पानो

भाग II – बॉम्बे

अनुसूचित जातियां :-

(1) सम्पूर्ण प्रान्त में:-

असोड़ी	ढोर	मांग गरुड़ी
बकड़	गरोडे	मेघवाल, या मेंघवार
भाम्बी	हेलीर	मिनी मैडिंग
भंगी	हलसर, या हसलार, या हुलसावर	मुकरी
चक्रवाद्य-दशर	होलाया	नादिया
चाल्वाडी	खलपा	शेनवा, या शिन्धवा
चंभर, या मोचीगर, या समग्र	कोलचा, या कोलघा	शिंगदाव, या शिंगाद्या
छैना- दासरु	कोली ढोर	सोची
चुहार, या चुहड़ा	लिंगादेर	तिमाली
डकालेरु	मैडिंग, या मंग	तुरी
ढेड़	महर	वनकर
धेगु-मेगा		विठोलिया

(2) अहमदाबाद, कैरा, बरोहा और पंच महल तथा सूरत जिलों को छोड़कर सम्पूर्ण प्रांत में –
मोची।

(3) कनारा जिले में – कोटेगार।

भाग III – बंगाल

पूरे प्रांत में अनुसूचित जातियां: -

अगरिया	हरि	माल
बागड़ी	हो	मल्लाह
बहेलिया	जालिया कैबरट्टा	मालपहारिया
बैती	झालो मालो, या मालो	मेच
बाउरी	कादर	मेहतोर
बेदिया	कन	मुची
बेलदार	कंध	मुंडा

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

बेरुआ	कांझा	मुसहर
भाटिया	काओरा	नगेसिया
भुइमाली	कपूरिया	नामसुद्र
भुइया	करेंगा	नट
भूमिज	काष्ठा	नुनिया
बिंद	कौर	ओरांव
बिंझिया	खैरा	पलिया
चमार	खटीक	पान
धेनुआर	कोच	पासी
धोबा	कोनई	पटनी
दोई	कोनवार	पौंड
डोम	कोरा	राभा
दोसाध	कोटाल	राजवंशी
गारो	लालबेगी	रजवार
घासी	लोधा	संथाल
गोनरही	लोहार	सुनरी
हादी	महार	तियार
हाजांग	महली	तुरी
हलालखोर		

भाग IV – संयुक्त प्रांत

अनुसूचित जातियां :-

(1) सम्पूर्ण प्रान्त में:-

अगरिया	चमार	खरोट
अहेरिया	चेरो	कारवार (बेनवंसी को छोड़कर)
बड़ी	दबगर	खटीक
बधिक	धनगर	कोल
बहेलिया	धानुक (भंगी)	कोरवा
बजनिया	धरकार	लालबेगी
बाजगी	धोबी	मझवार
बलाहार	डोम	नट
बाल्मीकि	डोमार	पनखा
बनमानुस	घरामी	परहिया

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

बांसफोर	घसिया	पासी
बरवार	गुआल	पतारी
बसोर	हबुरा	रावत
बावरिया	हरि	सहरिया
बेलदार	हेला	सनौरहिया
बंगाली	कलाबाज	सांसिया
बेरिया	कंजर	शिल्पकार
भंटू	कपरिया	थारू
भुइया	करवल	तुरैहा
भुइयार	खैराहा	
बोरिया		

(2) आगरा, मेरठ और रोहिलखंड संभागों को छोड़कर सम्पूर्ण प्रांत में — कोरी

भाग V — पंजाब

पूरे प्रांत में अनुसूचित जातियां: —

अड धर्मिस	मारिजा या मारेचा	खटिक
बावरिया	बंगाली	कोरी
चमार	बरार	नट
चूहरा,	बाजीगर	पासी
या बाल्मीकि		
डागी और कोली	भंजड़ा	पेरना
डुमना	चानल	सपेला
ओड	धानक	सिरकीबंद
सांसी	गागरा	मेघस
सरेरा	गांधीला	रामदासिस

भाग VI — बिहार

अनुसूचित जातियां: —

(1) पूरे प्रांत में अनुसूचित जातियां: —

चमार	हलालखोर	मोची
चौपाल	हरि	मुसहर
धोबी	कंजर	नट
दुसाध	कुरारियार	पासी
डोम	लालबेगी	

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(2) पटना एवं तिरहुत प्रमंडल तथा भागलपुर, मुंग, पलामू एवं पूर्णिया जिले में:-

बाउरी	भूमिज	रजवार
भोगता	घासी	तुरी
भुईया	पान	

(3) मानभूम जिले के धनबाद अनुमंडल तथा मध्य मानभूम सामान्य ग्रामीण निर्वाचन क्षेत्र, तथा पुरुलिया एवं रघुनाथपुर नगर पालिकाओं में:-

बौरी	घासी	रजवार
भोगता	पान	तुरी
भुईया		

भाग VII – मध्य प्रांत और बरार

अनुसूचित जाति

इलाके

बसोर, या बुरुड
चमार
डोम
गंडा
माँग
मेहतर या भंगी
मोची
सतनामी

पूरे प्रांत में

औढेलिया	:	बिलासपुर जिले में
बहना	:	अमरावती जिले में
बलाही, या बलाई	:	बरार डिवीजन और बालाघाट, भंडारा, बैतूल, चांदा, छिंदवाड़ा, होशंगाबाद, जबलपुर, मंडला, नागपुर, निमाड़ सागर और वर्धा जिले में
बेदार	:	अकोला, अमरावती और बुलदाना जिलों में।
चादर	:	भंडारा और सागर जिलों में
चौहान	:	दुर्ग जिले में
दहायत	:	सागर जिले के दमोह उपखण्ड में।
देवार	:	बिलासपुर, दुर्ग और रायपुर जिले में।
धानुक	:	दमोह उपखण्ड को छोड़कर, सागर जिले में।
धीमर	:	भंडारा जिले में
धोबी	:	भंडारा, बिलासपुर, रायपुर और सागर जिले में,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

		और होशंगाबाद और
		होशंगाबाद जिले की तहसीलें सिवनी-मालवा में
दोहोर	:	बरार संभाग में, और बालाघाट, भंडारा, चंदा, नागपुर और वर्धा जिले।
घसिया	:	बरार संभाग में और बालाघाट, भंडारा, बिलासपुर, चंदा, डूंग, नागपुर, रायपुर और वर्धा जिलों में।
होलिया	:	बालाघाट एवं भंडारा जिले में।
जंगम	:	भंडारा जिले में।
कैकारी	:	बरार डिवीजन में, और भंडारा, चंदा, नागपुर और वर्धा जिलों में।
कटिया	:	बरार संभाग में, बालाघाट, बैतूल भंडारा, बिलासपुर, चांदा, डूंग, नागपुर, निमाड़, रायपुर और वर्धा जिलों में, होशंगाबाद जिले की होशंगाबाद और सिवनी-मालवा तहसीलों में, छिंदवाड़ा जिले में, सिवनी अनुविभाग को छोड़कर, तथा सागर जिले में, दमोह अनुविभाग को छोड़कर।
खंगार	:	भंडारा, बुलढाणा और सौगोर जिले और होशंगाबाद जिले की होशंगाबाद और सिवनी-मालवा तहसील में।
खटीक	:	बरार संभाग में, बालाघाट, भंडारा, चांदा, नागपुर और वर्धा जिलों में, होशंगाबाद जिले की होशंगाबाद तहसील में, छिंदवाड़ा जिले में, सिवनी उपखंड को छोड़कर, और सौगोर जिले में, दमोह उपखंड को छोड़कर।
कोली	:	भंडारा और चांदा जिले में
कोरी	:	अमरावती, बालाघाट, बैतूल, भंडारा, बुलदाना, छिंदवाड़ा, जबलपुर, मंडला, निमाड़, रायपुर और सौगोर जिलों में और होशंगाबाद जिले में, हरदा और सोहागपुर तहसीलों को छोड़कर।
कुम्हार	:	भंडारा और सागर जिले और होशंगाबाद जिले की होशंगाबाद और सिवनी-मालवा तहसील में।
मदगी	:	बरार संभाग में, और बालाघाट भंडारा, चंदा, नागपुर और वर्धा जिलों में।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

माला	:	बालाघाट, बैतूल, छिंदवाड़ा, होशंगाबाद, जबलपुर, मंडला, निमाड़ और सागर जिलों में।
मेहरा, या महार	:	होशंगाबाद जिले की हरदा और सोहागपुर तहसीलों को छोड़कर, पूरे प्रांत में।
नागरची	:	बालाघाट, भंडारा, छिंदवाड़ा, मंडला, नागपुर और रायपुर जिलों में।
ओझा	:	होशंगाबाद जिले के बालाघाट, भंडारा और मंडला जिलों और होशंगाबाद तहसील में।
पंका	:	बरार संभाग में, बालाघाट, भंडारा, बिलासपुर, चंदा, डूंग, नागपुर, रायपुर, सौगोर और वर्धा जिलों में और छिंदवाड़ा जिले में सिवनी उपखंड को छोड़कर।
पारधी	:	होशंगाबाद जिले के नरसिंहपुर अनुविभाग में।
प्रधान	:	बरार संभाग में, भंडारा चांदा, नागपुर, निमाड़, रायपुर और वर्धा जिलों में और छिंदवाड़ा जिले में, सिवनी उपखंड को छोड़कर।
रुज्झार	:	होशंगाबाद जिले की सोहागपुर तहसील में।

भाग VIII – असम

अनुसूचित जातियां: -

(1) असम घाटी में: -

नामशूद्र	हीरा	मेहतर, या भंगी
कैबर्टा	लालबेगी	बंसफोर
बनिया, या ब्रिटियल-बनिया		

(2) सूरमा घाटी में: -

माली, या भुइमाली	सूत्रधार	कैबर्टा, या जलिया
धूपी, या धोबी	मुची	लालबेगी
दुगला, या ढोली	पटनी	मेहतर, या भंगी
झालो और मालो	नामसुद्र	बंसफोर
महरा		

भाग IX – उड़ीसा

अनुसूचित जातियाँ :-

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(1) सम्पूर्ण प्रान्त में :-

अडि-आंध्र	गोदरा	मंगन
औधेलिया	गोखा	मेहरा, या महार
बारिकी	हड्डी, या हरि	मेहतर, या भंगी
बसोर, या बुरुद	इरिका	मोची, या मुची
बवुरी	जग्गाली	पैदी
चचाती	कांड्रा	पेंदा
चमार	कंटिया	पामिडी
चांडाला	केला	पंचमा
दंदासी	कोडालो	पंका
देवार	मदारी	रेली
धोबा, या धोबी	मैडिगा	सपारि
गांडा	महुरिया	सतनामी
घुसुरिया	माला	सियाल
गोदागली	मांग	वाल्मिकी
गोदारी		

(2) खोंडमाल्स जिले, संबलपुर जिले तथा मद्रास प्रेसीडेंसी के विशाखापट्टनम और गंजम एजेंसियों से भारत सरकार (उड़ीसा का संविधान) आदेश, 1936 के प्रावधानों के अंतर्गत उड़ीसा को हस्तांतरित क्षेत्रों को छोड़कर पूरे प्रांत में:-

पैन, या पानो

(3) खोंडमाल्स जिले और उक्त एजेंसियों से उड़ीसा को हस्तांतरित क्षेत्रों को छोड़कर पूरे प्रांत में: -

डोम, या डोम्बो

(4) संबलपुर जिले को छोड़कर पूरे प्रांत में:

बौरी	भूमिज	तुरी
भुइया	घासी, या घासिया	

(5) संबलपुर जिले के नवापारा उपखंड में: -

कोरी	नागरची	प्रधौ
------	--------	-------

सी. के. रोड्स,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

33. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि 1935 के अधिनियम की पहली, पांचवीं और छठी अनुसूचियों के प्रयोजनों के लिए, 1936 के आदेश की अनुसूची के भाग 1 से 9 में निर्दिष्ट जातियां, मूलवंश या जनजातियां अथवा जातियों, मूलवंश या जनजातियों के भाग या समूह उन प्रांतों में अनुसूचित जातियां मानी जाती थीं जिनसे वे भाग क्रमशः संबंधित थे।

34. 1936 के आदेश के अवलोकन से पता चलता है कि विभिन्न प्रांतों के लिए विभिन्न जातियों को अनुसूचित जातियों के रूप में अधिसूचित किया गया था। कुछ प्रांतों में, एक विशेष जाति को अनुसूचित जाति के रूप में माना जाना था, सिवाय उसमें उल्लिखित जिलों के जहां इसे अनुसूचित जाति के रूप में नहीं माना जाना था। इसी तरह, कुछ मामलों में, विशेष क्षेत्रों या जिलों में, उक्त जातियों को उसी प्रांत में अनुसूचित जातियां माना जाता था।

35. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि एक ही प्रांत में एक ही जाति केवल एक या अधिक जिलों में अनुसूचित जाति हो सकती है, अन्य जिलों में नहीं।

36. यह देखा जा सकता है कि जहाँ तक बॉम्बे प्रांत का सवाल है, अहमदाबाद, कैरा, बरोहा और पंच महल तथा सूरत जिलों को छोड़कर पूरे प्रांत में ‘मोची’ जाति अनुसूचित जाति होगी। इसी तरह, ‘कोटेगर’ जाति केवल कनारा जिले में अनुसूचित जाति होगी, बाकी प्रांत में नहीं।

37. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि 1936 का आदेश संविधान के प्रारंभ के बाद अनुच्छेद 341(1) के अंतर्गत जारी संविधान (अनुसूचित जातियां) आदेश, 1950 (एतस्मिनपश्चात् “1950 का आदेश” के रूप में सन्दर्भित) का आधार बना।

38. इसके बाद सबसे महत्वपूर्ण घटना आती है, यानी 17 सितंबर 1949 को संविधान सभा में हुई बहस, जब डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने दो नए मसौदा अनुच्छेद 300 ए और 300 बी प्रस्तुत किए, जो इस प्रकार थे:

“300 क-अनुसूचित जातियां

(1) राष्ट्रपति, किसी राज्य के राज्यपाल या शासक के परामर्श के पश्चात्, सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा उन जातियों, मूलवंशों या जनजातियों अथवा अनुसूचित जातियों के भागों या जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के समूहों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा, जो इस संविधान के प्रयोजनों के लिए उस राज्य के संबंध में अनुसूचित जातियां समझी जाएंगी।

(2) संसद्, विधि द्वारा, किसी जाति, मूलवंश या जनजाति को अथवा जाति, मूलवंश या जनजाति के भाग या उसमें के यूथ को खंड (1) के अधीन निकाली गई अधिसूचना में विनिर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में सम्मिलित कर सकेगी या उसमें से अपवर्जित कर सकेगी, किन्तु जैसा ऊपर कहा गया है उसके सिवाय उक्त खंड के अधीन निकाली गई अधिसूचना में किसी पश्चात्वर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा ।

300 ख- अनुसूचित जनजातियां

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

(1) राष्ट्रपति किसी राज्य के राज्यपाल या शासक से परामर्श के पश्चात्, लोक अधिसूचना द्वारा, उन जनजातियों या जनजातीय समुदायों अथवा जनजातियों या जनजातीय समुदायों के भागों या उनमें के समूहों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा, जो इस संविधान के प्रयोजनों के लिए उस राज्य के संबंध में अनुसूचित जनजातियाँ समझी जाएंगी।

(2) संसद्, विधि द्वारा, किसी जनजाति या जनजाति समुदाय को अथवा किसी जनजाति या जनजाति समुदाय के भाग या उसमें के यूथ को खंड (1) के अधीन निकाली गई अधिसूचना में विनिर्दिष्ट अनुसूचित जनजातियों की सूची में सम्मिलित कर सकेगी या उसमें से अपवर्जित कर सकेगी, किन्तु जैसा ऊपर कहा गया है उसके सिवाय उक्त खंड के अध निचाली गई अधिसूचना में किसी पश्चात्वर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा।

39. उक्त नये मसौदा अनुच्छेद को प्रस्तुत करते हुए डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने कहा था:

"जैसा कि मैंने कहा, इन दोनों अनुच्छेदों का उद्देश्य संविधान पर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की लंबी सूची का बोझ डालने की आवश्यकता को समाप्त करना था। अब यह प्रस्ताव किया गया है कि राष्ट्रपति को राज्य के राज्यपाल या शासक के परामर्श से राजपत्र में एक साधारण अधिसूचना जारी करने की शक्ति होनी चाहिए, जिसमें उन सभी जातियों और जनजातियों या उनके समूहों को निर्दिष्ट किया जाए, जिन्हें संविधान में उनके लिए परिभाषित विशेषाधिकारों के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ माना गया है। एकमात्र सीमा जो लगाई गई है वह यह है कि एक बार राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचना जारी कर दी गई है, जिसे निस्संदेह वे प्रत्येक राज्य की सरकार के परामर्श से तथा उसकी सलाह पर जारी करेंगे, उसके बाद यदि इस प्रकार अधिसूचित सूची से कोई निष्कासन किया जाना हो या कोई परिवर्धन किया जाना हो, तो वह संसद द्वारा किया जाना चाहिए, राष्ट्रपति द्वारा नहीं। इसका उद्देश्य राष्ट्रपति द्वारा प्रकाशित अनुसूची में गड़बड़ी के मामले में किसी भी प्रकार के राजनीतिक कारकों की भूमिका को समाप्त करना है।"

40. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि मसौदा अनुच्छेद 300 क और 300 ख, जो अब अनुच्छेद 341 और 342 हैं, के पीछे का विचार संविधान पर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की लंबी सूची का बोझ डालने की आवश्यकता को समाप्त करना था। यह प्रस्ताव किया गया कि राष्ट्रपति को राज्य के राज्यपाल या शासक के परामर्श से राजपत्र में एक सामान्य अधिसूचना जारी करने की शक्ति होगी, जिसमें उन सभी जातियों और जनजातियों या उनके समूहों को निर्दिष्ट किया जाएगा, जिन्हें संविधान में उनके लिए परिभाषित विशेषाधिकारों के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ माना गया है।

41. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मसौदा अनुच्छेद 300 क (अब अनुच्छेद 341) और मसौदा अनुच्छेद 300 ख (अब अनुच्छेद 342) का उद्देश्य उन जातियों, मूलवंशों या जनजातियों अथवा जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के भागों या समूहों की पहचान करना था, जो संविधान में उनके लिए परिभाषित विशेषाधिकारों के हकदार थे।

42. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मसौदा अनुच्छेद 300 क और 300 ख (अब अनुच्छेद 341 और 342) का उद्देश्य विशेषाधिकार प्रदान करना नहीं था, बल्कि केवल उन जातियों, मूलवंशों या जनजातियों अथवा जातियों,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

मूलवंशों या जनजातियों के भागों या समूहों की पहचान करना था, जो संविधान के अंतर्गत अन्यत्र प्रदत्त विशेषाधिकारों के हकदार होंगे।

43. डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने आगे कहा कि एकमात्र सीमा यह लगाई गई है कि एक बार राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचना जारी कर दी गई है, जिसे वे राज्य सरकार के परामर्श और सलाह पर जारी करेंगे, उसके बाद, यदि अधिसूचित सूची में कोई निष्कासन या परिवर्धन किया जाना है, तो ऐसा केवल संसद द्वारा किया जा सकता है, राष्ट्रपति द्वारा नहीं। इसका उद्देश्य राष्ट्रपति द्वारा प्रकाशित अनुसूची में गड़बड़ी के मामले में किसी भी प्रकार के राजनीतिक कारकों की भूमिका को समाप्त करना था।

44. यह पूरी तरह स्पष्ट है कि उक्त प्रावधानों के पीछे उद्देश्य यह था कि एक बार अधिसूचित सूची में पहचान हो जाने के बाद, कार्यपालिका को उसमें कोई छेड़छाड़ नहीं करनी चाहिए तथा कोई भी जोड़ने या हटाने का काम केवल संसद द्वारा ही किया जाना चाहिए।

45. संशोधन के समर्थन में उसी दिन अर्थात् 17 सितम्बर 1949 को दिए गए श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्लई के भाषण का संदर्भ लेना भी प्रासंगिक होगा, जो इस प्रकार है:

“श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्लई: अध्यक्ष महोदय, मैं माननीय डॉ. अंबेडकर द्वारा पेश किए गए संशोधनों का समर्थन करने आया हूँ। ये संशोधन अनुसूचित जातियों की परिभाषा से संबंधित हैं। जहाँ तक मैं देख सकता हूँ, उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया है कि इसके दूसरे भाग के अनुसार, राष्ट्रपति 26 जनवरी 1950 को ऐसे समुदायों की सूची प्रकाशित करेंगे जो अनुसूचित जातियों की श्रेणी में आते हैं। लेकिन मैं इस सदन को उस पृष्ठभूमि से अवगत कराना चाहूँगा जिसके कारण अनुसूचित जाति का विशेष नाम सामने आया। यह अस्पृश्यता, एक सामाजिक बुराई थी जो सदियों से हिंदू समुदाय द्वारा अपनाई गई थी, जिसके कारण सरकार और लोगों को यह पता चला कि हिंदू की श्रेणी में आने वाले लोगों का कौन सा वर्ग है और उन्हें हिंदू समाज से बाहर रखा गया था। 1916 में वापस जाने पर यह पता चलता है कि यह वह साल था जब सरकार ने पाया कि अछूत वर्गों के लिए कुछ किया जाना चाहिए, (जब वे अछूत वर्ग कहते थे, तो उन्हें हमेशा हिंदू समझा जाता था) और उन्हें मान्यता दी जानी चाहिए। मद्रास में छह समुदाय थे जो इस वर्गीकरण के अंतर्गत आते थे। मोंटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधारों के दौरान इन्हें दस कर दिया गया। 1930 में जब महात्मा गांधी का महान युगांतरकारी उपवास सामने आया, तभी देश को पता चला कि असली अछूत वर्ग कौन थे। और 1935 के अधिनियम में, सरकार ने पूरी बात की गहन जांच की और जहाँ तक मद्रास प्रांत का सवाल है, उन्होंने 86 समुदायों को इस सूची या श्रेणी में शामिल किया, हालांकि इसमें कुछ स्पर्शीय वर्ग भी थे। अब, आगे की जांच के बाद प्रांतीय सरकारों ने एक सूची तैयार की है और मुझे लगता है कि संशोधन प्रस्तावक के सुझावों के अनुसार, वे सभी समुदाय जो अछूतों की श्रेणी में आते हैं और जो हिंदू धर्म को मानते हैं, वे अनुसूचित जातियाँ होंगी, क्योंकि मैं धर्म के बारे में जोर देना चाहता हूँ। मैं इस बात पर इसलिए जोर दे रहा हूँ क्योंकि हाल ही में यहाँ-वहाँ कुछ आंदोलन हुए हैं; ऐसे लोग हैं जो अनुसूचित जाति और हिंदू धर्म छोड़कर दूसरे धर्मों में शामिल हो गए हैं और वे भी अनुसूचित जाति होने का

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

दावा कर रहे हैं। ऐसे धर्मांतरित लोग इस परिभाषा के दायरे में नहीं आ सकते। हालाँकि मुझे सरकार द्वारा इन धर्मांतरित लोगों को कोई रियायत दिए जाने पर कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन मेरा दृढ़ विश्वास है कि उन्हें अनुसूचित जातियों के साथ नहीं जोड़ा जाना चाहिए।

महोदय, मैं प्रारूप समिति का तथा उस समिति के अध्यक्ष का आभारी हूँ कि उन्होंने इसका दूसरा भाग बहुत स्पष्ट कर दिया है कि भविष्य में राष्ट्रपति द्वारा यह घोषणा करने के बाद कि अनुसूचित जातियाँ कौन होंगी, तथा जब अनुसूचित जातियों की सूची में किसी अन्य वर्ग को सम्मिलित करने या किसी व्यक्ति या समुदाय को बाहर करने की आवश्यकता होगी, तो वह संसद के आदेश से ही होगा। मैं इस धारा को लाने के लिए उनका आभारी हूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि जब हरिजन स्वतंत्र रूप से व्यवहार करते हैं या कुछ मामलों में अपने अधिकारों का दावा करते हैं, तो कुछ प्रांतों के मंत्री न केवल उन सदस्यों के खिलाफ कार्रवाई करते हैं, बल्कि वे उस समुदाय को भी शामिल कर लेते हैं जिससे वह व्यक्ति संबंधित है; और इस तरह न केवल उस व्यक्ति को बल्कि अनुसूचित जातियों की श्रेणी में आने वाले समुदाय को भी परेशान किया जाता है। मुझे लगता है कि इस प्रावधान से खतरा दूर हो गया है।

मैं पंडित भार्गव द्वारा प्रस्तुत संशोधन का पुरजोर विरोध करता हूँ। इसका कारण यह है कि वे इन संशोधनों को लागू करने के लिए दस वर्ष की अवधि चाहते हैं। लेकिन वह पूरी तरह से भूल गए हैं कि एक अन्य अनुच्छेद के तहत, जिसे हम पहले ही पारित कर चुके हैं, या पारित करेंगे, संविधान में केंद्र में एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति की व्यवस्था है और सभी प्रांतों में भी विभिन्न अधिकारियों की नियुक्ति की व्यवस्था है, जो इन समुदायों की विभिन्न कठिनाइयों पर विचार करेंगे और राष्ट्रपति को एक रिपोर्ट प्रस्तुत करेंगे, जो तब यह जान सकेंगे कि क्या अनुसूचित जातियाँ उस स्थिति में पहुंच गई हैं, जहां उन्हें दी जा रही सुविधाएं वापस ली जा सकती हैं। मुझे नहीं लगता कि उन्होंने जो तर्क दिए हैं, वे हरिजनों के उत्थान के लिए उचित और स्पष्ट हैं। इन चंद शब्दों के साथ, मैं संशोधन का समर्थन करता हूँ।”

46. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि संविधान सभा के विद्वान सदस्य उस पृष्ठभूमि का उल्लेख कर रहे हैं जिसके कारण अनुसूचित जातियों का विशेष नाम सामने आया। वे अस्पृश्यता का उल्लेख कर रहे हैं, जो एक सामाजिक बुराई है जिसका हिंदू समुदाय सदियों से पालन करता आ रहा है। उन्होंने कहा कि लोगों का एक वर्ग, हालांकि हिंदू था, हिंदू समाज के बाहरी हिस्से में रखा गया था और यह 1916 में था जब सरकार ने पाया कि अछूत वर्गों के लिए कुछ किया जाना चाहिए। उन्होंने महात्मा गांधी द्वारा किए गए प्रयासों का उल्लेख किया। उन्होंने पहचान की कि वास्तविक अछूत वर्ग कौन थे। उन्होंने 1935 के अधिनियम और सरकार द्वारा पूरे मामले की गहन जांच करने के प्रयासों का उल्लेख किया तथा कहा कि जहां तक मद्रास प्रांत का संबंध है, उन्होंने 86 समुदायों को इस सूची या श्रेणी में शामिल किया। उन्होंने कहा कि संशोधन प्रस्तावक के सुझावों के अनुसार, अछूतों की श्रेणी में आने वाले सभी समुदाय और हिंदू धर्म को मानने वाले लोग अनुसूचित जाति में शामिल होंगे। हालांकि, उनका मानना है कि हिंदू धर्म छोड़कर दूसरे धर्म में शामिल होने वाले लोगों को अनुसूचित जाति के

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

लाभ का हकदार नहीं होना चाहिए। उन्होंने कहा कि अगर सरकार इन धमा तरित लोगों को कोई रियायत देना चाहती है, तो उन्हें अनुसूचित जातियों में शामिल नहीं किया जाना चाहिए।

47. वे प्रारूप समिति और उसके अध्यक्ष के दृष्टिकोण को स्वीकार करते हैं कि अनुसूचित जातियाँ कौन होंगी, और जब किसी अन्य वर्ग को शामिल करने या किसी व्यक्ति या समुदाय को अनुसूचित जातियों की सूची से बाहर करने की आवश्यकता होगी तो यह संसद के आदेश से ही संभव होगा। वे कहते हैं कि वे इस खंड को लाने के लिए अध्यक्ष के आभारी हैं और जब हरिजन स्वतंत्र रूप से व्यवहार करते हैं या कुछ मामलों में अपने अधिकार का दावा करते हैं, तो न केवल उस समुदाय के सदस्यों को बल्कि उनके पूरे समुदाय को परेशान किया जाता है।

48. अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की अवधारणा कैसे उभरी, इसके इतिहास का उल्लेख करने के बाद, मैं अब सुविधा के लिए भारत के संविधान में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों को दिए गए विशेष उपचार से संबंधित प्रावधानों का उल्लेख करता हूँ। चूँकि हमारा राजनीतिक आरक्षण से कोई लेना-देना नहीं है, इसलिए मुझे इससे संबंधित प्रावधानों का उल्लेख करना ज़रूरी नहीं लगता। चूँकि अनुच्छेद 341 और 342 अनुच्छेद 300A और 300B का मसौदा हैं, जिन्हें 17 सितंबर 1949 को संविधान सभा द्वारा अनुमोदित किया गया था, इसलिए मैं यहाँ उन्हें नहीं दोहराता।

अनुच्छेद 15, 16, 46, 335, 338, अनुच्छेद 366 के खंड 24 और 25

“15. धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध – (1) राज्य, किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।

(2) कोई नागरिक केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर—

(क) दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों और सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश या

(ख) पूर्णतः या भागतः राज्य – निधि से पोषित या साधारण जनता के प्रयोग के लिए समर्पित कुओं, तालाबों, स्नानघाटों, सड़कों और सार्वजनिक समागम के स्थानों के उपयोग,

के संबंध में किसी भी निर्योग्यता, दायित्व, निर्बन्धन या शर्त के अधीन नहीं होगा।

(3) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

(4) इस अनुच्छेद की या अनुच्छेद 29 के खंड (2) की कोई बात राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

(5) इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 19 के खंड (1) के उपखंड (छ) की कोई बात राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए या

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों के लिए, विधि द्वारा, कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी, जहां तक ऐसे विशेष उपबंध, अनुच्छेद 30 के खंड (1) में निर्दिष्ट अल्पसंख्यक शिक्षा संस्थाओं से भिन्न, शिक्षा संस्थाओं में, जिनके अंतर्गत प्राइवेट शिक्षा संस्थाएं भी हैं, चाहे वे राज्य से सहायता प्राप्त हों या नहीं, प्रवेश से संबंधित हैं।

(6) इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 19 के खंड (1) के उपखंड (छ) या अनुच्छेद 29 के खंड (2) की कोई बात, राज्य को –

(क) खंड (4) और खंड (5) में उल्लिखित वर्गों से भिन्न नागरिकों के आर्थिक रूप से दुर्बल किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए कोई भी विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी, और

(ख) खंड (4) और खंड (5) में उल्लिखित वर्गों से भिन्न नागरिकों के आर्थिक रूप से दुर्बल किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए कोई भी विशेष उपबंध करने से वहां निवारित नहीं करेगी, जहां तक ऐसे उपबंध, ऐसी शैक्षणिक संस्थाओं में, जिनके अंतर्गत अनुच्छेद 30 के खंड (1) में निर्दिष्ट अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थाओं से भिन्न प्राइवेट शैक्षणिक संस्थाएं भी हैं, चाहे वे राज्य द्वारा सहायता पाने वाली हैं या सहायता न पाने वाली हैं, प्रवेश से संबंधित हैं, जो आरक्षण की दशा में विद्यमान आरक्षणों के अतिरिक्त तथा प्रत्येक प्रवर्ग में कुल स्थानों के अधिकतम दस प्रतिशत के अन्वय होंगे ।

स्पष्टीकरण – इस अनुच्छेद और अनुच्छेद 16 के प्रयोजनों के लिए "आर्थिक रूप से दुर्बल वर्ग" वे होंगे, जो राज्य द्वारा कुटुंब की आय और आर्थिक अलाभ के अन्य सूचकों के आधार पर समय-समय पर अधिसूचित किए जाएं ।"

"16. लोक नियोजन के विषय में अवसर की समता– (1) राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से संबंधित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समता होगी ।

(2) राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के संबंध में केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्मस्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर न तो कोई नागरिक अपात्र होगा और न उससे विभेद किया जाएगा ।

(3) इस अनुच्छेद की कोई बात संसद् को कोई ऐसी विधि बनाने से निवारित नहीं करेगी जो किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र की सरकार के या उसमें के किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन वाले किसी वर्ग या वर्गों के पद पर नियोजन या नियुक्ति के संबंध में ऐसे नियोजन या नियुक्ति से पहले उस राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के भीतर निवास विषयक कोई अपेक्षा विहित करती है।

(4) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को पिछड़े हुए नागरिकों के किसी वर्ग के पक्ष में, जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी ।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

(4-क) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में, जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, राज्य के अधीन सेवाओं में किसी वर्ग या वर्गों के पदों पर, पारिणामिक ज्येष्ठता सहित प्रोन्नति के मामलों में आरक्षण के लिए उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

(4-ख) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को किसी वर्ष में किन्हीं न भरी गई ऐसी रिक्तियों को, जो खंड (4) या खंड (4 क) के अधीन किए गए आरक्षण के लिए किसी उपबंध के अनुसार उस वर्ष में भरी जाने के लिए आरक्षित हैं, किसी उत्तरवर्ती वर्ष या वर्षों में भरे जाने के लिए पृथक् 'वर्ग की रिक्तियों के रूप में विचार करने से निवारित नहीं करेगी और ऐसे वर्ग की रिक्तियों पर उस वर्ष की रिक्तियों के साथ जिसमें वे भरी जा रही हैं, उस वर्ष की रिक्तियों की कुल संख्या के संबंध में पचास प्रतिशत आरक्षण की अधिकतम सीमा का अवधारण करने के लिए विचार नहीं किया जाएगा।

(5) इस अनुच्छेद की कोई बात किसी ऐसी विधि के प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी जो यह उपबंध करती है कि किसी धार्मिक या सांप्रदायिक संस्था के कार्यकलाप से संबंधित कोई पदधारी या उसके शासी निकाय का कोई सदस्य किसी विशिष्ट धर्म का मानने वाला या विशिष्ट संप्रदाय का ही हो।

(6) इस अनुच्छेद की कोई बात, राज्य को विद्यमान आरक्षण के अतिरिक्त तथा प्रत्येक प्रवर्ग में पदों के अधिकतम दस प्रतिशत के अध्यक्षीन, खंड (4) में उल्लिखित वर्गों से भिन्न नागरिकों के आर्थिक रूप से दुर्बल किन्हीं वर्गों के पक्ष में नियुक्तियों और पदों के आरक्षण के लिए कोई भी उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।"

"46. अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की अभिवृद्धि – राज्य, जनता के दुर्बल वर्गों के, विशेषतया, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से उनकी संरक्षा करेगा।"

"335. सेवाओं और पदों के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावे– संघ या किसी राज्य के कार्यकलाप से संबंधित सेवाओं और पदों के लिए नियुक्तियां करने में, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावों का प्रशासन की दक्षता बनाए रखने की संगति के अनुसार ध्यान रखा जाएगा:

परन्तु इस अनुच्छेद की कोई बात अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के पक्ष में, संघ या किसी राज्य के कार्यकलाप से संबंधित सेवाओं के किसी वर्ग या वर्गों में या पदों पर प्रोन्नति के मामलों में आरक्षण के लिए, किसी परीक्षा में अर्हक अंकों में छूट देने या मूल्यांकन के मानकों को घटाने के लिए उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।"

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

“338. राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग – (1) अनुसूचित जातियों के लिए एक आयोग होगा जो राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग के नाम से ज्ञात होगा ।

(2) संसद् द्वारा इस निमित्त बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, आयोग एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष और तीन अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा और इस प्रकार नियुक्त किए गए अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और अन्य सदस्यों की सेवा की शर्तें और पदावधि ऐसी होंगी जो राष्ट्रपति, नियम द्वारा, अवधारित करे ।

(3) राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर और मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा आयोग के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और अन्य सदस्यों को नियुक्त करेगा ।

(4) आयोग को अपनी प्रक्रिया स्वयं विनियमित करने की शक्ति होगी ।

(5) आयोग का यह कर्तव्य होगा कि वह,

(क) अनुसूचित जातियों के लिए इस संविधान या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि या सरकार के किसी आदेश के अधीन उपबंधित रक्षोपायों से संबंधित सभी विषयों का अन्वेषण करे और उन पर निगरानी रखे तथा ऐसे रक्षोपायों के कार्यकरण का मूल्यांकन करे,

(ख) अनुसूचित जातियों को उनके अधिकारों और रक्षोपायों से वंचित करने की बाबत विनिर्दिष्ट शिकायतों की जांच करे;

(ग) अनुसूचित जातियों के सामाजिक-आर्थिक विकास की योजना प्रक्रिया में भाग ले और उन पर सलाह दे तथा संघ और किसी राज्य के अधीन उनके विकास की प्रगति का मूल्यांकन करे;

(घ) उन रक्षोपायों के कार्यकरण के बारे में प्रतिवर्ष, और ऐसे अन्य समयों पर, जो आयोग ठीक समझे, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे;

(ङ) ऐसे प्रतिवेदनों में उन उपायों के बारे में जो उन रक्षोपायों के प्रभावपूर्ण कार्यान्वयन के लिए संघ या किसी राज्य द्वारा किए जाने चाहिए, तथा अनुसूचित जातियों के संरक्षण, कल्याण और सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए अन्य उपायों के बारे में सिफारिश करे; और

(च) अनुसूचित जातियों के संरक्षण, कल्याण, विकास तथा उन्नयन के संबंध में ऐसे अन्य कृत्यों का निर्वहन करे जो राष्ट्रपति, संसद द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, नियम द्वारा विनिर्दिष्ट करे ।

(6) राष्ट्रपति ऐसे सभी प्रतिवेदनों को संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा और उसके साथ संघ से संबंधित सिफारिशों पर की गई या किए जाने के लिए प्रस्थापित कार्रवाई तथा यदि

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

कोई ऐसी सिफारिश अस्वीकृत की गई है तो अस्वीकृति के कारणों को स्पष्ट करने वाला ज्ञापन भी होगा ।

(7) जहां कोई ऐसा प्रतिवेदन, या उसका कोई भाग किसी ऐसे विषय से संबंधित है जिसका किसी राज्य सरकार से संबंध है तो ऐसे प्रतिवेदन की एक प्रति उस राज्य के राज्यपाल को भेजी जाएगी जो उसे राज्य के विधान-मंडल के समक्ष रखवाएगा और उसके साथ राज्य से संबंधित सिफारिशों पर की गई या किए जाने के लिए प्रस्थापित कार्यवाई तथा यदि कोई ऐसी सिफारिश अस्वीकृत की गई है तो अस्वीकृति के कारणों को स्पष्ट करने वाला ज्ञापन भी होगा ।

(8) आयोग को खंड (5) के उपखंड (क) में निर्दिष्ट किसी विषय का अन्वेषण करते समय या उपखंड (ख) में निर्दिष्ट किसी परिवाद के बारे में जांच करते समय, विशिष्टतया निम्नलिखित विषयों के संबंध में, वे सभी शक्तियां होंगी जो वाद का विचारण करते समय सिविल न्यायालय को हैं, अर्थात्:

(क) भारत के किसी भी भाग से किसी व्यक्ति को समन करना और हाजिर कराना तथा शपथ पर उसकी परीक्षा करना;

(ख) किसी दस्तावेज को प्रकट और पेश करने की अपेक्षा करना;

(ग) शपथपत्रों पर साक्ष्य ग्रहण करना;

(घ) किसी न्यायालय या कार्यालय से किसी लोक अभिलेख या उसकी प्रति की अपेक्षा करना;

(ङ) साक्षियों और दस्तावेजों की परीक्षा के लिए कमीशन निकालना;

(च) कोई अन्य विषय जो राष्ट्रपति, नियम वारा, अवधारित करे।

(9) संघ और प्रत्येक राज्य सरकार अनुसूचित जातियों को प्रभावित करने वाले सभी महत्वपूर्ण नीतिगत विषयों पर आयोग से परामर्श करेगी ।

(10) इस अनुच्छेद में, अनुसूचित जातियों के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि इसके अंतर्गत आंग्ल-भारतीय समुदाय के प्रति निर्देश भी है ।"

"366. परिभाषाएं- इस संविधान में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, निम्नलिखित पदों के निम्नलिखित अर्थ हैं, अर्थात्-

(24) "अनुसूचित जातियों" से ऐसी जातियां, मूलवंश या जनजातियां अथवा ऐसी जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के भाग या उनमें के यूथ अभिप्रेत हैं जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 341 के अधीन अनुसूचित जातियां समझा जाता है;

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

(25) “अनुसूचित जनजातियों” से ऐसी जनजातियां या जनजाति समुदाय अथवा ऐसी जनजातियों या जनजाति समुदायों के भाग या उनमें के यूथ अभिप्रेत हैं जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 342 के अधीन अनुसूचित जनजातियां समझा जाता है;”

49. यह ध्यान रखना प्रासंगिक होगा कि ‘अनुसूचित जातियों’ की मसौदा परिभाषा में पहले इस्तेमाल किया गया शब्द “विनिर्दिष्ट” था। हालाँकि, अनुच्छेद 366 के अंतिम खंड (24) में, “विनिर्दिष्ट” शब्द को बदलकर “माना” कर दिया गया है।

III. न्यायिक मिसालें

50. पिछले 74 वर्षों में, उपर्युक्त संवैधानिक प्रावधानों पर इस न्यायालय द्वारा कई अवसरों पर विचार किया गया है। इनमें से कुछ निर्णयों का संदर्भ देना प्रासंगिक होगा।

51. यह भी ध्यान देने योग्य है कि वर्ष 1951 में संविधान के प्रथम संशोधन द्वारा अनुच्छेद 15 में खंड (4) जोड़ा गया था, जो मद्रास राज्य बनाम श्रीमती चम्पकम दोराईराजन 4 के मामले में इस न्यायालय के निर्णय के कारण आवश्यक हो गया था, जिसमें हरिजनों के लिए आरक्षण निर्दिष्ट करने वाले सरकारी आदेश को रद्द कर दिया गया था।

A. एम.आर. बालाजी बनाम मैसूर राज्य

52. एम.आर. बालाजी और अन्य बनाम मैसूर राज्य के मामले में, इस न्यायालय की संविधान पीठ के समक्ष चुनौती का विषय मैसूर राज्य द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 15(4) के तहत जारी किया गया एक आदेश था। उक्त आदेश के अनुसार, राज्य ने इंजीनियरिंग और मेडिकल कॉलेजों और अन्य तकनीकी संस्थानों में शैक्षणिक और सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए 68% सीटें आरक्षित कीं और मेरिट पूल के लिए केवल 32% सीटें उपलब्ध थीं।

53. इस न्यायालय की संविधान पीठ ने माना कि अनुच्छेद 15(4) और 16(4) में निहित प्रावधान समान प्रावधान हैं। इसने आगे कहा कि अनुच्छेद 15(4) एक सक्षम प्रावधान है और यह कोई बाध्यता नहीं लगाता है, बल्कि यदि आवश्यक हो तो उचित कार्रवाई करने के लिए इसे उपयुक्त सरकार के विवेक पर छोड़ देता है।

54. इस न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा:

“20. अनुच्छेद 15(4) राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से अलग सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े नागरिकों के किसी भी वर्ग की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान करने का अधिकार देता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि दोनों श्रेणियों के नागरिकों के लिए विशेष प्रावधान किया जा सकता है, लेकिन श्रेणियों को निर्दिष्ट करते समय पहली श्रेणी को दूसरी श्रेणी से अलग किया जाता है। अनुच्छेद 366 के उप-खंड (24) और (25) क्रमशः अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को परिभाषित करते हैं, लेकिन नागरिकों के सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों को परिभाषित करने वाला कोई खंड नहीं है, और इसलिए, इस प्रश्न का निर्धारण करते समय कि क्या अनुच्छेद 15(4) के तहत कोई विशेष प्रावधान वैध रूप से किया गया है या नहीं, पहला प्रश्न जो निर्धारित किया जाना है वह यह है कि

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

क्या राज्य ने वैध रूप से निर्धारित किया है कि इन पिछड़े वर्गों में किसे शामिल किया जाना चाहिए। यह बिल्कुल स्पष्ट प्रतीत होता है कि नागरिकों के पिछड़े वर्ग जिनके लिए विशेष प्रावधान किए जाने को अधिकृत किया गया है, उन्हें अनुच्छेद 15(4) के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के समान माना गया है। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को पिछड़ा माना जाता था और स विधान निर्माताओं को इसमें कोई संदेह नहीं था कि उनकी उन्नति के लिए विशेष प्रावधान किए जाने चाहिए। यह महसूस किया गया कि भारतीय समाज में नागरिकों के अन्य वर्ग भी हैं जो अनुसूचित जातियों और जनजातियों के समान या उनसे कुछ कम पिछड़े हैं और यह सोचा गया कि उनके लिए भी कुछ विशेष प्रावधान किया जाना चाहिए। अनुच्छेद 34(1) में उन जातियों, मूलवंशों या जनजातियों को निर्दिष्ट करने के लिए सार्वजनिक अधिसूचना जारी करने का प्रावधान है, जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए, राज्य या संघ राज्य क्षेत्र में अनुसूचित जातियां माना जाएगा। इसी प्रकार अनुच्छेद 342 में अनुसूचित जनजातियों के संबंध में सार्वजनिक अधिसूचना जारी करने का प्रावधान है। अनुच्छेद 338(3) के तहत यह प्रावधान किया गया है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के संदर्भों को ऐसे अन्य पिछड़े वर्गों के संदर्भों के रूप में समझा जाएगा, जिन्हें राष्ट्रपति अनुच्छेद 340(1) के तहत नियुक्त आयोग की रिपोर्ट प्राप्त होने पर आदेश द्वारा निर्दिष्ट कर सकते हैं और एंग्लो-इंडियन समुदाय के लिए भी। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि इस प्रावधान में यह प्रावधान है कि कुछ पिछड़े वर्गों को राष्ट्रपति के आदेश द्वारा अनुसूचित जातियों और जनजातियों में शामिल किया जा सकता है। इससे यह बात सामने आती है कि पिछड़े वर्ग, जिनके सुधार के लिए अनुच्छेद 15(4) द्वारा विशेष प्रावधान की परिकल्पना की गई है, अपने पिछड़ेपन के मामले में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बराबर हैं।

55. इस न्यायालय ने टिप्पणी की कि नागरिकों के पिछड़े वर्ग जिनके लिए विशेष प्रावधान किए जाने को अधिकृत किया गया है, उन्हें अनुच्छेद 15(4) के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के समान माना जाता है। यह देखा गया है कि जिन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को परिभाषित किया गया है, वे पिछड़ी मानी जाती हैं और संविधान निर्माताओं को इसमें कोई संदेह नहीं था कि उनकी उन्नति के लिए विशेष प्रावधान किए जाने चाहिए। हालांकि, यह महसूस किया गया कि भारतीय समाज में नागरिकों के अन्य वर्ग भी हैं जो अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बराबर या उनसे कुछ कम पिछड़े हैं, और यह सोचा गया कि उनके लिए भी कुछ विशेष प्रावधान किए जाने चाहिए। न्यायालय ने कहा कि पिछड़े वर्ग जिनके सुधार के लिए अनुच्छेद 15(4) के तहत विशेष प्रावधान की परिकल्पना की गई है, वे पिछड़ेपन के मामले में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बराबर हैं।

56. इस न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों का उल्लेख करना भी समीचीन होगा:

"21. अनुच्छेद 15(4) के तहत पिछड़ापन सामाजिक और शैक्षिक होना चाहिए। यह न तो सामाजिक है और न ही शैक्षिक, बल्कि यह सामाजिक और शैक्षिक दोनों है; और यह हमें इस सवाल पर ले जाता है कि सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन का निर्धारण कैसे किया जाना चाहिए।"

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

57. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस न्यायालय की संविधान पीठ ने टिप्पणी की है कि अनुच्छेद 15(4) के अंतर्गत पिछड़ापन सामाजिक और शैक्षिक होना चाहिए। यह न तो सामाजिक है और न ही शैक्षिक, बल्कि इसे सामाजिक और शैक्षिक दोनों होना चाहिए।

58. न्यायालय ने तब इस प्रश्न पर विचार किया कि क्या जाति को सामाजिक पिछड़ेपन के निर्धारण के लिए एकमात्र आधार बनाया जा सकता है या नहीं। न्यायालय ने कहा कि नागरिकों का वह समूह जिस पर अनुच्छेद 15(4) लागू होता है, उसे नागरिकों की जातियों के रूप में नहीं, बल्कि "नागरिकों के वर्ग" के रूप में वर्णित किया गया है। न्यायालय ने कहा कि इसलिए इस प्रश्न पर विचार करते समय कि क्या नागरिकों का कोई वर्ग सामाजिक रूप से पिछड़ा है या नहीं, नागरिकों के उक्त समूह की जाति पर विचार करना अप्रासंगिक नहीं हो सकता है। यह देखा गया है कि हालांकि नागरिकों के समूह की जाति प्रासंगिक हो सकती है, लेकिन इसके महत्व को बढ़ा-चढ़ाकर नहीं बताया जाना चाहिए। न्यायालय ने आगे कहा कि सामाजिक पिछड़ापन, अंतिम विश्लेषण पर, बहुत हद तक गरीबी का परिणाम है। इसने देखा कि नागरिकों के वे वर्ग जो बेहद गरीब हैं, वे स्वतः ही सामाजिक रूप से पिछड़े हो जाते हैं। इसने देखा कि उन्हें समाज में कोई दर्जा नहीं मिलता और इसलिए उन्हें पिछड़ेपन में ही संतुष्ट रहना पड़ता है। इसलिए न्यायालय ने माना कि नागरिकों के पिछड़ेपन को निर्धारित करने में जाति और गरीबी दोनों ही प्रासंगिक हैं।

59. न्यायालय ने आगे कहा कि नागरिकों के व्यवसाय भी नागरिकों के वर्गों को सामाजिक रूप से पिछड़ा बनाने में योगदान दे सकते हैं। यह देखा गया है कि कुछ ऐसे व्यवसाय हैं जिन्हें पारंपरिक मान्यताओं के अनुसार निम्न माना जाता है और इन व्यवसायों को अपनाने वाले नागरिकों के वर्ग सामाजिक रूप से पिछड़े हो जाते हैं। यह देखा गया है कि निवास स्थान भी व्यक्तियों के समुदाय के पिछड़ेपन को निर्धारित करने में एक भूमिका निभाता है। इसलिए इसने माना कि सामाजिक रूप से पिछड़े वर्ग कौन हैं, यह निर्धारित करने की समस्या बहुत जटिल है। यह माना गया है कि समस्या को हल करने में समाजशास्त्रीय, सामाजिक और आर्थिक विचार महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, और यह निर्धारित करने के लिए उचित मानदंड विकसित करना कि कौन से वर्ग सामाजिक रूप से पिछड़े हैं। हालाँकि, इसने कहा कि यह राज्य का कार्य है जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 15(4) के तहत कार्य करने का दावा करता है।

60. उक्त मामले के तथ्यों में, न्यायालय ने पाया कि राज्य ने अन्य कारकों पर ध्यान दिए बिना जाति के एकमात्र मानदंड को लागू किया था। इसलिए यह माना गया कि जिन समुदायों पर आदेश लागू किया गया था, उनके सामाजिक पिछड़ेपन के मानदंड भारत के संविधान के अनुच्छेद 15(4) के तहत स्वीकार्य नहीं थे।

61. जहां तक नागरिकों के वर्गों के शैक्षिक पिछड़ेपन का सवाल है, राज्य ने यह फार्मूला लागू किया था कि वे सभी जातियां जिनकी राज्य के सभी हाई स्कूल की अंतिम तीन कक्षाओं में औसत छात्र संख्या राज्य औसत 6.9 प्रति हजार से कम थी, उन्हें पिछड़ा समुदाय माना जाना चाहिए। जहां तक अधिक पिछड़े समुदायों का सवाल है, लागू मानदंड यह था कि यदि किसी समुदाय का औसत राज्य औसत के 50% से कम था, तो उसे अधिक पिछड़ा वर्ग माना जाना चाहिए।

62. न्यायालय ने माना कि राज्य द्वारा पिछड़े वर्गों, जातियों या समुदायों को सूची में शामिल करना न्यायोचित नहीं था, जिनकी प्रति हजार छात्र जनसंख्या का औसत राज्य औसत से थोड़ा ऊपर, बहुत निकट या थोड़ा नीचे था।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

B. केरल राज्य बनाम एन.एम. थॉमस

63. सकारात्मक कार्रवाई से संबंधित सबसे महत्वपूर्ण निर्णयों में से एक, जो केरल राज्य और अन्य बनाम एन.एम. थॉमस और अन्य के मामले में इस न्यायालय के 7 न्यायाधीशों की पीठ का निर्णय है। उक्त मामले में, 7 विद्वान न्यायाधीशों में से 5 विद्वान न्यायाधीशों ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की स्थिति में सुधार के लिए सकारात्मक कार्रवाई प्रदान करने के लिए केरल सरकार द्वारा किए गए प्रावधानों को बरकरार रखा।

64. ए.एन. रे, सी.जे. द्वारा की गई निम्नलिखित टिप्पणी का संदर्भ देना समीचीन होगा:

“21. अनुच्छेद 14, 15 और 16 संवैधानिक गारंटीकृत अधिकारों की एक श्रृंखला का हिस्सा हैं। ये अधिकार एक दूसरे के पूरक हैं। अनुच्छेद 16 जो सभी नागरिकों को रोजगार से संबंधित मामलों में अवसर की समानता सुनिश्चित करता है, अनुच्छेद 14 में निहित समानता की गारंटी का एक उदाहरण है। अनुच्छेद 16(1) अनुच्छेद 14 को प्रभावी बनाता है। अनुच्छेद 14 और 16(1) दोनों ही प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्यों से संबंधित उचित वर्गीकरण की अनुमति देते हैं। अनुच्छेद 16 के तहत रोजगार या नियुक्ति से संबंधित मामलों में कर्मचारियों का उचित वर्गीकरण किया जा सकता है।

22. इस न्यायालय ने गुजरात राज्य बनाम श्री अंबिका मिल्स लिमिटेड, अहमदाबाद [(1974) 4 एससीसी 656: 1974 एससीसी (एल एंड एस) 381] में कहा: [एससीसी पृष्ठ 675: एससीसी (एल एंड एस) पृष्ठ 400, पैरा 53]

“कानूनों का समान संरक्षण समान कानूनों के संरक्षण की प्रतिज्ञा है। लेकिन कानून वर्गीकरण कर सकते हैं और वर्गीकरण का मूल विचार ही असमानता का है। इस विरोधाभास से निपटने में न्यायालय ने न तो समानता की मांग को छोड़ा है और न ही वर्गीकरण के विधायी अधिकार को नकारा है। इसने बीच का रास्ता अपनाया है। इसने विधायी विशेषज्ञता और संवैधानिक व्यापकता की विरोधाभासी मांगों को उचित वर्गीकरण के सिद्धांत द्वारा हल किया है। (सन्दर्भ: जोसेफ टुसमैन और जैकोबस्टन ब्रूक, द इक्वल प्रोटेक्शन ऑफ द लॉज, 37 कैलिफोर्निया रेव. 341)”

23. अंबिका मिल्स मामले में [(1974) 4 एससीसी 656: 1974 एससीसी (एल एंड एस) 381] के मामले में इस न्यायालय ने उचित वर्गीकरण को इस प्रकार समझाया कि इसमें वे सभी शामिल हैं जो समान स्थिति में हैं और कोई भी ऐसा नहीं है जो समान स्थिति में नहीं है। इस प्रश्न का उत्तर यह कहकर दिया गया है कि वर्गीकरण से परे जाकर कानून के उद्देश्य पर भी ध्यान देना चाहिए।

“किसी कानून का उद्देश्य या तो सार्वजनिक शरारत का उन्मूलन हो सकता है या कुछ सकारात्मक सार्वजनिक भलाई की प्राप्ति हो सकती है।” [एससीसी पृष्ठ 675: एससीसी (एल एंड एस) पृष्ठ 400, पैरा 54]

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

24. भेदभाव वर्गीकरण का सार है। समानता का उल्लंघन तब होता है जब यह अनुचित आधार पर टिका होता है। समानता की अवधारणा में संवैधानिक गारंटी की प्रकृति से उत्पन्न एक अंतर्निहित सीमा है। जो लोग समान परिस्थितियों में हैं, वे समान व्यवहार के हकदार हैं। समानता समान लोगों के बीच होती है। इसलिए वर्गीकरण को पर्याप्त अंतरों पर आधारित होना चाहिए जो एक साथ समूहीकृत व्यक्तियों को समूहों से बाहर रखे गए लोगों से अलग करते हैं और ऐसे विभेदक गुणों को प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य से एक न्यायसंगत और तर्कसंगत संबंध रखना चाहिए।

x

x

x

27. अवसर की समानता से इनकार नहीं किया जा सकता जब तक कि भेदभाव की शिकायत करने वाला व्यक्ति उस व्यक्ति या व्यक्तियों के समान स्थिति में न हो, जिनके साथ पक्षपात करने का आरोप लगाया गया है। अनुच्छेद 16(1) कर्मचारियों के उचित वर्गीकरण या उनके चयन के लिए उचित परीक्षणों पर रोक नहीं लगाता (मैसूर राज्य बनाम वी.पी. नरसिंह राव [एआईआर 1968 एससी 349: (1968) 1 एससीआर 407: (1968) 2 एलएलजे 120])।

28. अवसर की इस समानता को पूर्ण समानता के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए। अनुच्छेद 16(1) किसी भी रोजगार के लिए चयन या किसी भी कार्यालय में नियुक्ति के लिए उचित नियमों के निर्धारण पर रोक नहीं लगाता है। रोजगार के संबंध में, इससे संबंधित और प्रासंगिक अन्य नियमों और शर्तों की तरह, चयन पद पर पदोन्नति भी रोजगार से संबंधित मामलों में शामिल है और यहां तक कि चयन पद पर ऐसी पदोन्नति के संबंध में अनुच्छेद 16(1) सभी नागरिकों को अवसर की समानता की गारंटी देता है। अनुच्छेद 16(1) और (2) अनुच्छेद 14 द्वारा गारंटीकृत कानून के समक्ष समानता और अनुच्छेद 15(1) द्वारा गारंटीकृत भेदभाव के निषेध को प्रभावी करते हैं। चयन पद पर पदोन्नति अनुच्छेद 16(1) और (2) के अंतर्गत आती है।

29. अनुच्छेद 16(4) के तहत राज्य को प्रदत्त आरक्षण करने की शक्ति का प्रयोग राज्य द्वारा उचित मामले में न केवल नियुक्तियों में आरक्षण प्रदान करके बल्कि चयन पदों में आरक्षण प्रदान करके भी किया जा सकता है। अनुच्छेद 16(4) के तहत नियुक्तियों या पदों में आरक्षण प्रदान करते समय राज्य को प्रशासन की दक्षता बनाए रखने के साथ-साथ पिछड़े वर्गों के दावों पर भी विचार करना होगा। यह नहीं भूलना चाहिए कि प्रशासन की दक्षता इतनी महत्वपूर्ण है कि प्रशासन की दक्षता की कीमत पर कोई भी आरक्षण करना नासमझी और अनुचित होगा। (महाप्रबंधक, एस. रेलवे बनाम रंगाचारी [एआईआर 1962 एससी 36: (1962) 2 एससीआर 586])। वर्तमान मामला पदोन्नति द्वारा पदों के आरक्षण का नहीं है।

30. अनुच्छेद 16(1) के अन्तर्गत रोजगार के अवसर की समानता का अर्थ है कर्मचारियों के एक ही वर्ग के सदस्यों के बीच समानता, न कि अलग, स्वतंत्र वर्ग के सदस्यों के बीच समानता। रोडसाइड स्टेशन मास्टर और गार्ड अलग-अलग भर्ती किए जाते हैं,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अलग-अलग प्रशिक्षित होते हैं और पदोन्नति के अलग-अलग रास्ते होते हैं। स्टेशन मास्टर ने गार्ड के मुकाबले पदोन्नति के अवसर की समानता का दावा इस आधार पर किया कि वे अवसर की समानता के हकदार हैं। यह कहा गया कि समानता की अवधारणा का अस्तित्व तब तक नहीं हो सकता जब तक कि उन मामलों के संदर्भ में न हो जो व्यक्तियों के बीच समान हों, जिनके बीच समानता की बात की जाती है। रोडसाइड स्टेशन मास्टर और गार्ड की भर्ती अलग-अलग की जाती थी। इसलिए, दोनों अलग-अलग वर्ग बनाते हैं और पदोन्नति के मामलों में अवसर की समानता या असमानता की बात करने की कोई गुंजाइश नहीं है। (सन्दर्भ: ऑल इंडिया स्टेशन मास्टर्स एंड असिस्टेंट स्टेशन मास्टर्स एसोसिएशन बनाम जनरल मैनेजर, सेंट्रल रेलवे [एआईआर 1960 एससी 384: (1960) 2 एससीआर 311]।) वर्तमान मामला इन व्यक्तियों के लिए पदोन्नति के अलग-अलग रास्ते बनाने के लिए नहीं है।”

65. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि मुख्य न्यायाधीश राय के अनुसार, अनुच्छेद 14, 15 और 16 संवैधानिक अधिकारों की एक श्रृंखला का हिस्सा हैं, जो एक दूसरे के पूरक हैं। उनके माननीय न्यायाधीश ने कहा कि अनुच्छेद 16, जो रोजगार से संबंधित मामलों में सभी नागरिकों को अवसर की समानता सुनिश्चित करता है, अनुच्छेद 14 में निहित समानता की गारंटी की एक घटना है। उसके परिणामस्वरूप में, अनुच्छेद 16 (1) अनुच्छेद 14 को प्रभावी करता है। अनुच्छेद 14 और 16 (1) दोनों ही प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्यों के साथ संबंध रखने वाले उचित वर्गीकरण की अनुमति देते हैं।

66. **गुजरात राज्य बनाम श्री अंबिका मिल्स लिमिटेड, अहमदाबाद** के मामले में इस न्यायालय के फैसले का हवाला देते हुए, उनके माननीय न्यायाधीश ने उचित वर्गीकरण को इस प्रकार समझाया कि इसमें वे सभी शामिल हैं जो समान स्थिति में हैं और कोई भी ऐसा नहीं है जो समान स्थिति में नहीं है। उन्होंने आगे कहा कि भेदभाव वर्गीकरण का सार है, और समानता का उल्लंघन होता है यदि यह अनुचित आधार पर आधारित है। उन्होंने कहा कि जो लोग समान परिस्थितियों में हैं वे समान व्यवहार के हकदार हैं और समानता समान लोगों के बीच है। उन्होंने कहा कि वर्गीकरण, इसलिए, पर्याप्त अंतरों पर आधारित होना चाहिए जो समूहों से बाहर रखे गए लोगों से एक साथ समूहीकृत व्यक्तियों को अलग करते हैं। उन्होंने आगे कहा कि इस तरह के विभेदक गुणों को प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य के साथ एक न्यायसंगत और तर्कसंगत संबंध रखना चाहिए। उन्होंने आगे कहा कि अवसर की समानता से इनकार नहीं किया जा सकता है जब तक कि भेदभाव की शिकायत करने वाला व्यक्ति उस व्यक्ति या व्यक्तियों के साथ समान रूप से स्थित न हो, जिनके बारे में आरोप लगाया गया है कि उन्हें पक्षपात किया गया है। उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 16(1) कर्मचारियों के उचित वर्गीकरण या उनके चयन के लिए उचित परीक्षणों पर रोक नहीं लगाता है। उन्होंने कहा कि अवसर की इस समानता को पूर्ण समानता के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए। यह देखा गया है कि अनुच्छेद 16(4) के तहत राज्य को आरक्षण देने की शक्ति का प्रयोग राज्य द्वारा उचित मामले में न केवल नियुक्तियों में आरक्षण प्रदान करके बल्कि चयन पदों में आरक्षण प्रदान करके भी किया जा सकता है। माननीय न्यायाधीश ने कहा कि अनुच्छेद 16(4) के तहत नियुक्तियों या पदों में आरक्षण प्रदान करने में राज्य को प्रशासन की दक्षता बनाए रखने के साथ-साथ पिछड़े वर्गों के दावों को भी ध्यान में रखना होगा।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

67. माननीय न्यायाधीश ने आगे कहा:

"38. समानता का सिद्धांत सभी चरणों में और सभी मामलों में रोजगार पर लागू होता है, अर्थात् प्रारंभिक भर्ती, पदोन्नति, सेवानिवृत्ति, पेंशन और ग्रेच्युटी का भुगतान। पदोन्नति के संबंध में सामान्य सिद्धांत या तो योग्यता-सह-वरिष्ठता या वरिष्ठता-सह-योग्यता हैं। वरिष्ठता-सह-योग्यता का अर्थ है कि प्रशासन की दक्षता के लिए आवश्यक न्यूनतम योग्यता को देखते हुए, वरिष्ठ को हालांकि कम योग्यता वाले को प्राथमिकता दी जाएगी। यह अनुच्छेद 14, 16 (1) और 16 (2) का उल्लंघन नहीं करेगा। एक नियम जो यह प्रावधान करता है कि आवश्यक अपेक्षित योग्यता को देखते हुए, पिछड़े वर्ग के सदस्य को पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए प्राथमिकता मिलेगी, इसी तरह अनुच्छेद 14 या अनुच्छेद 16 (1) और (2) का उल्लंघन नहीं करेगा। वैधता की प्रासंगिक कसौटी यह पता लगाना है कि क्या वरीयता का नियम गैर-प्रतिनिधित्व वाले पिछड़े समुदाय के लिए पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करता है या इससे परे जाता है।

68. यह देखा गया है कि नियम जो यह प्रावधान करता है कि आवश्यक अपेक्षित योग्यता को देखते हुए, पिछड़े वर्ग के सदस्य को पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए प्राथमिकता दी जाएगी और उक्त नियम अनुच्छेद 14 या अनुच्छेद 16(1) और (2) का उल्लंघन नहीं करेगा। प्रासंगिक विचार यह पता लगाना होगा कि क्या वरीयता का नियम गैर-प्रतिनिधित्व वाले पिछड़े समुदाय के लिए पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करता है या इससे परे जाता है।

69. माननीय न्यायाधीश ने आगे कहा:

"43. अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियाँ जाति के सामान्य अर्थ में जाति नहीं हैं। भैयालाल बनाम हरिकिशन सिंह [एआईआर 1965 एससी 1557: (1965) 2 एससीआर 877] में इस न्यायालय ने माना कि यह जाँच कि क्या अपीलकर्ता दोहर जाति से संबंधित है जिसे अनुसूचित जाति के रूप में मान्यता नहीं दी गई थी और उसका यह घोषणा कि वह चमार जाति से संबंधित है जो अनुसूचित जाति थी, अनुच्छेद 341 में निहित प्रावधानों के कारण नहीं दी जा सकती। कोई भी न्यायालय इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता कि कोई जाति या कोई जनजाति अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति है। अनुसूचित जाति अनुच्छेद 366(25) के तहत अधिसूचित जाति है। विस्तृत जाँच के परिणामस्वरूप अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचना जारी की जाती है। अनुच्छेद 341 का उद्देश्य अनुसूचित जातियों के सदस्यों को उनके आर्थिक और शैक्षिक पिछड़ेपन को ध्यान में रखते हुए संरक्षण प्रदान करना है।

44. हमारा संविधान सभी नागरिकों के लिए समान दर्जा और अवसर प्रदान करने का लक्ष्य रखता है, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े लोग भी शामिल हैं। पिछड़े वर्गों के सदस्यों के दावों के लिए विधायी और कार्यकारी निकायों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व की आवश्यकता होती है। यदि अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्य, जिन्हें इस न्यायालय ने पिछड़ा वर्ग कहा है, प्रशासनिक दक्षता की न्यूनतम आवश्यकता को

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

बनाए रख सकते हैं, तो समानता लागू करने और असमानता को खत्म करने के लिए न केवल प्रतिनिधित्व बल्कि उन्हें वरीयता भी दी जा सकती है। अनुच्छेद 15(4) और 16(4) समानता के योग्य पिछड़े वर्गों की स्थिति को सामने लाते हैं। पिछड़े वर्गों की उन्नति और उनके लिए पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए नियुक्तियों और पदों के आरक्षण के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं। ये प्रावधान अनुच्छेद 14, 15(1) और 16(1) द्वारा गारंटीकृत समानता की सामग्री को सामने लाएंगे। समानता की मूल अवधारणा नियुक्ति के लिए अवसर की समानता है। प्रशासनिक दक्षता के साथ पिछड़े वर्गों के सदस्यों के लिए अधिमान्य व्यवहार का अर्थ सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता हो सकता है। अनुच्छेद 16 के तहत समानता अनुच्छेद 14 के तहत समानता से अलग सामग्री नहीं हो सकती है। असमानों के लिए अवसर की समानता का मतलब केवल असमानता को बढ़ाना हो सकता है। अवसर की समानता कारण के साथ भेदभाव को स्वीकार करती है और बिना कारण के भेदभाव को प्रतिबंधित करती है। कारणों के साथ भेदभाव का अर्थ है संवैधानिक रूप से स्वीकार्य उद्देश्य से संबंधित विभेदक व्यवहार के लिए तर्कसंगत वर्गीकरण। प्रशासनिक दक्षता के साथ सेवाओं में पिछड़े वर्गों के लिए अधिमान्य प्रतिनिधित्व अनुमेय उद्देश्य है और पिछड़े वर्ग हमारे संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त एक तर्कसंगत वर्गीकरण हैं। इसलिए, चयन के मानकों में विभेदक व्यवहार समानता की अवधारणा के भीतर हैं।

70. उनके माननीय न्यायाधीश ने स्पष्ट रूप से कहा कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियाँ जाति के सामान्य अर्थ में जाति नहीं हैं। उन्होंने कहा कि कोई भी न्यायालय इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता कि कोई जाति या जनजाति अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति है। यह देखा गया है कि अनुच्छेद 341 का उद्देश्य अनुसूचित जातियों के सदस्यों को उनके आर्थिक और शैक्षिक पिछड़ेपन को ध्यान में रखते हुए सुरक्षा प्रदान करना है, जिससे वे पीड़ित हैं।

71. उनके माननीय न्यायाधीश (न्यायमूर्ति राय) ने आगे कहा कि हमारे संविधान का उद्देश्य सभी नागरिकों के लिए स्थिति और अवसर की समानता है, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े लोग भी शामिल हैं। यह माना गया है कि यदि अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्य, जिन्हें इस न्यायालय द्वारा पिछड़ा वर्ग कहा गया है, प्रशासनिक दक्षता की न्यूनतम आवश्यक आवश्यकता को बनाए रख सकते हैं, तो न केवल प्रतिनिधित्व बल्कि समानता लागू करने और असमानता को खत्म करने के लिए उन्हें वरीयता भी दी जा सकती है। यह देखा गया है कि पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं तथा उन्हें पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्रदान करने के लिए नियुक्तियों और पदों में आरक्षण दिया गया है। इस बात पर बल दिया गया है कि केवल ऐसे विशेष प्रावधानों से अनुच्छेद 14, 15(1) और 16(1) द्वारा गारंटीकृत समानता की सामग्री सामने आएगी। माननीय न्यायाधीश ने आगे कहा कि प्रशासनिक दक्षता के साथ पिछड़े वर्गों के सदस्यों के लिए अधिमान्य व्यवहार का अर्थ सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता हो सकता है। यह देखा गया है कि असमानों के लिए अवसर की समानता का अर्थ केवल असमानता को बढ़ाना हो सकता है तथा अवसर की समानता कारण सहित भेदभाव को स्वीकार करती है तथा कारण के बिना भेदभाव को निषिद्ध करती है। माननीय न्यायाधीश ने माना कि कारणों सहित भेदभाव का अर्थ संवैधानिक रूप से स्वीकार्य उद्देश्य से संबंधित विभेदक व्यवहार के लिए

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

तर्कसंगत वर्गीकरण है। यह माना गया है कि प्रशासनिक दक्षता के साथ सेवाओं में पिछड़े वर्गों के लिए अधिमान्य प्रतिनिधित्व स्वीकार्य उद्देश्य है तथा पिछड़े वर्ग संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त तकसंगत वर्गीकरण हैं। यह माना गया है कि चयन के मानकों में विभेदकारी व्यवहार समानता की अवधारणा के अंतर्गत आता है।

72. अब मैं न्यायमूर्ति के.के. मैथ्यू की निम्नलिखित टिप्पणियों का उल्लेख करता हूँ:

“53. औपचारिक समानता सभी व्यक्तियों के साथ समान व्यवहार करके प्राप्त की जाती है:

“प्रत्येक व्यक्ति को एक के रूप में गिना जाना चाहिए और किसी को भी एक से अधिक के रूप में नहीं गिना जाना चाहिए।” लेकिन सभी मामलों में मनुष्य समान नहीं हैं। समानता का दावा वास्तव में अन्यायपूर्ण, अवांछनीय और अनुचित असमानताओं के खिलाफ एक विरोध है। यह संयोग, आकस्मिक असमानता, अन्यायपूर्ण शक्ति और क्रिस्टलीकृत विशेषाधिकारों के खिलाफ मनुष्य के विद्रोह का प्रतीक है। हालाँकि समानता प्रदान करने का निर्णय प्रथम दृष्टया इस कथित कारण से प्रेरित है कि सभी मनुष्य समान हैं, फिर भी, जैसे ही हम नैतिक अर्थों में समानता और शारीरिक अर्थों में समानता के बीच भ्रम को दूर करते हैं, हमें पता चलता है कि विपरीत सत्य है; क्योंकि, हम सोचते हैं कि कुछ समानताओं को बढ़ावा देना उचित है, ठीक उसी तरह जैसे कि इस तथ्य की भरपाई करना कि मनुष्य वास्तव में अलग-अलग पैदा होते हैं। इसलिए, हमें न्याय प्राप्त करने के लिए कई क्षेत्रों में किसी न किसी प्रकार की आनुपातिक समानता का सहारा लेना पड़ता है।

54. आनुपातिक समानता का सिद्धांत तभी प्राप्त होता है जब समानों के साथ समान व्यवहार किया जाता है और असमानों के साथ असमान व्यवहार किया जाता है। इससे यह उलझन भरा सवाल उठता है: किस मामले में समान और असमान? इसलिए आनुपातिक समानता के सिद्धांत में कुछ ऐसे मानदंडों की अपील शामिल है जिनके आधार पर विभेदकारी व्यवहार उचित है। यदि कोई महत्वपूर्ण सम्मान नहीं है जिसके आधार पर संबंधित व्यक्तियों को अलग किया जा सके, तो विभेदकारी व्यवहार अनुचित होगा। लेकिन ऐसा कौन सा महत्वपूर्ण अंतर माना जाना चाहिए जो विभेदकारी व्यवहार को उचित ठहराए?

55. राज्य के पद के वितरण में, किसी भी प्रकार की व्यक्तिगत समानता प्रासंगिक नहीं है; क्योंकि, जब तक हम संबंधित क्षेत्र के लिए उपयुक्त मानदंड नहीं अपनाते, तब तक यह पता चलेगा कि किसी व्यक्ति की ऊंचाई या रंग-रूप किसी पद के लिए उसकी पात्रता या उपयुक्तता निर्धारित कर सकता है। जैसा कि अरस्तू ने कहा था, राजनीतिक पद के लिए दावा एथलेटिक प्रतियोगिताओं में कौशल के आधार पर नहीं किया जा सकता। पद के लिए उम्मीदवारों में वे गुण होने चाहिए जो पद के प्रभावी उपयोग के लिए आवश्यक हों। लेकिन यह सिद्धांत इस प्रश्न का कोई संतोषजनक उत्तर नहीं देता कि कब विभेदक व्यवहार किया जा सकता है। जैसा कि मैंने कहा, यह सिद्धांत कि यदि दो व्यक्तियों के साथ अलग-अलग व्यवहार किया जा रहा है या किया जाना है तो उनके बीच कुछ सुसंगत अंतर होना चाहिए, निस्संदेह, अपवाद नहीं है। अन्यथा, कुछ विभेदक विशेषता के अभाव में जो हंस के लिए सॉस है वह हंस के लिए सॉस है। वास्तविक कठिनाई यह पता लगाने में आती है कि सुसंगत अंतर क्या है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

56. यदि हम सभी के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाना है, तो इसके साथ यह महत्वपूर्ण आवश्यकता भी होनी चाहिए कि हममें से कोई भी किसी अन्य की तुलना में पालन-पोषण, शिक्षा में बेहतर या बदतर नहीं होना चाहिए, जो कि मनुष्यों के लिए एक अप्राप्य आदर्श है जैसा कि हम अब देखते हैं। कुछ लोग मानते हैं कि अवसर की समानता की अवधारणा एक असंतोषजनक अवधारणा है। क्योंकि, इसका पूर्ण निरूपण इसे मानव समाज के किसी भी रूप के साथ असंगत बना देता है। उदाहरण के लिए, शिक्षा के लिए अवसर की समानता का मामला लें। यह समानता स्कूलों में शुरू नहीं हो सकती है और इसलिए परिवारों में एक समान व्यवहार की आवश्यकता होती है जो स्पष्ट रूप से असंभव है। इसका समाधान करने के लिए, सभी बच्चों को राज्य की नर्सरी में पाला जा सकता है, लेकिन, उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए, नर्सरी को सख्ती से एक समान तरीके से चलाना होगा। क्या हम उन परिस्थितियों में भी युवाओं को अवसर की समानता की गारंटी दे सकते हैं? इस विचार को लास्की ने अच्छी तरह से व्यक्त किया है:

“समानता का अर्थ है, दूसरे स्थान पर, सभी के लिए पर्याप्त अवसर उपलब्ध होना। पर्याप्त अवसरों से हमारा तात्पर्य समान अवसरों से नहीं है, जिसका अर्थ है मूल अवसर की पहचान। पुरुषों की मूल प्रतिभा किसी भी तरह से समान नहीं है। जिन बच्चों का लालन-पालन ऐसे माहौल में होता है जहाँ मन की बातों को बहुत महत्व दिया जाता है, वे जीवन की दौड़ में ऐसे लाभ प्राप्त करने के लिए बाध्य होते हैं जो कोई कानून सुनिश्चित नहीं कर सकता। माता-पिता का चरित्र अनिवार्य रूप से उन बच्चों की समानता को गहराई से प्रभावित करेगा जिन्हें वह छूता है। इसलिए, जब तक परिवार इन पर निर्भर रहता है – और इसके गायब होने की आशंका या इच्छा करने का कोई कारण नहीं लगता – तब तक इसके द्वारा बनाए जाने वाले विभिन्न वातावरण समान अवसरों की धारणा को शानदार बनाते हैं। [विशेष समस्याओं और सार्वजनिक नीति में "स्वतंत्रता और समानता": असमानता और न्याय, संपादक ली रेनवाटर, पृष्ठ 26 से 31]

57. यद्यपि विश्व में अवसर की समानता की पूर्ण पहचान असंभव है, लेकिन ऐसे उपाय जो प्रतिपूरक प्रकृति के हों और जो अवसर की समानता सुनिश्चित करने के लिए पार करने योग्य बाधाओं को कम करने के लिए परिकल्पित किए गए हों, वे अनुच्छेद 16(1) के कोप को कभी नहीं ला सकते।”

73. न्यायमूर्ति मैथ्यू ने अवधारित किया कि औपचारिक समानता सभी व्यक्तियों के साथ समान व्यवहार करके प्राप्त की जाती है। औपचारिक रूप से, इसके लिए आवश्यक है कि सभी मनुष्यों के साथ समान व्यवहार किया जाए। उन्होंने देखा कि मनुष्य सभी मामलों में समान नहीं हैं। समानता का दावा वास्तव में अन्यायपूर्ण, अवांछनीय और अनुचित असमानताओं के विरुद्ध विरोध है। यह संयोग, आकस्मिक असमानता, अन्यायपूर्ण शक्ति और क्रिस्टलीकृत विशेषाधिकारों के विरुद्ध मनुष्य के विद्रोह का प्रतीक है। उन्होंने देखा कि जैसे ही हम नैतिक अर्थों में समानता और शारीरिक अर्थों में समानता के बीच भ्रम को दूर करते हैं, यह उचित है कि कुछ समानताओं को बढ़ावा दिया जाए ताकि इस तथ्य की भरपाई की जा सके कि मनुष्य वास्तव में अलग-अलग

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पैदा होते हैं। उन्होंने आनुपातिक समानता के सिद्धांत की व्याख्या की और कहा कि आनुपातिक समानता का सिद्धांत तभी प्राप्त किया जा सकता है जब समानों के साथ समान व्यवहार किया जाए और असमानों के साथ असमान व्यवहार किया जाए। उन्होंने कहा कि यदि कोई महत्वपूर्ण सम्मान नहीं है जिसके तहत संबंधित व्यक्तियों को अलग किया जा सके, तो विभेदकारी व्यवहार अनुचित होगा। लेकिन यदि कोई महत्वपूर्ण सम्मान है जिसके तहत संबंधित व्यक्तियों को अलग किया जा सके, तो वही विभेदकारी व्यवहार को उचित ठहराएगा। उनके आधिपत्य ने कहा कि यदि दो लोगों के साथ अलग-अलग व्यवहार किया जा रहा है या किया जाना है, तो उनके बीच कुछ प्रासंगिक अंतर होना चाहिए। अन्यथा, कुछ विभेदकारी विशेषता के अभाव में जो हंस के लिए सॉस है, वह हंस के लिए सॉस है। उन्होंने कहा कि वास्तविक कठिनाई यह पता लगाने में उत्पन्न होती है कि प्रासंगिक अंतर क्या है।

74. माननीय न्यायमूर्ति ने कहा कि यदि हम सभी के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाए, तो इसके साथ यह आवश्यकता भी होगी कि हममें से कोई भी पालन-पोषण और शिक्षा में किसी दूसरे से बेहतर या बदतर नहीं होना चाहिए। उन्होंने कहा कि शिक्षा के लिए अवसर की समानता स्कूलों में शुरू नहीं हो सकती और इसलिए परिवारों में एक समान व्यवहार की आवश्यकता है जो स्पष्ट रूप से असंभव है। उनके माननीय न्यायाधीश ने लास्की का उल्लेख किया, जिन्होंने कहा कि माता-पिता का चरित्र अनिवार्य रूप से उन बच्चों की समानता को प्रभावित करेगा, जिन पर इसका प्रभाव पड़ता है। उसके बाद उनके माननीय न्यायाधीश ने कहा कि यद्यपि दुनिया में अवसर की समानता की पूर्ण पहचान असंभव है, लेकिन अवसर की समानता सुनिश्चित करने के लिए पार करने योग्य बाधाओं को कम करने के लिए चरित्र में प्रतिपूरक उपाय अनुच्छेद 16 (1) का उल्लंघन नहीं करेंगे।

75. **एन.एम. थॉमस** (उपरोक्त) के मामले में न्यायमूर्ति मैथ्यू की निम्नलिखित टिप्पणियों का उल्लेख करना भी उचित होगा:

“64. इसका अर्थ यह होगा कि यदि हम अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को रोजगार के लिए समान अवसर देना चाहते हैं, तो हमें उनके सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक वातावरण पर ध्यान देना होगा। अनुच्छेद 46 में निहित निर्देशक सिद्धांत न केवल विधि-निर्माता पर बाध्यकारी है, जैसा कि आमतौर पर समझा जाता है, बल्कि इसे न्यायालय के दृष्टिकोण को भी सूचित और प्रकाशित करना चाहिए, जब वह कोई निर्णय लेता है, क्योंकि न्यायालय अनुच्छेद 12 के अर्थ में ‘राज्य’ भी है और कानून बनाता है, भले ही वह “दाढ़ से लेकर अणु तक” हो। मैंने अपने निर्णय में अनुच्छेद 12 के तहत न्यायालय के “राज्य” होने का कारण विस्तार से बताया है, जिसमें परम पावन *केशवानंद भारती श्रीपदगलवरु बनाम केरल राज्य* [(1973) 4 एससीसी 225: 1973 सप एससीआर 1] शामिल है।

65. अवसर की समानता केवल कानूनी समानता का मामला नहीं है। इसका अस्तित्व केवल अक्षमताओं की अनुपस्थिति पर ही नहीं, बल्कि क्षमताओं की उपस्थिति पर निर्भर करता है। यह तभी संभव है, जब समुदाय का प्रत्येक सदस्य, चाहे उसका जन्म, व्यवसाय या सामाजिक स्थिति कुछ भी हो, वास्तव में, न कि केवल रूप में, अपने प्राकृतिक गुणों जैसे शारीरिक, चरित्र और बुद्धि का पूरा उपयोग करने के समान अवसर रखता हो। [सन्दर्भ: आर.एच. टावनी, "समानता", (1965) पृष्ठ 103-04]

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

66. कानून के समक्ष समानता या रोजगार के मामलों में समान अवसर की गारंटी औपचारिक समानता द्वारा अपेक्षित से कहीं अधिक की गारंटी है। इसका तात्पर्य असमान व्यक्तियों के साथ अलग-अलग व्यवहार से है। इसलिए समतावादी सिद्धांत ने इस बढ़ती हुई मान्यता को बढ़ावा दिया है कि सरकार का यह सकारात्मक कर्तव्य है कि वह असमानताओं को खत्म करे और मानवाधिकारों और दावों के प्रयोग के लिए अवसर प्रदान करे। संविधान के भाग III में अधिनियमित मौलिक अधिकार, मोटे तौर पर, अनिवार्य रूप से नकारात्मक चरित्र के हैं। वे एक ऐसी दुनिया को चिह्नित करते हैं जिसमें सरकार का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं होना चाहिए। इस क्षेत्र में, यह माना जाता था कि एक नागरिक का सरकार पर कोई दावा नहीं है सिवाय इसके कि उसे अकेला छोड़ दिया जाए। लेकिन अनुच्छेद 16(1) की भाषा अनुच्छेद 14 से बिल्कुल अलग है। जबकि अनुच्छेद 14 में जोर इस आदेश पर है कि राज्य किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता या कानूनों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा, यानी राज्य के कर्तव्य की नकारात्मक प्रकृति पर, अनुच्छेद 16(1) में जोर अनिवार्य पहलू पर है, यानी राज्य के अधीन किसी भी कार्यालय में रोजगार या नियुक्ति से संबंधित मामलों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता होगी, जिसका तात्पर्य यह है कि सरकार द्वारा सकारात्मक कार्रवाई अनुच्छेद के अनुरूप होगी यदि इसे प्राप्त करने की गणना की जाती है। अगर हमें समानता हासिल करनी है, तो हम कभी भी आराम नहीं कर सकते:

"जबकि असमानता आसान है क्योंकि यह धारा के साथ बहने से ज्यादा कुछ नहीं मांगती है, समानता कठिन है क्योंकि इसमें इसके खिलाफ तैरना शामिल है 47] "

67. आज, राजनीतिक सिद्धांत जो संविधान के भाग IV के तहत नौकरियों, चिकित्सा देखभाल, वृद्धावस्था पेंशन आदि प्रदान करने के लिए सरकार के दायित्व को स्वीकार करता है, मानवाधिकारों तक विस्तारित होता है और समानता और स्वतंत्रता को बढ़ावा देने के लिए एक सकारात्मक दायित्व लागू करता है। अपने सदस्यों के कमजोर वर्गों की मदद करने के दायित्व वाले राज्य के विचार की ताकत संवैधानिक कानून में बढ़ती हुई प्रतीत होती है। यह विचार अमेरिका में सामाजिक भेदभाव से जुड़े कई मामलों में अभिव्यक्ति पाता है और राज्य को अधिवक्ता, अपील की प्रतिलिपि, विशेषज्ञ गवाह आदि प्रदान करके गरीबी के प्रभावों को ऑफसेट करने की आवश्यकता वाले निर्णयों में भी। आज, यह भावना कि सरकार के पास सामाजिक, आर्थिक या अन्यथा असमानताओं को खत्म करने की सकारात्मक जिम्मेदारी है, संवैधानिक कानून में प्रमुख शक्तियों में से एक है। जबकि वंचितों के लिए विशेष रियायतें आसानी से दी गई हैं, उन्हें पारंपरिक रूप से आवश्यक नहीं माना गया है। अमेरिका में आपराधिक प्रक्रिया, मतदान के अधिकार और शिक्षा के क्षेत्रों में निर्णय बताते हैं कि पारंपरिक दृष्टिकोण पूरी तरह से पर्याप्त नहीं हो सकता है। इन क्षेत्रों में, यह जांच कि क्या समानता हासिल की गई है, अब संख्यात्मक समानता के साथ समाप्त नहीं होती है; बल्कि समानता खंड को आनुपातिक समानता के मानक का सहारा लेने की आवश्यकता माना गया है, जिसके लिए राज्य को कानून

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

बनाते समय धन, शिक्षा और अन्य परिस्थितियों की निजी असमानताओं को ध्यान में रखना आवश्यक है। [सन्दर्भ: “विकास – समान संरक्षण”, 82 हार्व एलआर 1165]

68. जो लोग अपनी संपत्ति, शिक्षा या सामाजिक परिवेश में वास्तव में असमान हैं, उन्हें निर्दिष्ट क्षेत्रों में समान बनाने के लिए प्रतिपूरक राज्य कार्रवाई का विचार संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विकसित किया गया था। रूसो ने कहा है:

“यह ठीक इसलिए है क्योंकि परिस्थितियों का बल समानता को नष्ट करने की ओर जाता है, इसलिए कानून का बल हमेशा इसे बनाए रखने की ओर जाता है। [अनुबंध सामाजिक ii, 11]”

76. माननीय न्यायाधीश ने कहा कि यदि हम अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को रोजगार के लिए समान अवसर देना चाहते हैं, तो हमें उनके सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक परिवेश पर ध्यान देना होगा। माननीय न्यायाधीश ने कहा कि अनुच्छेद 46 में निहित नीति निर्देशक सिद्धांत न केवल विधि निर्माता के लिए बाध्यकारी है, बल्कि इसे न्यायालय के निर्णय लेने के समय उसके दृष्टिकोण को भी सूचित और प्रकाशित करना चाहिए। माननीय न्यायाधीश **केशवानंद भारती श्रीपदगलवरु बनाम केरल राज्य** के मामले में दिए गए स्पष्टीकरण का उल्लेख करते हुए माननीय न्यायाधीश ने कहा कि न्यायालय भी एक 'राज्य' है, जब वह अनुच्छेद 12 के अर्थ में निर्णय लेता है।

77. माननीय न्यायाधीश ने कहा कि 'अवसर की समानता' केवल कानूनी समानता का मामला नहीं है और इसका अस्तित्व केवल अक्षमताओं की अनुपस्थिति पर ही नहीं, बल्कि क्षमताओं की उपस्थिति पर भी निर्भर करता है। यह देखा गया है कि समानता की गारंटी 'औपचारिक समानता' द्वारा अपेक्षित से कुछ अधिक है। इसका तात्पर्य उन व्यक्तियों के साथ अलग-अलग व्यवहार से है जो असमान हैं। यह देखा गया है कि समतावादी सिद्धांत के लिए यह आवश्यक है कि सरकार का यह सकारात्मक कर्तव्य हो कि वह असमानताओं को समाप्त करे और मानवाधिकारों के प्रयोग के लिए अवसर प्रदान करे और संविधान के भाग III में अधिनियमित मौलिक अधिकारों का दावा करे, जो कुल मिलाकर अनिवार्य रूप से नकारात्मक चरित्र के हैं। माननीय न्यायाधीश ने कहा कि अनुच्छेद 16(1) में इस अनिवार्य पहलू पर जोर दिया गया है कि राज्य के अधीन किसी भी कार्यालय में रोजगार या नियुक्ति से संबंधित मामलों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता होगी। इसलिए इसका तात्पर्य यह है कि सरकार द्वारा सकारात्मक कार्रवाई अनुच्छेद के अनुरूप होगी यदि इसे प्राप्त करने के लिए गणना की जाती है।

78. संविधान के अनुच्छेद 14 का हवाला देते हुए, महामहिम ने टिप्पणी की कि राज्य का दायित्व है कि वह कमजोर वर्गों के सदस्यों की सहायता करे। महामहिम ने टिप्पणी की कि संवैधानिक कानून के तहत, सरकार पर सामाजिक, आर्थिक या अन्य असमानताओं को समाप्त करने की सकारात्मक जिम्मेदारी है। आनुपातिक समानता की अवधारणा का हवाला देते हुए, महामहिम ने कहा कि राज्य को धन, शिक्षा और अन्य परिस्थितियों की निजी असमानताओं पर विचार करने के लिए कानून बनाने की आवश्यकता है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

79. संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों का हवाला देते हुए, महामहिम ने कहा कि प्रतिपूरक राज्य कार्रवाई का विचार उन लोगों के लिए समानता लाना था जो वास्तव में अपने धन, शिक्षा या सामाजिक वातावरण में असमान हैं।

80. संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के कुछ निर्णयों का उल्लेख करने के पश्चात, न्यायमूर्ति मैथ्यू ने इस प्रकार टिप्पणी की:

73. ऐसा कोई कारण नहीं है कि यह न्यायालय राज्य से समानुपातिक समानता का एक मानक अपनाने की मांग न करे जो नागरिकों के एक वर्ग की भिन्न-भिन्न स्थितियों और परिस्थितियों को ध्यान में रखता हो, जब भी वे स्थितियाँ और परिस्थितियाँ उनके बुनियादी अधिकारों या दावों के आनंद के लिए समान पहुँच के मार्ग में आती हों।

74. रोजगार के मामलों में अवसर की समानता की अवधारणा इतनी व्यापक है कि इसमें अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को अन्य समुदायों के सदस्यों के बराबर रखने के लिए प्रतिपूरक उपाय शामिल हैं जो उन्हें सार्वजनिक सेवा में प्रतिनिधित्व का अपना हिस्सा पाने में सक्षम बनाएंगे। तथाकथित अगड़े समुदायों का कोई भी सदस्य अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को सार्वजनिक सेवाओं में प्रतिनिधित्व का उनका उचित हिस्सा सुनिश्चित करने के लिए सरकार द्वारा किए गए प्रतिपूरक उपाय की शिकायत कैसे कर सकता है?

75. यह कहा जाता है कि अनुच्छेद 16(4) विशेष रूप से पिछड़े वर्गों के पक्ष में पदों के आरक्षण का प्रावधान करता है, जिसमें इस न्यायालय के निर्णय के अनुसार पदोन्नति के स्तर पर भी आरक्षण करने की राज्य की शक्ति शामिल होगी और इसलिए अनुच्छेद 16(1) अपने दायरे में पिछड़े वर्गों को कानून या अन्यथा द्वारा कोई आकस्मिक सहायता देने की शक्ति शामिल नहीं कर सकता है जो सख्त संख्यात्मक समानता से वंचित करेगा। यदि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के लिए रोजगार के मामले में अवसर की समानता सुनिश्चित करने के लिए प्रारंभिक चरण या पदोन्नति के चरण या दोनों में आरक्षण आवश्यक है, तो मुझे कोई कारण नहीं दिखता कि अनुच्छेद 16(1) के तहत इसकी अनुमति क्यों नहीं है क्योंकि केवल यही उन्हें अवसर की समानता से प्राप्त होने वाले परिणाम को प्राप्त करने के मामले में अगड़े समुदायों के बराबर ला सकता है। अवसर की समानता है या नहीं, इसका अंदाजा केवल परिणाम में प्राप्त समानता से लगाया जा सकता है। अवसर की औपचारिक समानता केवल अधिक शिक्षित और बुद्धिमान लोगों को सभी पदों पर कब्जा करने और शिक्षा और प्रतिभा में कम भाग्यशाली लोगों को जीतने में सक्षम बनाती है, भले ही प्रतिस्पर्धा निष्पक्ष हो। परिणाम की समानता अवसर की समानता की कसौटी है।

76. अमेरिका के अग्रणी शहरी विद्वानों में से एक डैनियल पी. मोयनिहान ने एक व्यापक रूप से प्रचारित अध्ययन में समस्या को स्पष्ट किया, जिसे उन्होंने श्रम के सहायक सचिव के रूप में तैयार किया था। मोयनिहान रिपोर्ट, जैसा कि यह ज्ञात हुआ, ने एक ऐसे अंश में बिंदु बनाया जो पूर्ण उद्धरण के योग्य है:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

"यह तेजी से मांग की जा रही है कि एक समूह के भीतर सफलता और विफलता का वितरण अन्य समूहों के भीतर के वितरण के बराबर हो। यह पर्याप्त नहीं है कि सभी व्यक्ति समान शर्तों पर शुरू करें, अगर एक समूह के सदस्य लगभग हमेशा आगे रहते हैं और दूसरे के बहुत पीछे। अमेरिका में जातीय राजनीति इसी बारे में है, और मुख्य रूप से नीग्रो अमेरिकी मांगें इस नए पारंपरिक और स्थापित ढांचे में सामने रखी जा रही हैं।

यहाँ शब्दार्थ के एक बिंदु को समझना होगा। अवसर की समानता की मांग को आम तौर पर श्वेत अमेरिकियों द्वारा स्वतंत्रता की मांग के रूप में माना जाता है, जीवन की प्रतिस्पर्धाओं से बाहर न किए जाने की मांग – मतदान स्थल पर, छात्रवृत्ति परीक्षाओं में, कार्मिक कार्यालय में, आवास बाजार में। स्वतंत्रता, निश्चित रूप से, यह मांग करती है कि हर कोई अपनी किस्मत आजमाने या ऐसे मामलों में अपने कौशल का परीक्षण करने के लिए स्वतंत्र हो। लेकिन ये अवसर जरूरी नहीं कि समानता पैदा करें: इसके विपरीत, इस हद तक कि विजेता हारने वालों का मतलब है, अवसर की समानता लगभग परिणामों की असमानता सुनिश्चित करती है।

शब्दार्थ का मुद्दा यह है कि अवसर की समानता अब नीग्रो के लिए एक अलग अर्थ रखती है जो कि गोरों के लिए नहीं है। यह (या कम से कम अब नहीं) केवल स्वतंत्रता की मांग नहीं है, बल्कि समानता की भी मांग है – समूह परिणामों के संदर्भ में। बेयर्ड रस्टिन के शब्दों में, 'यह अब केवल पूर्ण अवसर की बाधाओं को दूर करने से संबंधित नहीं है, बल्कि समानता के तथ्य को प्राप्त करने से संबंधित है।' समानता से रस्टिन का मतलब है कि नीग्रो के बीच उपलब्धियों का वितरण गोरों के बीच लगभग तुलनीय है। [मोयनिहान रिपोर्ट और विवाद की राजनीति, संपादक ली रेनवाटर और विलियम एल. यान्सी, पृष्ठ 49]"

77. 1954 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्कूल अलगाव की निंदा के साथ सबसे उल्लेखनीय रूप से शुरुआत करते हुए, संयुक्त राज्य अमेरिका ने अंततः अपने आदर्शों और काले आदमी के साथ अपने व्यवहार के बीच विसंगति को ठीक करना शुरू कर दिया है। न्यायालयों के निर्णयों और कांग्रेस के नागरिक अधिकार कानूनों में परिलक्षित पहले कदमों ने नस्लीय भेदभाव के कानूनी और अर्ध-कानूनी रूपों को हटा दिया। ये कार्य वास्तविक समानता या अवसर की समानता का उत्पादन नहीं करते हुए भी तार्किक रूप से अगले कदम को निर्धारित करते हैं: वास्तविक समानता की संभावना बनाने के लिए सरकारी शक्ति का सकारात्मक उपयोग। प्रोफेसर लिपसेट के शब्दों में:

"शायद अमेरिकी नीग्रो की वर्तमान स्थिति के बारे में पहचानने के लिए सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि (कानूनी) समानता बड़े समाज में उसके आंदोलन को सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त नहीं है।" ["अमेरिकी लोकतंत्र", मैकग्राथ, कॉर्नवेल और गुडमैन, पृष्ठ 10. 18]

78. मैं सहमत हूँ कि अनुच्छेद 16(4) को अनुच्छेद 16(1) के अपवाद के रूप में व्याख्यायित किया जा सकता है यदि अनुच्छेद 16(1) में कल्पना की गई अवसर की समानता एक निष्फल अवधारणा है, जो संख्यात्मक समानता की अवधारणा पर आधारित है जो अनुसूचित जातियों

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक पृष्ठभूमि को ध्यान में नहीं रखती है। यदि अनुच्छेद 16(1) के तहत गारंटीकृत अवसर की समानता का अर्थ प्रभावी भौतिक समानता है, तो अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद नहीं है। यह केवल इस बात को स्पष्ट करने का एक जोरदार तरीका है कि अवसर की समानता आरक्षण करने के बिंदु तक किस सीमा तक लागू की जा सकती है।

79. राज्य कोई भी उपाय अपना सकता है जो अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों का सार्वजनिक सेवा में पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करेगा और इसे अवसर की समानता सुनिश्चित करने के लिए प्रतिपूरक उपाय के रूप में उचित ठहराएगा बशर्ते कि यह उपाय प्रशासन की दक्षता के लिए आवश्यक न्यूनतम बुनियादी योग्यता हासिल करने से वंचित न हो।

81. माननीय न्यायाधीश ने कहा कि ऐसा कोई कारण नहीं है कि यह न्यायालय राज्य से आनुपातिक समानता का ऐसा मानक अपनाने की मांग न करे जो नागरिकों के एक वर्ग की भिन्न-भिन्न स्थितियों और परिस्थितियों को ध्यान में रखे। माननीय न्यायाधीश ने कहा कि जब भी भिन्न-भिन्न स्थितियाँ और परिस्थितियाँ नागरिकों के एक वर्ग के मूल अधिकारों या दावों के समान उपयोग में बाधा बनती हैं, तो राज्य को आनुपातिक समानता का मानक अपनाना होगा।

82. उन्होंने कहा कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को सार्वजनिक सेवाओं में उचित प्रतिनिधित्व मिले, यह सुनिश्चित करने के लिए सरकार द्वारा किए गए प्रतिपूरक उपाय के खिलाफ किसी भी अगड़े वर्ग या समुदाय के सदस्य को शिकायत नहीं करनी चाहिए।

83. माननीय न्यायाधीश ने कहा कि यदि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के लिए अवसर की समानता सुनिश्चित करने के लिए प्रारंभिक चरण में या पदोन्नति के चरण में या दोनों में आरक्षण आवश्यक है, तो यह अनुच्छेद 16(1) के तहत अनुमेय होगा क्योंकि केवल यही उन्हें अवसर की समानता से प्राप्त होने वाले परिणाम को प्राप्त करने के मामले में अग्रिम समुदायों के साथ बराबरी पर रखेगा। यह देखा गया है कि अवसर की औपचारिक समानता केवल अधिक शिक्षित और बुद्धिमान लोगों को सभी पदों पर कब्जा करने और शिक्षा और प्रतिभा में कम भाग्यशाली लोगों को जीतने में सक्षम बनाती है, भले ही प्रतिस्पर्धा निष्पक्ष हो। उन्होंने कहा कि परिणाम की समानता अवसर की समानता की कसौटी है।

84. न्यायमूर्ति मैथ्यू ने इस तर्क को खारिज करते हैं कि अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद है। उन्होंने कहा कि इस तरह की व्याख्या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक पृष्ठभूमि पर विचार नहीं करती है। उन्होंने कहा कि यदि अनुच्छेद 16(1) के तहत गारंटीकृत अवसर की समानता का अर्थ प्रभावी भौतिक समानता है, तो अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद नहीं है और यह केवल इस बात को स्पष्ट करने का एक सशक्त तरीका है कि अवसर की समानता आरक्षण देने के बिंदु तक किस सीमा तक लागू की जा सकती है।

85. माननीय न्यायमूर्ति ने कहा कि राज्य कोई भी उपाय अपना सकता है जो अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के सार्वजनिक सेवा में पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करेगा और इसे अवसर की समानता

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

सुनिश्चित करने के लिए प्रतिपूरक उपाय के रूप में उचित ठहराएगा बशर्ते कि यह उपाय प्रशासन की दक्षता के लिए आवश्यक न्यूनतम बुनियादी योग्यता के अधिग्रहण को समाप्त न करे।

86. न्यायमूर्ति मैथ्यू ने आगे इस प्रकार टिप्पणी की:

“83. वर्गीकरण उचित है यदि इसमें वे सभी व्यक्ति शामिल हैं जो कानून के उद्देश्य के संबंध में समान रूप से स्थित हैं। दूसरे शब्दों में, वर्गीकरण किसी उचित आधार पर स्थापित होना चाहिए जो एक साथ समूहीकृत व्यक्तियों में अंतर करता है और अंतर का आधार उस उद्देश्य से तर्कसंगत संबंध होना चाहिए जिसे नियम या यहां तक कि संबंधित नियमों द्वारा प्राप्त किया जाना है। यह मान लेना एक गलती है कि किसी वर्ग के भीतर कोई वर्गीकरण नहीं हो सकता है, जैसे कि निम्न श्रेणी के क्लर्क। यदि ऐसे स्पष्ट अंतर हैं जो उस वर्ग के भीतर एक समूह को बाकी से अलग करते हैं और उन अंतरों का वर्गीकरण के उद्देश्य से संबंध है, तो मुझे वर्ग के भीतर आगे वर्गीकरण पर कोई आपत्ति नहीं है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि हालांकि एक अर्थ में वर्गीकरण असमानता लाता है, यह समानता को बढ़ावा देता है यदि इसका उद्देश्य पर्याप्त और न्यायोचित कारणों से उन लोगों को विभेदक उपचार के लिए एक वर्ग के अंतर्गत लाना है जो एक समान विशेषता साझा करते हैं। इस दृष्टिकोण से, मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि ऑल इंडिया स्टेशन मास्टर्स एंड असिस्टेंट स्टेशन मास्टर्स एसोसिएशन बनाम जनरल मैनेजर, सेंट्रल रेलवे [(1960) 2 एससीआर 311: एआईआर 1960 एससी 384.]; एसजी जयसिंघानी बनाम भारत संघ और जम्मू-कश्मीर राज्य बनाम त्रिलोकी नाथ खोसा [(1974) 1 एससीसी 19: 1974 एससीसी (एलएंडएस) 49: (1974) 1 एससीआर 771.] में निर्धारित सिद्धांत यहां लागू नहीं होता है।

87. यह देखा गया है कि वर्गीकरण उचित है यदि इसमें वे सभी व्यक्ति शामिल हैं जो कानून के उद्देश्य के संबंध में समान रूप से स्थित हैं। यह देखा गया है कि वर्गीकरण कुछ उचित आधार पर आधारित होना चाहिए जो एक साथ समूहीकृत व्यक्तियों में अंतर करता है और अंतर का आधार नियम द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य से तर्कसंगत संबंध होना चाहिए। इसने विशेष रूप से देखा कि यह मान लेना एक गलती है कि किसी वर्ग के भीतर कोई वर्गीकरण नहीं हो सकता है। उन्होंने कहा कि यदि ऐसे समझदार अंतर हैं जो उस वर्ग के भीतर एक समूह को बाकी लोगों से अलग करते हैं और उन अंतरों का वर्गीकरण के उद्देश्य से संबंध है, तो वर्ग के भीतर ऐसा आगे का वर्गीकरण कानून में स्वीकार्य होगा। उन्होंने कहा कि हालांकि एक अर्थ में वर्गीकरण असमानता लाता है, लेकिन यह समानता को बढ़ावा देता है यदि इसका उद्देश्य पर्याप्त और न्यायोचित कारणों से विभेदक उपचार के लिए उन लोगों को एक वर्ग के अंतर्गत लाना है जो एक समान विशेषता साझा करते हैं।

88. वी.आर. कृष्णा अय्यर, जे. ने अपने सहमति वाले फैसले में इस प्रकार टिप्पणी की:

"124. समाजशास्त्रीय सावधानी का एक शब्द। यहाँ और अन्य जगहों पर अनुभव के प्रकाश में, मुझे लगता है कि "आरक्षण" का खतरा तीन गुना है। इसके लाभ, मोटे तौर पर, "पिछड़ी" जाति या वर्ग की शीर्ष क्रीमी लेयर द्वारा छीन लिए जाते हैं, इस प्रकार सबसे कमजोर को हमेशा कमजोर बनाए रखते हैं और भाग्यशाली परतों को पूरा लाभ उठाने के लिए छोड़ देते हैं। दूसरे, यह दावा लोकतंत्र में बड़े और मुखर समूहों द्वारा अतिशयोक्तिपूर्ण रूप से किया जाता है,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

जिनके पिछड़ेपन का बोझ समय के साथ और बेहतर शिक्षा और रोजगार के अधिक अवसरों के उपायों से काफी हद तक हल्का हो गया है, लेकिन वे अपने बराबर के लोगों को औपचारिक रूप से उच्च कोष्ठक के रूप में वर्गीकृत करने के साधन के रूप में "कमजोर वर्ग" लेबल पहनना चाहते हैं। अंत में, समस्या का स्थायी समाधान केवल सामाजिक पर्यावरण में सुधार, अतिरिक्त शैक्षणिक सुविधाएं और अंतरजातीय और अंतर-वर्गीय विवाहों द्वारा जातियों के क्रॉस-फर्टिलाइजेशन से ही आता है, जिसे एक बड़े राज्य कार्यक्रम के रूप में प्रायोजित किया जाता है, और यह समाधान पिछड़ेपन के फल में निहित स्वार्थ वाले उच्च "पिछड़े" समूहों द्वारा जानबूझकर छिपाया जाता है। लेकिन न्यायिक प्रभाववाद नहीं, बल्कि सामाजिक विज्ञान अनुसंधान ही पूरी सच्चाई बताएगा और "कमजोर" श्रेणियों द्वारा दर्ज की गई प्रगति के उद्देश्यपूर्ण पुनर्मूल्यांकन की एक निरंतर प्रक्रिया आवश्यक है, ताकि एक बार योग्य "आरक्षण" को "उलटा भेदभाव" में न गिराया जाए। वास्तव में अछूते, सबसे पिछड़े वर्गों की मदद करने के लिए प्रशासनिक रणनीति में नवाचार भी ऐसे सामाजिक-कानूनी अध्ययनों और लेखा परीक्षा अभ्यासों से उभर कर आते हैं, अगर निष्पक्ष रूप से किया जाए। वास्तव में, ए.एन. सिन्हा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज, पटना ने हरिजनों के बीच दोहरे समाज का खुलासा किया है, एक छोटा सा अभिजात वर्ग लाभों को हड़प रहा है और अंधेरे तबके विशेष रियायतों से दूर सो रहे हैं। उनके लिए, अनुच्छेद 46 और 335 एक "महान रोमांस" बने हुए हैं [जैसा कि हक्सले ने "प्रशासनिक शून्यवाद" (विधियाँ और परिणाम, संग्रहित निबंधों का खंड 4) में कहा है।], जो "उच्च" हरिजनों को मिलने वाला बोनस है। मैं वर्तमान मामले में इसका उल्लेख करता हूँ क्योंकि निम्न श्रेणी के क्लर्क हरिजन मानवता के निम्नतम स्तरों से लिए जाने की संभावना है और इस श्रेणी के लिए "परीक्षण" योग्यता वापस लेने से पदोन्नति की संभावनाएँ शायद और भी गहरी हो सकती हैं। पदानुक्रमिक संरचना में एक समानतावादी सफलता के लिए कई हथियारों का उपयोग करना पड़ता है और नियम 13-एए शायद उनमें से एक है।

125. मैं जिस मुख्य निष्कर्ष पर जोर देना चाहता हूँ, वह यह है कि हरिजनों के लिए वास्तविक, समान भागीदारी प्राप्त करने के लिए आवश्यक प्रत्येक कदम, अकेले ही सामाजिक न्याय के बराबर है – न कि भाग III में महान अधिकारों और भाग IV में अच्छे लक्ष्यों को सुनिश्चित करना। अन्यथा, अनुच्छेद 14 से 16 में दिए गए गंभीर उपक्रमों को अनुच्छेद 46 और 335 के साथ पढ़ा जाए तो वे "एक भ्रामक भ्रम या अवास्तविकता का वादा" बनकर रह जाएँगे। इन प्रावधानों के वास्तविक उद्देश्य की स्पष्ट दृष्टि के लिए भारतीय आध्यात्मिक-धर्मनिरपेक्ष विचार की गहरी समझ की आवश्यकता है कि देवत्व सभी में रहता है और प्राचीन पर्यावरणीय प्रदूषण और सामाजिक स्थिति, जिसे राज्य को समाप्त करना चाहिए, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के रूप में वर्णित मानव क्षेत्रों के वर्तमान सामाजिक-आर्थिक पिछड़ेपन के लिए जिम्मेदार है। हमारे संवैधानिक विचारों की जड़ें – कम से कम उनमें से कुछ – हमारी प्राचीन संस्कृति में खोजी जा सकती हैं। सांस्कृतिक शक्ति के सामूहिक अधिग्रहण (सह वीर्य करवावहे)

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

का महान उपनिषदिक आदेश "समानता" में शामिल है और इसे विकसित होना चाहिए, अगर हम अपनी बेहतर विरासत के सूक्ष्म तत्व के प्रति सचेत हैं।

89. महामहिम ने आरक्षण के तीन गुना खतरे को वर्गीकृत किया है। उनके अनुसार, सबसे पहले, लाभ, बड़े पैमाने पर, "पिछड़ी" जाति या वर्ग की शीर्ष मलाईदार परत द्वारा छीन लिए जाते हैं, इस प्रकार कमजोर लोगों में सबसे कमजोर हमेशा कमजोर रहता है और भाग्यशाली परतों को पूरा केक खाने के लिए छोड़ दिया जाता है। दूसरे, पिछड़ेपन का यह दावा लोकतंत्र में बड़े और मुखर समूहों द्वारा अतिशयोक्तिपूर्ण रूप से किया जाता है, जिनके पिछड़ेपन का बोझ समय के साथ और बेहतर शिक्षा और रोजगार के अधिक अवसरों के उपायों से काफी हद तक हल्का हो गया है। हालांकि, वे औपचारिक रूप से उच्च कोष्ठक के रूप में वर्गीकृत अपने लगभग बराबर के लोगों पर बढ़त हासिल करने के लिए "कमजोर वर्ग" का लेबल पहनना चाहते हैं। तीसरा, उनके अनुसार, समस्या का स्थायी समाधान केवल सामाजिक वातावरण में सुधार, शैक्षिक सुविधाओं में वृद्धि और एक बड़े राज्य कार्यक्रम के रूप में प्रायोजित अंतर-जातीय और अंतर-वर्गीय विवाहों द्वारा जातियों के क्रॉस-फर्टिलाइजेशन से आएगा।

90. माननीय न्यायमूर्ति ने देखा कि हरिजनों के लिए वास्तविक, समान, भागीदारी हासिल करने के लिए आवश्यक हर कदम, अकेले सामाजिक न्याय के बराबर है। उन्होंने कहा कि यदि ऐसा नहीं किया जाता है, तो अनुच्छेद 14 से 16 में अनुच्छेद 46 और 335 के साथ पढ़े गए गंभीर उपक्रम "एक छेड़खानी भ्रम या अवास्तविकता का वादा" तक सीमित हो सकते हैं।

91. उनके आधिपत्य ने आगे इस प्रकार टिप्पणी की:

"136. अपीलकर्ता के मार्ग में अगली बाधा अनुच्छेद 16 (4) से संबंधित है। मेरे विचार से, यह उप-अनुच्छेद अपवाद के रूप में नहीं बल्कि एक जोरदार बयान के रूप में कार्य करता है, पिछड़े लोगों के दावों और मुक्त प्रतिस्पर्धा के अवसर को समेटने का एक तरीका है जिसका अगड़े वर्ग आमतौर पर हकदार हैं। न्यायमूर्ति सुब्बा राव (तत्कालीन न्यायमूर्ति) की भाषा में, देवदासन के मामले में [एआईआर 1964 एससी 179: (1964) 4 एससीआर 680, 700: (1965) 2 एलएलजे 560]। "अभिव्यक्ति 'इस अनुच्छेद में कुछ भी नहीं' एक विधायी उपकरण है जो अपने इरादे को सबसे जोरदार तरीके से व्यक्त करता है कि इसके तहत दी गई शक्ति किसी भी तरह से मुख्य प्रावधान द्वारा सीमित नहीं है बल्कि इसके बाहर है। इसने वास्तव में अपवाद नहीं बनाया है, बल्कि अनुच्छेद के अन्य प्रावधानों द्वारा अप्रभावित शक्ति को संरक्षित किया है।

" सच है, यह कहा जा सकता है कि अनुच्छेद 16(4) एक अपवाद है, लेकिन बारीकी से जांच करने पर यह संवैधानिक रूप से पवित्र वर्गीकरण का एक उदाहरण है। ब्रिटिश काल में भी सार्वजनिक सेवाएं भारतीयों के लिए आकर्षण का विषय रही हैं, क्योंकि वे राज्य शक्ति का प्रतीक हैं और इसलिए इसके लिए एक विशेष अनुच्छेद समर्पित किया गया है।

अनुच्छेद 16(4) को एक बचत खंड होने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि ड्राफ्ट्समैन की अत्यधिक चिंता के कारण मामलों को संदेह की संभावना से परे स्पष्ट करने के लिए रखा गया है

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(उदाहरण के लिए, सीआईटी बनाम शॉ वालेस एंड कंपनी [59 आईए 206: एआईआर 1932 पीसी 138] देखें)।

137. प्रशासनिक मानकों को नुकसान पहुँचाए बिना पिछड़े और अगड़े वर्गों के वर्गीकरण के आधार पर "आरक्षण" (जैसा कि इस न्यायालय ने रेखांकित किया है) एक वर्ग और समूह के भीतर समानता के सिद्धांत का एक अनुप्रयोग है, जिसका उद्देश्य पिछड़े वर्गों की दक्षता के साथ लगातार उन्नति करना है। अनुच्छेद 16(1) और (4) सुसंगत हैं। इस न्यायालय ने अनुच्छेद 16(4) को अनुच्छेद 16(1) के अपवाद के रूप में देखा है। क्या अत्यधिक पिछड़ेपन के आधार पर वर्गीकरण अनुच्छेद 16(4) को निरर्थक बना देता है? नहीं। आरक्षण उस सीमा तक एकाधिकार प्रदान करता है, लेकिन अनुच्छेद 16(1) के तहत वर्गीकरण आमतौर पर कम लाभ प्रदान करता है। पहला अधिक कठोर है, दूसरा अधिक लचीला है, हालाँकि वे कभी-कभी ओवरलैप हो सकते हैं। अनुच्छेद 16(4) सभी पिछड़े वर्गों को कवर करता है; लेकिन जैसा कि मैंने स्पष्ट किया है, अनुच्छेद 46 और 335 के आधार पर अनुच्छेद 16(1) के तहत समूहीकरण का लाभ प्राप्त करने के लिए, हरिजनों द्वारा झेली जाने वाली भयानक पिछड़ेपन की दोहरी सोच और प्रशासनिक दक्षता को बनाए रखना आवश्यक है।”

92. टी. देवदासन बनाम भारत संघ के मामले में जस्टिस सुब्बा राव की टिप्पणी का हवाला देते हुए जस्टिस कृष्ण अय्यर ने टिप्पणी की कि अनुच्छेद 16(4) अपवाद के रूप में नहीं बल्कि एक जोरदार बयान के रूप में है, पिछड़े लोगों के दावों को सुलझाने का एक तरीका और स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा का अवसर जिसका आमतौर पर अगड़े वर्ग हकदार हैं।

93. उन्होंने टिप्पणी की कि करीब से जांच करने पर यह देखा जा सकता है कि अनुच्छेद 16 का खंड (4) संवैधानिक रूप से पवित्र वर्गीकरण का एक उदाहरण है। उन्होंने टिप्पणी की कि अनुच्छेद 16(4) को एक बचत खंड होने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि इसे संदेह की संभावना से परे मामलों को स्पष्ट करने के लिए मसौदाकार की अत्यधिक चिंता के कारण डाला गया है।

94. यह देखा गया है कि प्रशासनिक मानकों को नुकसान पहुँचाए बिना पिछड़े और अगड़े वर्गों के वर्गीकरण के आधार पर "आरक्षण" एक वर्ग के भीतर समानता और तर्कसंगत अंतर के आधार पर समूहीकरण के सिद्धांत का अनुप्रयोग है, जिसका उद्देश्य पिछड़े वर्गों की दक्षता के साथ लगातार उन्नति करना है। उनके आधिपत्य ने आगे कहा कि अनुच्छेद 16 (4) सभी पिछड़े वर्गों को कवर करता है। हालाँकि उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 46 और 335 के आधार पर अनुच्छेद 16 (1) के तहत समूहीकरण का लाभ अर्जित करने के लिए, हरिजनों द्वारा सहन किए जाने वाले भयानक पिछड़ेपन और प्रशासनिक दक्षता के रखरखाव के दोहरे विचारों को संतुष्ट किया जाना चाहिए। 95. उनके आधिपत्य ने यह भी माना कि अनुच्छेद 14 से 16 गारंटीकृत समानता का एक सामान्य कोड है, पहला व्यापक सिद्धांत निर्धारित करता है, जबकि अन्य दो इसे संवेदनशील क्षेत्रों पर लागू करते हैं जो सांप्रदायिकता और नौकरीपेशा के माहौल में ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण और राजनीतिक रूप से विवादास्पद हैं।

96. न्यायमूर्ति फजल अली ने अपने सहमत निर्णय में इस प्रकार टिप्पणी की:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

"178. अनुच्छेद 16 में निहित समानता या समान अवसर की अवधारणा का अर्थ यह नहीं है कि सभी परिस्थितियों में सभी व्यक्तियों पर समान कानून लागू होने चाहिए। वास्तव में यदि यह कृत्रिम व्याख्या अनुच्छेद 16 के दायरे और दायरे पर लागू की जाती है तो इससे कानून का चैनलाइजेशन या नियमों का ध्रुवीकरण होगा। मनुष्यों और चीजों के बीच अंतर और असमानताएँ मौजूद हैं और उन्हें समान कानूनों के आवेदन द्वारा समान रूप से नहीं माना जा सकता है, लेकिन कानून को जीवन के साथ समझौता करना होगा और मानव स्वभाव में मौजूद वास्तविक अंतर और असमानताओं को पहचानने में सक्षम होना चाहिए। विधानमंडल को भी उचित और तर्कसंगत वर्गीकरण करके विशिष्ट उद्देश्यों को पूरा करने के लिए कानून बनाना पड़ता है। मोरे बनाम डौड [354 यूएस 457, 473] में यह बहुत सटीक रूप से कहा गया था:

"वास्तव में मौजूद स्पष्ट अंतरों को पहचानना जीवित कानून है; व्यावहारिक अंतरों की उपेक्षा करना और कुछ अमूर्त पहचानों पर ध्यान केंद्रित करना बेजान तर्क है।"

179. अब अनुच्छेद 16 पर आते हैं, इसे वर्तमान मामले के तथ्यों के अनुसार तीन अलग-अलग श्रेणियों में विश्लेषित किया जा सकता है:

श्रेणी I – अनुच्छेद 16 का खंड (1)

श्रेणी II – अनुच्छेद 16 का खंड (2)

श्रेणी III – अनुच्छेद 16 का खंड (4)

180. अनुच्छेद 16 का खंड (1) स्पष्ट रूप से राज्य के अधीन सेवाओं में सभी नागरिकों को अवसर की समानता प्रदान करता है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि संविधान में "सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता" शब्दों का प्रयोग किया गया है। इसका स्वाभाविक अर्थ यह है कि अवसर न केवल समाज के किसी विशेष वर्ग या नागरिकों के किसी विशेष वर्ग को दिया जाना चाहिए जो उन्नत या अन्यथा अधिक संपन्न हो सकते हैं, बल्कि नागरिकों के सभी वर्गों को दिया जाना चाहिए। इसलिए, यह एक उचित वर्गीकरण करके प्राप्त किया जा सकता है ताकि नागरिकों के प्रत्येक वर्ग को सेवाओं में उचित प्रतिनिधित्व मिले जिससे सभी नागरिकों को अवसर की समानता मिल सके। हालाँकि, वर्गीकरण उचित होना चाहिए और निम्नलिखित शर्तों को पूरा करना चाहिए:

(i) इसका एक तर्कसंगत आधार होना चाहिए;

(ii) इसका लक्ष्य प्राप्त करने के उद्देश्य से घनिष्ठ संबंध होना चाहिए;

(iii) इसे दूसरों की कीमत पर किसी व्यक्ति का चयन शत्रुतापूर्ण भेदभाव के लिए नहीं करना चाहिए।

97. माननीय न्यायाधीश ने कहा कि मनुष्यों और वस्तुओं में अंतर और असमानताएँ होती हैं, तथा उन्हें समान कानूनों के प्रयोग द्वारा समान नहीं माना जा सकता। उन्होंने कहा कि कानून को जीवन के साथ तालमेल बिठाना चाहिए तथा मानव स्वभाव में मौजूद वास्तविक अंतर और असमानताओं को पहचानने में सक्षम होना चाहिए।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उन्होंने कहा कि विधानमंडल को भी उचित और तर्कसंगत वर्गीकरण करके विशिष्ट उद्देश्यों को पूरा करने के लिए कानून बनाना चाहिए।

98. यह देखा गया है कि अनुच्छेद 16 का खंड (1) स्पष्ट रूप से राज्य के अधीन सेवाओं में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता प्रदान करता है। माननीय न्यायाधीश ने इस बात पर जोर दिया कि संविधान में प्रयुक्त शब्द "सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता" का तात्पर्य यह है कि अवसर न केवल समाज के किसी विशेष वर्ग या नागरिकों के किसी विशेष वर्ग को दिया जाना चाहिए जो उन्नत या अन्यथा अधिक संपन्न हो सकते हैं, बल्कि नागरिकों के सभी वर्गों को दिया जाना चाहिए। विद्वान न्यायाधीश के अनुसार, यह एक उचित वर्गीकरण करके प्राप्त किया जा सकता है ताकि नागरिकों के हर वर्ग को सेवाओं में उचित प्रतिनिधित्व मिल सके जिससे सभी नागरिकों को अवसर की समानता मिल सके। हालांकि उन्होंने तीन शर्तें बताईं, जैसे, (i) इसका तर्कसंगत आधार होना चाहिए; (ii) इसका लक्ष्य प्राप्त करने के उद्देश्य से घनिष्ठ संबंध होना चाहिए; और (iii) इसे दूसरों की कीमत पर शत्रुतापूर्ण भेदभाव के लिए किसी व्यक्ति का चयन नहीं करना चाहिए।

99. अन्य विद्वान न्यायाधीशों की भावनाओं को प्रतिध्वनित करते हुए, यह मानते हुए कि अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का प्रावधान नहीं है, विद्वान न्यायाधीश ने इस प्रकार टिप्पणी की:

"187. इन कारणों से, इसलिए, मैं न्यायमूर्ति सुब्बा राव की टिप्पणियों से सम्मानपूर्वक सहमत हूँ, जैसा कि वे तब थे, टी. देवदासन बनाम भारत संघ [एआईआर 1964 एससी 179: (1964) 4 एससीआर 680: (1965) 2 एलएलजे 560] में, जहां उन्होंने कहा: "यही कारण है कि संविधान के निर्माताओं ने अनुच्छेद 16 में खंड (4) पेश किया। अभिव्यक्ति 'इस अनुच्छेद में कुछ भी नहीं' एक विधायी उपकरण है जो अपने इरादे को सबसे जोरदार तरीके से व्यक्त करता है कि इसके तहत दी गई शक्ति किसी भी तरह से मुख्य प्रावधान द्वारा सीमित नहीं है, बल्कि इसके बाहर है। इसने वास्तव में कोई अपवाद नहीं बनाया है, बल्कि अनुच्छेद के अन्य प्रावधानों द्वारा अप्रभावित शक्ति को संरक्षित किया है।" मेरा विचार है कि अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का प्रावधान नहीं है, बल्कि यह खंड अनुच्छेद 16 के संपूर्ण क्षेत्र को कवर करता है, जिसका समर्थन इस न्यायालय द्वारा महाप्रबंधक, दक्षिणी रेलवे बनाम रंगाचारी में दिए गए निर्णय से होता है, जिसमें यह कहा गया था: (पृष्ठ 599) "यह सर्वमान्य है कि अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) और (2) द्वारा कवर किए गए संपूर्ण क्षेत्र को कवर नहीं करता है। रोजगार से संबंधित कुछ मामले, जिनके संबंध में अनुच्छेद 16(1) और (2) द्वारा अवसर की समानता की गारंटी दी गई है, अनुच्छेद 16(4) के विषय के अधीन खंड की क्रुटियों के अंतर्गत नहीं आते हैं।"

सी. अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ (रेलवे) बनाम भारत संघ

100. अगला मामला **अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ (रेलवे) द्वारा प्रतिनिधित्व संघ की ओर से उसके सहायक महासचिव बनाम भारत संघ और अन्य**, जहां इस न्यायालय के तीन विद्वान न्यायाधीशों की पीठ रेलवे बोर्ड द्वारा जारी नीति निर्देशों पर विचार कर रही थी, जिसमें चयन के साथ-साथ गैर-चयन पदों और सकारात्मक कार्रवाई के संबंध में अन्य संबंधित मुद्दों में आरक्षण लागू किया गया था।

101. अनुच्छेद 12 में जस्टिस कृष्णा अय्यर ने इस प्रकार टिप्पणी की:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

“12. ग्रैनविले ऑस्टिन [ग्रैनविले ऑस्टिन: भारतीय संविधान – एक राष्ट्र की आधारशिला] भारतीय संविधान के लक्ष्य को सामाजिक क्रांति साबित करने के लिए संविधान सभा की कार्यवाही से प्रचुर मात्रा में उद्धरण देता है। राधाकृष्णन ने व्यापक सहमति का प्रतिनिधित्व करते हुए कहा कि: [इबिड, पृष्ठ 27]

“भारत में एक ‘सामाजिक-आर्थिक क्रांति’ होनी चाहिए जो न केवल आम आदमी की मूलभूत आवश्यकताओं की वास्तविक संतुष्टि लाए, बल्कि बहुत गहराई तक जाकर ‘भारतीय समाज की संरचना में एक मौलिक परिवर्तन’ लाए।”

102. विद्वान न्यायाधीश ने व्यापक सहमति का प्रतिनिधित्व करते हुए डॉ. राधाकृष्णन के भाषण का उल्लेख किया, जिसमें उन्होंने कहा कि भारत में एक ‘सामाजिक-आर्थिक क्रांति’ होनी चाहिए जो न केवल आम आदमी की मूलभूत आवश्यकताओं की वास्तविक संतुष्टि लाए, बल्कि बहुत गहराई तक जाकर ‘भारतीय समाज की संरचना में एक मौलिक परिवर्तन’ लाए।

103. अनुच्छेद 16(1) और 16(4) के बीच अंतर-संबंध को स्पष्ट करते हुए, विद्वान न्यायाधीश ने इस प्रकार टिप्पणी की:

“21. प्रस्तावना जो धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी गणराज्य के ढांचे के भीतर न्याय, स्वतंत्रता और स्थिति और अवसर की समानता का वादा करती है, एक समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। अनुच्छेद 16 जो राज्य सेवा के मामलों में सभी नागरिकों के लिए समान अवसर की गारंटी देता है, स्वाभाविक रूप से समानता की दिशा में एक प्रक्रिया के रूप में समानता का तात्पर्य है, लेकिन साथ ही साथ "दलित" वर्गों को प्रारंभिक बाधाओं को दूर करने और समान स्तर पर प्रगति की राष्ट्रीय दौड़ में शामिल होने की यथार्थवादी आवश्यकता को सामंजस्य बनाने की भी कोशिश करता है और अनुच्छेद 16(4) को इस विशिष्ट उद्देश्य के लिए समर्पित करता है। बड़ी सामाजिक श्रेणियों के लंबे समय तक डूबे रहने की स्थिति में, बाकी के साथ समानता की गारंटी मिथक है, वास्तविकता नहीं, जब तक कि इसे समानता के लिए सकारात्मक राज्य कार्रवाई के साथ जोड़ा न जाए, जो अंततः समानता को बढ़ावा देने के लिए तैयार हो। अनुच्छेद 16(4) एक अप्रिय नोट नहीं है, बल्कि अनुच्छेद 16(1) की निष्पक्ष पूर्ति के लिए सहायक है। भारत की जीवन स्थितियों में अनुच्छेद 16(1) के प्रावधान के लिए अनुच्छेद 16(4) की ठोस स्वीकृति की आवश्यकता है, ताकि सामाजिक दलदल में फंसे लोग बाकी लोगों के साथ समानता के स्तर तक उठ सकें और अपने उन भाइयों के साथ आगे बढ़ सकें, जिन्हें इतिहास ने इतनी कठोरता से नहीं रोका। इस सच्चाई को दफनाना अनुच्छेद 16(1) का नारा लगाना और जीवन के तथ्यों की बलि चढ़ाना है।

22. यह अनुच्छेद 16(1) और (4) का मात्र सामंजस्यपूर्ण वैधानिक निर्माण नहीं है, बल्कि हमारी संवैधानिक संस्कृति की अंतर्दृष्टिपूर्ण धारणा है, जो असमानता और गरीबी के बीमार और स्तरीकृत समाज से एक साहसी नया भारत बनाने के लिए उभरते भारत की धारा को दर्शाती है। यदि स्वतंत्रता, न्याय और अपने व्यक्तित्व को प्रकट करने का समान अवसर भंगी और ब्राह्मण, राजकुमार और दरिद्र, दोनों के लिए समान है, यदि पंचम सर्वहारा वर्ग को अनुच्छेद 16(4) में

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

दिए गए सामाजिक परिवर्तन का अनुभव करना है, तो राज्य को समानता लाने वाली तकनीकों को लागू करना चाहिए, जिससे उनके अवसरों में वृद्धि होगी और इस प्रकार धीरे-धीरे सहारे की आवश्यकता कम होती जाएगी। अनुच्छेद 16(4) के तहत राज्य की कार्यवाही की सफलता इस बात में निहित है कि परिणामोन्मुखी आरक्षण कितनी तेजी से समाप्त हो जाता है, क्योंकि अब इसकी कोई आवश्यकता नहीं रह गई है, न कि अपवाद [अनुच्छेद 16(4)] के निरंतर बढ़ते और चिरस्थायी संचालन में, जैसे कि यह हमेशा पिछड़े रहने का एक अति-मौलिक अधिकार हो। आरक्षण नीति को अमरता प्रदान करना इसके अस्तित्व के उद्देश्य को नष्ट करना है, सांप्रदायिक समर्थन और पार्टी के उद्देश्यों के लिए इस प्रावधान का राजनीतिकरण करना अनुच्छेद 122 16(1) के पवित्र दायित्व को नष्ट करना है, पिछड़े लोगों के निराशाजनक समूहों से परे भी “आरक्षण” को जातिगत बनाना, जिन्हें शिष्ट भाषा में एससी और एसटी कहा जाता है, एक गंभीर संवैधानिक जोखिम उठाना है। जाति, वास्तव में, एक धर्मनिरपेक्ष राज्य में वर्ग नहीं है।

23. हमारी संस्कृति की प्रामाणिक आवाज़, जिसे आधुनिक भारत के सभी महान निर्माताओं ने आवाज़ दी, पारिया, म्लेच्छ, बंधुआ मजदूर, भूखे, मेहनतकश आधे गुलामों की कठिनाइयों के उन्मूलन के लिए खड़ी थी, जिनकी मुक्ति हमारी आज़ादी का अभिन्न अंग थी। संविधान की सही व्याख्या करने के लिए हमें उन लोगों को समझना होगा जिनके लिए इसे बनाया गया है – बेहतर लोकाचार, कुंठाएँ, आकांक्षाएँ, सामाजिक अक्षमताओं के सैद्धांतिक समाधान के लिए संविधान द्वारा निर्धारित मापदंड। साध्य और साधन, जीवन की बीमारियों और कानून के उपायों का यह संश्लेषण संवैधानिक व्याख्या के ज्ञान का एक हिस्सा है, अगर लोगों से अलगाव न्याय प्रक्रिया को प्रभावित नहीं करता: [जे. लैंडिस: वैधानिक व्याख्या पर नोट, 43 हार्व एल रेव 886, 891 (1930)]

एक कानून शायद ही कभी अकेला खड़ा होता है। मिनर्वा के पीछे जोव का मस्तिष्क था, और शुक्र के पीछे महासागर का ज्ञाग था।

104. विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि राज्य सेवा के मामलों में सभी नागरिकों के लिए अनुच्छेद 16 के तहत प्रदान की गई समान अवसर की गारंटी स्वाभाविक रूप से समानता की दिशा में एक प्रक्रिया के रूप में समानता को दर्शाती है। हालांकि, उन्होंने “दलित” वर्गों को शुरुआती बाधाओं को दूर करने और समान स्तर पर प्रगति की दिशा में राष्ट्रीय दौड़ में शामिल होने के लिए यथार्थवादी आवश्यकता को सुसंगत बनाने की आवश्यकता पर भी जोर दिया। उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 16(4) को इस विशेष उद्देश्य के लिए समर्पित किया गया है। उन्होंने कहा कि लंबे समय तक डूबे रहने वाले बड़े सामाजिक वर्गों के लिए समानता की गारंटी, बाकी के साथ, मिथक होगी और वास्तविकता नहीं होगी, जब तक कि इसे समानता को बढ़ावा देने के लिए सकारात्मक राज्य कार्यवाही के साथ जोड़ा न जाए। उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 16(4) एक विवादास्पद नोट नहीं है, बल्कि अनुच्छेद 16(1) की उचित पूर्ति के लिए सहायक है। उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 16(1) के प्रावधान को अनुच्छेद 16(4) की ठोस मंजूरी की आवश्यकता है, ताकि सामाजिक दलदल में फंसे लोगों को बाकी लोगों के साथ समानता के स्तर तक

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पहुँचने और अपने उन भाइयों के साथ आगे बढ़ने में सक्षम बनाया जा सके, जिन्हें इतिहास ने इतनी कठोरता से बाधित नहीं किया है।

105. विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि यह अनुच्छेद 16(1) और (4) का मात्र सामंजस्यपूर्ण वैधानिक निर्माण नहीं है, बल्कि हमारी संवैधानिक संस्कृति की एक अंतर्दृष्टिपूर्ण धारणा है। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि राज्य को समानता लाने वाली तकनीकों को लागू करना चाहिए, जिससे उनके अवसरों में वृद्धि होगी और इस तरह धीरे-धीरे सहारे की आवश्यकता कम होगी। उन्होंने आगे जोर दिया कि पिछड़े लोगों के निराशाजनक समूहों से परे भी “आरक्षण” को जातिगत बनाना, जिसे शिष्ट भाषा में एससी और एसटी कहा जाता है, एक गंभीर संवैधानिक जोखिम उठाना है। उन्होंने आगे जोर दिया कि संविधान की सही व्याख्या करने के लिए हमें उन लोगों को समझना होगा जिनके लिए यह बनाया गया है। उन्होंने कहा कि जीवन की समस्याओं और कानून के उपायों के साध्य और साधन का संश्लेषण संवैधानिक व्याख्या के ज्ञान का एक हिस्सा है।

106. जस्टिस कृष्ण अय्यर ने आगे कहा:

“34. दलित वर्गों और यहां तक कि अन्य जातियों के लिए विशेष प्रावधानों का संविधान-पूर्व इतिहास है। संविधान लागू होने के बाद जाति-आधारित पुराने नियमों की वैधता विवादास्पद हो गई और केंद्र सरकार ने अपनी नीति में संशोधन किया। सांप्रदायिक शासन-प्रणाली के संविधान-पश्चात पुनर्जन्म ने जाति-उन्मुखीकरण पर नहीं बल्कि सामाजिक-आर्थिक दमन के उन्मूलन और इस उद्देश्य को प्राप्त करने के विविध तरीकों पर ध्यान केंद्रित किया।

xxx

xxx

xxx

36. अनुच्छेद 14 से 16 अपने आप में एक संहिता बनाते हैं और संविधान के जाति-विहीन और वर्ग-विहीन समतावाद के सार को मूर्त रूप देते हैं। फिर भी, हमारे संस्थापक पिता यथार्थवादी थे, और इसलिए उन्होंने समानता के प्रस्ताव को इसकी सार्वभौमिकता में घोषित नहीं किया, बल्कि इसे कुछ विशेष प्रावधानों के अधीन कर दिया, जो समानता की आत्मा का खंडन नहीं करते थे, बल्कि उस कभी न बदलने वाले सिद्धांत को हमेशा बदलते सामाजिक परिवेश के अनुकूल बनाते थे। इसी तरह अनुच्छेद 15(4) और 16(4) को अनुच्छेद 15(1) और 16(1) के साथ पढ़ा जाना चाहिए। पहला उप-अनुच्छेद समानता की बात करता है और दूसरा उप-अनुच्छेद जाति को भेदभाव के आधार के रूप में स्पष्ट रूप से प्रतिबंधित करके इसकी सामग्री को बढ़ाता है। अनुच्छेद 16(4) 126 अनुच्छेद 16(1) में निहित प्रतीत होने वाली स्थिर समानता को एक गतिशील गुण प्रदान करता है, जो समानता की अंतिम उपलब्धि के लिए अनुमेय राज्य कार्रवाई के रूप में समानीकरण रणनीतियों को आयात करता है, जिसे अनुच्छेद 16(1) के विस्तार या इसके अपवाद के रूप में देखा जाता है। यही बात अनुच्छेद 15 के उप-अनुच्छेदों पर भी लागू होती है। इस प्रकार, अनुच्छेद 14 से 16 में हमें संवैधानिक मौलिक गारंटी प्राप्त है; लेकिन यह हमारी सांस्कृतिक विरासत का एक कुख्यात तथ्य है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियाँ स्वतंत्र भारत में लगभग अमानवीय थीं, और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष का एक पहलू उन्हें पूर्ण व्यक्तित्व की बहाली के साथ-साथ देश के सामाजिक और आर्थिक विकास में हिस्सेदारी का अधिकार देना रहा है। अनुच्छेद 46 भाग IV

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

में निहित एक निर्देशक सिद्धांत है। प्रत्येक निर्देशक सिद्धांत देश के शासन में मौलिक है और कानून बनाने में उस सिद्धांत को लागू करना राज्य का कर्तव्य होगा। अनुच्छेद 46 में स्पष्ट शब्दों में राज्य को यह दायित्व दिया गया है कि वह “लोगों के कमजोर वर्गों, विशेषकर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शैक्षणिक और आर्थिक हितों को विशेष ध्यान से बढ़ावा दे तथा उन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाए”। अनुच्छेद 46 को अनुच्छेद 16(4) के साथ पढ़ने पर संविधान निर्माताओं की यह स्पष्ट मंशा उभर कर आती है कि अतीत में शोषित हरिजन-गिरिजन समूहों को राज्य द्वारा विशेष ध्यान से समाप्त किया जाएगा। निष्कर्ष स्पष्ट है कि राज्य द्वारा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की प्रशासनिक भागीदारी को विशेष ध्यान से बढ़ावा दिया जाएगा। बेशक, अनुच्छेद 16(4) के तहत आरक्षण और अनुच्छेद 46 द्वारा परिकल्पित प्रोत्साहन रणनीतियां महत्वपूर्ण हो सकती हैं, लेकिन पिछड़े वर्गों को रियायतों के नाम पर प्रशासनिक दक्षता को जोखिम में नहीं डालना चाहिए। अनुच्छेद 335 में इस संबंध में एक चेतावनी दी गई है:

“335. संघ या राज्य के मामलों से संबंधित सेवाओं और पदों पर नियुक्तियाँ करते समय, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावों को प्रशासन की दक्षता बनाए रखने के अनुरूप ध्यान में रखा जाएगा।”

इस अनुच्छेद का सकारात्मक पक्ष यह है कि राज्य के अधीन सेवाओं में प्रतिनिधित्व के समानीकरण के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावों को, उनकी सामाजिक स्थिति में गिरावट और सत्ता प्रणाली में उनकी नपुंसकता को ध्यान में रखते हुए, ध्यान में रखा जाएगा। नकारात्मक तत्व, जो अनुच्छेद का हिस्सा है, यह है कि अनुच्छेद 16(4), 46 और 335 के अधिदेश के अनुसार राज्य द्वारा उठाए गए उपाय “प्रशासन की दक्षता बनाए रखने” के अनुरूप होंगे और उसे बाधित नहीं करेंगे।

xxx

xxx

xxx

39. अनुच्छेद 341 यह स्पष्ट करता है कि “अनुसूचित जाति” को पारंपरिक अर्थों में “जाति” होने की आवश्यकता नहीं है और इसलिए, अनुच्छेद 15(2) या 16(2) के अर्थ में जाति नहीं हो सकती है। अनुसूचित जातियाँ तभी अनुसूचित जातियाँ बनती हैं जब राष्ट्रपति संविधान के प्रयोजन के लिए किसी जाति, नस्ल या जनजाति या जातियों, नस्लों या जनजातियों के भीतर के भागों या समूहों को निर्दिष्ट करते हैं। इसलिए, एक समूह या समूह का एक भाग, जिसे जाति होने की आवश्यकता नहीं है और जो कई जातियों या जनजातियों या यहाँ तक कि नस्लों का मिश्रण भी हो सकता है, फिर भी अनुच्छेद 341 के तहत अनुसूचित जाति हो सकता है। इसी तरह, नस्लें या आदिवासी समुदाय या उनके हिस्से या उनके भीतर समूहों के हिस्से या हिस्से संविधान के प्रयोजन के लिए अभी भी अनुसूचित जनजातियाँ (अनुच्छेद 342) हो सकते हैं। इस परिभाषा के तहत, एक जाति का एक समूह अनुसूचित जाति हो सकता है और उसी जाति का दूसरा समूह अनुसूचित जाति नहीं हो सकता। यह सामाजिक वर्ग का सामाजिक-आर्थिक

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पिछड़ापन है, न कि केवल जाति में जन्म लेना, जो निर्णायक है। जब पारंपरिक जुनून दृष्टि को अस्पष्ट कर देते हैं, तो वैचारिक त्रुटियाँ सामने आती हैं।

107. विद्वान न्यायाधीश ने संविधान-पूर्व इतिहास का उल्लेख किया है, जिसमें दलित वर्गों और अन्य जातियों के लिए विशेष प्रावधान किए गए थे। उन्होंने कहा कि संविधान लागू होने के बाद जाति आधारित पुराने नियमों की वैधता विवादास्पद हो गई और केंद्र सरकार ने अपनी नीति में संशोधन किया। उन्होंने कहा कि सांप्रदायिक शासनादेश के संविधान-पश्चात पुनर्जन्म ने जाति उन्मुखीकरण पर नहीं बल्कि सामाजिक-आर्थिक दमन के उन्मूलन और इस उद्देश्य को प्राप्त करने के विविध तरीकों पर ध्यान केंद्रित किया।

108. उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 14 से 16 स्वयं एक संहिता बनाते हैं और संविधान के जातिविहीन और वर्गविहीन समतावाद के सार को मूर्त रूप देते हैं। फिर उन्होंने एक ओर अनुच्छेद 15(4) और 16(4) और दूसरी ओर अनुच्छेद 15(1) और 16(1) के बीच परस्पर क्रिया पर विचार किया। इसके बाद वे हमारी सांस्कृतिक विरासत के कुख्यात तथ्य का उल्लेख करते हैं कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियाँ अस्वतंत्र भारत में लगभग अमानवीय थीं, और स्वतंत्रता के संघर्ष का एक पहलू उन्हें पूर्ण व्यक्तित्व की बहाली के साथ-साथ देश के सामाजिक और आर्थिक विकास में हिस्सेदारी का अधिकार देना रहा है। इसके बाद वे अनुच्छेद 46 और देश के शासन में उक्त नीति निर्देशक सिद्धांत के महत्व का उल्लेख करते हैं और कहते हैं कि कानून बनाने में उस सिद्धांत को लागू करना राज्य का कर्तव्य होगा। उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 46 को अनुच्छेद 16(4) के साथ पढ़ने से संविधान निर्माताओं की मंशा व्यक्त होती है कि अतीत में हरिजन-गिरिजन समूहों का शोषण राज्य द्वारा विशेष सावधानी के साथ समाप्त किया जाएगा। पूर्णता के लिए, फिर उन्होंने अनुच्छेद 335 का संदर्भ देते हुए कहा कि अनुच्छेद 16(4), 46 और 335 के अधिदेश के अनुसार राज्य द्वारा उठाए गए उपाय “प्रशासन की दक्षता बनाए रखने” के अनुरूप होंगे और उसमें बाधा नहीं डालेंगे।

109. न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने तब टिप्पणी की कि अनुच्छेद 341 यह स्पष्ट करता है कि “अनुसूचित जाति” को पारंपरिक अर्थों में “जाति” होने की आवश्यकता नहीं है और इसलिए अनुच्छेद 15(2) या 16(2) के अर्थ में जाति नहीं हो सकती है। उन्होंने कहा कि अनुसूचित जातियाँ तभी ऐसी बनती हैं जब राष्ट्रपति संविधान के उद्देश्य के लिए किसी जाति, नस्ल या जनजाति या जातियों, नस्लों या जनजातियों के भीतर के भागों या समूहों को निर्दिष्ट करते हैं। उन्होंने कहा कि परिभाषा के अनुसार, एक जाति का एक समूह अनुसूचित जाति हो सकता है और उसी जाति का दूसरा समूह अनुसूचित जाति नहीं हो सकता है और यह सामाजिक वर्ग का सामाजिक-आर्थिक पिछड़ापन है, न कि केवल जाति में जन्म, जो निर्णायक है।

110. अनुच्छेद 73 में, वह संविधान सभा को डॉ. अंबेडकर के संबोधन का उल्लेख करते हैं, जिसे हमने पहले ही निर्णय के आरंभ में उद्धृत किया है। अनुच्छेद 73 को नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:

“73. सामाजिक वास्तविकताओं द्वारा निरस्त किए गए संवैधानिक मूल्यों की एक महत्वपूर्ण प्रस्तावना डॉ. अंबेडकर के संविधान सभा को पहले उद्धृत किए गए संबोधन में पाई जाती है, जो विस्फोटक सामाजिक और आर्थिक असमानताओं और राजनीतिक लोकतंत्र की प्रक्रियाओं के बीच विरोधाभासों के जीवन की ओर मार्मिक ध्यान आकर्षित करती है। “हम कब तक विरोधाभासों का यह जीवन जीते रहेंगे? हम कब तक अपने सामाजिक और आर्थिक जीवन में समानता को नकारते रहेंगे?” संविधान निर्माताओं के समक्ष यह प्रश्न था कि वे “एक व्यक्ति, एक

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

मूल्य" के सिद्धांत को लागू करना चाहते हैं या नहीं। इस दृष्टिकोण को अनुच्छेद 14 से 16 में निहित समानता संहिता में शामिल किया जाना चाहिए। समानता एक गतिशील अवधारणा है जिसका लचीला महत्व है, इसलिए इस न्यायालय ने अनुच्छेद 14 से 16 में वर्गीकरण और प्रत्येक वर्ग में आने वाले सभी लोगों के लिए समान व्यवहार के व्यावहारिक सिद्धांत को पढ़ा है। लेकिन इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि वर्गीकरण को ऐसे चरम बिंदु तक न धकेला जाए कि समानता का मौलिक अधिकार खत्म हो जाए (त्रिलोकी नाथ खोसा बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य [(1974) 1 एससीसी 19: 1974 एससीसी (एल एंड एस) 49: (1974) 1 एससीआर 771] में टिप्पणियां देखें। सी.जे. रे, केरल बनाम थॉमस [(1976) 2 एससीसी 310, 331, 332, 333, 334: 1976 एससीसी (एल एंड एस) 227, 248 249, 250, 251: (1976) 1 एससीआर 906, 926-29] ने कुछ अंशों में स्थिति को स्पष्ट किया है: [एससीसी पृष्ठ 331, 332, 333 और 334: एस.सी.सी. (एल.एंड.एस.) पृष्ठ 248, 249, 250 और 251, पैरा 21, 24, 27, 28, 30 और 31

“अनुच्छेद 14, 15 और 16 संवैधानिक गारंटीकृत अधिकारों की एक श्रृंखला का हिस्सा हैं। ये अधिकार एक दूसरे के पूरक हैं। अनुच्छेद 16 जो सभी नागरिकों को रोजगार से संबंधित मामलों में अवसर की समानता सुनिश्चित करता है, अनुच्छेद 14 में निहित समानता की गारंटी की एक घटना है। अनुच्छेद 16 (1) अनुच्छेद 14 को प्रभावी बनाता है। अनुच्छेद 14 और 16 (1) दोनों उचित वर्गीकरण को प्राप्त करने के उद्देश्य से संबंध रखने की अनुमति देते हैं।

* * *

भेदभाव वर्गीकरण का सार है... इसलिए वर्गीकरण पर्याप्त अंतरों पर आधारित होना चाहिए जो समूहों से बाहर रखे गए लोगों से एक साथ समूहीकृत व्यक्तियों को अलग करता है और इस तरह विभेदक विशेषताओं का उस लक्ष्य से न्यायसंगत और तर्कसंगत संबंध होना चाहिए जिसे प्राप्त किया जाना है।

* * *

अवसर की समानता से तब तक इनकार नहीं किया जा सकता जब तक कि भेदभाव की शिकायत करने वाला व्यक्ति उस व्यक्ति या व्यक्तियों के समान स्थिति में न हो, जिनके साथ पक्षपात करने का आरोप लगाया गया है। अनुच्छेद 16(1) कर्मचारियों के उचित वर्गीकरण या उनके चयन के लिए उचित परीक्षणों पर रोक नहीं लगाता (मैसूर राज्य बनाम वी.पी. नरसिंह राव [एआईआर 1968 एससी 349: (1968) 1 एससीआर 407])।

अवसर की इस समानता को पूर्ण समानता के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए...

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अनुच्छेद 16(1) के तहत रोजगार के अवसर की समानता का अर्थ कर्मचारियों के एक ही वर्ग के सदस्यों के बीच समानता है, न कि अलग, स्वतंत्र वर्ग के सदस्यों के बीच समानता...

समानता का नियम समान परिस्थितियों में समान लोगों के साथ समान व्यवहार है। विभेदीकरण का नियम विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न व्यक्तियों या चीजों के बीच विभेद करने वाले कानून बनाना है। एक व्यक्ति या वस्तु को नियंत्रित करने वाली परिस्थितियाँ आवश्यक रूप से एक ही नहीं हो सकती हैं, दूसरे व्यक्ति या वस्तु को नियंत्रित करने वाली परिस्थितियाँ, ताकि अलग-अलग परिस्थितियों और अलग-अलग परिस्थितियों से संचालित व्यक्तियों के बीच असमान व्यवहार का सवाल ही न उठे... संवैधानिक होने के लिए वर्गीकरण को उन भेदों पर आधारित होना चाहिए जो पर्याप्त हों, न कि केवल भ्रामक। परीक्षण यह है कि क्या इसका कोई उचित आधार है जो कृत्रिमता और मनमानी से मुक्त हो, जो सभी को शामिल करे और किसी को भी न छोड़े, जो स्वाभाविक रूप से उस श्रेणी में आते हों।”

विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने इस प्रस्ताव को पुष्ट करने के लिए पहले के निर्णयों पर भरोसा किया। त्रिलोकी नाथ खोसा बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य [(1976) 2 एससीसी 310, 337: 1976 एससीसी (एलएंडएस) 227, 254: (1976) 1 एससीआर 906, 932] इस न्यायालय ने माना था कि राज्य वास्तविकताओं के आधार पर नियम बना सकता है, ठीक उसी तरह जैसे विधायिका “नुकसान की डिग्री को पहचानने के लिए स्वतंत्र है और यह अपने प्रतिबंधों को उन मामलों की श्रेणियों तक सीमित कर सकती है, जहां इसकी आवश्यकता सबसे स्पष्ट समझी जाती है”। इस प्रकार हम संवैधानिक सत्य पर पहुंचते हैं कि राज्य पर्याप्त अंतरों के आधार पर समूहों या वर्गों का वर्गीकरण कर सकता है और यह प्रक्रिया जरूरी नहीं कि अनुच्छेद 14 से 16 का उल्लंघन हो।”

111. डॉ. अंबेडकर के भाषण का संदर्भ देते हुए विद्वान न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि समानता एक गतिशील अवधारणा है जिसका लचीला महत्व है, इस न्यायालय ने अनुच्छेद 14 से 16 में वर्गीकरण और प्रत्येक वर्ग में आने वाले सभी लोगों के साथ समान व्यवहार के व्यावहारिक सिद्धांत को पढ़ा है। हालांकि, उन्होंने चेतावनी दी है कि वर्गीकरण को इस हद तक नहीं बढ़ाया जाना चाहिए कि समानता का मौलिक अधिकार खत्म हो जाए।

112. विद्वान न्यायाधीश ने आगे कहा:

“76. इस आधार पर आगे बढ़ते हुए, अवसर की समानता के मौलिक अधिकार को राज्य के अधीन सेवाओं में “पर्याप्त प्रतिनिधित्व” के उद्देश्य से एससी और एसटी के अलग-अलग वर्गीकरण को उचित ठहराते हुए पढ़ा जाना चाहिए। अनुच्छेद 16 (4) और 46 के अनुसार यह उद्देश्य संवैधानिक रूप से स्वीकृत है। वर्गीकरण न्यायसंगत और उचित है। हालांकि, हमें यह जांचना होगा कि लक्ष्य तक पहुंचने के लिए इस्तेमाल किए गए साधन उचित हैं या नहीं और वर्गीकरण के उद्देश्यों से आगे नहीं बढ़ते हैं। इस प्रकार मामले का दायरा सीमित हो जाता है।”

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

113. उनके माननीय न्यायाधीश ने कहा कि अवसर की समानता के मौलिक अधिकार को राज्य के अधीन सेवाओं में "पर्याप्त प्रतिनिधित्व" के उद्देश्य से एससी और एसटी के अलग-अलग वर्गीकरण को उचित ठहराने के रूप में पढ़ा जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि यह उद्देश्य संवैधानिक रूप से स्वीकृत है, जैसा कि अनुच्छेद 16 (4) और 46 में निर्दिष्ट है।

114. इस तर्क को खारिज करते हुए कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में आरक्षण प्रशासन में दक्षता को प्रभावित कर सकता है, विद्वान न्यायाधीश ने इस प्रकार कहा:

"94. यह कहना फैशनेबल है - और शायद इसमें कुछ सच्चाई है - कि पीढ़ी दर पीढ़ी राजनीति से लेकर शिक्षाशास्त्र, नौकरशाही और अन्य व्यवसायों तक जीवन के सभी क्षेत्रों में दक्षता में गिरावट आ रही है। फिर भी, दुनिया आगे बढ़ रही है और केवल वे दल ही, जिनके निजी हित प्रभावित होते हैं, कार्यकुशलता में उत्तरोत्तर कमी के कारण विनाश की भविष्यवाणी करते हैं। हम इस दुर्भाग्य से प्रभावित नहीं हैं कि सरकारी कर्मचारियों को मूर्खों द्वारा संचालित किया जा रहा है, क्योंकि हरिजन/गिरिजनों का एक छोटा सा हिस्सा सेवाओं में अपना रास्ता खोज लेता है। उनकी उदासीनता और पिछड़ापन ऐसा है कि इन अनुकूल प्रावधानों के बावजूद, दुर्भाग्यशाली लोगों में न तो जागरूकता है और न ही देश के प्रशासन में अपना उचित स्थान लेने के लिए योग्य सदस्य हैं। आधुनिक भारत की बीमारी कहीं और है, और योग्यता के लालची लोग कई मामलों में भोले-भाले आदिवासियों और थोड़े बेहतर निम्न जातियों की तुलना में अधिक जोखिम में हैं। न ही यह दिखावटी दलील कि चूंकि कुछ हरिजन बेहतर स्थिति में हैं, इसलिए नीचे के बड़े हिस्से को कोई अतिरिक्त प्रावधान नहीं मिलना चाहिए, जांच के योग्य है। निगलने से गर्मी नहीं आती। हो सकता है, जब सामाजिक परिस्थितियाँ उचित हों, तो राज्य हरिजनों के बीच हरिजनों को मिलने वाले हरिजन लाभों को उचित रूप से सीमित कर सकता है और उच्च हरिजनों को निम्नतर भाइयों को लूटने से रोक सकता है।"

[प्रभाव वर्धित]

115. विद्वान न्यायाधीश ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि केवल इसलिए कि हरिजन/गिरिजनों का एक छोटा सा हिस्सा सेवाओं में आ जाता है, देश के प्रशासन की दक्षता प्रभावित होगी। इसके विपरीत, उन्होंने कहा कि योग्यता-लोलुप लोग कई मामलों में भोले-भाले आदिवासियों और थोड़े बेहतर निम्न जातियों की तुलना में अधिक जोखिम भरे हैं।

116. यह ध्यान रखना उचित है कि अनुच्छेद 94 के अंत में और अनुच्छेद 98 में विद्वान न्यायाधीश द्वारा की गई टिप्पणियाँ वर्तमान संदर्भ के प्रयोजनों के लिए सबसे महत्वपूर्ण हैं। अनुच्छेद 98 इस प्रकार है:

"98. तर्क यह है कि अमीर और प्रभावशाली हरिजन हैं जो सभी विशेषाधिकारों को लूटते हैं और दास-स्तर के पीड़ितों को हमेशा की तरह दबा कर रखते हैं। प्रशासन एससी/एसटी की क्रीमी लेयर को हटाने के लिए नवाचार और वर्गीकरण कर सकता है, लेकिन अदालत राज्य को इसके लिए बाध्य नहीं कर सकती है।

117. न्यायमूर्ति चिन्नाप्पा रेड्डी ने अपने अलग सहमति वाले फैसले में इस प्रकार टिप्पणी की:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

"123. क्योंकि मौलिक अधिकार न्यायोचित हैं और निर्देशक सिद्धांत नहीं हैं, इसलिए शुरू में यह माना गया था कि मौलिक अधिकार संविधान के तहत निर्देशक सिद्धांतों की तुलना में बेहतर स्थिति रखते हैं और मौलिक अधिकारों की तुलना में बाद वाले केवल गौण महत्व के हैं। यह सोचने का तरीका अतीत की बात है और अप्रचलित हो गया है। अब यह सर्वमान्य हो चुका है कि मौलिक अधिकारों और नीति निर्देशक सिद्धांतों के बीच अंतर यह है कि मौलिक अधिकारों का मुख्य उद्देश्य नागरिकों को राज्य की अत्यधिक कार्रवाई से बचाकर राजनीतिक स्वतंत्रता सुनिश्चित करना है, जबकि नीति निर्देशक सिद्धांतों का उद्देश्य राज्य की उचित कार्रवाई द्वारा सामाजिक और आर्थिक स्वतंत्रता सुनिश्चित करना है। मौलिक अधिकारों का उद्देश्य राजनीतिक लोकतंत्र के आदर्श को बढ़ावा देना और सत्तावादी शासन की स्थापना को रोकना है, लेकिन जब तक उन्हें अदालतों का सहारा लेकर लागू नहीं किया जा सकता, तब तक उनका कोई महत्व नहीं है। इसलिए उन्हें न्यायोचित बनाया गया है। लेकिन, यह भी स्पष्ट है कि उनके महान महत्व के बावजूद, निर्देशक सिद्धांतों को कानून की अदालत में लागू नहीं किया जा सकता है। यह अकल्पनीय है कि कोई भी अदालत किसी विधानमंडल को कानून बनाने के लिए मजबूर कर सकती है। यदि अदालत संसद को कानून बनाने के लिए मजबूर कर सकती है तो संसदीय लोकतंत्र जल्द ही न्यायाधीशों के कुलीनतंत्र में बदल जाएगा। इसी अर्थ में संविधान कहता है कि निर्देशक सिद्धांत अदालतों द्वारा लागू नहीं किए जा सकते। इसका मतलब यह नहीं है कि निर्देशक सिद्धांत मौलिक अधिकारों से कम महत्वपूर्ण हैं या वे राज्य के विभिन्न अंगों पर बाध्यकारी नहीं हैं। संविधान के अनुच्छेद 37 में जोर देकर कहा गया है कि निर्देशक सिद्धांत देश के शासन में मौलिक हैं और कानून बनाने में इन सिद्धांतों को लागू करना राज्य का कर्तव्य होगा। इसका अर्थ यह है कि संविधान और कानूनों की व्याख्या करते समय निर्देशक सिद्धांतों को लागू करना न्यायालय का कर्तव्य है। निर्देशक सिद्धांतों को न्यायालयों के लिए व्याख्या के कोड के रूप में काम करना चाहिए। इस प्रकार मौलिक अधिकारों की व्याख्या निर्देशक सिद्धांतों के प्रकाश में की जानी चाहिए और जब भी और जहाँ भी संभव हो, निर्देशक सिद्धांतों को पहले वाले सिद्धांतों के साथ जोड़कर देखा जाना चाहिए। मौलिक अधिकार के उल्लंघन के आधार पर आक्षेपित प्रत्येक कानून की, अन्य बातों के साथ-साथ, यह पता लगाने के लिए जाँच की जानी चाहिए कि क्या वह कानून निर्देशक सिद्धांतों में से किसी एक को आगे नहीं बढ़ाता है या यह संविधान की प्रस्तावना, निर्देशक सिद्धांतों और अन्य प्रावधानों से निकलने वाले राज्य के संवैधानिक या अन्यथा, अपने नागरिकों या नागरिकों के वर्गों के प्रति कुछ निस्संदेह दायित्वों का निर्वहन नहीं करता है।

124. इसलिए, हमारा मानना है कि संवैधानिक लक्ष्य एक समाजवादी लोकतंत्र की स्थापना है जिसमें न्याय, आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक सुरक्षा हो और सभी लोग समान हों और उन्हें समान अवसर प्राप्त हों। असमानता, चाहे वह स्थिति, सुविधा या अवसर की हो, समाप्त होनी चाहिए, विशेषाधिकार समाप्त होने चाहिए और शोषण समाप्त होना चाहिए। वंचितों, वंचितों और शोषितों को संरक्षित और पोषित किया जाना चाहिए ताकि वे समतावादी समाज में अपना

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

स्थान ले सकें। राज्य की कार्रवाई उन उद्देश्यों की ओर होनी चाहिए। इसी संदर्भ में अनुच्छेद 16 की व्याख्या की जानी चाहिए जब राज्य की कार्रवाई पर अनुच्छेद 16 का उल्लंघन करने के रूप में सवाल उठाया जाता है।

118. विद्वान न्यायाधीश ने मौलिक अधिकारों और नीति निर्देशक सिद्धांतों के बीच अंतर्सम्बन्ध पर चर्चा की। उन्होंने कहा कि मौलिक अधिकारों का मुख्य उद्देश्य नागरिकों को राज्य की अत्यधिक कार्रवाई से सुरक्षा प्रदान करके उन्हें राजनीतिक स्वतंत्रता प्रदान करना है, जबकि नीति निर्देशक सिद्धांतों का उद्देश्य राज्य की उचित कार्रवाई द्वारा सामाजिक और आर्थिक स्वतंत्रता सुनिश्चित करना है। विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि केवल इसलिए कि नीति निर्देशक सिद्धांत न्यायालयों द्वारा लागू नहीं किए जा सकते, इसका यह अर्थ नहीं है कि नीति निर्देशक सिद्धांत मौलिक अधिकारों से कम महत्वपूर्ण हैं या वे राज्य के विभिन्न अंगों पर बाध्यकारी नहीं हैं। संविधान के अनुच्छेद 37 का उल्लेख करते हुए, विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि नीति निर्देशक सिद्धांत देश के शासन में मौलिक हैं और कानून बनाने में इन सिद्धांतों को लागू करना राज्य का कर्तव्य होगा। उन्होंने कहा कि संविधान और कानूनों की व्याख्या करने में नीति निर्देशक सिद्धांतों को लागू करना न्यायालय का कर्तव्य है; कि निर्देशक सिद्धांतों को न्यायालयों के लिए व्याख्या के कोड के रूप में काम करना चाहिए। उन्होंने कहा कि मौलिक अधिकारों की व्याख्या निर्देशक सिद्धांतों के प्रकाश में की जानी चाहिए और बाद वाले को, जब भी और जहाँ भी संभव हो, पहले वाले में पढ़ा जाना चाहिए।

119. उन्होंने कहा कि संवैधानिक लक्ष्य एक समाजवादी लोकतंत्र की स्थापना है जिसमें न्याय, आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक सुरक्षा हो और सभी लोग समान हों और उन्हें समान अवसर मिले। उन्होंने आगे कहा कि असमानता, चाहे स्थिति, सुविधा या अवसर की हो, समाप्त होनी चाहिए, विशेषाधिकार समाप्त होना चाहिए और शोषण खत्म होना चाहिए। उन्होंने आगे कहा कि वंचितों, वंचितों और शोषितों को एक समतावादी समाज में अपना स्थान लेने के लिए संरक्षित और पोषित किया जाना चाहिए।

120. इसके बाद, विद्वान न्यायाधीश ने अनुच्छेद 16(1) और अनुच्छेद 16(4) के बीच अंतरसंबंध का उल्लेख करते हुए इस प्रकार कहा:

“125. आइए अब अनुच्छेद 16(1) और अनुच्छेद 16(4) पर एक नज़र डालें। अनुच्छेद 16(1) राज्य के अधीन किसी भी पद पर नियुक्ति या रोजगार से संबंधित मामलों में सभी नागरिकों के लिए समान अवसर की गारंटी देता है। आर्थिक और सामाजिक रूप से पिछड़े नागरिकों के वर्ग के लिए यह गारंटी सिर्फ एक ख्वाहिश और "हवा और भ्रम" से ज़्यादा कुछ नहीं होगी, अगर इसे ऐसे नागरिकों के वर्ग की रक्षा और पोषण के लिए आवश्यक राज्य कार्रवाई द्वारा वास्तविकता में नहीं बदला जाता है ताकि वे अपने कंधों से हजार साल की वंचना के दिल को तोड़ने वाले बोझ को उतार सकें और प्रशासन में उचित भागीदारी का दावा कर सकें। पदों का आरक्षण और सभी स्तरों पर सार्वजनिक सेवाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की भागीदारी को बढ़ावा देने के लिए डिज़ाइन किए गए अन्य सभी उपाय हमारी राय में अनुच्छेद 16(1) द्वारा गारंटीकृत मौलिक अधिकार से निकलने वाले आवश्यक परिणाम हैं। अनुच्छेद 16(4) द्वारा इस विचार पर और अधिक बल दिया गया है। अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद नहीं है। यह अनुच्छेद 16(1) का एक पहलू है जो अवसर की

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

समानता के विचार को बढ़ावा देता है और नागरिकों के वंचित वर्ग के विशेष संदर्भ में आगे बढ़ाता है, जिनके लिए इगलाइट डि ड्राइट (औपचारिक या कानूनी समानता) इगलाइट डि फैट (व्यावहारिक या तथ्यात्मक समानता) नहीं है। यह इस बात का उदाहरण है कि इगलाइट डि ड्राइट और इगलाइट डि फैट के बीच के अंतर को मिटाने के लिए राज्य को क्या करना चाहिए। यह मानता है कि अवसर की समानता के अधिकार में वंचितों को उन स्थितियों का अधिकार शामिल है जो विशेषाधिकार प्राप्त लोगों द्वारा प्राप्त की गई स्थितियों के बराबर या प्रतिपूरक हैं। अवसर की समानता ऐसी होनी चाहिए जो “परिणामों की समानता” प्रदान करे, न कि वह जो सामाजिक और आर्थिक रूप से बेहतर स्थिति वाले लोगों को कम भाग्यशाली लोगों के खिलाफ जीतने में सक्षम बनाती है, भले ही प्रतिस्पर्धा स्वयं अन्यथा न्यायसंगत हो। जॉन रॉल्स ने न्याय के सिद्धांत में वितरणात्मक अर्थ में समानता की प्राथमिकता और सामाजिक व्यवस्था की स्थापना की मांग की है “ताकि कोई भी व्यक्ति प्राकृतिक संपत्तियों के वितरण में अपने मनमाने स्थान या समाज में अपनी प्रारंभिक स्थिति से लाभ या हानि न उठाए, बदले में प्रतिपूरक लाभ दिए या प्राप्त किए बिना”। सामाजिक न्याय का उनका मूल सिद्धांत है: “सभी सामाजिक प्राथमिक वस्तुएँ – स्वतंत्रता और अवसर, आय और धन, और आत्म-सम्मान के आधार – समान रूप से वितरित किए जाने चाहिए जब तक कि इनमें से किसी या सभी वस्तुओं का असमान वितरण कम से कम पसंदीदा के लाभ के लिए न हो।” सामाजिक न्याय की उनकी अवधारणा के आवश्यक तत्वों में से एक वह है जिसे वे निवारण का सिद्धांत कहते हैं: “यह सिद्धांत है कि अनुचित असमानताओं के लिए निवारण की आवश्यकता होती है; और चूंकि जन्म और प्राकृतिक संपदा की असमानताएं अनुचित हैं, इसलिए इन असमानताओं की किसी न किसी तरह से भरपाई की जानी चाहिए।” इसलिए, समाज को उन लोगों के साथ अधिक अनुकूल व्यवहार करना चाहिए जिनके पास कम पैतृक संपत्ति है और जो कम अनुकूल सामाजिक स्थितियों में पैदा हुए हैं। यदि यह कथन कि “अवसर की समानता से परिणामों की समानता अवश्य प्राप्त होती है” और यदि अनुच्छेद 16(1) की अनुच्छेद 16(4) में पूर्ति के लिए कभी दार्शनिक आधार की आवश्यकता थी तो वह रॉल्स के न्याय सिद्धांत और निवारण सिद्धांत द्वारा प्रदान किया जाता है।”

121. विद्वान न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि अनुच्छेद 16(1) और अनुच्छेद 16(4) को एक साथ पढ़ने से पता चलता है कि वे मानते हैं कि अवसर की समानता के अधिकार में वंचितों को विशेषाधिकार प्राप्त लोगों द्वारा प्राप्त स्थितियों के बराबर या प्रतिपूरक स्थितियों का अधिकार शामिल है। यह देखा गया है कि अवसर की समानता ऐसी होनी चाहिए जो “परिणामों की समानता” प्रदान करे, न कि वह जो सामाजिक और आर्थिक रूप से बेहतर स्थिति वाले लोगों को कम भाग्यशाली लोगों के खिलाफ जीतने में सक्षम बनाती है, भले ही प्रतिस्पर्धा स्वयं अन्यथा न्यायसंगत हो।

122. इसके बाद विद्वान न्यायाधीश ने जॉन रॉल्स द्वारा “न्याय के सिद्धांत” का उल्लेख किया। उन्होंने ‘निवारण के सिद्धांत’ का भी उल्लेख किया, जिसके अनुसार वंचित असमानताओं के लिए प्रतिपूर्ति की आवश्यकता होती

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

है; और चूंकि जन्म और प्राकृतिक संपदा की असमानताएं अवांछनीय हैं, इसलिए इन असमानताओं की किसी न किसी तरह से भरपाई की जानी चाहिए।

डी. के.सी. वसंत कुमार बनाम कर्नाटक राज्य

123. इस न्यायालय की संविधान पीठ का अगला निर्णय जिस पर विचार करने की आवश्यकता है, वह **के.सी. वसंत कुमार और अन्य बनाम कर्नाटक राज्य** का मामला है। उक्त मामले में न्यायालय को निर्णय देने के लिए नहीं बल्कि अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के संदर्भ में आरक्षण के मुद्दे पर अपनी राय व्यक्त करने के लिए आमंत्रित किया गया था, जो उस आयोग के लिए एक दिशानिर्देश के रूप में काम करेगा जिसे कर्नाटक सरकार ने अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों को बेहतर रोजगार और शैक्षिक अवसर प्रदान करने के प्रश्न की जांच करने के लिए नियुक्त करने का प्रस्ताव दिया था। इस न्यायालय की संविधान पीठ में शामिल 5 विद्वान न्यायाधीशों में से प्रत्येक ने अपनी अलग-अलग राय दी।

124. वाई.वी. चंद्रचूड़, सी.जे. ने कुछ प्रस्ताव रखे। पैराग्राफ 2 का संदर्भ देना प्रासंगिक होगा, जो इस प्रकार है:

“2. मैं अपनी राय निम्नलिखित प्रस्तावों के रूप में व्यक्त करना चाहूँगा:

(1) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में आरक्षण वर्तमान की तरह ही जारी रहना चाहिए, साधन परीक्षण के आवेदन के बिना, पंद्रह वर्ष से अधिक नहीं की अवधि के लिए। अन्य पंद्रह वर्ष संविधान के आगमन के पचास वर्ष हो जाएँगे, जो कि उत्पीड़ित वर्गों के उच्च वर्ग के लिए सामाजिक उत्पीड़न, अलगाव और अपमान के घातक प्रभावों पर काबू पाने के लिए उचित रूप से लंबी अवधि है।

(2) साधन परीक्षण, अर्थात् आर्थिक पिछड़ेपन का परीक्षण, उपरोक्त (1) में उल्लिखित अवधि के बाद अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर भी लागू होना चाहिए। यह आवश्यक है कि वंचित समाज के विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग को अनिश्चित काल के लिए अधिमान्य लाभों पर एकाधिकार करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

(3) जहाँ तक अन्य पिछड़े वर्गों का सवाल है, रोजगार और शिक्षा में आरक्षण के उद्देश्य से उनकी पहचान करने के लिए दो परीक्षण एक साथ लागू किए जाने चाहिए: एक, पिछड़ेपन के मामले में वे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बराबर होने चाहिए; और दो, वे साधन परीक्षण को पूरा करें जैसे कि राज्य सरकार मौजूदा आर्थिक स्थितियों के संदर्भ में निर्धारित कर सकती है।

(4) रोजगार, शिक्षा और विधायी संस्थाओं में आरक्षण की नीति की हर पाँच साल में समीक्षा की जानी चाहिए। इससे (i) राज्य को आरक्षण नीति के विशेष पहलुओं से उत्पन्न विकृतियों को सुधारने का और (ii) पिछड़े और गैर-पिछड़े दोनों लोगों को आरक्षण की नीति के व्यावहारिक प्रभाव पर सार्वजनिक बहस में अपने विचार व्यक्त करने का अवसर मिलेगा।

125. विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में आरक्षण 15 वर्ष की अवधि के लिए जारी रहना चाहिए। उन्होंने आगे टिप्पणी की कि साधन परीक्षण, अर्थात् आर्थिक पिछड़ेपन का परीक्षण, 15 वर्ष की अवधि के बाद अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर भी लागू होना चाहिए, जैसा कि खंड (1) में उल्लेख किया गया है। जहाँ तक अन्य पिछड़े वर्गों का संबंध है, विद्वान

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

मुख्य न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि दोहरे परीक्षण लागू किए जाने चाहिए; एक, कि वे पिछड़ेपन के मामले में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बराबर होने चाहिए; और दो, कि उन्हें साधन परीक्षण को पूरा करना चाहिए जैसे कि राज्य सरकार मौजूदा आर्थिक स्थितियों के संदर्भ में निर्धारित कर सकती है। यह भी टिप्पणी की गई है कि रोजगार, शिक्षा और विधायी संस्थानों में आरक्षण की नीति की हर 5 साल में समीक्षा की जानी चाहिए।

126. अनुच्छेद 30 और 31 में न्यायमूर्ति डी.ए. देसाई की टिप्पणियों का उल्लेख करना भी उचित होगा, जो इस प्रकार हैं:

"30. मैं अपनी बात समाप्त करना चाहता हूँ। यदि प्रतिपूरक भेदभाव या सकारात्मक कार्रवाई के लिए आर्थिक मानदंड स्वीकार किया जाता है, तो यह सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन के मूल कारण पर प्रहार करेगा और साथ ही जाति संरचना के विनाश की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठाएगा, जो बदले में राष्ट्र के धर्मनिरपेक्ष चरित्र को आगे बढ़ाएगा। यह दृष्टिकोण दो संवैधानिक लक्ष्यों को वास्तविकता में बदलने का प्रयास करता है: पहला, भारतीय समाज में जातिगत स्तरीकरण की निरंतरता पर प्रहार करना ताकि प्रतिगामी आंदोलन को रोका जा सके और जातिविहीन समाज की स्थापना की दिशा में एक मजबूत कदम उठाया जा सके; और दूसरा, समाज के वंचित वर्गों को अपनी स्थिति बढ़ाने और जीवन की मुख्यधारा का हिस्सा बनने का अवसर देकर गरीबी को उत्तरोत्तर समाप्त करना, जिसका अर्थ है गरीबी का उन्मूलन।

31. मैं यह स्पष्ट कर दूँ कि यह दृष्टिकोण अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में आरक्षण से संबंधित नहीं है। हजारों वर्षों के भेदभाव और शोषण को एक पीढ़ी में मिटाया नहीं जा सकता। लेकिन यहां भी आर्थिक मानदंड लागू करने लायक है, जिसमें उन लोगों को वरीयता देने से मना किया जाता है जो पहले से ही इससे लाभान्वित हो चुके हैं और अपनी स्थिति में सुधार कर चुके हैं। और अंत में आरक्षण की एक समयावधि होनी चाहिए अन्यथा रियायतें निहित स्वार्थ बन जाती हैं। यह एक विरोधी व्यवस्था में एक निर्णय नहीं है। जब तर्क समाप्त हुए, तो एक बयान दिया गया कि कर्नाटक राज्य सरकार नागरिकों के सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों की पहचान करने के लिए संवैधानिक रूप से ठोस और राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार्य मानदंड निर्धारित करने के लिए एक आयोग नियुक्त करेगी, जिनके लाभ के लिए राज्य कार्रवाई की जाएगी। यह दिशा-निर्देशों पर एक विस्तृत निबंध होने का दावा नहीं करता है, लेकिन कुछ हद तक यह इंगित कर सकता है कि प्रस्तावित आयोग को किस दिशा में आगे बढ़ना चाहिए।

127. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि विद्वान न्यायाधीश प्रतिपूरक भेदभाव या सकारात्मक कार्रवाई के उद्देश्य से आर्थिक मानदंड लागू करने का समर्थन करते हैं। विद्वान न्यायाधीश के अनुसार, यह सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन के मूल कारण पर प्रहार करेगा। उन्होंने आगे कहा कि साथ ही यह जाति संरचना के विनाश की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम होगा, जो बदले में राष्ट्र के धर्मनिरपेक्ष चरित्र को आगे बढ़ाएगा।

128. हालांकि उन्होंने चेतावनी दी कि ऐसा दृष्टिकोण अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में आरक्षण से संबंधित नहीं है, फिर भी, उनके मामलों में भी, आर्थिक मानदंड उन लोगों के लिए वरीयता उपचार

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

से इनकार करके लागू करने योग्य है, जो पहले से ही इसका लाभ उठा चुके हैं और अपनी स्थिति में सुधार कर चुके हैं।

129. आरक्षण के साम्राज्यवाद विरोधी होने के तर्क को खारिज करते हुए, न्यायमूर्ति चिन्नाप्पा रेड्डी ने इस प्रकार टिप्पणी की:

"35. श्रेष्ठ, अभिजात्य दृष्टिकोण के परिणामों में से एक यह है कि आरक्षण के प्रश्न को हमेशा योग्यता सिद्धांत और प्रतिपूरक सिद्धांत के बीच संघर्ष के रूप में देखा जाता है। नहीं, ऐसा नहीं है। वास्तविक संघर्ष उन लोगों के वर्ग के बीच है, जो कभी गरीबी, अशिक्षा और पिछड़ेपन के रेगिस्तान में नहीं रहे या जो पहले ही बाहर आ चुके हैं और सुविधाजनक जीवन के नखलिस्तान में जमे हुए हैं और वे जो अभी भी रेगिस्तान में हैं और नखलिस्तान तक पहुँचना चाहते हैं। बगीचे में पर्याप्त फल नहीं हैं और इसलिए जो लोग अंदर हैं, वे उन लोगों को बाहर रखना चाहते हैं जो बाहर हैं। हमारे देश के अल्पपोषित, गरीबी से पीड़ित, बमुश्किल साक्षर और कमजोर लोगों के विशाल बहुमत के लिए तथाकथित योग्यता सिद्धांत के विनाशकारी परिणाम इतने स्पष्ट हैं कि उन्हें बयान नहीं किया जा सकता। और, योग्यता क्या है? ऐसी व्यवस्था में कोई योग्यता नहीं है जो ऐसे परिणाम लाती है। क्या अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछड़े वर्गों का बच्चा, जो गरीबी, अशिक्षा और संस्कृति विरोधी माहौल में पला-बढ़ा है, जिसे परंपरा और समाज द्वारा नीची निगाह से देखा जाता है, जिसके घर में पढ़ने के लिए किताबें और पत्रिकाएँ नहीं हैं, सुनने के लिए रेडियो नहीं है, देखने के लिए टीवी नहीं है, होमवर्क में मदद करने वाला कोई नहीं है, जो निकटतम स्थानीय बोर्ड स्कूल और कॉलेज में जाता है, जिसके माता-पिता या तो अशिक्षित हैं या इतने अज्ञानी और कम जानकारी वाले हैं कि वह किसी महत्वपूर्ण मामले पर उनकी सलाह लेने की उम्मीद भी नहीं कर सकता, एक बच्चा जिसे दुनिया में क्या हो रहा है, यह जानने के लिए अखबार पढ़ने के लिए मजबूरन निकटतम सार्वजनिक वाचनालय में जाना पड़ता है, क्या इस बच्चे ने योग्यता नहीं पाई है यदि वह अपनी सभी कमियों के बावजूद एक प्रतियोगी परीक्षा में 40 प्रतिशत या 50 प्रतिशत अंक प्राप्त करने में सक्षम है, जहाँ उच्च वर्ग के बच्चे, जिनके पास सभी सुविधाएँ हैं, जो जाते हैं सेंट पॉल हाई स्कूल और सेंट स्टीफंस कॉलेज में पढ़ने वाले और जिन्हें शायद परीक्षा के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित किया गया है, वे 70, 80 या 90 प्रतिशत अंक प्राप्त कर सकते हैं? निश्चित रूप से, एक बच्चा जो इतनी सारी बाधाओं को पार करने में सक्षम है, उससे जीवन में आगे बढ़ने के साथ-साथ बेहतर से बेहतर प्रदर्शन करने की उम्मीद की जा सकती है। अगर वह वसंत का फूल नहीं बन सकता, तो वह शरद ऋतु का फूल तो बन ही सकता है। फिर, उसे कथित योग्यता के सिद्धांत पर क्यों रोका जाना चाहिए? दक्षता की आवश्यकताओं को हमेशा न्यूनतम मानकों के निर्धारण द्वारा सुरक्षित किया जा सकता है। उच्च वर्गों के मामले में हमेशा औसत दर्जे की जीत हुई है। लेकिन जब हम अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और पिछड़े वर्गों की बात करते हैं तो तथाकथित योग्यता के सिद्धांत को औसत दर्जे के खिलाफ क्यों रखा जाना चाहिए?

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

130. विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि हमारे देश के अल्पपोषित, गरीबी से ग्रस्त, कम साक्षर और कमजोर लोगों के विशाल बहुमत के लिए तथाकथित योग्यता सिद्धांत के विनाशकारी परिणाम इतने स्पष्ट हैं कि उन्हें बयान नहीं किया जा सकता। विद्वान न्यायाधीश ने अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछड़े वर्गों के एक बच्चे की तुलना की, जिसका पालन-पोषण गरीबी, अशिक्षा और संस्कृति-विरोधी माहौल में हुआ है, जिसे परंपरा और समाज द्वारा नीची नजर से देखा जाता है, जिसके पास घर में पढ़ने के लिए किताबें और पत्रिकाएं नहीं हैं, सुनने के लिए कोई रेडियो नहीं है, देखने के लिए कोई टीवी नहीं है, होमवर्क में उसकी मदद करने वाला कोई नहीं है, जो निकटतम स्थानीय बोर्ड स्कूल और कॉलेज में जाता है, जिसके माता-पिता या तो अशिक्षित हैं या इतने अज्ञानी और कम जानकारी वाले हैं कि वह किसी भी महत्वपूर्ण मामले पर उनकी सलाह लेने की उम्मीद भी नहीं कर सकता है। विद्वान न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि इन सभी असुविधाओं के बावजूद, यदि वह किसी प्रतियोगी परीक्षा में 40% या 50% अंक प्राप्त करने में सक्षम है, तो उसे कोई योग्यता नहीं कहा जा सकता है, खासकर यदि उसकी तुलना उच्च वर्ग के बच्चों से की जाए, जिनके पास सभी सुविधाएँ हैं, जो सेंट पॉल हाई स्कूल और सेंट स्टीफन कॉलेज में जाते हैं, और जिन्हें शायद परीक्षा के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित किया गया है और वे 70, 80 या 90% अंक प्राप्त कर सकते हैं। विद्वान न्यायाधीश ने आगे टिप्पणी की कि दक्षता की आवश्यकताओं को हमेशा न्यूनतम मानकों के निर्धारण द्वारा सुरक्षित रखा जा सकता है।

131. अनुसूचित जातियों की स्थिति पर जोर देते हुए, विद्वान न्यायाधीश ने इस प्रकार टिप्पणी की:

“51.अब, भारत के ग्रामीण परिदृश्य से परिचित कोई भी व्यक्ति तुरन्त इस स्थिति को पहचान लेगा कि अनुसूचित जातियाँ एक विशेष रूप से अपमानित स्थिति में हैं और उनके साथ जाति के व्यक्ति के रूप में नहीं, बल्कि बहिष्कृत लोगों के रूप में व्यवहार किया जाता है। यहाँ तक कि अन्य पिछड़े वर्ग भी उनसे दूर रहते हैं और उन्हें निम्न श्रेणी का प्राणी मानते हैं। उनके साथ जो विशेष अपमान किया गया है, उसके कारण ही संविधान को उनके लिए विशेष प्रावधान करने के लिए आगे आना पड़ा। अनुसूचित जातियों के अस्तित्व की स्थितियों के साथ निकटता के परीक्षण को लागू करके अन्य वर्गों के सामाजिक पिछड़ेपन को निर्धारित करने का प्रयास करने का कोई मतलब नहीं है। ऐसा परीक्षण व्यावहारिक रूप से अनुसूचित जातियों और जनजातियों के अलावा सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण के प्रावधान को रद्द कर देगा। ऐसा परीक्षण मौजूदा उच्च वर्गों के प्रभुत्व को कायम रखेगा। इस तरह की परीक्षा उच्च वर्गों और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के बीच स्थित वर्गों के एक बड़े हिस्से को पिछड़े वर्गों की श्रेणी से बाहर कर देगी और उन्हें स्थायी रूप से नुकसान में डाल देगी। केवल "प्रबुद्ध" वर्ग ही सभी "खुले" पदों और सीटों पर कब्जा कर लेंगे और आरक्षित पद और सीटें अनुसूचित जातियों और जनजातियों और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के बहुत करीब के लोगों को मिलेंगी। "प्रबुद्ध" वर्गों के पीछे और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के आगे के अधिकांश लोग बेसहारा हो जाएंगे, उन्हें खुद को थोपने का कभी मौका नहीं मिलेगा।”

132. विद्वान न्यायाधीश ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि जहाँ तक अन्य पिछड़े वर्गों का सवाल है, उनके सामाजिक पिछड़ेपन का पता अनुसूचित जातियों के अस्तित्व की स्थितियों के साथ निकटता के परीक्षण को

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

लागू करके लगाया जाना चाहिए। विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि इस तरह की परीक्षा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के अलावा सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण के प्रावधान को व्यावहारिक रूप से रद्द कर देगी। उन्होंने कहा कि इस तरह की परीक्षा उच्च वर्गों और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के बीच के वर्गों के एक बड़े हिस्से को पिछड़े वर्गों की श्रेणी से बाहर कर देगी और उन्हें स्थायी रूप से नुकसान में डाल देगी। उन्होंने कहा कि केवल "प्रबुद्ध" वर्ग ही सभी "खुले" पदों और सीटों पर कब्जा कर लेंगे और आरक्षित पद और सीटें अनुसूचित जातियों और जनजातियों और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के बहुत करीब के लोगों को मिलेंगी। हालांकि, "प्रबुद्ध" वर्गों के पीछे और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के करीब के लोगों से आगे के अधिकांश लोग बेसहारा रह जाएंगे।

133. **के.सी. वसंत कुमार (उपरोक्त)** के मामले में न्यायमूर्ति वेंकटरमैया (तात्कालिक न्यायमूर्ति) की निम्नलिखित टिप्पणियों का संदर्भ देना भी प्रासंगिक होगा। :

“143. यह दृष्टिकोण जवाहरलाल नेहरू द्वारा 13 दिसंबर, 1946 को पेश किए गए संविधान के उद्देश्यों और उद्देश्यों के बारे में संकल्प के खंड (6) में निहित इरादे के अनुरूप है, जिसमें संविधान सभा से अल्पसंख्यकों, पिछड़े और आदिवासी क्षेत्रों और दलित और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए पर्याप्त सुरक्षा प्रदान करने वाला संविधान बनाने के लिए कहा गया था और संविधान के अनुच्छेद 338 और अनुच्छेद 340 के प्रावधानों के साथ भी। जब तक सरकार पर उपरोक्त प्रतिबंध नहीं लगाया जाता है, तब तक सरकार के लिए किसी भी जाति या समूह या समुदाय को पिछड़ा कहना संभव हो जाएगा, जो राज्य में एक शक्तिशाली राजनीतिक लॉबी का गठन करता है, भले ही वह वास्तव में एक उन्नत जाति या समूह या समुदाय हो, लेकिन किसी अन्य अग्रिम समुदाय से थोड़ा नीचे हो। एक और महत्वपूर्ण कारण है कि ऐसी उन्नत जातियों, समूहों या समुदायों को पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल नहीं किया जाना चाहिए और वह यह है कि यदि ऐसी जातियाँ, समूह और समुदाय जो काफी उन्नत हैं और ऐसी जातियाँ, समूह और समुदाय जो वास्तव में सबसे निचले स्तर पर पिछड़े हैं, उन्हें एक साथ पिछड़े वर्गों के रूप में वर्गीकृत किया जाता है, तो आरक्षण का लाभ अधिक उन्नत वर्गों द्वारा खा लिया जाएगा और वास्तव में पात्र वर्ग व्यावहारिक रूप से किसी भी लाभ से वंचित रह जाएंगे क्योंकि उनमें से अधिक उन्नत जातियों, समूहों या समुदायों के बच्चों की संख्या अधिक पिछड़ी जातियों, समूहों या समुदायों के बच्चों की तुलना में अधिक अंक प्राप्त करेगी। ऐसी स्थिति में आरक्षण का पूरा उद्देश्य ही विफल हो जाएगा। यह कहा गया है कि इस विषम परिस्थिति से बचने के लिए देवराज उर्स की सरकार को अनुच्छेद 15(4) और अनुच्छेद 16(4) के उद्देश्यों को प्रभावी ढंग से लागू करने के उद्देश्य से सिफारिशें करने के लिए हवनूर आयोग की नियुक्ति करनी पड़ी। इसलिए, जहाँ तक संभव हो पिछड़े वर्गों की सूची तैयार करते समय राज्य सरकार को उपरोक्त सिद्धांत को एक मार्गदर्शक कारक के रूप में ध्यान में रखना होगा। उपरोक्त सिद्धांत को अपनाने से संविधान के अनुच्छेद 15(4) और अनुच्छेद 16(4) के तहत लाभ के लिए पात्र व्यक्तियों की संख्या में अनावश्यक रूप से कमी नहीं आएगी, क्योंकि पिछले कुछ वर्षों में राज्य और केंद्र सरकारों द्वारा उनके संबंध में किए गए कई सुधारात्मक उपायों के कारण अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

का स्तर भी बढ़ रहा है। साथ ही, यह वास्तव में पिछड़ी जातियों, समूहों और समुदायों को कई उन्नत समूहों के शिकंजे से भी मुक्त करेगा, जिन्हें लगभग तीन दशकों से वास्तविक पिछड़े वर्गों के साथ आरक्षण का लाभ मिला हुआ है। अब समय आ गया है कि उन जातियों, समूहों और समुदायों पर अधिक ध्यान दिया जाए जो निम्नतम स्तर पर हैं और उन सभी असुविधाओं और अक्षमताओं (शायद अस्पृश्यता को छोड़कर) से पीड़ित हैं, जिनसे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों में से कई लोग पीड़ित हैं, लेकिन उन्हें अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की सूची में शामिल होने से मिलने वाले समान या समान लाभ नहीं मिल रहे हैं।

144. चूंकि आर्थिक स्थिति भी एक प्रासंगिक मानदंड है, इसलिए पिछड़ेपन को निर्धारित करने के लिए परीक्षणों में से एक के रूप में "साधन परीक्षण" को शामिल करना उचित होगा, जैसा कि केरल सरकार ने *जयश्री मामले* में किया था। ये दो परीक्षण अर्थात् जाति या समूह या समुदाय की स्थितियाँ अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों की स्थितियों के समान होनी चाहिए और उम्मीदवार जिस परिवार से संबंधित है उसकी आय निर्दिष्ट सीमा से अधिक नहीं होनी चाहिए, अनुच्छेद 15(4) के तहत किए जाने वाले किसी भी आरक्षण के लाभार्थियों को निर्धारित करने में उपयोगी मानदंड के रूप में काम करेंगे। हालांकि अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजन के लिए यह भी दिखाया जाना चाहिए कि संबंधित पिछड़ा वर्ग सरकार की राय में सरकारी सेवाओं में पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व नहीं करता है।

134. विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि दो परीक्षण अर्थात् जाति या समूह या समुदाय की स्थितियाँ अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों की स्थितियों से कमोबेश मिलती-जुलती होनी चाहिए और उम्मीदवार जिस परिवार से संबंधित है उसकी आय निर्दिष्ट सीमा से अधिक नहीं होनी चाहिए, अनुच्छेद 15(4) के तहत किए जाने वाले किसी भी आरक्षण के लाभार्थियों को निर्धारित करने में उपयोगी मानदंड के रूप में काम करेंगे। विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि जहाँ तक अनुच्छेद 16(4) का संबंध है, यह भी दिखाया जाना चाहिए कि सरकार की राय में पिछड़े वर्ग का सरकारी सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है।

ई. इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ

135. इसके बाद इस न्यायालय के 9 न्यायाधीशों की पीठ का **इंद्रा साहनी और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य** के मामले में दिया गया निर्णय आता है, जिसे अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण के बारे में कानून बनाने में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर माना जा सकता है। न्यायाधीशों की पीठ के उक्त निर्णय के अंशों को रेफरल निर्णय (**पंजाब राज्य और अन्य बनाम दर्विंदर सिंह और अन्य**) में विस्तार से पुनः प्रस्तुत किया गया है।

136. मैं न्यायमूर्ति बी.पी. जीवन रेड्डी द्वारा की गई कुछ टिप्पणियों का उल्लेख करूंगा, जिन्होंने स्वयं और न्यायमूर्ति एम.एच. कनिया, सी.जे., न्यायमूर्ति एम.एन. वैकटचलैया और न्यायमूर्ति ए.एम. अहमदी (तत्कालीन माननीय न्यायाधीश) के लिए निर्णय लिखा है।

"781. सबसे पहले, हम यह कह सकते हैं कि इस चर्चा के उद्देश्य से, हम अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों को अलग रखते हैं (क्योंकि वे निश्चित रूप से पिछड़े वर्गों में शामिल हैं), सिवाय इस टिप्पणी के कि अनुच्छेद 16(4) द्वारा परिकल्पित पिछड़े वर्गों में

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कुछ जातियां शामिल हैं – क्योंकि इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि अनुसूचित जातियों में काफी जातियां शामिल हैं।"

137. माननीय न्यायाधीश (न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी) ने टिप्पणी की कि 'नागरिकों के पिछड़े वर्ग' की पहचान के संबंध में, हम अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों को अलग रखते हैं। यह ध्यान रखना प्रासंगिक होगा कि निर्णय के उक्त भाग में माननीय न्यायाधीश (न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी) पिछड़े नागरिकों की पहचान के संबंध में एक मुद्दे पर विचार कर रहे थे। इस पृष्ठभूमि में, यह टिप्पणी की गई कि न्यायालय अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों को अलग रख रहा है क्योंकि उन्हें निश्चित रूप से पिछड़े वर्गों में शामिल किया गया है। यह भी टिप्पणी की गई कि अनुच्छेद 16(4) द्वारा परिकल्पित पिछड़े वर्गों में कुछ जातियाँ शामिल हैं क्योंकि इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि अनुसूचित जातियों में काफी जातियाँ शामिल हैं।

138. अनुच्छेद 790 से आगे माननीय न्यायाधीश ने 'साधन-परीक्षण' और 'क्रीमी लेयर' पर विचार किया। अनुच्छेद 792 को पुनः प्रस्तुत करना उचित होगा, जो इस प्रकार है:

"792. हमारी राय में, यह ऐसे परीक्षण की अनुमति या वांछनीयता का प्रश्न नहीं है, बल्कि एक वर्ग की उचित और अधिक उपयुक्त पहचान का प्रश्न है – एक पिछड़ा वर्ग। वर्ग की अवधारणा ही ऐसे व्यक्तियों की संख्या को दर्शाती है, जिनमें कुछ सामान्य विशेषताएं होती हैं, जो उन्हें दूसरों से अलग करती हैं। अनुच्छेद 16 के खंड (4) के तहत पिछड़े वर्ग में, यदि जोड़ने वाली कड़ी सामाजिक पिछड़ापन है, तो यह मोटे तौर पर किसी दिए गए वर्ग में समान होनी चाहिए। यदि कुछ सदस्य सामाजिक रूप से बहुत आगे हैं (जिसका संदर्भ में अनिवार्य रूप से आर्थिक रूप से और शैक्षिक रूप से भी अर्थ हो सकता है) तो उनके और शेष वर्ग के बीच जोड़ने वाला धागा टूट जाता है। वे वर्ग में अनुपयुक्त होंगे। उन्हें बाहर करने के बाद, क्या वर्ग एक सघन वर्ग होगा। वास्तव में, ऐसा बहिष्करण वास्तव में पिछड़े लोगों को लाभ पहुंचाता है। हालाँकि, वास्तव में कठिनाई रेखा खींचने में है – रेखा कैसे और कहाँ खींची जाए? क्योंकि, रेखा खींचते समय यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि इसका परिणाम यह न हो कि एक हाथ से दूसरे हाथ से वह छीन लिया जाए जो दिया गया है। बहिष्कार का आधार केवल आर्थिक नहीं होना चाहिए, जब तक कि आर्थिक उन्नति इतनी अधिक न हो कि इसका अर्थ अनिवार्य रूप से सामाजिक उन्नति हो। आइए इस बिंदु को स्पष्ट करते हैं। पिछड़े वर्ग का एक सदस्य, मान लीजिए बढ़ई जाति का एक सदस्य, मध्य पूर्व में जाता है और वहां बढ़ई का काम करता है। यदि आप उसकी वार्षिक आय रूप में लें, तो यह भारतीय मानक से काफी अधिक होगी। क्या उसे पिछड़े वर्ग से बाहर रखा जाना चाहिए? क्या भारत में उसके बच्चों को अनुच्छेद 16(4) के लाभ से वंचित किया जाना चाहिए? हालाँकि, स्थिति अलग हो सकती है, यदि वह आर्थिक रूप से इतना ऊपर उठ जाता है कि – मान लीजिए खुद एक कारखाना मालिक बन जाता है। ऐसी स्थिति में, उसकी सामाजिक स्थिति भी बढ़ जाती है। वह खुद दूसरों को रोजगार देने की स्थिति में होगा। ऐसे मामले में, उसकी आय केवल उसकी सामाजिक स्थिति का माप है। अन्यथा भी आय सीमा लागू करने में कई व्यावहारिक कठिनाइयाँ हैं। उदाहरण के लिए, बंबई, दिल्ली या कलकत्ता जैसे शहरों में 36,000 रुपये की वार्षिक आय बहुत मायने नहीं रखती, जबकि ग्रामीण भारत में यह

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कहीं भी अच्छी आय हो सकती है। खींची जाने वाली रेखा यथार्थवादी होनी चाहिए। दूसरा सवाल यह होगा कि क्या ऐसी रेखा पूरे देश या किसी दिए गए राज्य के लिए एक समान होनी चाहिए या ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में अलग-अलग होनी चाहिए इत्यादि। इसके अलावा, कृषि से आय का आकलन करना मुश्किल हो सकता है और इसलिए, कृषकों के मामले में, रेखा को जोत की सीमा के संदर्भ में खींचना पड़ सकता है। जबकि किसी व्यक्ति की आय को उसकी सामाजिक उन्नति के माप के रूप में लिया जा सकता है, निर्धारित की जाने वाली सीमा ऐसी नहीं होनी चाहिए कि एक हाथ से जो दिया गया है उसे दूसरे हाथ से छीन लिया जाए। आय सीमा ऐसी होनी चाहिए जो सामाजिक उन्नति को दर्शाती हो। साथ ही, यह भी माना जाना चाहिए कि कुछ पद ऐसे हैं, जिन पर बैठे लोगों को बिना किसी जांच-पड़ताल के सामाजिक रूप से उन्नत माना जा सकता है। उदाहरण के लिए, यदि पिछड़े वर्ग का कोई व्यक्ति आईएस या आईपीएस या किसी अन्य अखिल भारतीय सेवा का सदस्य बन जाता है, तो समाज में उसकी स्थिति (सामाजिक स्थिति) बढ़ जाती है; वह सामाजिक रूप से वंचित नहीं रह जाता। उसके बच्चों को अपनी क्षमता को साकार करने का पूरा अवसर मिलता है। वे जीवन की दौड़ में किसी भी तरह से विकलांग नहीं होते। उनका वेतन भी ऐसा होता है कि वे अभाव से ऊपर होते हैं। यह तर्कसंगत है कि ऐसी स्थिति में उसके बच्चों को आरक्षण का लाभ नहीं दिया जाता। क्योंकि उन्हें आरक्षण का लाभ देकर उस पिछड़े वर्ग के अन्य वंचित सदस्यों को उस लाभ से वंचित किया जा सकता है। फिर प्रतिवादियों के लिए यह तर्क दिया जाता है कि 'एक निगल से गर्मी नहीं आती' और यह कि केवल इसलिए कि किसी जाति या वर्ग के कुछ सदस्य सामाजिक रूप से उन्नत हो जाते हैं, वह वर्ग/जाति पिछड़ी नहीं रह जाती। यह बताया गया है कि अनुच्छेद 16 का खंड (4) समूह पिछड़ेपन को लक्षित करता है न कि व्यक्तिगत पिछड़ेपन को। जबकि हम इस बात से सहमत हैं कि खंड (4) समूह पिछड़ेपन को लक्षित करता है, हमें लगता है कि ऐसे सामाजिक रूप से उन्नत सदस्यों को बाहर करने से वह 'वर्ग' वास्तव में पिछड़ा वर्ग बन जाएगा और खंड (4) के उद्देश्य और उद्देश्य को अधिक उचित रूप से पूरा करेगा। (यह चर्चा केवल अन्य पिछड़े वर्गों तक ही सीमित है और अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों के मामले में इसकी कोई प्रासंगिकता नहीं है)।"

139. माननीय न्यायाधीश ने कहा कि यदि किसी वर्ग के कुछ सदस्य सामाजिक रूप से बहुत अधिक उन्नत हैं, तो उनके और शेष वर्ग के बीच संपर्क सूत्र टूट जाता है। न्यायालय ने कहा कि 'सामाजिक रूप से बहुत अधिक उन्नत' का अर्थ आर्थिक रूप से है और इसका अर्थ शैक्षणिक रूप से भी हो सकता है। यह देखा गया है कि वे वर्ग में अनुपयुक्त होंगे। न्यायालय ने रेखा खींचने में कठिनाई पर विचार किया। यह देखा गया कि इसका अर्थ यह नहीं होना चाहिए कि जो दिया गया है उसे एक हाथ से दूसरे हाथ से छीन लिया जाए। न्यायालय ने कहा कि बहिष्कार का आधार केवल आर्थिक नहीं होना चाहिए, जब तक कि आर्थिक उन्नति इतनी अधिक न हो कि इसका अर्थ अनिवार्य रूप से सामाजिक उन्नति हो। न्यायालय ने कहा कि खींची जाने वाली रेखा यथार्थवादी होनी चाहिए। न्यायालय ने यह प्रश्न उठाया कि क्या ऐसी रेखा पूरे देश या किसी दिए गए राज्य के लिए एक समान होनी चाहिए या क्या यह ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में भिन्न होनी चाहिए। यह देखा गया है कि चूंकि कृषि से आय का आकलन

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

करना कठिन है, इसलिए कृषकों के मामले में, रेखा को जोत की सीमा के संदर्भ में खींचा जाना चाहिए। यह देखा गया है कि आय सीमा ऐसी होनी चाहिए जो सामाजिक उन्नति का अर्थ और संकेत दे। न्यायालय ने कहा कि साथ ही, यह भी माना जाना चाहिए कि कुछ ऐसे पद हैं, जिन पर बैठे लोगों को बिना किसी और जांच के सामाजिक रूप से उन्नत माना जा सकता है। यह देखा गया है कि यदि नामित पिछड़े वर्ग का कोई सदस्य आईएस या आईपीएस या किसी अन्य अखिल भारतीय सेवा का सदस्य बन जाता है, तो समाज में उसकी स्थिति बढ़ जाती है और वह सामाजिक रूप से वंचित नहीं रह जाता है। न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 16 का खंड (4) समूह पिछड़ेपन को लक्षित करता है, ऐसे सामाजिक रूप से उन्नत सदस्यों का बहिष्कार 'वर्ग' को वास्तव में पिछड़ा वर्ग बना देगा और खंड (4) के उद्देश्य और उद्देश्य को अधिक उचित रूप से पूरा करेगा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह स्पष्ट किया गया है कि उक्त चर्चा केवल अन्य पिछड़े वर्गों तक ही सीमित थी और अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों के मामले में इसकी कोई प्रासंगिकता नहीं थी।

140. फिर यह प्रश्न कि क्या पिछड़े वर्गों को पिछड़े और अधिक पिछड़े वर्गों में विभाजित किया जा सकता है, इसका उत्तर इस प्रकार दिया गया है:

“802. हमारा मत है कि किसी राज्य द्वारा पिछड़े वर्गों को पिछड़े और अधिक पिछड़े के रूप में वर्गीकृत करने पर कोई संवैधानिक या कानूनी रोक नहीं है। हम यह नहीं कह रहे हैं कि ऐसा किया जाना चाहिए। हम इस प्रश्न से चिंतित हैं कि यदि कोई राज्य ऐसा वर्गीकरण करता है, तो क्या यह अवैध होगा? हमें नहीं लगता। आइए मंडल आयोग द्वारा विकसित मानदंड लें। कोई भी जाति, समूह या वर्ग जिसने ग्यारह या अधिक अंक प्राप्त किए, उसे पिछड़ा वर्ग माना जाता था। अब, ऐसा नहीं है कि सभी हजारों जातियों/समूहों/वर्गों ने समान अंक प्राप्त किए। कुछ जातियाँ/समूह/वर्ग ऐसे हो सकते हैं जिन्हें 20 से 22 के बीच अंक मिले हों और कुछ ऐसे भी हो सकते हैं जिन्हें ग्यारह से तेरह के बीच अंक मिले हों। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि इन दो जातियों/समूहों/वर्गों के बीच कोई अंतर नहीं है। उदाहरण के लिए, दो व्यावसायिक समूहों को लें, जैसे सुनार और वड्डे (आंध्र प्रदेश में पारंपरिक पत्थर काटने वाले) दोनों ही अन्य पिछड़ा वर्ग में शामिल हैं। कोई भी इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि सुनार वड्डे की तुलना में बहुत कम पिछड़े हैं। यदि उन दोनों को एक साथ समूहीकृत किया जाए और आरक्षण प्रदान किया जाए, तो अपरिहार्य परिणाम यह होगा कि सुनार सभी आरक्षित पदों को ले लेंगे और वड्डे के लिए कोई भी पद नहीं बचेगा। ऐसी स्थिति में, कोई राज्य अन्य पिछड़े वर्गों के बीच भी वर्गीकरण करना उचित समझ सकता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि पिछड़े वर्गों में से अधिक पिछड़े लोगों को उनके लिए इच्छित लाभ प्राप्त हो। हालांकि, रेखा कहां खींची जाए और उप-वर्गीकरण कैसे किया जाए, यह आयोग और राज्य का मामला है और जब तक यह उचित तरीके से किया जाता है, तब तक न्यायालय हस्तक्षेप नहीं कर सकता। इस संबंध में, आंध्र प्रदेश में प्राप्त वर्गीकरण का संदर्भ दिया जा सकता है। पिछड़े वर्गों को चार श्रेणियों में विभाजित किया गया है। समूह ए में "आदिवासी जनजातियाँ, विमुक्त जातियाँ, खानाबदोश और अर्ध-खानाबदोश जनजातियाँ" शामिल हैं। समूह बी में टैपर, बुनकर, बड़ई, लोहार, सुनार, कामसालिन आदि जैसे पेशेवर समूह शामिल हैं। समूह सी "अनुसूचित जातियों" से संबंधित है

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

जो ईसाई धर्म में परिवर्तित हो गए हैं और उनकी संतानें हैं, जबकि समूह डी में अन्य सभी वर्ग/समुदाय/समूह शामिल हैं, जिन्हें समूह ए, बी और सी में शामिल नहीं किया गया है। पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित 25% रिक्तियों को उनकी संबंधित जनसंख्या के अनुपात में उनके बीच उप-विभाजित किया जाता है। बलराम [(1972) 1 एससीसी 660: (1972) 3 एससीआर 247] में इस वर्गीकरण को उचित ठहराया गया था। यह केवल यह दिखाने के लिए है कि पिछड़े वर्गों में भी उचित आधार पर उप-वर्गीकरण किया जा सकता है।

803. इस मुद्दे को देखने का एक और तरीका है। अनुच्छेद 16(4) केवल एक वर्ग को मान्यता देता है, अर्थात् "नागरिकों का पिछड़ा वर्ग"। यह अनुच्छेद 15(4) की तरह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बारे में अलग से बात नहीं करता है। फिर भी, यह विवाद से परे है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति भी "नागरिकों के पिछड़े वर्ग" की अभिव्यक्ति में शामिल हैं और उनके पक्ष में अलग से आरक्षण प्रदान किया जा सकता है। यह पूरे देश में एक अच्छी तरह से स्वीकृत घटना है। इसके पीछे तर्क क्या है? यह है कि अगर अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति और अन्य पिछड़े वर्गों को एक साथ रखा जाता है, तो ओबीसी सभी रिक्तियों को ले लेंगे और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को उपेक्षित छोड़ देंगे। यही तर्क अधिक पिछड़े और पिछड़े के बीच वर्गीकरण को भी उचित ठहराता है। हमारा यह कहने का मतलब नहीं है – हम दोहरा सकते हैं – कि ऐसा किया जाना चाहिए। हम केवल यह कह रहे हैं कि यदि कोई राज्य ऐसा करना चाहता है, तो यह कानून में अस्वीकार्य नहीं है।

141. न्यायालय ने स्पष्ट शब्दों में माना कि पिछड़े वर्गों में भी उचित आधार पर उप-वर्गीकरण किया जा सकता है। न्यायालय ने माना कि पिछड़े और अधिक पिछड़े वर्ग हो सकते हैं और राज्य पिछड़े वर्गों में अधिक पिछड़े लोगों को विशेष लाभ प्रदान करना उचित समझ सकता है। यह देखा गया है कि रेखा कहाँ खींची जाए और उप-वर्गीकरण कैसे किया जाए, यह आयोग और राज्य का मामला है और जब तक यह उचित रूप से किया जाता है, न्यायालय हस्तक्षेप नहीं कर सकता।

142. न्यायालय ने देखा कि अनुच्छेद 16(4) केवल एक वर्ग को मान्यता देता है, अर्थात् "नागरिकों का पिछड़ा वर्ग"। यह देखा गया है कि यह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बारे में अलग से बात नहीं करता है, जैसा कि अनुच्छेद 15(4) करता है। इसलिए यह देखा गया है कि यह विवाद से परे है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को भी "नागरिकों के पिछड़े वर्ग" की अभिव्यक्ति में शामिल किया गया है और उनके पक्ष में अलग से आरक्षण प्रदान किया जा सकता है।

143. यह भी देखा गया है कि यदि अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति और अन्य पिछड़ा वर्ग को एक साथ रखा जाता है, तो ओबीसी सभी रिक्तियों को ले लेंगे और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को उपेक्षित छोड़ देंगे। यह देखा गया है कि इसी तर्क के आधार पर पिछड़े और पिछड़े के बीच वर्गीकरण भी किया जाना चाहिए। हालांकि, न्यायालय ने चेतावनी दी कि इसका यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता है कि राज्य को ऐसा करना चाहिए, बल्कि यह केवल यह कह रहा था कि यदि राज्य ऐसा करना चाहता है, तो यह कानून में अस्वीकार्य नहीं है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

144. इसी तरह का विचार न्यायमूर्ति पी.बी. सावंत ने पैराग्राफ 523, 524 और 525 में भी व्यक्त किया है, जो इस प्रकार है:

“523. प्रश्न के दूसरे भाग के संबंध में, बालाजी [1963 सप 1 एससीआर 439: एआईआर 1963 एससी 649] में यह देखा गया कि पिछड़े वर्गों को आगे पिछड़े और अधिक पिछड़े वर्गों में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है। ये अवलोकन, यद्यपि अनुच्छेद 15(4) के संदर्भ में किए गए थे, जो वहां विचाराधीन थे, निस्संदेह अनुच्छेद 16(4) पर भी समान रूप से लागू होंगे। ये अवलोकन कर्नाटक राज्य द्वारा नियुक्त नागन गौड़ा समिति की सिफारिशों से निपटते समय किए गए थे, जिसने पिछड़े समुदायों को दो डिवीजनों, पिछड़ा और अधिक पिछड़ा में वर्गीकृत करने की सिफारिश की थी। उन सिफारिशों को करते समय समिति ने एक परीक्षण लागू किया था, अर्थात्, “क्या प्रश्न में समुदाय में शिक्षा का स्तर राज्य औसत के 50% से कम था? यदि ऐसा नहीं था, तो समुदाय को पिछड़ा माना जाता था। न्यायालय ने कहा कि रिपोर्ट द्वारा किया गया उप-वर्गीकरण और उसके आधार पर दिया गया आदेश अनुच्छेद 15(4) के तहत न्यायोचित नहीं था, जो 'वास्तव में पिछड़े वर्गों' के लिए विशेष प्रावधान किए जाने को अधिकृत करता है। न्यायालय ने आगे कहा कि पिछड़े वर्गों की दो श्रेणियों को पेश करते हुए, आक्षेपित आदेश का सार यह था कि “राज्य में सबसे उन्नत वर्गों की तुलना में कम उन्नत सभी नागरिकों के लाभ के लिए” उपाय तैयार किए जाएं। न्यायालय के अनुसार, यह अनुच्छेद 15(4) का दायरा नहीं था। आक्षेपित आदेश द्वारा अपनाई गई पद्धति का परिणाम यह हुआ कि राज्य की लगभग 90% आबादी को पिछड़ा माना गया और न्यायालय ने कहा कि यह दर्शाता है कि वास्तव में आदेश ने राज्य की आबादी को सबसे उन्नत और बाकी में कैसे विभाजित किया, जिससे बाद वाले को पिछड़े और अधिक पिछड़े की दो श्रेणियों में रखा गया। इस प्रकार, उप-वर्गीकरण के खिलाफ वहां लिया गया दृष्टिकोण उस मामले के तथ्यों पर था, जिसमें दिखाया गया था कि राज्य की लगभग 90% आबादी पिछड़े के रूप में वर्गीकृत है, पिछड़े लोगों का पिछड़ापन (अधिक पिछड़े के मुकाबले) राज्य में सबसे उन्नत वर्गों की तुलना में मापा जाता है। जो लोग सबसे उन्नत से कम उन्नत थे, उन सभी को पिछड़े के रूप में वर्गीकृत किया गया था। न्यायालय ने माना कि यह अधिक पिछड़े या जो वास्तव में पिछड़े थे, वे ही अनुच्छेद 15(4) के प्रावधानों के लाभ के हकदार होंगे। दूसरे शब्दों में, जबकि अधिक पिछड़े लोगों को सही रूप से पिछड़े के रूप में वर्गीकृत किया गया था, पिछड़े लोगों को सही रूप से पिछड़े के रूप में वर्गीकृत नहीं किया गया था।

524. यह ध्यान देने योग्य है कि वसंत कुमार [1985 सप एससीसी 714: 1985 सप 1 एससीआर 352] न्यायमूर्ति चिन्नाप्पा रेड्डी ने प्रत्येक मामले के तथ्यों पर उपरोक्त दृष्टिकोण 17 प्रश्न का उल्लेख करने के बाद, लेकिन कोई कारण नहीं था कि सिद्धांत रूप से पिछड़े और अधिक पिछड़े में वर्गीकरण क्यों नहीं किया जा सकता है, यदि दोनों वर्ग न केवल थोड़े पीछे हैं, बल्कि सबसे उन्नत वर्गों से बहुत पीछे हैं। उन्होंने आगे कहा कि वास्तव में, अधिक पिछड़े वर्गों की मदद के लिए ऐसा वर्गीकरण आवश्यक होगा; अन्यथा पिछड़े वर्गों के वे लोग जो अधिक

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पिछड़े वर्गों से थोड़े अधिक उन्नत हैं, वे सभी सीटें जीत जाएंगे, जैसे कि यदि आरक्षण अधिक पिछड़े वर्गों तक ही सीमित होता और पिछड़े वर्गों के थोड़े अधिक उन्नत लोगों के लिए कोई आरक्षण नहीं किया जाता, तो पिछड़े वर्गों को कोई सीट नहीं मिलती क्योंकि उन्नत वर्ग सामान्य श्रेणी के लिए उपलब्ध सभी सीटें जीत जाते। सम्मान के साथ, यह मामले का सही दृष्टिकोण है। पिछड़े वर्गों को पिछड़े और अधिक पिछड़े में वर्गीकृत किया जा सकता है या नहीं, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा। जब तक पिछड़े और अधिक पिछड़े दोनों वर्ग न केवल तुलनात्मक रूप से बल्कि उन्नत वर्गों की तुलना में काफी पिछड़े हैं, और इसके अलावा, उनके बीच पिछड़ेपन में पर्याप्त अंतर है, तब तक उप-वर्गीकरण करना न केवल उचित है बल्कि अनिवार्य भी है यदि सभी पिछड़े वर्गों को संविधान के तहत विशेष प्रावधानों का न्यायसंगत लाभ प्राप्त करना है। उदाहरण के लिए, मंडल आयोग ने सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक संकेतकों के आधार पर तीन कारकों, यानी सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक, में से प्रत्येक को अलग-अलग मूल्य देकर 22 अंक विकसित किए हैं। जिन सामाजिक समूहों ने 22 अंक या उससे अधिक अंक हासिल किए हैं, उन्हें "सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े" और बाकी को "उन्नत" के रूप में सूचीबद्ध किया गया है। अब, 11 से 22 अंकों के बीच कुछ लोग 11 से 15 अंक हासिल कर सकते हैं जबकि अन्य सभी 22 अंक हासिल कर सकते हैं। इसलिए, उनके पिछड़ेपन में अंतर काफी बड़ा है। एक और उदाहरण जो दिया जा सकता है वह वसंत कुमार [1985 सप एससीसी 714: 1985 सप 1 एससीआर 352] में निर्णय के बाद जारी आरक्षण पर 13 अक्टूबर, 1986 के कर्नाटक राज्य सरकार के आदेश से है, जिसमें पिछड़े वर्गों को पांच श्रेणियों में बांटा गया है, अर्थात् ए, बी, सी, डी और ई। श्रेणी ए में बैरागी, बंजारी और लम्बाडी जैसी जातियां या समुदाय आते हैं जो खानाबदोश जनजातियां हैं, और बेदारू, रामोशी जिन्हें पहले आपराधिक जनजातियों के रूप में कलंकित किया गया था, जबकि श्रेणी डी में क्षत्रिय और राजपूत जैसी जातियां आती हैं। दोनों को एक साथ रखना पूर्व को विशेष प्रावधानों के लाभ से पूरी तरह से वंचित करना होगा, जबकि बाद वाला पूरा लाभ छीन लेगा। दूसरी ओर, पिछड़े वर्ग को पिछड़ेपन का दर्जा न देकर उन्हें उन्नत वर्गों के साथ प्रतिस्पर्धा करने के लिए कहना, पिछड़े वर्ग को बिना किसी सीट या पद के छोड़ देगा। ऐसी परिस्थितियों में पिछड़े वर्गों का पिछड़ा और अधिक या सबसे अधिक पिछड़ा में उप-वर्गीकरण न केवल वांछनीय है बल्कि आवश्यक भी है। हालांकि, उनमें से प्रत्येक के लिए एक विशेष कोटा निर्धारित किया जाना चाहिए जैसा कि कर्नाटक सरकार के आदेश में किया गया है। यदि ऐसा नहीं किया जाता है, जैसा कि वर्तमान मामले में किया गया है, और आरक्षित पद पहले अधिक पिछड़े वर्ग को दिए जाते हैं और केवल शेष पिछड़े या कम पिछड़े वर्ग को दिए जाते हैं, तो अधिक पिछड़े वर्ग सभी पदों को ले सकते हैं और पिछड़े वर्ग को कोई पद नहीं मिलेगा। पिछड़े वर्ग को न तो आरक्षित कोटे में अपना पद मिलेगा और न ही अगड़ों के साथ प्रतिस्पर्धा करने की क्षमता के अभाव में सामान्य श्रेणी में अपना पद मिलेगा।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

525. इसलिए, यह माना जाना चाहिए कि प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर, पिछड़े वर्गों का पिछड़े और अधिक या सबसे पिछड़े में उप-वर्गीकरण न्यायोचित होगा, बशर्ते कि उनमें से प्रत्येक के लिए अलग-अलग कोटा निर्धारित किया जाए।

145. उनके माननीय न्यायाधीश ने माना कि पिछड़े वर्गों का पिछड़े और अधिक या सबसे पिछड़े में उप-वर्गीकरण न्यायोचित होगा, बशर्ते कि उनमें से प्रत्येक के लिए अलग-अलग कोटा निर्धारित किया जाए।

146. यह प्रश्न कि क्या पिछड़े वर्गों को पिछड़े और अधिक पिछड़े श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है, इसका उत्तर न्यायमूर्ति पी.बी. सावंत ने निम्नलिखित रूप में दिया है (पैराग्राफ 552):

"प्रश्न 5:

अनुच्छेद 16 (4) पिछड़े वर्गों को पिछड़े और अधिक या सबसे पिछड़े वर्गों में वर्गीकरण की अनुमति देता है। हालाँकि, यह वर्गीकरण केवल सामाजिक पिछड़ेपन की डिग्री के आधार पर अनुमत है, न कि केवल आर्थिक विचार के आधार पर।

यदि पिछड़े वर्गों को पिछड़े और अधिक या सबसे पिछड़े वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है, तो ऐसे प्रत्येक वर्ग के लिए आरक्षण का अलग-अलग कोटा रखना होगा। ऐसे अलग-अलग कोटे के अभाव में आरक्षण अवैध होगा।

पिछड़े वर्गों या पिछड़े वर्ग के सामाजिक समूह को आर्थिक या किसी अन्य आधार पर उन्नत वर्ग और पिछड़े वर्ग में वर्गीकृत करना स्वीकार्य नहीं है। उन्नति की कसौटी, अग्रिम वर्गों के साथ प्रतिस्पर्धा करने की क्षमता में निहित है। यदि पिछड़े वर्ग में आगे बढ़ा हुआ तबका इतना आगे बढ़ चुका है कि उसे पिछड़े वर्ग के साथ प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम माना जाना चाहिए और अनुच्छेद 16(4) के तहत आरक्षण के लाभ से वंचित किया जाना चाहिए।

147. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि न्यायमूर्ति सावंत ने टिप्पणी की कि यदि पिछड़े वर्ग में आगे बढ़ा हुआ तबका इतना आगे बढ़ चुका है कि वह अग्रिम वर्गों के साथ प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम है, तो पिछड़े वर्ग का आगे बढ़ा हुआ तबका अब पिछड़े वर्ग का नहीं रह गया है और उसे पिछड़े वर्ग का नहीं माना जाना चाहिए और अनुच्छेद 16(4) के तहत आरक्षण के लाभ से वंचित किया जाना चाहिए।

F. ई. वी. चिन्नैया बनाम आं. प्र. राज्य

148. ई. वी. चिन्नैया के मामले में, आंध्र प्रदेश अनुसूचित जाति (आरक्षण का युक्तिकरण) अधिनियम, 2000 (सन् 2000 का आंध्र प्रदेश अधिनियम 20 वां) की वैधता को हैदराबाद स्थित आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय में चुनौती दी गई थी। इसे 5 न्यायाधीशों की पीठ ने 4:1 के बहुमत से खारिज कर दिया। उक्त अधिनियम के तहत, अनुसूचित जातियों की राष्ट्रपति सूची में शामिल जातियों को 4 समूहों में वर्गीकृत किया गया। सीटों को उक्त 4 समूहों के बीच अलग-अलग अनुपात में विभाजित किया गया था।

149. न्यायमूर्ति एन संतोष हेगड़े स्वयं के लिए, न्यायमूर्ति एस. एन. वरियावा और न्यायमूर्ति बी पी. सिंह (तत्कालीन न्यायाधीश) ने इस प्रकार टिप्पणी की:

"13. हम सबसे पहले संविधान के अनुच्छेद 341 के प्रभाव पर विचार करेंगे और जांच करेंगे कि क्या राज्य सबसे कमजोर लोगों के लिए आरक्षण प्रदान करने की आड़ में राष्ट्रपति सूची में

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उल्लिखित जातियों को विभिन्न समूहों में विभाजित करके राष्ट्रपति सूची में छेड़छाड़ कर सकता है। अनुच्छेद 341, जो संविधान के भाग XVI में है, कुछ वर्गों से संबंधित विशेष प्रावधानों को संदर्भित करता है जिसमें अनुसूचित जातियां शामिल हैं। यह अनुच्छेद उपबंध करता है कि राष्ट्रपति किसी भी राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में उसके राज्यपाल से परामर्श के बाद सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा ऐसी जातियों, नस्लों या जनजातियों या जातियों, नस्लों या जनजातियों के हिस्सों या समूहों को निर्दिष्ट कर सकते हैं जो इस संविधान के प्रयोजनों के लिए उस राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में अनुसूचित जातियां मानी जाएंगी। यह इंगित करता है कि किसी राज्य के संबंध में अनुसूचित जातियों की केवल एक सूची हो सकती है। उक्त सूची में कोई भी समावेशन या बहिष्करण संविधान के अनुच्छेद 341(2) के अंतर्गत केवल संसद द्वारा ही किया जा सकता है। पूरे संविधान में जहां भी "अनुसूचित जातियों" का संदर्भ दिया गया है, वह केवल अनुच्छेद 341 के अंतर्गत राष्ट्रपति द्वारा तैयार की गई सूची को संदर्भित करता है और उक्त सूची में किसी उप-वर्गीकरण या विभाजन का कोई संदर्भ नहीं है, सिवाय, शायद अनुच्छेद 330 के सीमित उद्देश्य के लिए, जो लोक सभा में अनुसूचित जातियों के लिए सीटों के आरक्षण को संदर्भित करता है, जो इस मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है। अनुच्छेद 341 से यह भी स्पष्ट है कि संसद के अधिनियम द्वारा सूची में बहिष्करण या समावेशन करने की सीमित शक्ति को छोड़कर, राष्ट्रपति सूची में पाई जाने वाली अनुसूचित जातियों की इन जातियों को उपविभाजित, उप-वर्गीकृत या उपसमूहित करने का कोई प्रावधान नहीं है। इसलिए, यह स्पष्ट है कि संविधान का उद्देश्य सूची में उल्लिखित उपजातियों, नस्लों और जनजातियों सहित सभी जातियों को संविधान के उद्देश्य के लिए एक समूह का सदस्य होना था और इस समूह को किसी भी उद्देश्य के लिए उप-विभाजित नहीं किया जा सकता था। इस संबंध में संविधान सभा का संदर्भ इस स्तर पर उपयोगी हो सकता है।”

150. माननीय न्यायाधीश ने कहा कि संविधान के अनुच्छेद 341 के परिशीलन से, किसी राज्य के संबंध में अनुसूचित जातियों की केवल एक सूची हो सकती है और उस सूची में उस राष्ट्रपति सूची में अधिसूचित सभी निर्दिष्ट जातियां, नस्लें या जनजातियां या भाग या समूह शामिल होने चाहिए। यह कहा गया है कि उक्त सूची में कोई भी समावेशन या बहिष्करण संविधान के अनुच्छेद 341(2) के तहत केवल संसद द्वारा किया जा सकता है। यह कहा गया है कि अनुच्छेद 341 से यह भी स्पष्ट है कि संसद के अधिनियम द्वारा सूची में बहिष्करण या समावेशन करने की सीमित शक्ति को छोड़कर अनुसूचित जातियों की राष्ट्रपति सूची में पाई जाने वाली इन जातियों को उपविभाजित, उपवर्गीकृत या उपसमूहित करने का कोई प्रावधान नहीं है। यह कहा गया है कि संविधान का उद्देश्य सूची में उल्लिखित उपजातियों, नस्लों और जनजातियों सहित सभी जातियों को संविधान के प्रयोजन के लिए एक समूह का सदस्य होना था और उक्त समूह को किसी भी उद्देश्य के लिए उपविभाजित नहीं किया जा सकता था।

151. पैराग्राफ 26 में इस प्रकार कहा गया है:

“26. इस प्रकार संविधान की योजना, अनुच्छेद 341 और एन.एम. थॉमस [(1976) 2 एससीसी 310: 1976 एससीसी (एल एंड एस) 227] के मामले में इस न्यायालय की उपरोक्त

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

राय से यह स्पष्ट है कि राष्ट्रपति सूची में शामिल हो जाने वाली जातियाँ अपने आप में एक वर्ग बन जाती हैं। यदि वे संविधान के तहत एक वर्ग हैं, तो किसी भी विचार के आधार पर इन वर्गों के लोगों का कोई भी विभाजन राष्ट्रपति सूची के साथ छेड़छाड़ के बराबर होगा।”

152. न्यायालय ने अनुच्छेद 341 और **एन.एम. थॉमस** के मामले में व्यक्त की गई राय का सहारा लेते हुए कहा कि यह स्पष्ट है कि एक बार राष्ट्रपति सूची में शामिल हो जाने वाली जातियाँ अपने आप में एक वर्ग बन जाती हैं। यह कहा गया है कि यदि वे संविधान के तहत एक वर्ग हैं, तो किसी भी विचार के आधार पर इन वर्गों के लोगों का कोई भी विभाजन राष्ट्रपति सूची के साथ 'छेड़छाड़' के बराबर होगा।

153. अनुच्छेद 31 में न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की :

“31. अधिनियम के विस्तृत अध्ययन से यह दिखता है कि अधिनियम में धारा 3 ही एकमात्र मूलभूत प्रावधान है, शेष प्रावधान केवल प्रक्रियागत हैं। अधिनियम की धारा 3 में राज्य की प्रेसिडेंशियल सूची में सूचीबद्ध जातियों में से 4 समूहों के निर्माण का प्रावधान है। पुनर्समूहन के पश्चात यह इन 4 समूहों में अनुसूचित जातियों के पक्ष में पहले से किए गए आरक्षण के आनुपातिक आवंटन का प्रावधान करता है। इसके अतिरिक्त अधिनियम में किसी अन्य बात का प्रावधान नहीं है। चूंकि राज्य ने पिछड़े वर्गों के लिए उपलब्ध आरक्षण के कुल कोटे का 15% अनुसूचित जातियों को पहले ही आवंटित कर दिया है, इसलिए इस अधिनियम के अंतर्गत पिछड़े वर्गों को कोई आरक्षण आवंटित करने का प्रश्न ही नहीं उठता। अतः यह स्पष्ट है कि इस अधिनियम का उद्देश्य या वास्तविक अभिप्राय केवल अनुसूचित जातियों की प्रेसिडेंशियल सूची में शामिल जातियों को पहले 4 समूहों में विभाजित करना और फिर अनुसूचित जातियों को आवंटित 15% आरक्षण को इन 4 समूहों के बीच एक वर्ग के रूप में विभाजित करना है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अधिनियम अनुसूचित जातियों को आरक्षण प्रदान नहीं करता है, बल्कि अनुसूचित जातियों को उप-वर्गीकृत करके पहले से किए गए आरक्षण को फिर से वितरित करने का इरादा रखता है, जिन्हें अन्यथा अपने आप में एक वर्ग माना जाता है। यह कानून में एक अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि पिछड़े वर्ग को आरक्षण एक संवैधानिक अधिदेश नहीं है। यदि संबंधित राज्य ऐसा चाहता है, तो यह उसका विशेषाधिकार है कि वह कुछ पिछड़े वर्गों को समाज में उन्नति का अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से, जिसमें अनुसूचित जातियाँ भी शामिल हैं, अनुच्छेद 15(4) के तहत शैक्षणिक संस्थानों में और अनुच्छेद 16(4) के तहत राज्य की सार्वजनिक सेवाओं में कुछ सीटें आरक्षित करे। जैसा कि ऊपर कहा गया है, अपने संवैधानिक दायित्व का वह हिस्सा राज्य द्वारा पहले ही पूरा कर लिया गया है। ऐसा करने के बाद, राज्य के लिए संविधान द्वारा पहले से मान्यता प्राप्त किसी वर्ग को उप-वर्गीकृत करना और अनुसूचित जातियों की सूची में राज्य द्वारा बनाए गए उपवर्ग के बीच पहले से आरक्षित कोटे का एक हिस्सा आवंटित करने का विकल्प नहीं है। ऊपर की गई चर्चा से यह स्पष्ट है कि आक्षेपित अधिनियम का प्राथमिक उद्देश्य राज्य में लागू अनुसूचित जातियों की सूची में उप-जातियों के समूह बनाना है और हमारी राय में आरक्षण का विभाजन केवल गौण और परिणामी है। इस उप-वर्गीकरण और आरक्षण के विभाजन का उद्देश्य चाहे जो भी हो, हमें लगता है कि राज्य सूची II की प्रविष्टि

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

41 या सूची III की प्रविष्टि 25 में अपनी विधायी क्षमता का पता लगाकर राज्य की अनुसूचित जातियों की सूची को विभाजित करने वाला कानून बनाने की विधायी शक्ति का दावा नहीं कर सकता है। इसलिए, हमारा मत है कि मूल रूप से यह अधिनियम शिक्षा के क्षेत्र या राज्य की सार्वजनिक सेवाओं के क्षेत्र को नियंत्रित करने वाला कानून नहीं है।”

154. इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि इस न्यायालय ने माना कि आरक्षण के उप-वर्गीकरण और आबंटन का उद्देश्य चाहे जो भी हो, राज्य अपनी विधायी क्षमता को सूची II की प्रविष्टि 41 या सूची III की प्रविष्टि 25 में खोजकर राज्य की अनुसूचित जातियों की सूची को विभाजित करने वाला कानून बनाने के लिए विधायी शक्ति का दावा नहीं कर सकता। न्यायालय ने माना कि मूलतः यह अधिनियम शिक्षा के क्षेत्र या राज्य की सार्वजनिक सेवाओं के क्षेत्र को नियंत्रित करने वाला कानून नहीं है।

155. फिर न्यायालय ने सवाल उठाया कि क्या आक्षेपित अधिनियम अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण या सूक्ष्म वर्गीकरण करता है जिससे संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होता हो। इसका उत्तर इस प्रकार है:

“41. राष्ट्रपति के आदेश में दी गई जातियों के समूह को, हमारी राय में, एक पूरे वर्ग का प्रतिनिधित्व करने के रूप में माना जाना चाहिए। हमारे विचार में, उच्च न्यायालय का विपरीत दृष्टिकोण सही नहीं था। यह तथ्य कि एक कानूनी कल्पना बनाई गई है, अपने आप में इस तथ्य का संकेत है कि किसी राज्य की विधायिका कोई भी ऐसी कार्रवाई नहीं कर सकती जो इसके विपरीत या असंगत हो। एक राज्य में विभिन्न जातियों या जनजातियों या समूह या उसके हिस्से को एक समूह के रूप में एक परिभाषित परिभाषा के माध्यम से रखने का विचार स्पष्ट रूप से सुझाव देता है कि उन्हें आगे विभाजित या उप-वर्गीकृत नहीं किया जाना चाहिए। यदि अनुसूचित जातियों के सदस्यों के एक वर्ग के भीतर एक वर्ग बनाया जाता है, तो यह सूची के साथ छेड़छाड़ के बराबर होगा। ऐसा उप-वर्गीकरण संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगा। यह सच हो सकता है, जैसा कि उच्च न्यायालय ने कहा है, कि जाति व्यवस्था समाज में व्याप्त है, लेकिन इसके बुरे प्रभाव को दूर करने के उद्देश्य से, एक ऐसा कानून जो संवैधानिक योजना को बरकरार नहीं रखा जा सकता, का अनुमोदन नहीं किया जा सकता। उच्च न्यायालय से सहमत होना भी मुश्किल है कि पिछड़ेपन की पहचान करने के उद्देश्य से, एक आयोग नियुक्त करके आगे की जांच की जा सकती है कि अनुसूचित जातियों के सदस्यों में से कौन अधिक पिछड़ा है। यदि आरक्षण का लाभ उन्हें समान रूप से नहीं मिल रहा है, तो यह सुनिश्चित करने के लिए उपाय किए जाने चाहिए कि उन्हें ऐसा पर्याप्त या अतिरिक्त प्रशिक्षण दिया जाए ताकि वे दूसरों के साथ प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम हों, लेकिन इसका मतलब यह नहीं होगा कि अनुसूचित जातियों को आरक्षण को तर्कसंगत बनाने की प्रक्रिया में अनुच्छेद 14, 15 और 16 के संवैधानिक अधिदेश का उल्लंघन किया जा सकता है।

42. आरक्षण को सामाजिक उद्देश्य के दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए, संवैधानिक योजना को ध्यान में रखते हुए, न कि राजनीतिक मुद्दे के रूप में और, इस प्रकार, अनुसूचित जातियों के सदस्यों को एक समूह के रूप में पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिए, न कि व्यक्तियों के दो या अधिक समूहों या जातियों के सदस्यों को।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

43. यह तथ्य कि अनुसूचित जातियों के सदस्य पिछड़े वर्गों में सबसे पिछड़े हैं और आक्षेपित कानून पहले से ही इस आधार पर आगे बढ़ चुका है कि उन्हें संविधान के अनुच्छेद 15 के खंड (4) और अनुच्छेद 16 के खंड (4) दोनों के संदर्भ में पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व नहीं किया गया है, सूक्ष्म वर्गीकरण के माध्यम से आगे वर्गीकरण की अनुमति नहीं है। लोगों के विभिन्न वर्गों के सदस्यों का उनकी संबंधित जातियों के आधार पर ऐसा वर्गीकरण भी तर्कसंगतता के सिद्धांत का उल्लंघन होगा। अनुच्छेद 341 में प्रावधान है कि प्रेसिडेंशियल सूची से जातियों के एक हिस्से या समूह को भी बाहर करने का कार्य केवल संसद द्वारा किया जा सकता है। इसका तार्किक परिणाम यह होगा कि राज्य विधानसभाओं को ऐसा करने से मना किया गया है। संविधान के उद्देश्य के लिए अनुसूचित जातियों के सदस्यों को लाभ देने के लिए एक समान मानदंड अपनाया जाना चाहिए। इसलिए, आक्षेपित कानून उपरोक्त संवैधानिक योजना के विपरीत है, इसे कायम नहीं रखा जा सकता है।

156. यह धारित किया गया है कि राष्ट्रपति के आदेश में दी गई जातियों के समूह को एक पूरे वर्ग का प्रतिनिधित्व करने के रूप में माना जाना चाहिए। यह माना गया है कि एक राज्य में विभिन्न जातियों या जनजातियों या समूह या उनके हिस्से को एक समूह के रूप में एक परिभाषित परिभाषा के माध्यम से रखने का विचार स्पष्ट रूप से सुझाव देता है कि उन्हें आगे विभाजित या उप-वर्गीकृत नहीं किया जाना चाहिए। यह माना गया है कि यदि अनुसूचित जातियों के सदस्यों के एक वर्ग के भीतर एक वर्ग बनाया जाता है, तो यह सूची के साथ छेड़छाड़ के बराबर होगा। ऐसा उप-वर्गीकरण संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगा।

157. न्यायालय ने यह भी धारित किया है कि विभिन्न वर्गों के लोगों को उनकी संबंधित जातियों के आधार पर वर्गीकृत करना भी तर्कसंगतता के सिद्धांत का उल्लंघन होगा।

158. न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा ने अपनी अलग सहमति व्यक्त करते हुए कहा:

“93. तथापि, अनुसूचित जाति संविधान के अनुच्छेद 366(24) में दी गई परिभाषा के अनुसार जाति नहीं है। उन्हें उनके अत्यधिक पिछड़ेपन के कारण उक्त श्रेणी के दायरे में लाया गया है। अनुसूचित जाति में न केवल वे लोग शामिल हैं जो किसी पिछड़ी जाति से संबंधित हैं, बल्कि इसमें नस्ल या जनजाति या जातियों, नस्लों या जनजातियों के हिस्से या समूह भी शामिल हैं। वे न केवल पिछड़े हैं, बल्कि सबसे पिछड़े हैं। यहां तक कि एक व्यक्ति दूसरे धर्म में धर्मांतरण करने पर भी स्वचालित रूप से अनुसूचित जाति नहीं रह जाता है। (देखें पुनीत राय बनाम दिनेश चौधरी [(2003) 8 एससीसी 204] और केरल राज्य बनाम चंद्रमोहनन [(2004) 3 एससीसी 429; 2004 एससीसी (क्रि) 818: एआईआर 2004 एससी 1672]।)”

159. इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि न्यायमूर्ति महोदय ने यह भी धारित किया है कि अनुसूचित जाति में न केवल वे लोग शामिल हैं जो किसी पिछड़ी जाति से संबंधित हैं, बल्कि इसमें नस्ल या जनजाति या जातियों, नस्लों या जनजातियों के हिस्से या समूह भी शामिल हैं और वे न केवल पिछड़े हैं, बल्कि सबसे पिछड़े हैं।

160. इंद्रा साहनी (उपरोक्त) में ‘साधन परीक्षण’ और ‘क्रीमी लेयर परीक्षण’ की प्रयोज्यता के बारे में इस न्यायालय की टिप्पणियों का उल्लेख करने के बाद, विद्वान न्यायाधीश ने इस प्रकार टिप्पणी की:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

“96. लेकिन हमें यह बताना होगा कि जब भी अनुसूचित जाति के संबंध में ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है, तो संविधान के अनुच्छेद 341 के खंड (2) के अनुसार आवश्यक विधायी कदम उठाने की जिम्मेदारी केवल संसद की होगी। एतएव राज्यों के पास निश्चित रूप से विधायी क्षमता नहीं है।”

161. अनुच्छेद 113 में आगे कहा गया है:

“113. पिछड़े वर्गों को नौकरियों या शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण का लाभ देने के संबंध में निर्णय लेने की राज्य विधानमंडल की शक्ति पर विवाद नहीं है। इसके अलावा इस पर भी विवाद नहीं है कि यदि ऐसा निर्णय लिया जाता है तो राज्य अनुसूचित जातियों सहित पिछड़े वर्गों के विभिन्न सदस्यों के लिए किए जाने वाले आरक्षण की सीमा के संबंध में विधायी नीति भी बना सकता है। लेकिन यह इस आधार पर उक्त लाभ को नहीं छीन सकता कि अनुसूचित जातियों के सदस्यों में से एक या दूसरा समूह आगे बढ़ गया है और इस प्रकार, आरक्षण के पूरे लाभ का हकदार नहीं है। इस प्रकार, आक्षेपित कानून को असंवैधानिक माना जाना चाहिए।”

162. विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि राज्य अनुसूचित जातियों सहित पिछड़े वर्गों के विभिन्न सदस्यों के लिए आरक्षण की सीमा के संबंध में विधायी नीति बना सकता है। हालांकि, यह इस आधार पर उक्त लाभ को नहीं छीन सकता कि अनुसूचित जातियों के सदस्यों में से एक या दूसरा समूह आगे बढ़ गया है और इस प्रकार, आरक्षण के पूरे लाभ का हकदार नहीं है।

जी.एम. नागराज बनाम भारत संघ

163. अगला मामला **एम. नागराज एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य** का है, जहां इस न्यायालय की संविधान पीठ अन्य बातों के साथ-साथ संविधान (सत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1995, संविधान (इक्यासीवां संशोधन) अधिनियम, 2000, संविधान (बयासीवां संशोधन) अधिनियम, 2000 और संविधान (पच्चीसवां संशोधन) अधिनियम, 2001 की संवैधानिक वैधता पर विचार कर रही थी। उपर्युक्त का उत्तर देते हुए न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की:

“121. आक्षेपित संवैधानिक संशोधन जिसके द्वारा अनुच्छेद 16(4-ए) और 16(4-बी) सम्मिलित किए गए हैं, अनुच्छेद 16(4) से निकले हैं। वे अनुच्छेद 16(4) की संरचना में कोई परिवर्तन नहीं करते हैं। वे नियंत्रण कारकों या बाध्यकारी कारणों को बरकरार रखते हैं, अर्थात् पिछड़ापन और प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता जो राज्यों को आरक्षण का उपबंध करने में सक्षम बनाती है। अनुच्छेद 335 के तहत राज्य प्रशासन की समग्र दक्षता को ध्यान में रखें। ये आक्षेपित संशोधन केवल एससी और एसटी तक ही सीमित हैं। वे संवैधानिक आवश्यकताओं में से किसी को भी समाप्त नहीं करते हैं, अर्थात्, 50% की अधिकतम सीमा (मात्रात्मक सीमा), क्रीमी लेयर (गुणात्मक बहिष्करण) की अवधारणा, एक तरफ ओबीसी और दूसरी तरफ एससी और एसटी के बीच उप वर्गीकरण जैसा कि इंद्रा साहनी [1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1: (1992) 22 एटीसी 385] में कहा गया है, प्रतिस्थापन की अंतर्निहित अवधारणा के साथ पोस्ट-आधारित रोस्टर की अवधारणा जैसा कि

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

आर.के. सभरवाल [(1995) 2 एससीसी 745: 1995 एससीसी (एल एंड एस) 548: (1995) 29 एटीसी 481] में कहा गया है।

122. हम दोहराते हैं कि 50% की अधिकतम सीमा, क्रीमी लेयर की अवधारणा और बाध्यकारी कारण, अर्थात् पिछड़ापन, प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता और समग्र प्रशासनिक दक्षता सभी संवैधानिक आवश्यकताएं हैं जिनके बिना अनुच्छेद 16 में अवसर की समानता का ढांचा ध्वस्त हो जाएगा।

123. हालांकि, इस मामले में, जैसा कि ऊपर कहा गया है, मुख्य मुद्दा "आरक्षण की सीमा" से संबंधित है। इस संबंध में संबंधित राज्य को आरक्षण का प्रावधान करने से पहले प्रत्येक मामले में बाध्यकारी कारणों, अर्थात् पिछड़ापन, प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता और समग्र प्रशासनिक दक्षता के अस्तित्व को दिखाना होगा। जैसा कि ऊपर कहा गया है, आक्षेपित प्रावधान एक सक्षम प्रावधान है। राज्य पदोन्नति के मामलों में एससी/एसटी के लिए आरक्षण करने के लिए बाध्य नहीं है। हालांकि, यदि वे अपने विवेक का प्रयोग करते हुए ऐसा प्रावधान करना चाहते हैं, तो राज्य को अनुच्छेद 335 के अनुपालन के अलावा वर्ग के पिछड़ेपन और सार्वजनिक रोजगार में उस वर्ग के प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता को दर्शाने वाले मात्रात्मक आंकड़े एकत्र करने होंगे। यह स्पष्ट किया जाता है कि भले ही राज्य के पास बाध्यकारी कारण हों, जैसा कि ऊपर कहा गया है, राज्य को यह देखना होगा कि उसके आरक्षण प्रावधान से इतनी अधिकता न हो जाए कि 50% की अधिकतम सीमा का उल्लंघन हो जाए या क्रीमी लेयर समाप्त हो जाए या आरक्षण अनिश्चित काल के लिए बढ़ा दिया जाए।

124. उपर्युक्त के अधीन रहते हुए, हम संविधान (सत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1995; संविधान (इकरासीवां संशोधन) अधिनियम, 2000; संविधान (बयासीवां संशोधन) अधिनियम, 2000 और संविधान (पच्चासीवां संशोधन) अधिनियम, 2001 की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखते हैं।”

164. इस प्रकार यह दिखता है कि **एम. नागराज (उपरोक्त)** में न्यायालय ने क्रीमी लेयर का परीक्षण तथा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के संबंध में भी वर्ग के पिछड़ेपन और उस वर्ग के प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता को दर्शाने वाले मात्रात्मक डेटा के संग्रह की आवश्यकता को लागू किया।

एच. जरनैल सिंह बनाम लक्ष्मी नारायण गुप्ता

165. **एम. नागराज** के मामले में निर्णय की सत्यता को **जरनैल सिंह और अन्य बनाम लक्ष्मी नारायण गुप्ता और अन्य** के मामले में संविधान पीठ को संदर्भित किया गया था। उक्त मामले में संविधान पीठ ने दो मुद्दों पर विचार किया: पहला, सार्वजनिक रोजगार में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पिछड़ेपन और प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता को दर्शाने वाले मात्रात्मक डेटा को एकत्रित करने की आवश्यकता के बारे में **एम. नागराज** में लिए गए दृष्टिकोण की सत्यता के संबंध में; और दूसरा, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर भी क्रीमी लेयर सिद्धांत की प्रयोज्यता के संबंध में।

166. जहां तक पहले मुद्दे का संबंध है, न्यायालय ने माना कि सार्वजनिक रोजगार में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पिछड़ेपन और प्रतिनिधित्व की अपर्याप्तता पर मात्रात्मक डेटा के संग्रह की

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

आवश्यकता, *इंद्रा साहनी* के मामले में 9 न्यायाधीशों की पीठ के फैसले के विपरीत है और उस सीमा तक रद्द किए जाने योग्य है। हालांकि, जहां तक अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर भी क्रीमी लेयर सिद्धांत लागू करने के दूसरे मुद्दे का सवाल है, न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की:

“26. आरक्षण का पूरा उद्देश्य यह देखना है कि पिछड़े वर्ग के नागरिक आगे बढ़ें ताकि वे भारत के अन्य नागरिकों के साथ समान आधार पर हाथ से हाथ मिलाकर चल सकें। यह तब तक संभव नहीं होगा जब तक कि उस वर्ग के भीतर केवल क्रीमी लेयर ही सार्वजनिक क्षेत्र में सभी प्रतिष्ठित नौकरियां हासिल कर ले और खुद को कायम रखे, जिससे शेष वर्ग उतना ही पिछड़ा रह जाए जितना वे हमेशा से थे। इस मामले में, यह स्पष्ट है कि जब कोई न्यायालय अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर क्रीमी लेयर सिद्धांत लागू करता है, तो वह किसी भी तरह से भारत के संविधान के अनुच्छेद 341 या 342 के तहत प्रेसिडेंशियल सूची के साथ छेड़छाड़ नहीं करता है। उक्त सूची में नामित जाति या समूह या उप-समूह पहले की तरह ही जारी रहता है। उस समूह या उप-समूह के केवल वे व्यक्ति, जो क्रीमी लेयर से संबंधित होने के कारण अस्पृश्यता या पिछड़ेपन के कारण, आरक्षण के लाभ से बाहर रखे गए हैं। यहां तक कि प्रेसिडेंशियल सूची में शामिल समूह या उप-समूह में शामिल ये लोग भी उन सूचियों में बने रहते हैं। यह केवल तब होता है जब अनुच्छेद 14 और 16 के तहत आरक्षण सिद्धांत के आवेदन की बात आती है कि उस उप-समूह के भीतर क्रीमी लेयर को ऐसे आरक्षण का लाभ नहीं दिया जाता है।

27. हम इस बात पर विचार करना आवश्यक नहीं समझते कि संसद अनुच्छेद 341 और 342 के अंतर्गत प्रेसिडेंशियल सूची से क्रीमी लेयर को बाहर कर सकती है या नहीं। यहां तक कि इस धारणा पर भी कि अनुच्छेद 341 और 342 संसद को इन सूचियों में शामिल समूहों या उप-समूहों से क्रीमी लेयर को बाहर करने का अधिकार देते हैं, यह स्पष्ट है कि संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 को क्रीमी लेयर को बाहर करने के लिए लागू करने वाले संवैधानिक न्यायालयों को इस कार्य में इस तथ्य से विफल नहीं कहा जा सकता है कि प्रेसिडेंशियल सूची में किसी विशेष समूह या उप-समूह में शामिल व्यक्तियों को क्रीमी लेयर सिद्धांत का प्रयोग कर संसद द्वारा बाहर रखा जा सकता है। संवैधानिक कानून में अक्सर लागू किए जाने वाले सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांतों में से एक सामंजस्यपूर्ण व्याख्या का सिद्धांत है। जब अनुच्छेद 14 और 16 की व्याख्या अन्य अनुच्छेद 341 और 342 के साथ सामंजस्यपूर्ण रूप से किया जाता है, तो यह स्पष्ट है कि संसद को प्रासंगिक कारकों के आधार पर प्रेसिडेंशियल सूची से व्यक्तियों को शामिल करने या बाहर करने की पूरी स्वतंत्रता होगी। इसी तरह, संवैधानिक न्यायालय, आरक्षण के सिद्धांत को लागू करते समय, भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 के तहत समानता के सिद्धांतों को लागू करते समय ऐसे समूहों या उप-समूहों से क्रीमी लेयर को बाहर करना उनके अधिकार क्षेत्र में होगा। हम *अशोक कुमार ठाकुर [अशोक कुमार ठाकुर बनाम भारत संघ, (2008) 6 एससीसी 1: 3 एससीईसी 35]* में मु. न्या. बालाकृष्णन के बयान से सहमत नहीं हैं कि क्रीमी लेयर सिद्धांत केवल पहचान का सिद्धांत है और समानता का सिद्धांत नहीं है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

28. इसलिए, जब *नागराज [एम. नागराज बनाम भारत संघ, (2006) 8 एससीसी 212: (2007) 1 एससीसी (एल एंड एस) 1013]* के मामले में अनुच्छेद 16(4-ए) और 16(4-बी) के लिए किए गए संवैधानिक संशोधनों को कायम रखने के लिए बुनियादी संरचना परीक्षण के प्रयोग में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर क्रीमी लेयर परीक्षण लागू किया, इसने किसी भी तरह से अनुच्छेद 341 या अनुच्छेद 342 के तहत संसद की शक्ति में हस्तक्षेप नहीं किया। इसलिए, हमारी स्पष्ट राय है कि फैसले के इस हिस्से पर फिर से विचार करने की आवश्यकता नहीं है, और परिणामस्वरूप, *नागराज [एम. नागराज बनाम भारत संघ, (2006) 8 एससीसी 212: (2007) 1 एससीसी (एल एंड एस) 1013]* को सात न्यायाधीशों की पीठ को संदर्भित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। हम इस मोड़ पर यह भी जोड़ सकते हैं कि *नागराज [एम. नागराज बनाम भारत संघ, (2006) 8 एससीसी 212: (2007) 1 एससीसी (एल एंड एस) 1013]* इस न्यायालय के पांच विद्वान न्यायाधीशों का सर्वसम्मत निर्णय है जो वर्ष 2006 से प्रभावी है। इस निर्णय का इस न्यायालय के कई निर्णयों द्वारा बार-बार पालन और लागू किया गया है, अर्थात्:

28.1. *अनिल चंद्र बनाम राधा कृष्ण गौर [अनिल चंद्र बनाम राधा कृष्ण गौर, (2009) 9 एससीसी 454: (2009) 2 एससीसी (एल एंड एस) 683]* (दो न्यायाधीशों की पीठ) (पैरा 17 और 18 देखें)।

28.2. *सूरज भान मीना बनाम राजस्थान राज्य [सूरज भान मीना बनाम राजस्थान राज्य, (2011) 1 एससीसी 467: (2011) 1 एससीसी (एल एंड एस) 1]* (दो न्यायाधीशों की पीठ) (पैरा 10, 50 और 67 देखें)।

28.3. *यू.पी. पावर कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम राजेश कुमार [यू.पी. पावर कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम राजेश कुमार, (2012) 7 एससीसी 1: (2012) 2 एससीसी (एल एंड एस) 289]* (दो न्यायाधीशों की पीठ) [पैरा 61, 81(ix), और 86 देखें]।

28.4. *एस. पन्नीर सेल्वम बनाम टी.एन. राज्य [एस. पन्नीर सेल्वम बनाम टी.एन. राज्य, (2015) 10 एससीसी 292: (2016) 1 एससीसी (एल एंड एस) 76]* (दो जजों की पीठ) (पैरा 18, 19 और 36 देखें)।

28.5. *सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया बनाम एससी/एसटी कर्मचारी कल्याण संघ [सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया बनाम एससी/एसटी कर्मचारी कल्याण संघ, (2015) 12 एससीसी 308: (2016) 1 एससीसी (एल एंड एस) 355]* (दो जजों की पीठ) (पैरा 9 और 26 देखें)।

28.6. *सुरेश चंद गौतम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [सुरेश चंद गौतम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2016) 11 एससीसी 113: (2016) 2 एससीसी (एल एंड एस) 291]* (दो न्यायाधीशों की पीठ) (पैरा 2 और 45 देखें)।

28.7. *बी.के. पवित्रा बनाम भारत संघ [बी.के. पवित्रा बनाम भारत संघ, (2017) 4 एससीसी 620: (2017) 2 एससीसी (एल एंड एस) 128]* (दो न्यायाधीशों की पीठ) (पैरा 17 से 22 देखें)।”

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

167. न्यायालय ने स्पष्ट शब्दों में धारित किया कि जब कोई न्यायालय अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर क्रीमी लेयर सिद्धांत लागू करता है, तो वह किसी भी तरह से भारत के संविधान के अनुच्छेद 341 या 342 के तहत प्रेसिडेंशियल सूची के साथ छेड़छाड़ नहीं करता है। यह कहा गया है कि उक्त सूची में नामित जाति या समूह या उप-समूह पहले की तरह ही जारी है। यह भी कहा गया है कि उस समूह या उप-समूह के केवल वे लोग ही आरक्षण के लाभ से बाहर होंगे, जो क्रीमी लेयर से संबंधित होने के कारण अस्पृश्यता या पिछड़ेपन से बाहर आ गए हैं।

168. न्यायालय ने कहा कि भले ही हम यह मान लें कि अनुच्छेद 341 और 342 संसद को अनुच्छेद 341 और 342 के तहत अधिसूचित सूचियों में शामिल समूहों या उप-समूहों से क्रीमी लेयर को बाहर करने का अधिकार देते हैं, संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 को लागू करने वाले संवैधानिक न्यायालय क्रीमी लेयर को बाहर करने के हकदार होंगे। यह धारित किया गया है कि आरक्षण के सिद्धांत को लागू करते समय संवैधानिक न्यायालयों द्वारा भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 के तहत समानता के सिद्धांतों को लागू करते हुए ऐसे समूहों या उप-समूहों से क्रीमी लेयर को बाहर करना उनके अधिकार क्षेत्र में होगा।

IV. वर्तमान संदर्भ

169. **पंजाब राज्य और अन्य बनाम दविंदर सिंह और अन्य** के मामले में इस न्यायालय की 3 न्यायाधीशों की पीठ ने 20 अगस्त 2014 के आदेश के तहत **ई.वी. चिन्नैया** के मामले में इस न्यायालय के संविधान पीठ के निर्णय की सत्यता पर संदेह जताया और इसे वृहद पीठ को संदर्भित कर दिया। 5 विद्वान न्यायाधीशों की वृहद पीठ ने निम्नलिखित मुद्दे प्रस्तावित किए।

“1.1. (i) क्या पंजाब अनुसूचित जाति और पिछड़ा वर्ग (सेवाओं में आरक्षण) अधिनियम, 2006 की धारा 4(5) के अंतर्गत निहित प्रावधान संवैधानिक रूप से वैध हैं?

1.2. (ii) क्या राज्य के पास अधिनियम की धारा 4(5) के अंतर्गत निहित प्रावधानों को लागू करने की विधायी क्षमता थी?

1.3.(iii) क्या ई.वी. चिन्नैया बनाम आं.प्र. राज्य [ई.वी. चिन्नैया बनाम आं.प्र. राज्य, (2005) 1 एससीसी 394 : (2008) 2 एससीसी (एलएंडएस) 329] के निर्णय पर फिर से विचार करने की आवश्यकता है? ”

170. पंजाब राज्य एवं अन्य में निर्णय देखें। बनाम दविंदर सिंह एवं अन्य में संविधान पीठ ने इस प्रकार टिप्पणी की :

“52. राज्य के पास अनुच्छेद 15(4) और 16(4) और अनुच्छेद 341(1) और 342(1) के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को आरक्षण का लाभ देने का अधिकार है। यह विभिन्न वर्गों के लिए आरक्षण की सीमा/प्रतिशत निर्धारित करता है। राज्य सरकार आरक्षण का तरीका और मात्रा तय कर सकती है। इस प्रकार, राज्य सूची में सभी अनुसूचित जातियों को आरक्षण प्रदान करते समय उस तर्क के आधार पर उप-वर्गीकरण भी कर सकता है जो आरक्षण प्रदान करने वाले संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 16 की मूल भावना के

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

अनुरूप होगा। राज्य सरकार सूची से छेड़छाड़ नहीं कर सकती है; यह सूची में किसी भी जाति को न तो शामिल कर सकती है और न ही बाहर कर सकती है या यह जांच नहीं कर सकती है कि कोई पर्यायवाची मौजूद है जैसा कि *मिलिंद [महाराष्ट्र राज्य बनाम मिलिंद, (2001) 1 एससीसी 4: 2001 एससीसी (एल एंड एस) 117]* के मामले में कहा गया है।

53. राज्य सरकार को आरक्षण प्रदान करने तथा उसे समान रूप से वितरित करने का अधिकार दिया गया है। विभिन्न क्षेत्रों में असमानताओं के बारे में राज्य सरकार ही सर्वश्रेष्ठ निर्णयकर्ता है। हमारे मतानुसार, आरक्षण को किस समान रूप से वितरित किया जाना है, इसका निर्णय राज्य सरकार को ही करना है। वह अपनी कार्यप्रणाली तैयार कर सकती है तथा अनुसूचित जातियों में से अधिक पिछड़े किसी विशेष वर्ग को लाभ से वंचित किए बिना उसे वरीयता दे सकती है।

54. इसके अतिरिक्त, अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों/सामाजिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों में से अन्य वर्ग, जिन्हें आरक्षण के लाभ से वंचित नहीं किया गया है, यह दावा नहीं कर सकते कि उन्हें आरक्षण का पूरा या एक विशेष प्रतिशत उपलब्ध कराया जाना चाहिए था। राज्य सूची में शामिल वर्ग को तर्कसंगत मानदंडों के आधार पर ऐसी वरीयता प्रदान कर सकता है, जिसमें उत्थान की आवश्यकता हो। यह दावा करने का कोई निहित अधिकार नहीं है कि आरक्षण एक विशेष प्रतिशत पर होना चाहिए। इसे जमीनी हकीकत के अनुरूप होना चाहिए, क्योंकि कोई भी व्यक्ति पूरे आरक्षण का आनंद लेने का अधिकार नहीं मांग सकता है, यह आवश्यकतानुसार आनुपातिक हो सकता है। राज्य को विभिन्न वर्गों के उत्थान के उपायों से वंचित नहीं किया जा सकता, जबकि ऐसे उपाय प्रदान करने का मूल उद्देश्य यही है। आरक्षण की भावना राष्ट्र की प्रगति के लिए आवश्यक सभी वर्गों का उत्थान है।

55. संघीय ढांचे में राज्य के साथ-साथ संसद के पास अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और सामाजिक तथा शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के उत्थान के लिए संवैधानिक निर्देश हैं। राष्ट्रपति की अधिसूचना में केवल संसद द्वारा ही समावेशन या बहिष्करण किया जा सकता है। राज्य सरकार को रोजगार और शिक्षा के क्षेत्र में आरक्षण प्रदान करने का अधिकार है। लक्ष्य प्राप्ति के लिए राज्य सरकार द्वारा मामलों में की गई आगे की सकारात्मक कार्रवाई करने पर कोई संवैधानिक रोक नहीं है। आरक्षित सीटों में से एक निश्चित प्रतिशत आवंटित करना और किसी विशेष वर्ग को वरीयता प्रदान करना अनुच्छेद 341, 342 और 342-ए के तहत सूची का उल्लंघन नहीं कहा जा सकता क्योंकि सूचीबद्ध किसी भी जाति को आरक्षण के लाभ से वंचित नहीं किया जा सकता।

56. "अपर्याप्त प्रतिनिधित्व" अनुच्छेद 16(4) के प्रावधानों का आधार है। हमारी राय में, सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए आरक्षित सीटों में से उचित कोटा तय करके तर्कसंगत आधार पर अधिमान्य उपचार प्रदान करने का विकल्प राज्य के पास है। उत्पीड़ित वर्ग की मुक्ति के लिए आरक्षण एक बहुत ही प्रभावी साधन है। इसका लाभ कुल मिलाकर जरूरतमंदों और सबसे गरीब लोगों तक नहीं पहुंच रहा है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

57. अनुच्छेद 14, 15, 16, 338, 341, 342 और 342-ए की व्याख्या अत्यधिक सार्वजनिक महत्व का मामला है, और *इंद्रा साहनी [इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ, 1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1]* और अन्य निर्णयों में बाध्यकारी मिसालों की सही व्याख्या। हालांकि हम एक ही समय में निर्णय लेने के सिद्धांत का पूरा सम्मान करते हैं, लेकिन साथ ही, न्यायालय मूकदर्शक बनकर कठोर वास्तविकताओं से आंखें मूंदकर नहीं रह सकता। सामाजिक परिवर्तन का संवैधानिक लक्ष्य बदलती सामाजिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखे बिना हासिल नहीं किया जा सकता।”

171. उपरोक्त टिप्पणियों को दर्ज करते हुए, संविधान पीठ ने माननीय मुख्य न्यायाधीश से अनुरोध किया कि वे इस मामले को 7 न्यायाधीशों या उचित समझे जाने पर, अधिक के समक्ष रखें। इस प्रकार मामला वर्तमान पीठ के समक्ष रखा गया।

विमर्श

172. एक समय ऐसा था जब भारत में जातिगत भेदभाव दुनिया के अन्य हिस्सों में त्वचा के रंग के आधार पर नस्लीय भेदभाव और दास व्यापार से भी आगे निकल गया था। सदियों से समाज में उच्च वर्गों द्वारा कुछ जातियों के लोगों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता रहा है। उनके साथ जानवरों से भी बदतर व्यवहार किया गया है। उन्हें उच्च वर्गों द्वारा छूने की अनुमति नहीं थी। कुछ क्षेत्रों में, उच्च वर्ग के लोग ऐसे लोगों की छाया भी अपने ऊपर नहीं पड़ने देते थे। ऐसे में, चलते समय उन्हें दूरी बनाए रखने की आवश्यकता होती थी ताकि उनकी छाया उच्च जाति को दूषित न करे। कुछ क्षेत्रों में, उन्हें अपनी पीठ पर झाड़ू बांधने की आवश्यकता होती थी ताकि वे यात्रा करने के बाद रास्ता साफ कर सकें।

173. इन लोगों को सार्वजनिक स्थानों से पानी देने से भी मना किया गया। जिन गांवों में नदियों से पानी लिया जाता था, वहां उन्हें नीचे की ओर से पानी लेना पड़ता था, ताकि उच्च वर्ग के लोगों द्वारा लिया गया पानी प्रदूषित न हो। उन्हें शिक्षा के अधिकार से भी वंचित रखा गया। स्कूलों में या तो उन्हें अलग बैठना पड़ता था या अपनी कक्षा के बाहर खड़े होकर पढ़ाई करनी पड़ती थी।

174. जब भारत औपनिवेशिक शासकों से स्वतंत्रता पाने के लिए संघर्ष कर रहा था, तब देश में इन असमानताओं को मिटाने और उन वर्गों के उत्थान के लिए समानांतर आंदोलन भी चल रहे थे, जिनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जा रहा था।

175. डॉ. बी.आर. अंबेडकर के ‘साउथबोरो समिति के समक्ष साक्ष्य’ (1919) में दिए गए भाषण को संदर्भित करना उपयोगी होगा, जहां उन्होंने उत्पीड़क जातियों द्वारा अछूतों के साथ किए गए अन्यायपूर्ण व्यवहार के कई उदाहरण दिए, जैसे:

“अछूत व्यापारी से कोई हिंदू कुछ नहीं खरीदता। अछूत को लाभदायक सेवा में नहीं लगाया जा सकता। ईस्ट इंडिया कंपनी के दिनों से ही सैन्य सेवा अछूतों का एकाधिकार रही है। वे इतनी बड़ी संख्या में सेना में शामिल हुए थे... लेकिन विद्रोह के बाद जब अंग्रेज मराठों के रैंकों से सैनिकों को सुरक्षित करने में सक्षम हो गए, तो निम्न-जाति के लोगों की स्थिति, जो बॉम्बे सेना का आधार थे, अनिश्चित हो गई, इसलिए नहीं कि मराठा बेहतर सैनिक थे बल्कि इसलिए कि

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उनके धार्मिक पूर्वाग्रह ने उन्हें निम्न-जाति के अधिकारियों के अधीन काम करने से रोका। पूर्वाग्रह इतना मजबूत था कि गैर-जाति अंग्रेजों को भी अछूत वर्गों से भर्ती रोकनी पड़ी। इसी तरह, अछूतों को पुलिस बल में सेवा देने से मना कर दिया जाता है। बहुत से सरकारी कार्यालयों में अछूतों के लिए जगह पाना असंभव है। मिलों में भी एक भेद देखा जाता है। अछूतों को कॉटन मिलों के बुनाई विभागों में प्रवेश नहीं दिया जाता, जबकि उनमें से कई पेशेवर बुनकर हैं। इसका एक उदाहरण बॉम्बे म्युनिसिपैलिटी की स्कूल प्रणाली से लिया जा सकता है। भारत के किसी भी अन्य निगम की तुलना में अधिक स्वतंत्रता वाले निगम द्वारा शासित इस सबसे महानगरीय शहर में दो अलग-अलग स्कूल हैं... एक स्पृश्यों के बच्चों के लिए और दूसरा अछूतों के बच्चों के लिए। यह अपने आप में एक ध्यान देने योग्य बात है। लेकिन इससे भी अधिक उल्लेखनीय बात यह है कि स्कूलों के विभाजन के बाद इसने अपने शिक्षण स्टाफ को अछूतों और स्पृश्यों में विभाजित कर दिया है। चूँकि अछूत शिक्षकों की माँग कम है, इसलिए कुछ अछूत स्कूलों में स्पृश्य वर्ग के शिक्षक ही काम करते हैं। इसका दिल दहला देने वाला मजा यह है कि अगर अछूत स्कूल सेवा में कोई उच्च ग्रेड खुला है, जैसा कि कुछ अछूत प्रशिक्षित शिक्षकों के कारण होना ही है, तो एक स्पृश्य शिक्षक को उस ग्रेड में धकेला जा सकता है। लेकिन अगर स्पृश्य स्कूल सेवा में कोई उच्च ग्रेड खाली है, तो किसी अछूत शिक्षक को उस ग्रेड में नहीं डाला जा सकता। उसे तब तक इंतजार करना पड़ेगा जब तक अछूत सेवा में कोई रिक्ति न हो जाए! हिंदू सामाजिक जीवन की नैतिकता ऐसी ही है।”

176. अछूतों के साथ अमानवीय व्यवहार के खिलाफ लड़ने के लिए, जिन्हें आम जगह से पानी भरने की भी अनुमति नहीं थी, डॉ. अंबेडकर ने 20 मार्च 1927 को महाड़ में एक आंदोलन किया जिसे “महाड़ सत्याग्रह” के नाम से जाना जाता है ताकि अछूतों को महाड़ में एक सार्वजनिक टैंक से पानी भरने की अनुमति मिल सके।

177. डॉ. अंबेडकर ने अछूतों के लिए पूजा स्थलों के दरवाजे खोलने के लिए भी आंदोलन का नेतृत्व किया। ऐसा ही एक आंदोलन जिसका उन्होंने नेतृत्व किया वह नासिक में था और जिसे “कालाराम मंदिर सत्याग्रह” के नाम से जाना जाता है।

178. डॉ. अंबेडकर का मानना था कि अगर अछूत उस कलंक से बाहर निकलकर राष्ट्र निर्माण में भाग लेते हैं, तो वे राष्ट्र की प्रगति में ही योगदान देंगे। उनका मानना था कि अस्पृश्यता को दूर करने का आंदोलन सही मायने में राष्ट्र निर्माण और बंधुत्व का आंदोलन है।

179. मैं डॉ. अंबेडकर के विचारों के संग्रह का उल्लेख कर सकता हूँ, जिसे अनुराग भास्कर ने “द फोरसाइटेड अंबेडकर” नामक पुस्तक में स्पष्ट रूप से संकलित किया है, जो इस प्रकार है:

“उन्होंने जोर देकर कहा कि मंदिर में प्रवेश या सार्वजनिक संसाधनों तक पहुंच का मुद्दा समानता का मुद्दा है। उन्होंने कहा :

“इन स्पृश्यों द्वारा दिया गया दूसरा तर्क यह है कि भले ही वे अछूतों को अपने मंदिरों में प्रवेश की अनुमति न दें, फिर भी सभी अपने लिए मंदिर बनाने के लिए स्वतंत्र हैं। मैं उन तथाकथित विद्वानों से पूछना चाहूंगा कि वे गोरों और भारतीयों के लिए अलग-अलग डिब्बे रखने के लिए

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

रेलवे पर आपत्ति क्यों करते हैं? ... इसका केवल एक ही उत्तर है और वह यह है: यह केवल यात्रा का मामला नहीं है, यह समानता का मामला है! ... अछूतों के पास एक ही मंदिर में भगवान की पूजा करने का अधिकार मांगने का एक ही कारण है। वे यह साबित करना चाहते हैं कि उनके प्रवेश से मंदिर अपवित्र नहीं होता है और जब अधिकार हैं तो उपयोग की प्रथा का सवाल ही नहीं उठता।"

उन्होंने आगे कहा कि सार्वजनिक संपत्ति का इस्तेमाल उत्पीड़क जातियों की निजी संपत्ति के रूप में नहीं किया जा सकता। उन्होंने कहा :

"कानूनी तौर पर, सार्वजनिक संपत्ति पर अधिकार किसी भी विलेख द्वारा स्थापित करने की आवश्यकता नहीं है; यह सभी को स्वतः ही उपलब्ध है। भले ही उसका कोई उपयोग न हो या वह निरंतर न हो, यह उसे उस अधिकार से वंचित नहीं करता। मान लीजिए, कोई व्यक्ति किसी विशेष सड़क पर नहीं चलता, तो क्या इसका मतलब यह है कि वह उस सड़क का कभी उपयोग नहीं कर सकता? इसलिए, यह कहना पूरी तरह से मूर्खतापूर्ण होगा कि चूंकि अछूत कभी मंदिर नहीं गए या कभी सार्वजनिक कुओं से पानी नहीं भरा, इसलिए अब वे ऐसा नहीं कर सकते।"

डॉ. अंबेडकर ने उत्पीड़क जातियों के इस तर्क को भी खारिज कर दिया कि अछूतों को उनके बदलने और समान अधिकार देने का इंतजार करना चाहिए। उन्होंने उत्पीड़क जातियों से जवाबदेही और कार्रवाई की मांग करने के लिए अमेरिकी संविधान के तेरहवें संशोधन का हवाला दिया, जिसने दास प्रथा को समाप्त कर दिया। उन्होंने कहा :

"मुझे पता है कि कुछ स्पृश्य सुझाव दे रहे हैं कि अछूतों के लिए समान अधिकारों के मामले को स्पृश्यों को आपस में ही हल करने देना चाहिए। इसे अछूतों के आंदोलन से हल नहीं किया जा सकता। अछूतों को तब तक इंतजार करना चाहिए जब तक स्पृश्य उन्हें स्वेच्छा से ऐसे समान अधिकार नहीं देते। इस बात पर कैसे भरोसा किया जा सकता है कि वे अछूतों को स्वेच्छा से ऐसे अधिकार देंगे? ऐसे चमत्कार के होने का इंतजार करना सरासर मूर्खता होगी... स्पृश्यों का एक और वर्ग हमें बताता है कि भले ही हम अपना आंदोलन शुरू कर दें, हम सफल नहीं होंगे। अगर हम संघर्ष शुरू करते हैं, तो जो भी कुछ स्पृश्य हमारे मुद्दे से सहानुभूति रखते हैं, वे नाराज हो जाएंगे और हम उनकी सहानुभूति खो देंगे। फिर प्रगतिशील स्पृश्य हमारे विरुद्ध कट्टर हिंदुओं के साथ मिल जाएंगे। मैं उनसे कहना चाहता हूं कि यदि उन्हें हमसे सहानुभूति है, यदि उन्हें हमारे साथ हुए अन्याय से पीड़ा है, तो उन्हें हमारा दिल खोलकर समर्थन करना चाहिए, जैसे अमेरिका में गोरों ने गुलामी समाप्त करने के लिए अश्वेतों का समर्थन किया था। अन्यथा, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप हमारे प्रति सहानुभूति रखते हैं या घृणा करते हैं।"

180. तदनुसार, जब मैं वर्तमान मुद्दे पर विचार करता हूं, तो मुझे इस पृष्ठभूमि में विचार करना होगा।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

181. यह बहुत ही संयोग की बात है कि डॉ. अंबेडकर, जिन्होंने कई पीढ़ियों तक सामाजिक समानता और अमानवीय व्यवहार के उन्मूलन के लिए संघर्ष किया, को भारत के संविधान के मुख्य निर्माता के रूप में काम करने का अवसर मिला।

182. मैंने पहले ही मसौदा अनुच्छेद 300 ए और मसौदा अनुच्छेद 300 बी (अब अनुच्छेद 341 और 342) पर उनके भाषण का उल्लेख किया है। 30 नवंबर 1948 को अनुच्छेद 16 (जो कि मसौदा अनुच्छेद 10 था) पर डॉ. अंबेडकर के भाषण के प्रासंगिक हिस्से का उल्लेख करना भी उचित होगा, जो इस प्रकार है:

"अनुच्छेद 16 (मसौदा संविधान में अनुच्छेद 10)

"माननीय डॉ. बी.आर. अंबेडकर:जैसा कि मैंने कहा, प्रारूप समिति को एक ऐसा सूत्र बनाना था जो इन तीन दृष्टिकोणों को समेट सके, पहला, अवसर की समानता होगी, दूसरा यह कि कुछ समुदायों के पक्ष में आरक्षण होगा, जिन्हें अब तक प्रशासन में 'उचित रूप से शामिल' नहीं किया गया है। यदि माननीय सदस्य इन तथ्यों को ध्यान में रखेंगे – तीन सिद्धांत, जिन्हें हमें समेटना था – तो वे देखेंगे कि संविधान के अनुच्छेद 10 के उप-खंड (3) में निहित सूत्र से बेहतर कोई सूत्र नहीं बनाया जा सकता है; वे पाएंगे कि जो लोग मानते हैं और मानते हैं कि अवसर की समानता होगी, उनका दृष्टिकोण अनुच्छेद 10 के उप-खंड (1) में सन्निहित है। यह एक सामान्य सिद्धांत है। साथ ही, जैसा कि मैंने कहा, हमें इस सूत्र को कुछ समुदायों द्वारा की गई मांग के साथ जोड़ना था कि प्रशासन जो अब-ऐतिहासिक कारणों से- एक समुदाय या कुछ समुदायों द्वारा नियंत्रित किया जाता है, वह स्थिति समाप्त होनी चाहिए और अन्य लोगों को भी सार्वजनिक सेवाओं में आने का अवसर मिलना चाहिए। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि हम उन समुदायों की मांग को पूरी तरह से स्वीकार कर लेते हैं जो अब तक सार्वजनिक सेवाओं में पूरी तरह से नियोजित नहीं हुए हैं, तो वास्तव में जो होगा वह यह है कि हम उस पहले प्रस्ताव को पूरी तरह से नष्ट कर देंगे जिस पर हम सभी सहमत हैं, अर्थात् अवसर की समानता होगी। मैं एक उदाहरण देता हूँ। मान लीजिए, उदाहरण के लिए, किसी समुदाय या समुदायों के समूह के लिए आरक्षण किया गया, जिसका योग राज्य के तहत कुल पदों का लगभग 70 प्रतिशत था और केवल 30 प्रतिशत अनारक्षित के रूप में रखा गया था। क्या कोई कह सकता है कि सामान्य प्रतिस्पर्धा के लिए खुला 30 प्रतिशत आरक्षण पहले सिद्धांत को प्रभावी करने के दृष्टिकोण से संतोषजनक होगा, अर्थात् अवसर की समानता होगी? मेरे विचार में ऐसा नहीं हो सकता। इसलिए, यदि आरक्षण को अनुच्छेद 10 के उप-खंड (1) के अनुरूप होना है, तो आरक्षित की जाने वाली सीटों को अल्पसंख्यक सीटों तक सीमित रखा जाना चाहिए। तभी पहला सिद्धांत संविधान में अपना स्थान पा सकता है और प्रभावी रूप से लागू हो सकता है। यदि माननीय सदस्य इस स्थिति को समझते हैं कि हमें दो चीजों की रक्षा करनी है, अर्थात् अवसर की समानता का सिद्धांत और साथ ही उन समुदायों की मांग को पूरा करना है, जिन्हें अब तक राज्य में प्रतिनिधित्व नहीं मिला है, तो मुझे यकीन है कि वे इस बात से सहमत होंगे कि जब तक आप "पिछड़ा" जैसे किसी विशेषण वाक्यांश का उपयोग नहीं करते हैं, आरक्षण के पक्ष में बनाया गया अपवाद अंततः नियम को पूरी तरह से खत्म कर देगा। नियम का कुछ भी

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

हिस्सा नहीं बचेगा। मुझे लगता है, अगर मैं ऐसा कह सकता हूँ, तो यही औचित्य है कि मसौदा समिति ने अपने कंधों पर "पिछड़ा" शब्द को शामिल करने की जिम्मेदारी क्यों ली, जिसे मैं स्वीकार करता हूँ, मूल रूप से इस सभा द्वारा पारित किए गए तरीके से मौलिक अधिकार में जगह नहीं मिली थी..."।

183. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि डॉ. अंबेडकर ने इस बात पर जोर दिया कि एक ऐसा फार्मूला तैयार किया जाना चाहिए जो इन तीन दृष्टिकोणों को समेट सके, पहला, अवसर की समानता होगी, दूसरा, कुछ समुदायों के पक्ष में आरक्षण होगा, जिन्हें अब तक प्रशासन में 'उचित रूप से शामिल' नहीं किया गया है। डॉ. अंबेडकर कहते हैं कि खंड (1) में निर्दिष्ट अवसर की समानता को कुछ समुदायों द्वारा की गई मांग के साथ समेटना होगा। उन्होंने कहा कि ऐतिहासिक कारणों से प्रशासन पर एक समुदाय या कुछ समुदायों का नियंत्रण रहा है, ऐसी स्थिति खत्म होनी चाहिए और अन्य लोगों को भी सार्वजनिक सेवाओं में शामिल होने का अवसर मिलना चाहिए। हालांकि, उन्होंने कहा कि अगर ऐसे समुदायों की मांग पूरी तरह से स्वीकार कर ली जाती है, तो यह खंड (1) में गारंटीकृत समानता के पहले सिद्धांत को नष्ट कर देगा। उन्होंने एक उदाहरण दिया कि अगर कुछ समुदायों का प्रतिनिधित्व नहीं है या समुदायों के एक समूह की आबादी 70% है और अगर ऐसे समुदायों के लिए 70% आरक्षण प्रदान किया जाता है, जिससे खुली प्रतिस्पर्धा के लिए केवल 30% ही बचता है, तो यह अवसर की समानता की अवधारणा को नष्ट कर देगा। इसलिए वह आरक्षण को कम सीटों तक सीमित रखने की वकालत करते हैं। इसलिए वह कहते हैं कि जब तक आरक्षण देने के लिए "पिछड़े" जैसे किसी वाक्यांश का उपयोग नहीं किया जाता है, तब तक पूरा नियम अव्यवहारिक होगा। इसलिए वह 'पिछड़े' शब्द का उपयोग करने में मसौदा समिति के प्रयासों को उचित ठहराते हैं।

184. उक्त भाषण में निम्नलिखित टिप्पणी का उल्लेख करना भी उचित होगा।

अनुच्छेद 16 (मसौदा संविधान में अनुच्छेद 10)

"माननीय डॉ. बी.आर. अंबेडकर:... .. किसी ने मुझसे पूछा: "पिछड़ा समुदाय क्या है"? खैर, मुझे लगता है कि जो कोई भी मसौदे की भाषा को पढ़ेगा, वह पाएगा कि हमने इसे प्रत्येक स्थानीय सरकार द्वारा निर्धारित करने के लिए छोड़ दिया है। पिछड़ा समुदाय वह समुदाय है जो सरकार की राय में पिछड़ा है। मेरे माननीय मित्र, श्री टी. टी. कृष्णामाचारी ने मुझसे पूछा कि क्या यह नियम न्यायोचित होगा। एक हठधर्मी उत्तर देना कठिन है। व्यक्तिगत रूप से मुझे लगता है कि यह एक न्यायोचित मामला होगा। यदि स्थानीय सरकार ने आरक्षण की इस श्रेणी में इतनी बड़ी संख्या में सीटें शामिल की हैं, तो मुझे लगता है कि कोई भी संघीय न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय में जा सकता है और कह सकता है कि आरक्षण इतना बड़ा है कि अवसर की समानता के बारे में नियम नष्ट हो गया है और फिर न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचेगा कि स्थानीय सरकार या राज्य सरकार ने उचित और विवेकपूर्ण तरीके से काम किया है या नहीं।

... .. "

185. डॉ. अंबेडकर ने कहा कि "पिछड़ा समुदाय क्या है" यह प्रत्येक स्थानीय सरकार को तय करना होगा। उनके विचार में पिछड़ा समुदाय वह समुदाय है जो सरकार की राय में पिछड़ा है। उन्होंने यह भी दूरदर्शिता दिखाई कि यदि स्थानीय सरकार आरक्षण की इस श्रेणी में इतनी बड़ी संख्या में सीटें शामिल करती है, तो कोई

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

भी संघीय न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय में जाकर यह तर्क दे सकता है कि आरक्षण इतना बड़ा है कि अवसर की समानता के नियम को नष्ट कर दिया गया है। उन्होंने यह भी दूरदर्शिता दिखाई कि तब न्यायालय यह निष्कर्ष निकालेगा कि स्थानीय सरकार या राज्य सरकार ने उचित और विवेकपूर्ण तरीके से काम किया है या नहीं।

186. पिछड़े वर्गों की पहचान और आरक्षण की सीमा के बारे में बहस के बारे में उनकी दूरदर्शिता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि इस देश में पिछले 74 वर्षों से मुकदमेबाजी की बाढ़ सी आ गई है।

187. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि शुरू में जहां तक अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को छोड़कर पिछड़े वर्गों की पहचान का मुद्दा था, उसे कार्यपालिका पर छोड़ दिया गया था। जहां तक अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की पहचान का सवाल है, भारत के संविधान के अनुच्छेद 341 और 342 के तहत एक सामान्य अधिसूचना जारी करने का प्रावधान है, जिसमें संविधान में परिभाषित विशेषाधिकारों के प्रयोजनों के लिए सभी जातियों और जनजातियों या उनके समूहों को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के रूप में निर्दिष्ट किया गया है।

188. मैंने पहले ही उक्त प्रावधानों की शुरुआत के बारे में डॉ. अंबेडकर के भाषण का उल्लेख किया है। हालांकि, उन्होंने कहा कि यदि इस प्रकार अधिसूचित सूची से कोई निष्कासन किया जाना है या कोई अतिरिक्त जोड़ा जाना है तो उन्हें संसद द्वारा किया जाना चाहिए, राष्ट्रपति द्वारा नहीं। उन्होंने कहा कि इसके पीछे उद्देश्य इस मामले में किसी भी तरह के राजनीतिक कारकों की भूमिका को खत्म करना था।

189. जैसा कि पहले ही ऊपर चर्चा की जा चुकी है, जहां तक अन्य पिछड़ा वर्ग की पहचान का सवाल है, यह प्रश्न राज्य पर छोड़ दिया गया था। जहां तक अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की पहचान का संबंध है, यह संविधान के अनुच्छेद 341 और 342 के मद्देनजर संविधान के अधिनियमन के चरण में पूरा हो गया था और उक्त अधिसूचित सूची में कोई भी जोड़ या परिवर्तन केवल संसद के अधिनियम द्वारा ही अनुमेय था। यह भी ध्यान देने योग्य है कि अनुच्छेद 341 और 342 के तहत जारी राष्ट्रपति सूची की नींव 1935 के अधिनियम के प्रावधानों के तहत जारी 1936 के आदेश में रखी गई है।

190. इसमें कोई संदेह नहीं है कि संविधान (एक सौ दूसरा संशोधन) अधिनियम, 2018 द्वारा सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के संबंध में अनुच्छेद 342 ए डाला गया है। जहां तक सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों का संबंध है, उक्त संशोधन द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 366 में खंड (26 सी) भी डाला गया है। हमारे समक्ष यह तर्क दिया गया कि संविधान (एक सौ दूसरा संशोधन) अधिनियम, 2018 को अन्य पिछड़ा वर्गों के संबंध में **इंद्रा साहनी** के मामले में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के साथ पढ़ते हुए, **ई.वी. चिन्नैया** के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर पुनर्विचार की आवश्यकता है।

191. मुझे मामले के उस पहलू पर जाना ज़रूरी नहीं लगता, क्योंकि मुझे लगता है कि **ई.वी. चिन्नैया** भारत के संविधान के अनुच्छेद 46, 335, 14, 15 और 16 के प्रावधानों पर सही ढंग से विचार नहीं करते हैं, जैसा कि इस न्यायालय के पहले के उदाहरणों द्वारा व्याख्या की गई है। मैंने नीचे गहराई से चर्चा की है कि कैसे **ई.वी. चिन्नैया** ने पहले के उदाहरणों की गलत व्याख्या की।

192. **ई.वी. चिन्नैया** मामले में इस न्यायालय ने अनुच्छेद 13 में संविधान के अनुच्छेद 341 के प्रभाव पर विचार करते हुए यह धारित किया कि किसी राज्य के संबंध में अनुसूचित जातियों की केवल एक सूची हो सकती है और

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उस सूची में उस प्रेसिडेंशियल सूची में अधिसूचित सभी निर्दिष्ट जातियाँ, नस्लें या जनजातियाँ या भाग या समूह शामिल होने चाहिए। यह भी कहा गया है कि उक्त सूची में कोई भी समावेश या बहिष्करण संविधान के अनुच्छेद 341(2) के तहत संसद द्वारा ही किया जा सकता है। इस न्यायालय ने धारित किया कि संविधान के किसी भी प्रावधान में उक्त सूची में किसी उप-वर्गीकरण या विभाजन का कोई संदर्भ नहीं है, सिवाय अनुच्छेद 330 के सीमित उद्देश्य के, जो लोक सभा में अनुसूचित जातियों के लिए सीटों के आरक्षण को संदर्भित करता है। इस न्यायालय ने धारित किया कि यह उसके लिए स्पष्ट था कि संविधान का उद्देश्य सूची में उल्लिखित उपजातियों, नस्लों और जनजातियों सहित सभी जातियों को संविधान के उद्देश्य के लिए एक समूह का सदस्य बनाना था और इस समूह को किसी भी उद्देश्य के लिए उप-विभाजित नहीं किया जा सकता था।

193. इसके बाद, **एन.एम. थॉमस** के मामले में न्यायमूर्ति मैथ्यू, न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर, न्यायमूर्ति और फजल अली, द्वारा व्यक्त किए गए दृष्टिकोण का संदर्भ देते हुए, पैराग्राफ 26 में यह माना गया है कि प्रेसिडेंशियल सूची में शामिल की गई जातियाँ अपने आप में एक वर्ग बन जाती हैं। फिर न्यायालय ने माना कि यदि वे संविधान के तहत एक वर्ग हैं, तो किसी भी विचार के आधार पर व्यक्तियों के इन वर्गों का कोई भी विभाजन राष्ट्रपति सूची के साथ छेड़छाड़ के बराबर होगा।

194. पैराग्राफ 31 में, यह कहा गया है कि एक बार जब राज्य अपने संवैधानिक दायित्व की पूर्ति में अनुच्छेद 15(4) के तहत शैक्षणिक संस्थानों में और अनुच्छेद 16(4) के तहत राज्य की सार्वजनिक सेवाओं में कुछ सीटें आरक्षित कर देता है, तो राज्य के लिए संविधान द्वारा पहले से मान्यता प्राप्त किसी वर्ग को उपवर्गीकृत करना और अनुसूचित जातियों की सूची में राज्य द्वारा बनाए गए उपवर्ग के बीच पहले से आरक्षित कोटे का एक हिस्सा आवंटित करने का विकल्प नहीं है।

195. पैराग्राफ 38 में, **इंद्रा साहनी** के मामले का उल्लेख करने के बाद इस न्यायालय ने माना कि अन्य पिछड़ा वर्गों के उप-वर्गीकरण के लिए **इंद्रा साहनी** में निर्धारित सिद्धांतों को प्रेसिडेंशियल सूची में अनुसूचित जातियों के उप-वर्गीकरण या उपसमूहीकरण के लिए लागू नहीं किया जा सकता है क्योंकि उसी निर्णय में स्वयं स्पष्ट रूप से माना गया है कि अन्य पिछड़ा वर्गों का उप-विभाजन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर लागू नहीं होता है।

196. इस न्यायालय ने पैरा 41 में कहा कि प्रेसिडेंशियल आदेश में दी गई जातियों के समूह को, उनकी राय में, एक पूरे वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाला माना जाना चाहिए। यह धारित किया गया है कि एक राज्य में विभिन्न जातियों या जनजातियों या समूह या उनके हिस्से को एक समूह के रूप में रखने का विचार स्पष्ट रूप से सुझाव देता है कि उन्हें आगे उप-विभाजित या उप-वर्गीकृत नहीं किया जाना चाहिए। आगे धारित किया गया है कि यदि अनुसूचित जातियों के सदस्यों के एक वर्ग के भीतर एक वर्ग बनाया जाता है, तो यह सूची के साथ छेड़छाड़ करने के बराबर होगा और संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगा। न्यायालय तब उच्च न्यायालय से असहमत था कि पिछड़ेपन की पहचान करने के उद्देश्य से, एक आयोग नियुक्त करके आगे की जांच की जा सकती है कि अनुसूचित जातियों के सदस्यों में से कौन अधिक पिछड़ा है। न्यायालय ने इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि आरक्षण का लाभ उन्हें समान रूप से नहीं मिल रहा है, सुझाव दिया कि यह सुनिश्चित करने के लिए उपाय किए जाने चाहिए कि उन्हें ऐसा पर्याप्त या अतिरिक्त प्रशिक्षण दिया जाए जिससे वे दूसरों के साथ प्रतिस्पर्धा कर सकें।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

197. इस न्यायालय ने पैरा 43 में यह टिप्पणी की कि अनुसूचित जातियों के सदस्य पिछड़े वर्गों में सबसे पिछड़े हैं और आक्षेपित कानून पहले से ही इस आधार पर आगे बढ़ चुका है कि उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है, सूक्ष्म वर्गीकरण के माध्यम से आगे वर्गीकरण स्वीकार्य नहीं था।

198. यह पता लगाने के लिए कि क्या *ई.वी. चिन्नैया* अच्छा कानून है, मुझे पहले यह जांचना होगा कि *ई.वी. चिन्नैया* में यह निष्कर्ष कि *एन.एम. थॉमस* ने अनुसूचित जातियों को एक समरूप समूह माना है, सही है या नहीं।

199. *ई.वी. चिन्नैया* के मामले में *एन.एम. थॉमस* के मामले में न्यायमूर्ति मैथ्यू के फैसले का सहारा लिया गया है। पैरा 82 में, न्यायमूर्ति मैथ्यू ने टिप्पणी की है कि राष्ट्रपति की अधिसूचना के आधार पर अनुसूचित जातियाँ अस्तित्व में आती हैं। यह कहा गया है कि यद्यपि अनुसूचित जातियों के सदस्य जातियों, नस्लों या जनजातियों से लिए गए हैं, लेकिन राष्ट्रपति की अधिसूचना के आधार पर उन्हें एक नया दर्जा प्राप्त होता है।

200. इस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता कि "अनुसूचित जाति" नाम की कोई जाति नहीं है। जैसा कि पहले के पैराग्राफों में चर्चा की गई है, "अनुसूचित जाति" शब्द 1936 के आदेश और 1950 के आदेश के कारण अस्तित्व में आया है।

201. इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि एक बार जातियों, नस्लों, जनजातियों या ऐसी जातियों, नस्लों या जनजातियों के हिस्से या समूहों को राष्ट्रपति की अधिसूचना में शामिल कर लिया जाए तो उन्हें संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जाति माना जाएगा।

202. फिर *ई.वी. चिन्नैया* के मामले में *एन.एम. थॉमस* में न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर के फैसले का हवाला दिया। न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने पैरा 135 में धारित किया कि अनुच्छेद 341 और 342 को पढ़ने से पता चलता है कि हिंदू धर्म में कोई जाति नहीं है, बल्कि जातियों, नस्लों, समूहों, जनजातियों, समुदायों या उनके भागों का एक समूह है, जो जांच में सबसे निम्न पाए गए हैं और जिन्हें राज्य की ओर से व्यापक सहायता की आवश्यकता है और जिन्हें राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचित किया गया है। विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि इस पिछड़े सामाजिक संयोजन को जातियों के साथ भ्रमित करना संवैधानिक त्रुटि है।

203. विद्वान न्यायाधीश द्वारा की गई टिप्पणियां इस तर्क के संदर्भ में हैं कि जाति के आधार पर कोई विशेष उपचार अनुच्छेद 16(2) के तहत निषिद्ध है। विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि अनुच्छेद 16(2) जनजातियों, नस्लों, समूहों, समुदायों और गैर-जातियों के इस मिश्रित समूह को सुरक्षात्मक भेदभाव प्रदान करने के रास्ते में नहीं आ रहा है, जो चार प्रकार के हिंदू विभाजन के बाहर हैं। विद्वान न्यायाधीश ने आगे कहा कि भारतीय न्यायशास्त्र ने आम तौर पर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को जाति के रूप में नहीं बल्कि सामाजिक करुणा के योग्य एक बड़े पिछड़े समूह के रूप में माना है।

204. *ई.वी. चिन्नैया* के मामले में इसके बाद न्यायमूर्ति फजल अली के फैसले का सहारा लिया गया है।

205. फिर से, न्यायमूर्ति फजल अली द्वारा पैरा 169 में की गई टिप्पणियां अनुच्छेद 16(2) के निषेध पर आधारित तर्कों के संबंध में हैं। यह कहा गया है कि अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां संविधान के अनुच्छेद 16(2) के दायरे में नहीं आती हैं, जो एक ही जाति के सदस्यों के बीच भेदभाव को प्रतिबंधित करता है। यह कहा गया है कि यदि अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां जातियां नहीं हैं, तो राज्य के लिए

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

इन वर्गों को आगे बढ़ाने या ऊपर उठाने के लिए उचित वर्गीकरण करने का विकल्प खुला है ताकि वे राज्य के अधीन सेवाओं में उचित प्रतिनिधित्व करने में सक्षम हो सकें।

206. हालांकि, *एन.एम. थॉमस* के मामले में बहुमत के फैसले को पढ़ने पर यह नहीं दिखता है कि अनुसूचित जातियां समरूप समूह हैं और उनमें उप-वर्गीकरण की अनुमति नहीं है।

207. *एन.एम. थॉमस*, के मामले में मु. न्या. रे के निर्णय के पैराग्राफ 44 में कहा गया है कि असमानों के लिए अवसर की समानता का अर्थ केवल असमानता को बढ़ाना हो सकता है; अवसर की समानता कारण के साथ भेदभाव को स्वीकार करती है और बिना कारण के भेदभाव को निषिद्ध करती है; और कारण के साथ भेदभाव का अर्थ है संवैधानिक रूप से स्वीकार्य उद्देश्य से संबंध रखने वाले विभेदक उपचार के लिए तर्कसंगत वर्गीकरण। यह कहा गया है कि प्रशासनिक दक्षता के साथ सेवाओं में पिछड़े वर्गों के लिए अधिमान्य प्रतिनिधित्व स्वीकार्य उद्देश्य है और पिछड़ा वर्ग संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त एक तर्कसंगत वर्गीकरण हैं। इसलिए उन्होंने धारित किया कि चयन के मानकों में विभेदक उपचार समानता की अवधारणा के अंतर्गत आता है।

208. न्यायमूर्ति मैथ्यू ने पैराग्राफ 54 में आनुपातिक समानता के सिद्धांत का उल्लेख किया है और धारित किया है कि इसे तभी प्राप्त किया जा सकता है जब समानों के साथ समान व्यवहार किया जाए और असमानों के साथ असमान व्यवहार किया जाए। उन्होंने कहा कि विभेदक उपचार की अनुमति तभी दी जाएगी जब अलग-अलग व्यवहार किए जाने वाले व्यक्तियों के बीच महत्वपूर्ण अंतर हो।

209. पैरा 73 में, विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि राज्य को समानुपातिक समानता का एक मानक अपनाना चाहिए जो नागरिकों के एक वर्ग की भिन्न-भिन्न स्थितियों और परिस्थितियों को ध्यान में रखता है, जब भी वे स्थितियाँ और परिस्थितियाँ उनके बुनियादी अधिकारों या दावों के लिए समान पहुँच के रास्ते में आती हैं।

210. पैरा 75 में, विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि इस तरह का अधिमान्य व्यवहार अनुच्छेद 16(1) के तहत अनुमेय होगा क्योंकि इस तरह का अधिमान्य व्यवहार ही पिछड़े वर्ग के लोगों को अगड़े समुदायों के बराबर ला खड़ा करेगा। विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि अवसर की समानता है या नहीं, इसका अंदाजा केवल परिणाम में प्राप्त समानता से लगाया जा सकता है। उन्होंने कहा कि अवसर की औपचारिक समानता केवल अधिक शिक्षा और बुद्धिमत्ता वाले लोगों को सभी पदों पर कब्जा करने और शिक्षा और प्रतिभा में कम भाग्यशाली लोगों को जीतने में सक्षम बनाती है, भले ही प्रतिस्पर्धा निष्पक्ष हो। यह कहा गया है कि परिणाम की समानता अवसर की समानता की कसौटी है।

211. न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने पैरा 119 में 'सामाजिक इंजीनियरिंग' की अवधारणा का उल्लेख किया है। उन्होंने एक पुस्तक से उद्धरण दिया कि "शेर और बैल के लिए एक ही कानून अत्याचार है।"

212. पैरा 129 में, संवैधानिक योजना पर विचार करने के बाद, विद्वान न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि संविधान स्वयं हरिजन को दूसरों से अलग करता है। यह समुदाय के इस निचले तबके के घोर पिछड़ेपन पर आधारित है। यह कहा गया कि राज्य के अधीन पदों पर नियुक्तियों के क्षेत्र को विशेष रूप से कवर करने के लिए भेदभाव किया गया है। उन्होंने आगे कहा कि दो उद्देश्य एक में मिश्रित हैं— ऐसे पदों पर हरिजन के दावों पर विचार किया जाना और प्रशासनिक दक्षता बनाए रखना। विद्वान न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि हरिजन और पिछड़े वर्गों के आर्थिक हितों को बढ़ावा देना राज्य का कर्तव्य है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

213. पैरा 142 में, विद्वान न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि अनुच्छेद 14 से 16 की प्रतिभा शाब्दिक समानता में नहीं बल्कि स्पष्ट असमानता के क्रमिक उन्मूलन में निहित है। उन्होंने टिप्पणी की कि बहुत भिन्न व्यक्तियों के साथ समान व्यवहार करना सूक्ष्म अन्याय है।

214. पैरा 149 में, न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने निष्कर्ष देते हुए कहा कि "पिछड़े वर्ग के उच्च पदों पर आसीन लोग दोहरी क्षति करते हैं। वे व्यापक समुदाय को यह विश्वास दिलाते हैं कि पिछड़ापन समाप्त हो रहा है। वे पिछड़े वर्ग के जरूरतमंद लोगों को वर्गीकरण, आरक्षण या प्रदत्त सुविधाओं के माध्यम से राष्ट्र द्वारा दिए जाने वाले 'पद' लाभों से वंचित करते हैं।"

215. न्यायमूर्ति फजल अली ने पैरा 165 में संविधान के अनुच्छेद 366 के खंड (24) और (25) का उल्लेख करते हुए कहा कि उक्त प्रावधान अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में यह धारणा बनाते हैं कि वे पिछड़े वर्ग के नागरिक हैं। यह कहा गया कि इस पर विवाद नहीं है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को संविधान के अनुच्छेद 341 और 342 के तहत जारी अधिसूचनाओं में निर्दिष्ट किया गया है और इसलिए, उन्हें संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के रूप में माना जाना चाहिए।

216. पैरा 178 में विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि अनुच्छेद 16 में निहित समानता या समान अवसर की अवधारणा का अर्थ यह नहीं है कि सभी व्यक्तियों पर हर परिस्थिति में समान कानून लागू होने चाहिए। उन्होंने कहा कि यदि अनुच्छेद 16 के दायरे और विस्तार पर यह कृत्रिम व्याख्या लागू की जाती है तो इससे कानून का चैनलाइजेशन या नियमों का ध्रुवीकरण हो जाएगा। यह कहा गया कि मनुष्यों और चीजों के बीच भेद और असमानताएं मौजूद हैं, और उन्हें समान कानूनों के प्रयोग द्वारा समान रूप से नहीं माना जा सकता है। उन्होंने कहा कि कानून को जीवन के साथ तालमेल बिठाना होगा और इसे मानव स्वभाव में मौजूद वास्तविक भेदों और असमानताओं को पहचानने में सक्षम होना चाहिए।

217. विद्वान न्यायाधीश ने यह भी धारित किया कि संविधान के अनुच्छेद 16 के खंड (1) में निहित समानता का स्वाभाविक रूप से तात्पर्य है कि अवसर न केवल समाज के किसी विशेष वर्ग या नागरिकों के किसी विशेष वर्ग को दिया जाना चाहिए जो उन्नत या अन्यथा अधिक समृद्ध हो सकते हैं, बल्कि नागरिकों के सभी वर्गों को दिया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि यह उचित वर्गीकरण करके प्राप्त किया जा सकता है ताकि नागरिकों के प्रत्येक वर्ग को सेवाओं में उचित प्रतिनिधित्व मिल सके जिससे सभी नागरिकों को अवसर की समानता मिल सके। उन्होंने वर्गीकरण को उचित बनाने के लिए शर्तें निर्धारित की हैं।

218. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि *एन.एम. थॉमस* के किसी भी निर्णय में यह नहीं माना गया है कि अनुसूचित जातियाँ एक समरूप वर्ग हैं। यह माना गया है कि एक बार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की पहचान हो जाने और उन्हें प्रेसिडेंशियल सूची में स्थान मिल जाने के बाद, वे अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ बनी रहेंगी। यह माना गया है कि प्रेसिडेंशियल सूची में शामिल होने के तथ्य से ही उन्हें पिछड़ा माना जाता है और उनके पिछड़ेपन के बारे में आगे कोई जाँच उचित नहीं होगी।

219. *अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ (उपपरोक्त)* में, न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने पैरा 94 में इस दलील को खारिज कर दिया कि चूँकि कुछ हरिजन बेहतर स्थिति में हैं, इसलिए निचले तबके के लोगों को कोई अतिरिक्त

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

प्रावधान नहीं मिलना चाहिए और बूंद से सागर का पता नहीं चलता। उन्होंने आगे कहा कि हो सकता है, जब सामाजिक परिस्थितियाँ उचित हों, राज्य हरिजन लाभों को हरिजनों के बीच के हरिजनों तक ही सीमित कर दे और उच्च हरिजनों को निचले तबके के भाइयों को लूटने से रोक दे।

220. फिर, पैरा 98 में उन्होंने इस तर्क पर विचार किया कि अमीर और प्रभावशाली हरिजन हैं जो सभी विशेषाधिकारों को लूट लेते हैं और सर्फ़-स्तर के पीड़ितों को हमेशा की तरह दबा कर रख देते हैं। उन्होंने प्रशासन को अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों की मलाईदार परत को हटाने के लिए कुछ नया करने और वर्गीकरण करने की सलाह दी। हालाँकि, उन्होंने कहा कि न्यायालय इस संबंध में राज्य को बाध्य नहीं कर सकता।

221. **के.सी. वसंत कुमार**, के मामले में मु.न्या. चंद्रचूड़ ने पैराग्राफ 2 में कहा कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में रोजगार और शिक्षा में आरक्षण बिना किसी साधन परीक्षण के 15 वर्ष से अधिक की अवधि के लिए जारी रहना चाहिए। उन्होंने कहा कि 15 वर्ष की उक्त अवधि के बाद, आर्थिक पिछड़ेपन का परीक्षण अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर भी लागू होना चाहिए। जहां तक अन्य पिछड़े वर्गों का संबंध है, उन्होंने कहा कि रोजगार और शिक्षा में आरक्षण के उद्देश्य से उनकी पहचान करने के लिए दो परीक्षणों को संयुक्त रूप से लागू किया जाना चाहिए: पहला, कि वे अपने पिछड़ेपन के मामले में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बराबर होने चाहिए; और दूसरा, कि उन्हें राज्य सरकार द्वारा प्रचलित आर्थिक स्थितियों के संदर्भ में निर्धारित साधन परीक्षण को पूरा करना चाहिए।

222. न्यायमूर्ति देसाई ने पैरा 31 में कहा कि उनके द्वारा सुझाया गया दृष्टिकोण अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में आरक्षण से संबंधित नहीं है, क्योंकि हजारों वर्षों से चले आ रहे भेदभाव और शोषण को एक पीढ़ी में समाप्त नहीं किया जा सकता। हालांकि, उन्होंने सुझाव दिया कि उनके मामले में भी आर्थिक मानदंड लागू करने योग्य है, क्योंकि उनमें से उन लोगों को वरीयता देने से इनकार किया जाना चाहिए, जो पहले से ही इसका लाभ उठा चुके हैं और अपनी स्थिति में सुधार कर चुके हैं।

223. न्यायमूर्ति चिन्नाप्पा रेड्डी पैरा 51 में इस दृष्टिकोण से सहमत नहीं थे कि अन्य वर्गों के सामाजिक पिछड़ेपन का निर्धारण करते समय, लागू किया जाने वाला परीक्षण अनुसूचित जातियों के अस्तित्व की स्थितियों के निकट है। उन्होंने कहा कि ऐसा परीक्षण व्यावहारिक रूप से अनुसूचित जातियों और जनजातियों के अलावा सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण के प्रावधान को रद्द कर देगा।

224. न्यायमूर्ति चिन्नाप्पा रेड्डी पैरा 79 में कहते हैं कि उन जातियों या सामाजिक समूहों के कुछ सदस्य इतनी प्रगति कर चुके हैं और आगे बढ़ चुके हैं कि वे आर्थिक, सामाजिक और शैक्षणिक रूप से अग्रणी वर्ग के साथ अनुकूल तुलना कर सकते हैं। उन्होंने सुझाव दिया कि ऐसे मामलों में, शायद आय की ऊपरी सीमा से आरक्षण का लाभ वर्ग के उन सदस्यों को मिल सकेगा जो वास्तव में इसके हकदार हैं।

225. जैसा कि पहले ही ऊपर चर्चा की जा चुकी है, **इंद्रा साहनी** मामले में इस न्यायालय की 9 न्यायाधीशों की पीठ ने स्पष्ट शब्दों में धारित किया है कि पिछड़े वर्गों को और अधिक पिछड़े वर्गों में वर्गीकृत करना कानून में स्वीकार्य है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

226. **इंद्रा साहनी** मामले में पैरा 802 में, न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने दो व्यावसायिक समूहों अर्थात स्वर्णकार और वड्डे (आंध्र प्रदेश में पारंपरिक पत्थर काटने वाले) के संबंध में एक उदाहरण दिया है। उन्होंने कहा कि दोनों को अन्य पिछड़ा वर्ग में शामिल किया गया है। उन्होंने कहा कि कोई भी इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि स्वर्णकार वड्डे की तुलना में बहुत कम पिछड़े हैं और इसलिए यदि दोनों को एक साथ समूहीकृत किया जाता है और आरक्षण प्रदान किया जाता है, तो अपरिहार्य परिणाम यह होगा कि स्वर्णकार सभी आरक्षित पदों को छीन लेंगे और वड्डे के लिए कोई भी पद नहीं छोड़ेंगे। विद्वान न्यायाधीश ने आगे कहा कि ऐसी स्थिति में, राज्य अन्य पिछड़े वर्गों में भी वर्गीकरण करना उचित समझ सकता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि पिछड़े वर्गों में अधिक पिछड़े लोगों को उनके लिए इच्छित लाभ प्राप्त हो। उन्होंने कहा कि रेखा कहाँ खींची जाए और उप-वर्गीकरण कैसे किया जाए, यह आयोग और राज्य का मामला है और जब तक यह उचित रूप से किया जाता है, तब तक न्यायालय हस्तक्षेप नहीं कर सकता।

227. यह भी ध्यान देने योग्य होगा कि पैरा 803 में, विद्वान न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि अनुच्छेद 16(4) केवल एक वर्ग अर्थात "नागरिकों के पिछड़े वर्ग" को मान्यता देता है। यह अनुच्छेद 15(4) की तरह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बारे में अलग से बात नहीं करता है। विद्वान न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि यह विवाद से परे है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को भी "नागरिकों के पिछड़े वर्ग" की अभिव्यक्ति में शामिल किया गया है और उनके पक्ष में अलग से आरक्षण प्रदान किया जा सकता है। विद्वान न्यायाधीश ने टिप्पणी की कि यदि अनुसूचित जनजातियों, अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों को एक साथ रखा जाता है, तो ओबीसी सभी रक्तियों को ले लेंगे और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को उपेक्षित छोड़ देंगे। उन्होंने कहा कि यही तर्क अधिक पिछड़े और पिछड़े के बीच वर्गीकरण को भी उचित ठहराता है।

228. जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, **इंद्रा साहनी** के पैराग्राफ 781 में, न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने कहा है कि निर्णय में चर्चा के उद्देश्य से, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति, जिन्हें निश्चित रूप से पिछड़े वर्गों में शामिल किया गया था, को अलग रखा गया था।

229. यह ध्यान देने योग्य है कि निर्णय में उक्त चर्चा नागरिकों के पिछड़े वर्गों की "पहचान" से संबंधित थी। जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, जहां तक अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति का संबंध है, पहचान पहले से ही अनुच्छेद 341 और 342 के तहत जारी प्रेसिडेंशियल सूची द्वारा कवर की गई है।

230. न्यायमूर्ति सावंत ने अपने निर्णय में यह भी माना कि अनुच्छेद 16(4) पिछड़े वर्गों को पिछड़े और अधिक या सबसे पिछड़े वर्गों में वर्गीकरण की अनुमति देता है। हालांकि, इस वर्गीकरण की अनुमति केवल सामाजिक पिछड़ेपन की मात्रा के कारण है और केवल आर्थिक विचार के आधार पर नहीं है। उन्होंने कहा कि यदि पिछड़े वर्गों को पिछड़े तथा अधिक या सर्वाधिक पिछड़े वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है, तो ऐसे प्रत्येक वर्ग के लिए आरक्षण के अलग-अलग कोटे रखे जाएंगे। ऐसे अलग-अलग कोटे के अभाव में आरक्षण अवैध होगा।

231. **ई.वी. विन्नैया** मामले में इस न्यायालय ने टिप्पणी की है कि **इंद्रा साहनी** के मामले में निर्धारित कानून लागू नहीं होगा, क्योंकि न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने अपने निर्णय में स्वयं कहा है कि यह पैरा 781 में अनुसूचित जातियों

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

और अनुसूचित जनजातियों पर लागू नहीं होगा, जो पैरा नागरिकों के पिछड़े वर्गों की पहचान से संबंधित है। न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने कहा है कि उक्त चर्चा के उद्देश्य से हम अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को अलग रखते हैं। उन्होंने टिप्पणी की कि ऐसा इसलिए किया गया क्योंकि उन्हें निश्चित रूप से पिछड़े वर्गों में शामिल किया गया है। हालांकि, पैरा 803 में उन्होंने विशेष रूप से टिप्पणी की कि अनुच्छेद 16(4) के तहत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का कोई उल्लेख नहीं है और अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां भी नागरिकों के पिछड़े वर्ग का हिस्सा हैं।

232. जहां तक पैरा 792 में की गई टिप्पणी का सवाल है, जिसमें न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने कहा था कि उक्त चर्चा अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों के मामले में प्रासंगिक नहीं है, उक्त चर्चा 'साधन परीक्षण' या 'क्रीमी लेयर परीक्षण' की प्रयोज्यता के बारे में थी।

233. ऐसा होने पर, यदि अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां अनुच्छेद 16(4) के तहत नागरिकों के पिछड़े वर्ग का हिस्सा हैं, तो सवाल यह होगा कि अन्य पिछड़े वर्गों के मामले में जिस उप-वर्गीकरण की अनुमति है, उसे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मामले में क्यों नहीं दिया जा सकता?

234. हालांकि इस न्यायालय का आरंभिक दृष्टिकोण यह था कि अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद है, लेकिन इसमें व्यापक परिवर्तन हुआ है, विशेष रूप से **परम पावन केशवानंद भारती श्रीपदगलवरु बनाम केरल राज्य** के मामले में इस न्यायालय के निर्णय के बाद, जो मौलिक अधिकारों और नीति निर्देशक सिद्धांतों के बीच परस्पर क्रिया के संबंध में था। **केशवानंद भारती** में निर्णय के तुरंत बाद, इस न्यायालय की 7 न्यायाधीशों की पीठ ने **एन.एम. थॉमस** में निर्णय दिया, जिसमें 5 विद्वान न्यायाधीशों ने यह दृष्टिकोण अपनाया कि अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद नहीं है। यह माना गया कि अनुच्छेद 14 से 16 की त्रिमूर्ति समानता की अवधारणा को मूर्त रूप देती है। इस बात पर बल दिया गया कि समानता का अर्थ सभी के लिए समानता नहीं है। यह माना गया कि संविधान के तहत निहित समानता का अर्थ औपचारिक समानता नहीं बल्कि वास्तविक समानता है। यह माना गया कि वास्तविक समानता लाने के लिए असमान लोगों के साथ असमान व्यवहार करना संविधान के तहत परिकल्पित है। यह माना गया कि यदि असमान लोगों के साथ समान व्यवहार किया जाता है तो इससे असमानता को बढ़ावा मिलने के अलावा और कुछ नहीं होगा। यह माना गया कि असमान लोगों के साथ असमान व्यवहार करके ही वे आगे बढ़ सकते हैं और वास्तविक समानता लाई जा सकती है।

235. इस न्यायालय ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि पिछड़े वर्गों के सदस्यों के लिए तरजीही व्यवहार का मतलब केवल सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता हो सकता है। न्यायालय ने माना कि अनुच्छेद 16 का खंड (4) अनुच्छेद 16 (1) में निहित सिद्धांत को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने का एक सशक्त तरीका था।

236. मु.न्या. रे ने कहा कि अनुच्छेद 16(1) के तहत सेवाओं में अवसर की समानता के लिए सभी वैध तरीके उपलब्ध हैं। उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) में निहित समानता प्राप्त करने के तरीकों में से एक को इंगित करता है।

237. न्यायमूर्ति मैथ्यू ने कहा कि समानता का दावा वास्तव में अन्यायपूर्ण, वंचित और अनुचित असमानताओं के खिलाफ विरोध है। यह संयोग, आकस्मिक असमानता, अन्यायपूर्ण शक्ति और क्रिस्टलीकृत विशेषाधिकारों के खिलाफ मनुष्य के विद्रोह का प्रतीक है। उन्होंने कहा कि यदि अनुच्छेद 16(1) के तहत गारंटीकृत अवसर की

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

समानता का अर्थ प्रभावी भौतिक समानता है, तो अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद नहीं है। यह केवल इस बात को स्पष्ट करने का एक सशक्त तरीका है कि अवसर की समानता किस सीमा तक ले जाई जा सकती है, यानी आरक्षण करने के बिंदु तक।

238. अनुच्छेद 83 में, उन्होंने जोर देकर कहा कि यह मान लेना एक भूल है कि किसी वर्ग के भीतर कोई वर्गीकरण नहीं हो सकता। उन्होंने कहा कि यदि कोई स्पष्ट अंतर है जो उस वर्ग के भीतर किसी समूह को बाकी से अलग करता है और उस अंतर का वर्गीकरण के उद्देश्य से संबंध है, तो वर्ग के भीतर आगे वर्गीकरण पर कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

239. पैरा 124 में, न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने ए.एन. सिन्हा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज, पटना द्वारा किए गए शोध का उल्लेख किया है, जो हरिजनों के बीच एक दोहरे समाज को उजागर करेगा, एक छोटा सा अभिजात वर्ग लाभों को हड़प रहा है और अंधेरे तबके विशेष रियायतों से कोसों दूर सो रहे हैं। उन्होंने देखा कि, उनके लिए, अनुच्छेद 46 और 335 एक 'महान रोमांस' बने हुए हैं, जिसका लाभ 'उच्च' हरिजनों को मिल रहा है। उन्होंने अनुच्छेद 136 में कहा कि अनुच्छेद 16(4) को एक व्यावृत्तिक खंड होने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि संदेह की संभावना से परे मामलों को स्पष्ट करने के लिए ड्राफ्ट्समैन की अत्यधिक चिंता के कारण इसे जोड़ा गया है। उन्होंने पैराग्राफ 142 में कहा कि अनुच्छेद 14 से 16 की खूबी शाब्दिक समानता में नहीं बल्कि स्पष्ट असमानता को धीरे-धीरे खत्म करने में है। उनके अनुसार, बहुत अलग-अलग व्यक्तियों के साथ समान व्यवहार करना सूक्ष्म अन्याय है। उन्होंने कहा कि यदि अनुच्छेद 16(4) उचित वर्गीकरण की अनुमति देता है, तो अनुच्छेद 16(1) भी ऐसा ही करता है।

240. **के.सी. वसंत कुमार** मामले में, मु. न्या. वाई.वी. चंद्रचूड़ ने टिप्पणी की कि आर्थिक पिछड़ेपन की कसौटी को निर्णय की तिथि से 15 वर्ष की अवधि के बाद अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर भी लागू किया जाना चाहिए। न्यायमूर्ति देसाई ने उक्त निर्णय में टिप्पणी की कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मामले में भी आर्थिक मानदंड लागू करने योग्य है, क्योंकि उनमें से उन लोगों को वरीयता देने से इनकार कर दिया जाना चाहिए जो पहले से ही इससे लाभान्वित हो चुके हैं और अपनी स्थिति में सुधार कर चुके हैं।

241. न्यायमूर्ति फजल अली ने संविधान के भाग III और भाग IV के बीच अंतरसंबंध के संबंध में **केशवानंद भारती** मामले में विद्वान न्यायाधीशों के सभी निर्णयों का उल्लेख करने के बाद कहा कि संविधान द्वारा गारंटीकृत मौलिक अधिकारों को भाग IV में निहित नीति निर्देशक सिद्धांतों के साथ सामंजस्य में पढ़ा जाना चाहिए। उन्होंने यह भी दोहराया कि अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का प्रावधान नहीं है।

242. न्यायमूर्ति एम.एच. बेग उपरोक्त विद्वान न्यायाधीशों द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से सहमत हैं।

243. इसके अलावा, न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने **अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ** मामले में दोहराया कि अनुच्छेद 14 से 16 अपने आप में एक संहिता बनाते हैं और संविधान के जातिविहीन और वर्गविहीन समतावाद के सार को मूर्त रूप देते हैं। उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 46, जोरदार शब्दों में, राज्य को "लोगों के कमजोर वर्गों, और विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को विशेष ध्यान से बढ़ावा देने और उन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाने के लिए बाध्य करता है।"

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 46 को अनुच्छेद 16(4) के साथ पढ़ने पर, यह निष्कर्ष स्पष्ट है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों द्वारा प्रशासनिक भागीदारी को राज्य द्वारा विशेष ध्यान से बढ़ावा दिया जाएगा।

244. इस आलोचना पर विचार करते हुए कि अमीर और प्रभावशाली हरिजन हैं जो सभी विशेषाधिकारों को छीन लेते हैं और सर्फ-स्तर के पीड़ितों को हमेशा की तरह दबा कर रख देते हैं, उन्होंने सुझाव दिया कि प्रशासन एससी/एसटी की मलाईदार परत को हटाने के लिए नवाचार और वर्गीकरण कर सकता है। हालांकि, उन्होंने चेतावनी दी कि न्यायालय राज्य को इस संबंध में बाध्य नहीं कर सकता।

245. न्यायमूर्ति चिन्नप्पा रेड्डी ने इसी निर्णय में कहा है कि संविधान और कानूनों की व्याख्या करते समय निर्देशक सिद्धांतों को लागू करना न्यायालय का कर्तव्य है। उन्होंने कहा है कि निर्देशक सिद्धांतों को न्यायालयों के लिए व्याख्या के कोड के रूप में काम करना चाहिए। उन्होंने कहा है कि मौलिक अधिकारों की व्याख्या निर्देशक सिद्धांतों के प्रकाश में की जानी चाहिए और जब भी और जहाँ भी संभव हो, मौलिक अधिकारों को निर्देशक सिद्धांतों के साथ जोड़कर देखा जाना चाहिए।

246. न्यायमूर्ति चिन्नप्पा रेड्डी ने कहा है कि राज्य की कार्रवाई वंचितों और शोषितों के संरक्षण और पोषण के लिए होनी चाहिए ताकि वे समतावादी समाज में अपना स्थान ले सकें।

247. **इंद्रा साहनी** मामले में, 7 विद्वान न्यायाधीशों ने **एन.एम. थॉमस** मामले में निर्धारित स्थिति की पुष्टि की कि अनुच्छेद 16 का खंड (4) अनुच्छेद 16 के खंड (1) का अपवाद नहीं है, बल्कि यह अनुच्छेद 16(1) में निहित सिद्धांत को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने का एक सशक्त तरीका है।

248. जैसा कि पहले ही ऊपर चर्चा की जा चुकी है, यह माना गया है कि पिछड़े वर्गों को पिछड़े एवं अधिक पिछड़े वर्गों में वर्गीकृत करना संविधान के तहत अनुमेय है। न्यायमूर्ति सावंत द्वारा रखी गई एकमात्र चेतावनी यह है कि यदि ऐसा किया जाता है तो पिछड़े और अधिक या सबसे पिछड़े दोनों वर्गों के लिए आरक्षण होना चाहिए।

इंद्रा साहनी मामले में यह माना गया है कि अनुच्छेद 16(4) के तहत अनुसूचित जातियों को भी 'नागरिकों के पिछड़े वर्ग' में शामिल किया गया है।

249. यदि ऐसा है, तो मुझे **ई.वी. चिन्नैया** के इस कथन में कोई औचित्य नहीं दिखता कि राज्य को अनुसूचित जातियों के बीच उप वर्गीकरण करने का अधिकार नहीं है।

250. **ई.वी. चिन्नैया** में जो मूलभूत त्रुटि हुई है, वह यह है कि यह इस समझ पर आधारित है कि अनुच्छेद 341 का संबंध सीटों के आरक्षण से है।

251. जैसा कि पहले ही ऊपर चर्चा की जा चुकी है, अनुच्छेद 341 और 342 केवल अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की पहचान के संबंध में हैं। संविधान के अनुच्छेद 366 के खंड (24) और (25) के साथ अनुच्छेद 341 और 342 में प्रावधान है कि राष्ट्रपति सूची में शामिल जातियों को संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति माना जाएगा। हालांकि, पुनरावृत्ति की कीमत पर, मैं दोहराता हूँ कि अनुच्छेद 341 और 342 आरक्षण से संबंधित नहीं हैं।

252. सार्वजनिक रोजगार के मामले में आरक्षण सहित सकारात्मक कार्रवाई के प्रावधान भारत के संविधान के अनुच्छेद 16 में निहित हैं।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

253. जैसा कि पहले ही ऊपर चर्चा की जा चुकी है, **इंद्रा साहनी** मामले में इस न्यायालय ने माना है कि पिछड़े वर्गों को पिछड़े एवं अधिक पिछड़े वर्गों में वर्गीकृत करना कानून में स्वीकार्य है। 254. उस परिणाम के अनुसार, यदि कोई राज्य पाता है कि किसी जाति, मूलवंश, जनजाति या जातियों, मूलवंश या जनजातियों के किसी भाग या समूह का पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है, तो क्या राज्य को उसके लिए विशेष प्रावधान करने के उसके अधिकार से वंचित किया जा सकता है ?

255. अनेक निर्णयों में, इस न्यायालय ने माना कि राज्य को उन लोगों को, जो अपनी संपत्ति, शिक्षा या सामाजिक परिवेश में तथ्यात्मक रूप से असमान हैं, निर्दिष्ट क्षेत्रों में समान बनाने के उद्देश्य से प्रतिपूरक राज्य कार्रवाई का सहारा लेना चाहिए। यह माना गया है कि राज्य को वास्तविक समानता लाने के लिए सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित व्यक्तियों को वरीयता और आरक्षण देकर या अधिक लाभप्रद स्थिति वाले लोगों को बाधाएँ पहुँचाकर सकारात्मक कार्रवाई करनी चाहिए। इस संबंध में **मरी चंद्र शेखर राव बनाम डीन, सेठ जी.एस. मेडिकल कॉलेज और अन्य** के मामले में इस न्यायालय के संविधान पीठ के निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है, जिसमें इस न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की :

“20. समाज के कमजोर वर्गों की संभावनाओं को आगे बढ़ाने के लिए आरक्षण को अपनाया जाना चाहिए और अवश्य अपनाया जाना चाहिए, लेकिन ऐसा करते समय समुदाय के अन्य वर्गों की वैध अपेक्षाओं को बाहर न करने का ध्यान रखा जाना चाहिए।”

256. हमारे ध्यान में कुछ चौंकाने वाले तथ्य लाए गए हैं। यद्यपि आंध्र प्रदेश राज्य के लिए प्रेसिडेंशियल सूची में 60 अनुसूचित जातियों की सूची है, न्यायमूर्ति उषा मेहरा आयोग की रिपोर्ट से पता चलता है कि इन 60 अनुसूचित जातियों में से केवल 4 या 5 ने ही आरक्षण का लाभ उठाया है, जिससे प्रेसिडेंशियल सूची में शेष अनुसूचित जातियाँ उपेक्षित रह गई हैं। रिपोर्ट से पता चलता है कि इसके परिणामस्वरूप एक विसंगति हुई है कि आंध्र प्रदेश राज्य के लिए प्रेसिडेंशियल सूची में शामिल होने के बावजूद बहुसंख्यक जातियों में से कोई भी स्वीपर और/या फराश की नौकरी को छोड़कर राज्य के तहत सरकारी सेवा में प्रवेश सहित आरक्षण लाभ प्राप्त करने में सक्षम नहीं है।

257. जहां तक पंजाब राज्य का संबंध है, पंजाब राज्य की ओर से यह निवेदन किया गया है कि यद्यपि बाल्मीकि और मजहबी सिख अनुसूचित जातियों की कुल आबादी का 41.9% हिस्सा है, लेकिन सार्वजनिक रोजगार में इन श्रेणियों का प्रतिशत अनुसूचित जातियों के बीच उनकी आबादी के सापेक्ष पूरी तरह से असंगत है। किसी भी स्थिति में, यह कहा गया है कि अधिनियम 27 के तहत जो प्रावधान किया गया है वह अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित 50% रिक्तियों के संबंध में केवल विभेदक व्यवहार था। केवल तभी जब इन श्रेणियों के उम्मीदवार उपलब्ध हों, सीटें इन श्रेणियों में जाएंगी। इन श्रेणियों के उम्मीदवारों की अनुपलब्धता के कारण, सीटें अनुसूचित जातियों की अन्य श्रेणियों में आ जाएंगी।

258. मैं पाता हूँ कि, जैसा कि इस न्यायालय ने विभिन्न निर्णयों में कहा है, राज्य का यह कर्तव्य है कि वह पिछड़े वर्ग के नागरिकों को प्राथमिकता दे, जिनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है। यदि राज्य उस कर्तव्य का निर्वहन करते हुए पाता है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के भीतर कुछ श्रेणियों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है और केवल कुछ श्रेणियों के लोग ही अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित संपूर्ण लाभ का आनंद ले रहे हैं, तो क्या राज्य को ऐसी श्रेणियों के लिए अधिक प्राथमिकता देने के अपने अधिकार से

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

वंचित किया जा सकता है? मेरे विचार में, इसका उत्तर नकारात्मक होगा, क्योंकि ऐसा करना प्रेसिडेंशियल सूची के साथ छेड़छाड़ नहीं माना जाएगा।

259. इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि राज्य अनुसूचित जातियों के लिए 100% आरक्षण उस राज्य में प्रेसिडेंशियल सूची में सूचीबद्ध एक या अधिक श्रेणियों को प्रदान करने का निर्णय लेता है, तो कुछ श्रेणियों को बाहर करने के लिए, यह उस सूची के साथ छेड़छाड़ करने के बराबर हो सकता है क्योंकि, वास्तव में, यह उन अनुसूचित जाति श्रेणियों को आरक्षण के लाभ से वंचित करने के बराबर होगा जिन्हें बाहर रखा गया है। मेरे विचार में, यह वास्तव में संविधान के अनुच्छेद 341 के तहत अधिसूचित प्रेसिडेंशियल सूची से उक्त श्रेणियों को हटाने के बराबर होगा, जिसका अधिकार विशेष रूप से संसद के पास सुरक्षित है, मेरे विचार में, ऐसा कोई कार्य अनुमेय नहीं होगा।

260. इस संबंध में, मैं **इंद्रा साहनी** में न्यायमूर्ति सावंत द्वारा की गई टिप्पणियों से समर्थन ले सकता हूँ। उन्होंने कहा कि यदि आरक्षण केवल अधिक या सबसे पिछड़े वर्गों के लिए प्रदान किया जाता है, तो उच्चतर वर्गों से संबंधित लोग खाली सीटों पर कब्जा कर लेंगे जबकि अधिक या सबसे पिछड़े वर्गों के लोग पूरे आरक्षण को खा जाएंगे, जिससे अन्य पिछड़े वर्ग बेसहारा रह जाएंगे। इसलिए उन्होंने माना कि पिछड़े वर्गों का उप वर्गीकरण स्वीकार्य होगा, बशर्ते कि आरक्षित सीटें पिछड़े वर्गों के साथ-साथ अधिक या सबसे पिछड़े वर्गों के लिए भी उपलब्ध हों। इसलिए मेरा यह सुविचारित मत है कि केवल इसलिए कि अनुसूचित जातियों में अधिक पिछड़े या अधिक अपर्याप्त प्रतिनिधित्व वाले लोगों को अधिक तरजीही उपचार प्रदान किया जाता है, यह प्रेसिडेंशियल सूची के साथ छेड़छाड़ नहीं होगी। मेरे विचार में, **इंद्रा साहनी** के मामले में 9 न्यायाधीशों की पीठ द्वारा निर्धारित कानून के मद्देनजर यह स्वीकार्य होगा।

261. जमीनी हकीकत से इनकार नहीं किया जा सकता। अनुसूचित जातियों में भी कुछ श्रेणियां ऐसी हैं, जिन्हें सदियों और पीढ़ियों से अन्य श्रेणियों की तुलना में अधिक अमानवीय व्यवहार सहना पड़ा है। इन श्रेणियों ने ऐतिहासिक रूप से जो कठिनाइयां और पिछड़ापन झेला है, वह हर श्रेणी में अलग-अलग होगा। इसलिए, मेरे विचार में, केवल इसलिए कि वे एक एकल या संयुक्त प्रेसिडेंशियल सूची का हिस्सा हैं, यह नहीं कहा जा सकता कि वे एक समरूप समूह का हिस्सा हैं। इसलिए मुझे यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि **ई.वी. चिन्नैया** के बारे में गलत निर्णय लिया गया है।

262. उप-वर्गीकरण की अवधारणा पर इस आधार पर हमला किया गया कि इससे राजनीतिक कारणों से आरक्षण दिया जाएगा। यह तर्क दिया गया कि राजनीतिक लाभ प्राप्त करने के लिए सत्ता में एक राजनीतिक दल अनुसूचित जातियों की सूची में किसी विशेष वर्ग को विशेष उपचार प्रदान कर सकता है। मुझे इस तर्क में कोई दम नहीं दिखता।

263. डॉ. अंबेडकर ने ऐसी कठिनाई का पूर्वानुमान लगाया था। संविधान सभा में अपने भाषण में, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने कहा कि 'पिछड़े समुदाय' का निर्धारण प्रत्येक स्थानीय सरकार को करना होगा। श्री टी.टी. कृष्णामाचारी द्वारा यह पूछे जाने पर कि क्या यह नियम न्यायोचित होगा, उन्होंने कहा कि यह न्यायोचित मामला होगा। उन्होंने कहा कि यदि स्थानीय सरकार आरक्षण की इस श्रेणी में इतनी बड़ी संख्या में सीटें शामिल करती है, तो कोई भी संघीय न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय में जाकर यह कह सकता है कि आरक्षण इतना बड़ा है

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कि अवसर की समानता संबंधी नियम नष्ट हो गया है और तब न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचेगा कि स्थानीय सरकार या राज्य सरकार ने उचित और विवेकपूर्ण तरीके से कार्य किया है या नहीं।

264. उपर्युक्त विभिन्न न्यायिक घोषणाओं में इस बात पर जोर दिया गया है कि अनुच्छेद 14 से 16 की त्रिमूर्ति में उचित वर्गीकरण निहित है। इसलिए, यदि कोई न्यायालय में जाता है, तो न्यायालय हमेशा इस बात की जांच कर सकता है कि ऐसा वर्गीकरण उचित है या नहीं।

265. वर्गीकरण के उचित होने के लिए, यह स्थापित करना होगा कि बड़े समूह में बनाया गया कोई भी समूह या उप-समूह बड़े समूह से काफी भिन्न है और यह वर्गीकरण का उद्देश्य प्राप्त करने से संबंधित है।

266. वर्तमान मामले की तरह, यदि वर्गीकरण किया जाता है, तो यह स्थापित करना होगा कि बड़े समूह से अलग किया गया समूह अधिक नुकसान में है और उसका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है। वर्गीकरण का परिणाम इस अधिक नुकसान वाली स्थिति और कम प्रतिनिधित्व वाले समूह को अधिक तरजीही उपचार प्रदान करना होगा। अंतिम उद्देश्य बड़े समूह के सभी उप-समूहों के बीच वास्तविक समानता प्राप्त करना होगा।

267. किसी भी मामले में, जैसा कि न्यायिक घोषणाओं में धारित किया गया है, जब राज्य ऐसा कोई कार्य करता है, तो उसे अनुभवजन्य आंकड़ों द्वारा समर्थित होना होगा। जब तक राज्य या आयोग इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचता कि जिस समूह को विशेष उपचार की आवश्यकता है, वह समूह में अन्य श्रेणियों की तुलना में अधिक अलाभकारी है और उसका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है, तब तक ऐसा उप-वर्गीकरण कानून की जांच में खरा नहीं उतरेगा। इसलिए, मुझे लगता है कि जो डर पैदा किया गया है, वह प्रमाणित नहीं है।

268. मुझे लगता है कि इस तरह के उप-वर्गीकरण का विरोध करने वाली प्रेसिडेंशियल सूची में श्रेणियों का रवैया ट्रेन के सामान्य डिब्बे में बैठे व्यक्ति जैसा है। सबसे पहले, डिब्बे के बाहर के लोग सामान्य डिब्बे में जाने के लिए संघर्ष करते हैं। हालांकि, एक बार जब वे अंदर घुस जाते हैं, तो वे ऐसे डिब्बे के बाहर के लोगों को उसमें प्रवेश करने से रोकने के लिए हर संभव प्रयास करते हैं।

269. वास्तव में, आरक्षण का बड़ा हिस्सा पाने वाले तथा अपने बीच के वंचित लोगों को विशेष सुविधा न देने वाले वर्ग के लोग वही कर रहे हैं जो उच्च जातियों के लोग सदियों से इन लोगों के साथ करते आए हैं, जिसके परिणामस्वरूप पिछड़े वर्ग को बिना किसी गलती के सदियों तक समाज की मुख्यधारा से अलग रखा गया। संविधान में निहित सामाजिक और आर्थिक न्याय के सिद्धांत के कारण ही उन्होंने विशेष सुविधा का लाभ उठाया है। हालांकि, जब राज्य यह सुनिश्चित करने का प्रयास करता है कि उक्त लाभ अधिक वंचित तथा कम प्रतिनिधित्व वाले लोगों तक पहुंचे, तो अनुसूचित जातियों के वे वर्ग जो उनका विरोध करते हैं, उन लोगों के स्थान पर खड़े होते हैं जिन्होंने उनका उत्पीड़न किया।

270. प्रेसिडेंशियल सूची में शामिल वे वर्ग जो पहले से ही आरक्षण का बड़ा हिस्सा ले चुके हैं, उन्हें राज्य द्वारा उन लोगों को विशेष सुविधा प्रदान करने पर आपत्ति नहीं होनी चाहिए जो ऐसे लाभ से वंचित हैं तथा विशेष रूप से तब जब उनसे ऐसा लाभ नहीं छीना जा रहा हो। उस लाभ का केवल एक हिस्सा ही अधिक वंचित और कम प्रतिनिधित्व वाले लोगों तक पहुंचाने के लिए आरक्षित किया जा रहा है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

271. मैं पाता हूँ कि इस न्यायालय द्वारा विभिन्न न्यायिक निर्णयों में परिकल्पित वास्तविक समानता प्राप्त करने के लिए, अधिक लाभकारी उपचार देने के लिए अनुसूचित जातियों के बीच उप-वर्गीकरण संविधान के तहत पूरी तरह से स्वीकार्य है।

VI. आगे का रास्ता

272. इससे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर क्रीमी लेयर सिद्धांत की प्रयोज्यता के बारे में प्रश्न उठता है।

273. इसमें कोई संदेह नहीं है कि **इंद्रा साहनी** मामले में, न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने 'साधन परीक्षण' और 'क्रीमी लेयर' की प्रयोज्यता पर विचार करते हुए पाया है कि इसमें चर्चा केवल अन्य पिछड़े वर्गों तक ही सीमित है, और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मामले में इसकी कोई प्रासंगिकता नहीं है।

274. अनुच्छेद 792 में, न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने इस प्रकार टिप्पणी की:

“792. हमारी राय में, यह इस तरह के परीक्षण की अनुमति या वांछनीयता का प्रश्न नहीं है, बल्कि एक वर्ग – एक पिछड़ा वर्ग की उचित और अधिक उपयुक्त पहचान का प्रश्न है। एक वर्ग की अवधारणा ही ऐसे व्यक्तियों की संख्या को दर्शाती है जिनके कुछ सामान्य लक्षण होते हैं जो उन्हें दूसरों से अलग करते हैं। अनुच्छेद 16 के खंड (4) के तहत एक पिछड़े वर्ग में, यदि जोड़ने वाली कड़ी सामाजिक पिछड़ापन है, तो यह मोटे तौर पर किसी दिए गए वर्ग में समान होना चाहिए। यदि कुछ सदस्य सामाजिक रूप से बहुत अधिक उन्नत हैं (जिसका संदर्भ में, अनिवार्य रूप से आर्थिक रूप से और, शैक्षिक रूप से भी अर्थ हो सकता है) तो उनके और शेष वर्ग के बीच जोड़ने वाला धागा टूट जाता है। वे वर्ग में अनुपयुक्त होंगे। उन्हें बाहर करने के बाद, क्या वर्ग एक संकुचित वर्ग होगा। वास्तव में, इस तरह के बहिष्कार से वास्तव में पिछड़े लोगों को लाभ होता है। हालाँकि, वास्तव में कठिनाई रेखा खींचने में है – रेखा कैसे और कहाँ खींची जाए? क्योंकि, रेखा खींचते समय, यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि इसका परिणाम यह न हो कि एक हाथ से वह छीन लेना जो दूसरे हाथ ने दिया है। बहिष्कार का आधार महज आर्थिक नहीं होना चाहिए, जब तक कि आर्थिक उन्नति इतनी अधिक न हो कि इसका अनिवार्य रूप से सामाजिक उन्नति से तात्पर्य हो। आइए हम इस बिंदु को स्पष्ट करते हैं। पिछड़े वर्ग का एक सदस्य, मान लीजिए बढ़ई जाति का सदस्य, मध्य पूर्व में जाता है और वहां बढ़ई के रूप में काम करता है। यदि आप उसकी वार्षिक आय रूप में लें, तो यह भारतीय मानक से काफी अधिक होगी। क्या उसे पिछड़े वर्ग से बाहर रखा जाना चाहिए? क्या भारत में उसके बच्चों को अनुच्छेद 16(4) के लाभ से वंचित किया जाना चाहिए? हालाँकि, स्थिति अलग हो सकती है, यदि वह आर्थिक रूप से इतना ऊपर उठ जाता है कि – मान लीजिए खुद एक कारखाना मालिक बन जाता है। ऐसी स्थिति में, उसकी सामाजिक स्थिति भी बढ़ जाती है। वह स्वयं दूसरों को रोजगार देने की स्थिति में होगा। ऐसे मामले में, उसकी आय केवल उसकी सामाजिक स्थिति का एक माप है। अन्यथा भी आय की सीमा लगाने में कई व्यावहारिक कठिनाइयाँ भी हैं। उदाहरण के लिए, बंबई, दिल्ली या कलकत्ता जैसे शहरों में 36,000 रुपये की वार्षिक आय का

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कोई खास मतलब नहीं हो सकता है, जबकि ग्रामीण भारत में यह कहीं भी अच्छी आय हो सकती है। खींची जाने वाली रेखा यथार्थवादी होनी चाहिए। दूसरा सवाल यह होगा कि क्या ऐसी रेखा पूरे देश या किसी दिए गए राज्य के लिए एक समान होनी चाहिए या ग्रामीण से शहरी क्षेत्रों में अलग-अलग होनी चाहिए और इसी तरह। इसके अलावा, कृषि से होने वाली आय का आकलन करना मुश्किल हो सकता है और इसलिए, कृषकों के मामले में, रेखा को जोत की सीमा के संदर्भ में खींचना पड़ सकता है। जबकि किसी व्यक्ति की आय को उसकी सामाजिक उन्नति के माप के रूप में लिया जा सकता है, निर्धारित की जाने वाली सीमा ऐसी नहीं होनी चाहिए कि एक हाथ से जो दिया गया है उसे दूसरे हाथ से छीन लिया जाए। आय की सीमा ऐसी होनी चाहिए जो सामाजिक उन्नति का अर्थ और संकेत दे। साथ ही, यह भी माना जाना चाहिए कि कुछ ऐसे पद हैं, जिन पर बैठे लोगों को बिना किसी और जांच के सामाजिक रूप से उन्नत माना जा सकता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी निर्दिष्ट पिछड़े वर्ग का सदस्य आईएस या आईपीएस या किसी अन्य अखिल भारतीय सेवा का सदस्य बन जाता है, तो समाज में उसका दर्जा (सामाजिक स्थिति) बढ़ जाती है; वह अब सामाजिक रूप से वंचित नहीं रहता है। उसके बच्चों को अपनी क्षमता को साकार करने का पूरा अवसर मिलता है। वे जीवन की दौड़ में किसी भी तरह से विकलांग नहीं हैं। उसका वेतन भी ऐसा है कि वह अभाव से ऊपर है। यह तर्कसंगत है कि ऐसी स्थिति में, उसके बच्चों को आरक्षण का लाभ नहीं दिया जाता है। क्योंकि उन्हें आरक्षण का लाभ देने से उस पिछड़े वर्ग के अन्य वंचित सदस्यों को उस लाभ से वंचित किया जा सकता है। तब प्रतिवादियों के लिए यह तर्क दिया जाता है कि 'बूंद से सागर का पता नहीं चलता', और यह कि केवल इसलिए कि जाति या वर्ग के कुछ सदस्य सामाजिक रूप से उन्नत हो जाते हैं, वर्ग/जाति अपने आप में पिछड़ी नहीं रह जाती है। यह बताया गया है कि अनुच्छेद 16 का खंड (4) समूह पिछड़ापन पर लक्षित है न कि व्यक्तिगत पिछड़ापन पर। जबकि हम इस बात से सहमत हैं कि खंड (4) का उद्देश्य समूह पिछड़ापन है, हम महसूस करते हैं कि ऐसे सामाजिक रूप से उन्नत सदस्यों को बाहर करने से 'वर्ग' वास्तव में पिछड़ा वर्ग बन जाएगा और खंड (4) के उद्देश्य और लक्ष्य को अधिक उचित रूप से पूरा करेगा। (यह चर्चा केवल अन्य पिछड़े वर्गों तक ही सीमित है और अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों के मामले में इसकी कोई प्रासंगिकता नहीं है)।”

275. यह कहा गया है कि वर्ग की अवधारणा ही ऐसे व्यक्तियों की संख्या को दर्शाती है जिनमें कुछ सामान्य विशेषताएं होती हैं जो उन्हें दूसरों से अलग करती हैं। यह देखा गया है कि यदि कुछ सदस्य सामाजिक रूप से बहुत अधिक उन्नत हैं (जिसका अर्थ इस संदर्भ में अनिवार्य रूप से आर्थिक रूप से और शैक्षिक रूप से भी हो सकता है) तो उनके और शेष वर्ग के बीच संपर्क सूत्र टूट जाता है। उन्होंने कहा कि वे वर्ग में अनुपयुक्त होंगे। यह भी कहा गया कि केवल उन्हें बाहर करने के बाद क्या वर्ग एक सुसंगठित वर्ग बन जाएगा। यह कहा गया कि वास्तव में, ऐसा बहिष्करण वास्तव में पिछड़े लोगों को लाभ पहुंचाएगा।

276. माननीय न्यायाधीश ने एक उदाहरण दिया कि यदि किसी निर्दिष्ट पिछड़े वर्ग का सदस्य आईएस या आईपीएस या किसी अन्य अखिल भारतीय सेवा का सदस्य बन जाता है, तो समाज में उसका दर्जा बढ़ जाता है;

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

वह अब सामाजिक रूप से वंचित नहीं रहता। उसके बच्चों को अपनी क्षमता को साकार करने का पूरा अवसर मिलेगा। वे जीवन की दौड़ में किसी भी तरह से विकलांग नहीं हैं। यह देखा गया है कि ऐसी स्थिति में यह तर्कसंगत है कि उसके बच्चों को आरक्षण का लाभ न दिया जाए। यह भी कहा गया कि उन्हें आरक्षण का लाभ देने से उस पिछड़े वर्ग के अन्य वंचित सदस्यों को उस लाभ से वंचित किया जा सकता है।

277. 'बूंद से सागर का पता नहीं चलता' के तर्क को खारिज करते हुए, यानी सिर्फ इसलिए कि किसी जाति/वर्ग के कुछ सदस्य सामाजिक रूप से उन्नत हो गए हैं, इसलिए जाति/वर्ग अपने आप में पिछड़ापन नहीं छोड़ता है, विद्वान न्यायाधीश ने उत्तर दिया कि हालांकि अनुच्छेद 16 के खंड (4) का उद्देश्य समूह पिछड़ापन है, उनका विचार था कि ऐसे सामाजिक रूप से उन्नत सदस्यों को बाहर करने से 'वर्ग' वास्तव में पिछड़ा वर्ग बन जाएगा और अनुच्छेद 16 के खंड (4) के उद्देश्य और लक्ष्य को अधिक उचित रूप से पूरा करेगा।

278. वर्ष 1981 की शुरुआत में, *अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ* में, न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने पैराग्राफ 94 में, इस तर्क को खारिज करते हुए कि क्योंकि कुछ हरिजन बेहतर स्थिति में हैं, इसलिए, नीचे का बड़ा हिस्सा कोई जैक-अप प्रावधान का हकदार नहीं है, ने टिप्पणी की थी कि राज्य, जब सामाजिक परिस्थितियों की मांग करता है, तो हरिजन के लाभों को हरिजन के बीच हरिजन तक सीमित कर सकता है और उच्च हरिजन को निम्न वर्ग के हरिजन भाइयों के लिए आरक्षण के अधिकारों को लूटने से रोक सकता है।

279. फिर से, पैराग्राफ 98 में, उन्होंने टिप्पणी की कि प्रशासन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के क्रीमी लेयर को हटाने के लिए नवाचार और वर्गीकरण कर सकता है। हालांकि, उन्होंने चेतावनी दी कि न्यायालय राज्य को इस संबंध में बाध्य नहीं कर सकता।

280. न्यायमूर्ति चिन्नाप्पा रेड्डी ने यह भी दर्ज किया कि उन जातियों या सामाजिक समूहों के कुछ सदस्यों ने इतनी प्रगति की होगी और आगे बढ़ेंगे कि वे आर्थिक, सामाजिक और शैक्षिक रूप से अग्रणी वर्ग के साथ अनुकूल तुलना कर सकते हैं। उन्होंने टिप्पणी की कि ऐसे मामलों में, शायद एक ऊपरी आय सीमा वर्ग के उन सदस्यों को आरक्षण का लाभ दिलाएगी जो वास्तव में इसके हकदार हैं।

281. *एम. नागराज* मामले में, न्यायालय ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मामले में भी मात्रात्मक डेटा और क्रीमी लेयर के सिद्धांत को लागू किया। *जरनैल सिंह* में इसकी सत्यता पर विचार किया गया।

282. हालांकि *जरनैल सिंह* के मामले में धारित किया गया कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मामले में पिछड़ेपन पर मात्रात्मक आंकड़ों की प्रयोज्यता के मामले में *एम. नागराज* का मामला सही नहीं था, लेकिन जहां तक अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर भी क्रीमी लेयर सिद्धांत की प्रयोज्यता का सवाल है, उन्होंने *एम. नागराज* मामले में लिए गए दृष्टिकोण को बरकरार रखा। ऐसा करते हुए *जरनैल सिंह* में मूल रूप से *एन.एम. थॉमस* मामले में इस न्यायालय की 7 न्यायाधीशों की पीठ के फैसले का सहारा लिया गया। *जरनैल सिंह* मामले में लिए गए दृष्टिकोण का *दविंदर सिंह* मामले में भी अनुमोदन किया गया।

283. *जरनैल सिंह* और *दविंदर सिंह* मामले में लिए गए दृष्टिकोण की शुद्धता पर सवाल नहीं उठाया गया है। हालांकि, चूंकि वर्तमान संदर्भ में हम असमानों के समूह के बीच समानता के सवाल पर विचार कर रहे हैं, इसलिए मैं उक्त मुद्दे पर भी विचार करना उचित समझता हूं।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

284. मैंने पहले ही **एन.एम. थॉमस** मामले में न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर द्वारा की गई टिप्पणियों और **के.सी. वसंत कुमार** में न्यायमूर्ति चिन्नाप्पा रेड्डी द्वारा क्रीमी लेयर सिद्धांत की प्रयोज्यता के बारे में की गई टिप्पणियों का उल्लेख किया है। यह ध्यान देने योग्य है कि एन.एम. थॉमस में 7 न्यायाधीशों की पीठ अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मामले में सकारात्मक कार्रवाई के सवाल पर विचार कर रही थी।

285. **एन.एम. थॉमस** मामले में न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने एक से अधिक स्थानों पर टिप्पणी की थी कि राज्य अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक रूप से उन्नत वर्गों को आरक्षण की प्रयोज्यता से बाहर करने के लिए कदम उठाने का हकदार है।

286. न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने **अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ** मामले में पैरा 94 और 98 में इस स्थिति को फिर से दोहराया है।

287. जब इंद्रा साहनी मामले में 9 न्यायाधीशों की पीठ ने माना कि जहां तक अन्य पिछड़े वर्गों का संबंध है, ऐसे परीक्षण की प्रयोज्यता संविधान में निहित समानता को आगे बढ़ाएगी, तो फिर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए भी ऐसा परीक्षण क्यों नहीं लागू किया जाना चाहिए?

288. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, जमीनी हकीकतें बहुत कठोर होती हैं और हम उनसे अनभिज्ञ नहीं हो सकते। संविधान लागू होने के दिन से लगभग 75 वर्ष बीत चुके हैं। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों तथा पिछड़े वर्ग के नागरिकों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं। न्यायिक व्याख्या के अनुसार संविधान के अनुच्छेद 14 से 16 की त्रिमूर्ति में निहित समानता को समानों के बीच समान व्यवहार तथा असमानों के बीच असमान व्यवहार माना गया है। प्रश्न यह है कि अनुसूचित जाति की श्रेणी में असमानों के साथ समान व्यवहार करने से समानता का संवैधानिक उद्देश्य आगे बढ़ेगा या विफल होगा? क्या आईएस/आईपीएस या सिविल सेवा अधिकारी के बच्चे को अनुसूचित जाति के वंचित सदस्य के बच्चे के बराबर माना जा सकता है, जो गांव में ग्राम पंचायत/जिला परिषद स्कूल में पढ़ रहा है?

289. प्रथम श्रेणी के माता-पिता के बच्चे को मिलने वाली शिक्षा सुविधाएं और अन्य सुविधाएं बहुत अधिक होंगी, शायद अतिरिक्त कोचिंग की सुविधाएं भी उपलब्ध होंगी; घर का माहौल कहीं बेहतर और शैक्षिक उत्थान के लिए अनुकूल होगा।

290. इसके विपरीत, द्वितीय श्रेणी के माता-पिता के बच्चे को केवल न्यूनतम शिक्षा ही मिलेगी; कोचिंग आदि की सुविधाएं उसे बिल्कुल भी उपलब्ध नहीं होंगी। वह अपने माता-पिता के साथ रहेगा, जो शिक्षित नहीं हैं और ऐसे बच्चे का मार्गदर्शन करने की स्थिति में भी नहीं हैं।

291. जैसा कि **के.सी. वसंत कुमार** मामले में न्यायमूर्ति चिन्नाप्पा रेड्डी ने कहा है, सेंट पॉल हाई स्कूल और सेंट स्टीफन कॉलेज में पढ़ने वाले बच्चे की तुलना ग्रामीण स्कूल में पढ़ने वाले बच्चे से नहीं की जा सकती। उन्होंने कहा कि यदि पहली श्रेणी का बच्चा 90% अंक प्राप्त करता है और दूसरी श्रेणी का बच्चा 50% अंक प्राप्त करता है, तो क्या दोनों के साथ एक ही मानक से व्यवहार करने से वास्तविक न्याय प्राप्त होगा।

292. यह भी सर्वविदित है कि असमानताएं और सामाजिक भेदभाव, जो ग्रामीण क्षेत्रों में अत्यधिक प्रचलित हैं, शहरी और महानगरीय क्षेत्रों में जाने पर कम होने लगते हैं। मुझे यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि सेंट पॉल

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

हाई स्कूल और सेंट स्टीफन कॉलेज में पढ़ने वाले बच्चे और देश के पिछड़े और दूरदराज के क्षेत्र के एक छोटे से गांव में पढ़ने वाले बच्चे को एक ही श्रेणी में रखने से संविधान में निहित समानता के सिद्धांत की उपेक्षा होगी।

293. मैं यह देख सकता हूँ कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति वर्ग के कुछ अधिकारी, जो संविधान के तहत आरक्षण का लाभ प्राप्त करने के बाद उच्च पदों पर पहुँचे हैं, समाज को अपना योगदान दे रहे हैं। वे वंचितों को कोचिंग और अन्य सुविधाएँ प्रदान कर रहे हैं ताकि वे प्रतिस्पर्धा कर सकें और अपने जीवन में आगे बढ़ सकें। हालाँकि, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के माता-पिता के बच्चों को, जो आरक्षण के लाभ के कारण उच्च पदों पर पहुँच गए हैं और सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े नहीं रहे हैं और गाँवों में शारीरिक श्रम करने वाले माता-पिता के बच्चों को उसी श्रेणी में रखना संवैधानिक अधिदेश को विफल करेगा।

294. हालाँकि, मैं यह देख सकता हूँ कि इस बात को ध्यान में रखते हुए कि संविधान स्वयं अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को समाज का सबसे पिछड़ा वर्ग मानता है, इस श्रेणी से संबंधित व्यक्ति के सकारात्मक कार्रवाई से बहिष्कार के मापदंड वही नहीं हो सकते हैं जो अन्य वर्गों पर लागू होते हैं। अगर इस श्रेणी का कोई व्यक्ति आरक्षण का लाभ पाकर चपरासी या सफाई कर्मचारी बन जाता है, तो भी वह सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा वर्ग ही रहेगा। साथ ही, इस श्रेणी के लोग, जो आरक्षण का लाभ उठाकर जीवन में ऊँचे पायदान पर पहुँच गए हैं, उन्हें सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा नहीं माना जा सकता, कि वे सकारात्मक कार्रवाई का लाभ उठाते रहें। वे पहले ही उस स्थिति में पहुँच चुके हैं, जहाँ उन्हें अपनी मर्जी से विशेष प्रावधानों से बाहर निकल जाना चाहिए और योग्य और जरूरतमंद लोगों को रास्ता देना चाहिए। डॉ. बी.आर. अंबेडकर को निम्नवत संदर्भित करना उपयोगी होगा :

"इतिहास दर्शाता है कि जहां नैतिकता और अर्थशास्त्र में टकराव होता है, वहां जीत हमेशा अर्थशास्त्र की होती है। उन लोगों ने कभी भी स्वेच्छा से खुद को अलग नहीं किया है जिनका निहित स्वार्थ था, जब तक कि उन्हें मजबूर करने के लिए पर्याप्त बल न हो।

295. इसलिए मेरा विचार है कि राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से भी क्रीमी लेयर की पहचान करने के लिए एक नीति विकसित करनी चाहिए ताकि उन्हें सकारात्मक कार्रवाई के लाभ से बाहर रखा जा सके। मेरे विचार में, केवल यही और केवल यही संविधान के तहत निहित वास्तविक समानता प्राप्त कर सकता है।

VII. निष्कर्ष

296. इसलिए, मैं यह धारित करता हूँ कि:

(i) कि **ई.वी. चिन्नैया** जिसमें यह धारित किया गया कि अनुसूचित जातियों के बड़े समूह में किसी समूह को अधिक लाभकारी उपचार देने के उद्देश्य से अनुसूचित जातियों में उप-वर्गीकरण अनुमेय नहीं है, एक सही विधि प्रतिपादित नहीं करता है ;

(ii) कि अनुसूचित जातियों में अधिक लाभकारी उपचार देने के लिए उप-वर्गीकरण कानून में अनुमेय है ;

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

(iii) कि ऐसा करने के लिए, राज्य को यह उचित ठहराना होगा कि जिस समूह के लिए अधिक लाभकारी उपचार प्रदान किया जाता है, उसका उक्त सूची में अन्य जातियों की तुलना में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व है ;

(iv) कि ऐसा करते समय, राज्य को अनुभवजन्य आंकड़ों के आधार पर इसका औचित्य सिद्ध करना होगा कि जिस उप-वर्ग के पक्ष में ऐसा अधिक लाभकारी उपचार प्रदान किया गया है, उसका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है ;

(v) तथापि, उप-वर्गीकरण का प्रावधान करते समय, राज्य सूची में अन्य जातियों को बाहर करने के लिए किसी उप-वर्ग के पक्ष में अनुसूचित जातियों के लिए उपलब्ध 100% सीटों को आरक्षित करने का हकदार नहीं होगा ;

(vi) ऐसा उप-वर्गीकरण तभी स्वीकार्य होगा जब किसी उप-वर्ग के साथ-साथ बड़े वृहद वर्ग के लिए भी आरक्षण हो ;

(vii) **एम. नागराज, जरनैल सिंह और दविंदर सिंह** का यह निष्कर्ष कि क्रीमी लेयर का सिद्धांत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर भी लागू होता है, कानून की सही स्थिति को बताता है;

(viii) सकारात्मक कार्रवाई के उद्देश्य से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से क्रीमी लेयर को बाहर करने के मानदंड अन्य पिछड़े वर्गों पर लागू मानदंडों से भिन्न हो सकते हैं।

297. निर्णय देने से पहले, मैं पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रदान की गई बहुमूल्य सहायता के लिए अपनी गहरी प्रशंसा दर्ज करता हूँ।

न्यायमूर्ति विक्रम नाथ

1. मैं मुख्य न्यायाधीश और न्यायमूर्ति गवई की राय में निकाले गए कारणों और निष्कर्षों से आम तौर पर सहमत हूँ, खास तौर पर कि **ई.वी. चिन्नाह** मामले में यह निर्णय कि अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण अस्वीकार्य है, सही विधि प्रतिपादित नहीं करता है और खारिज हो जाता है। इसके अलावा, राज्य द्वारा उप-वर्गीकरण से जुड़ी किसी भी कवायद को अनुभवजन्य आंकड़ों द्वारा समर्थित होना चाहिए।

2. मैं न्यायमूर्ति गवई की राय से भी सहमत हूँ कि 'क्रीमी लेयर' सिद्धांत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर भी लागू होता है, और सकारात्मक कार्रवाई के उद्देश्य से क्रीमी लेयर को बाहर करने के मानदंड अन्य पिछड़ा वर्गों पर लागू मानदंडों से अलग हो सकते हैं।

न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी

1. यद्यपि संवैधानिक मामलों पर वृहद पीठों द्वारा व्यक्त की गई राय में एकमतता और आम सहमति कानून की निश्चितता और मजबूती के लिए वांछनीय है, लेकिन मैं व्यक्तिगत रूप से मानता हूँ कि न्यायपालिका के लोकतांत्रिक कामकाज में प्रभावी निर्णय के लिए अच्छी तरह से चुने गए कारणों के लिए "असहमति" भी उतनी ही महत्वपूर्ण होगी, जिसमें भविष्य में कानून को विकसित करने की क्षमता होगी।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

2. अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति विलियम ओ. डगलस, एक महान असहमत न्यायाधीश थे, जिन्होंने 486 असहमतिपूर्ण राय लिखी थीं, ने कहा था :

“असहमति का अधिकार ही एकमात्र ऐसी चीज है जो अपीलीय न्यायालय के न्यायाधीश के लिए जीवन को सहनीय बनाती है... .. यह असहमति का अधिकार है, न कि अनुरूप होने का अधिकार या कर्तव्य, जो मनुष्य को गरिमा, मूल्य और व्यक्तित्व देता है।”

3. न्यायमूर्ति ओलिवर वेंडेल होम्स, एक अन्य महान असहमत न्यायाधीश, **नॉर्दर्न सिक्योरिटीज कंपनी बनाम संयुक्त राज्य अमेरिका (1903)** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय में अपनी पहली असहमति में, कहा था :

“मैं न्यायालय के बहुमत के निर्णय से सहमत होने में असमर्थ हूँ, और यद्यपि मैं असहमति व्यक्त करना, एक नियम के रूप में, बेकार और अवांछनीय मानता हूँ, मैं इस मामले में ऐसा करने और इसके लिए अपने कारण बताने के लिए बाध्य महसूस करता हूँ... ..”

4. कुछ हद तक समान भावनाओं के साथ, और उचित सम्मान के साथ, मैं विद्वान मुख्य न्यायाधीश और न्यायमूर्ति बी.आर. गवई और न्यायमूर्ति पंकज मित्तल द्वारा व्यक्त की गई राय की विद्वत्तापूर्ण अभिव्यक्ति से अलग राय रखता हूँ, और अपनी असहमति के कारणों के साथ अपनी राय लिखता हूँ।

5. संक्षिप्तता और दोहराव से बचने के लिए, विद्वान मुख्य न्यायाधीश द्वारा व्यक्त की गई राय में वर्णित तथ्यों और पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत दलीलों को दोहराया नहीं जा रहा है। सबसे पहले, यह ध्यान दिया जा सकता है कि न तो **पंजाब राज्य और अन्य बनाम दविंदर सिंह और अन्य**, में किए गए रेफरल आदेश में सटीक प्रश्नों का सूत्रीकरण है और न ही सन्दर्भ मामले में 12.10.2023 को किए गए आदेश में इस पीठ द्वारा विचार के लिए विशिष्ट प्रश्न निर्धारित किए गए हैं। इसलिए, **दविंदर सिंह और ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य** में व्यक्त की गई राय को ध्यान में रखते हुए, और पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा दी गई मौखिक और लिखित प्रस्तुतियों को ध्यान में रखते हुए, विचार के लिए कानून के निम्नलिखित महत्वपूर्ण प्रश्न तैयार किए गए हैं।

(I) क्या **ई.वी. चिन्नैया** मामले में पांच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा निर्धारित कानून पर संदेह किया जा सकता था और **ई.वी. चिन्नैया** मामले में उक्त निर्णय से असहमति के लिए कोई ठोस कारण दर्ज किए बिना तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा उसे वृहद पीठ को भेजा जा सकता था, विशेषकर तब जब उक्त निर्णय पंद्रह वर्षों की लंबी अवधि तक प्रभावी रहा ?

(II) क्या राज्यों को अनुच्छेद 341 के खंड (1) के तहत अधिसूचित "अनुसूचित जातियों" को निर्दिष्ट करने वाली प्रेसिडेंशियल सूची में छेड़छाड़ या बदलाव करने की अनुमति दी जानी चाहिए, जिसमें सबसे कमजोर लोगों के लिए आरक्षण प्रदान करने की आड़ में उक्त सूची में शामिल जातियों को उप-वर्गीकृत या उप-विभाजित या पुनर्समूहीकृत किया जा सकता है, और इस तरह अनुच्छेद 341 के खंड (2) में निहित अधिदेश का उल्लंघन किया जा सकता है?

(III) क्या **ई.वी. चिन्नैया** के मामले में लिए गए निर्णय पर **इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ और अन्य** में नौ न्यायाधीशों की पीठ द्वारा अन्य पिछड़ा वर्ग के संबंध में की गई कुछ टिप्पणियों के मद्देनजर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है?

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

6. इससे संबंधित मुद्दों पर चर्चा करने से पहले, आइए हम **पंजाब राज्य एवं अन्य बनाम दर्विंदर सिंह एवं अन्य** मामले में पांच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा इस पीठ को भेजे गए संदर्भ की प्रगति पर नजर डालें।

सात न्यायाधीशों के पास भेजे जाने का मार्ग

7. आंध्र प्रदेश राज्य ने 02.05.2000 को आंध्र प्रदेश अनुसूचित जाति (आरक्षण का युक्तिकरण) अधिनियम, 2000 नामक एक अधिनियम पारित किया, जिसके अंतर्गत संविधान के अनुच्छेद 341(1) के अंतर्गत तैयार प्रेसिडेंशियल सूची में सूचीबद्ध 57 जातियों को अंतर-राज्यीय पिछड़ेपन के आधार पर 4 समूहों में विभाजित किया गया, तथा इनमें से प्रत्येक समूह के लिए आरक्षण में अलग-अलग कोटा निर्धारित किया गया। उक्त अधिनियम, 2000 की वैधता को हैदराबाद स्थित आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय में दायर रिट याचिकाओं में चुनौती दी गई। उक्त रिट याचिकाओं को पांच न्यायाधीशों की पीठ ने 4:1 के बहुमत से खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय द्वारा मामले को सर्वोच्च न्यायालय में अपील के लिए उपयुक्त प्रमाणित करने के पश्चात, इस न्यायालय के समक्ष अपीलें दायर की गईं। इन्हें पांच न्यायाधीशों की संविधान पीठ को संदर्भित किया गया। संविधान पीठ ने विभिन्न मुद्दों पर विचार करने के बाद उक्त अपीलों को सिविल अपील सं. 6758 सन् 2000 एवं अन्य (**ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य एवं अन्य**)* के रूप में स्वीकार कर लिया, जिसमें आक्षेपित अधिनियम को संविधान के विरुद्ध घोषित किया गया। संविधान पीठ ने उक्त संदर्भ पर विचार करते हुए निम्नलिखित तीन प्रश्न तैयार किए थे :

—

- (i) क्या आक्षेपित अधिनियम भारत के संविधान के अनुच्छेद 341(2) का उल्लंघन करता है?
- (ii) क्या आक्षेपित अधिनियम विधायी क्षमता के अभाव में संवैधानिक रूप से अवैध है?
- (iii) क्या आक्षेपित अधिनियम अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण या सूक्ष्म-वर्गीकरण करता है, जिससे भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होता है?

8. न्यायमूर्ति संतोष हेगड़े (स्वयं तथा न्यायमूर्ति एस.एन. वरियावा और न्यायमूर्ति बी.पी. सिंह के लिए), तथा न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा और न्यायमूर्ति एच.के. सेमा ने अलग-अलग निर्णयों के माध्यम से सहमति जताते हुए उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर देते हुए उक्त अपीलों को स्वीकार किया:—

- (i) संविधान की योजना, अनुच्छेद 341 तथा **केरल राज्य एवं अन्य बनाम एन.एम. थॉमस एवं अन्य** के मामले में दी गई राय से यह स्पष्ट है कि प्रेसिडेंशियल सूची में शामिल किए जाने पर जातियां अपने आप में एक वर्ग बन जाती हैं। यदि वे संविधान के तहत एक वर्ग हैं, तो किसी भी विचार के आधार पर इन वर्गों के लोगों का कोई भी विभाजन प्रेसिडेंशियल सूची के साथ छेड़छाड़ के बराबर होगा। (पैराग्राफ 26)
- (ii) कानून में यह सुस्थापित सिद्धांत है कि पिछड़े वर्ग के लिए आरक्षण संवैधानिक अधिदेश नहीं है। यदि संबंधित राज्य चाहे तो यह उसका विशेषाधिकार है कि वह समाज में कुछ पिछड़े वर्गों, जिनमें अनुसूचित जातियां भी शामिल हैं, को उन्नति का अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से अनुच्छेद 15(4) के तहत शैक्षणिक संस्थानों में तथा अनुच्छेद 16(4) के तहत राज्य की सार्वजनिक सेवाओं में कुछ सीटें आरक्षित करे। राज्य द्वारा अपने संवैधानिक दायित्व का वह भाग पूरा कर दिए जाने के बाद, राज्य के लिए यह आवश्यक नहीं था कि वह संविधान द्वारा पहले से मान्यता प्राप्त किसी वर्ग को उप-वर्गीकृत करे

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

तथा अनुसूचित जातियों की सूची में राज्य द्वारा सृजित उप-वर्ग के बीच पहले से आरक्षित कोटे का कोई भाग आवंटित करे। (पैराग्राफ 31)

(iii) आक्षेपित अधिनियम का मुख्य उद्देश्य राज्य में लागू अनुसूचित जातियों की सूची में उप-जातियों के समूह बनाना था और आरक्षण का विभाजन केवल गौण और परिणामी था। आरक्षण के ऐसे उप-वर्गीकरण और विभाजन का उद्देश्य चाहे जो भी हो, राज्य सूची II की प्रविष्टि 41 या सूची III की प्रविष्टि 25 पर अपनी विधायी क्षमता का दबाव डालकर राज्य की अनुसूचित जातियों की सूची को विभाजित करने वाला कानून बनाने के लिए विधायी शक्ति का दावा नहीं कर सकता। मूल रूप से, यह अधिनियम शिक्षा के क्षेत्र या राज्य लोक सेवाओं के क्षेत्र को नियंत्रित करने वाला कानून नहीं था। (पैराग्राफ 31)

(iv) राष्ट्रपति के आदेश में दी गई जातियों के समूह को एक पूरे वर्ग का प्रतिनिधित्व करने के रूप में माना जाना चाहिए। यह तथ्य कि एक कानूनी कल्पना बनाई गई है, अपने आप में इस तथ्य का संकेत है कि किसी राज्य की विधायिका कोई ऐसी कार्रवाई नहीं कर सकती जो इसके विपरीत या असंगत हो। किसी राज्य में विभिन्न जातियों या जनजातियों या समूहों या उनके भागों को एक समूह के रूप में रखने का विचार ही स्पष्ट रूप से यह सुझाव देता है कि उन्हें आगे उप-विभाजित या उप-वर्गीकृत नहीं किया जाना चाहिए। यदि अनुसूचित जाति के सदस्यों के वर्ग के भीतर एक वर्ग बनाया जाता है, तो यह सूची के साथ छेड़छाड़ के समान होगा। ऐसा उप-वर्गीकरण संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगा। यदि आरक्षण का लाभ उन्हें समान रूप से नहीं मिल रहा है, तो यह सुनिश्चित करने के लिए उपाय किए जाने चाहिए कि उन्हें ऐसा पर्याप्त या अतिरिक्त प्रशिक्षण दिया जाए ताकि वे दूसरों के साथ प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम हो सकें, लेकिन इसका मतलब यह नहीं हो सकता है कि अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण को तर्कसंगत बनाने की प्रक्रिया में अनुच्छेद 14, 15 और 16 के संवैधानिक अधिदेश का उल्लंघन किया जा सकता है। (पैराग्राफ 41)

(v) इसलिए न्यायालय ने यह राय व्यक्त की कि आक्षेपित कानून राज्य की विधायी क्षमता से परे होने के अलावा संविधान के अनुच्छेद 14 का भी उल्लंघन करता है और इसलिए इसे संविधान के विरुद्ध घोषित किया जाना चाहिए। इसलिए आक्षेपित अधिनियम को संविधान के विरुद्ध घोषित किया गया। (पैराग्राफ 44)

9. न्यायमूर्ति एच.के. सेमा ने अपने सहमति वाले मत में पैराग्राफ 48 में टिप्पणी की थी कि **इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ और अन्य*** में, क्रीमी लेयर की चर्चा केवल अन्य पिछड़े वर्गों तक ही सीमित थी और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मामले में इसकी कोई प्रासंगिकता नहीं थी। न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा ने अपनी सहमति व्यक्त करते हुए **इंद्रा साहनी** में की गई कुछ टिप्पणियों का भी उल्लेख किया और पैराग्राफ 38 में कहा कि अन्य पिछड़ा वर्गों के उप वर्गीकरण के लिए **इंद्रा साहनी** में निर्धारित सिद्धांत को प्रेसिडेंशियल सूची में अनुसूचित जातियों के उप-वर्गीकरण या उपसमूहीकरण के लिए एक मिसाल कानून के रूप में लागू नहीं किया जा सकता है, क्योंकि उसी फैसले में स्पष्ट रूप से माना गया है कि अन्य पिछड़ा वर्गों का उप-विभाजन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर लागू नहीं होता है। संविधान ने स्वयं अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की सूची को राज्य सरकारों के हस्तक्षेप से बाहर रखा है। इसके पैराग्राफ 93* में यह माना गया है कि संविधान के अनुच्छेद 366(24) में निहित परिभाषा के अनुसार “अनुसूचित जातियां” जाति

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

नहीं हैं। उन्हें उनके अत्यधिक पिछड़ेपन के कारण उक्त श्रेणी के दायरे में लाया गया है। अनुसूचित जाति न केवल पिछड़े हैं, बल्कि सबसे पिछड़े हैं। कोई व्यक्ति दूसरे धर्म में धर्मांतरण करने पर भी अनुसूचित जाति रहता है। यह भी कहा गया कि दो समूहों यानी सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जातियों को संविधान के अनुच्छेद 15 के खंड (4) के उद्देश्य से विभेदित किया गया था, क्योंकि इसमें अनुसूचित जातियों को, चीजों की प्रकृति के अनुसार, पिछड़ा माना गया था, लेकिन यह भी माना गया है कि उनके अलावा, व्यक्तियों के अन्य समूह भी हो सकते हैं जो पिछड़े हैं और वरीयता उपचार के हकदार हैं।

10. फिर से, **इंद्रा साहनी** में "साधन-परीक्षण और क्रीमी लेयर परीक्षण" के संबंध में की गई टिप्पणियों का उल्लेख करने के बाद, न्यायमूर्ति सिन्हा ने इसके पैराग्राफ 96 में यह टिप्पणी की कि जब भी अनुसूचित जातियों के संबंध में ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है, तो संविधान के अनुच्छेद 341 के खंड (2) के अनुसार आवश्यक विधायी कदम उठाने के लिए केवल संसद ही जिम्मेदार होगी, और राज्यों के पास इसके लिए विधायी क्षमता नहीं है।

11. **ई.वी. चिन्नैया*** में दिया गया उपरोक्त निर्णय लगभग 15 वर्षों तक प्रभाव में रहा, जब तक कि **पंजाब राज्य और अन्य बनाम दविंदर सिंह और अन्य*** में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने मामले को विचार के लिए एक वृहद पीठ को संदर्भित नहीं कर दिया, जिसमें कहा गया कि **ई.वी. चिन्नैया** में पांच-न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय पर भारत के संविधान के अनुच्छेद 338 और **इंद्रा साहनी** में कानून की व्याख्या के प्रकाश में पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। तीन न्यायाधीशों की पीठ ने 20 अगस्त, 2014 को निम्नलिखित आदेश पारित किया।

*

"आदेश

1. प्रत्यर्चीगण के विद्वान अधिवक्ता ने **ई.वी. चिन्नैया बनाम ए.पी. राज्य** [**ई.वी. चिन्नैया बनाम ए.पी. राज्य**, (2005) 1 एससीसी 394: (2008) 2 एससीसी (एल एंड एस) 329] में इस न्यायालय के संविधान पीठ के फैसले का भारी अवलंब लिया है। दूसरी ओर, अपीलकर्ताओं के विद्वान अपर सॉलिसिटर जनरल ने दलील दी है कि **ई.वी. चिन्नैया** [**ई.वी. चिन्नैया बनाम ए.पी. राज्य**, (2005) 1 एससीसी 394: (2008) 2 एससीसी (एल एंड एस) 329] का इस विवाद में कोई अनुप्रयोग नहीं है। इसके अलावा, उन्होंने दलील दी है कि **ई.वी. चिन्नैया** [**ई.वी. चिन्नैया बनाम ए.पी. राज्य**, (2005) 1 एससीसी 394: (2008) 2 एससीसी (एल एंड एस) 329] के मामले में दिया गया निर्णय **इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ** [**इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ**, 1992 अनुपूरक (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1] के मामले में इस न्यायालय के 9 न्यायाधीशों की पीठ के फैसले के अनुरूप नहीं है।

2. विद्वान अपर सॉलिसिटर जनरल और पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद, हमारा विचार है कि **ई.वी. चिन्नैया** [**ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य**, (2005) 1 एससीसी 394: (2008) 2 एससीसी (एल एंड एस) 329] पर भारत के संविधान के अनुच्छेद 338 और, अन्य बातों के साथ-साथ, **इंद्रा साहनी** [**इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ**, 1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1] में दी गई कानून की व्याख्या के आलोक में फिर से विचार करने की आवश्यकता है। इसके अलावा, इस मामले में भारत के

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

संविधान के अनुच्छेद 16(1), अनुच्छेद 16(4), अनुच्छेद 338 और अनुच्छेद 341 के बीच व्याख्या और परस्पर क्रिया भी शामिल है।

3. इस दृष्टिकोण से, हम मामले को वृहद पीठ द्वारा उपरोक्त पहलुओं पर विचार करने के लिए संदर्भित करते हैं। मामले को उचित आदेश के लिए प्रशासनिक पक्ष में मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखा जाना चाहिए।”

12. **दर्विंदर सिंह एवं अन्य** के मामले में, पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ में पंजाब अनुसूचित जाति एवं पिछड़ा वर्ग (सेवाओं में आरक्षण) अधिनियम, 2006 की धारा 4(5) को असंवैधानिक घोषित करने के लिए रिट याचिकाएं दायर की गई थीं, जिसके अनुसार सीधी भर्ती में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित कोटे की 50% रिक्तियां, अनुसूचित जातियों में से प्रथम वरीयता के रूप में उपलब्ध होने पर वाल्मीकि एवं मजहबी सिखों को प्रदान की जानी थीं। उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने **ई.वी. चिन्नैया** के मामले में दिए गए निर्णय पर भरोसा करते हुए, सी.डब्ल्यू.पी. सं. 18290 सन् 2009 में दिनांक 29.03.2010 के निर्णय के माध्यम से अधिनियम, 2006 की धारा 4(5) में निहित उक्त प्रावधान को असंवैधानिक घोषित किया। उक्त निर्णय इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष विचारार्थ आया। तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा वृहद पीठ को भेजे गए संदर्भ पर, **पंजाब राज्य एवं अन्य बनाम दर्विंदर सिंह एवं अन्य*** में इस न्यायालय की पांच न्यायाधीशों की पीठ ने निम्नलिखित मुद्दे तय किए।

(i) क्या पंजाब अनुसूचित जाति एवं पिछड़ा वर्ग (सेवाओं में आरक्षण अधिनियम, 2006) की धारा 4(5) के अंतर्गत निहित प्रावधान संवैधानिक रूप से वैध हैं?

(ii) क्या राज्य के पास अधिनियम की धारा 4(5) के अंतर्गत निहित प्रावधानों को लागू करने की विधायी क्षमता थी।

(iii) क्या **ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य एवं अन्य** के निर्णय पर पुनर्विचार की आवश्यकता है।

13. तथापि, पांच न्यायाधीशों की पीठ ने **इंद्रा साहनी** के निर्णय के विभिन्न अनुच्छेदों का विस्तृत उल्लेख करने के बाद यह राय व्यक्त की कि **ई.वी. चिन्नैया** के मामले पर वृहद पीठ द्वारा पुनर्विचार किए जाने की आवश्यकता है। उसमें पांच न्यायाधीशों की पीठ ने यह टिप्पणी की थी*कि: -

“44. प्रश्न यह उठता है कि क्या सभी जातियों को लाभ प्रदान करने के लिए उप-वर्गीकरण को अनुच्छेद 341, 342 और 342-ए के तहत सूची के साथ छेड़छाड़ कहा जा सकता है, **इंद्रा साहनी** [इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ, 1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) अनुपूरक 1] के फैसलों के मद्देनजर, पिछड़े वर्गों के उप-वर्गीकरण की अनुमति दी गई है और **जरनैल सिंह** [जरनैल सिंह बनाम लछमी नारायण गुप्ता, (2018) 10 एससीसी 396: (2019) 1 एससीसी (एल एंड एस) 86] में, जिसमें यह राय थी कि लाभ से बाहर होने के कारण “क्रीमी लेयर अवधारणा” अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर लागू की जा सकती है और यह किसी भी तरह से संविधान के अनुच्छेद 341 या 342 के तहत प्रेसिडेंशियल सूची में छेड़छाड़ नहीं करता है। जाति या समूह या उपसमूह सूची में पहले की तरह ही जारी रहे। उस समूह या उपसमूह के केवल वे लोग ही आरक्षण के लाभ से बाहर हैं, जो

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

क्रीमी लेयर से संबंधित होने के कारण अस्पृश्यता या पिछड़ेपन से बाहर आए हैं। लाख टके का सवाल यह है कि लाभ को नीचे के पायदान तक कैसे पहुँचाया जाए; रिपोर्ट बताती है कि लाभ उन जातियों (वर्गों) द्वारा हड़पा जा रहा है जो ऊपर हैं और जिनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व है। यह स्पष्ट है कि जाति, व्यवसाय और गरीबी आपस में जुड़े हुए हैं। राज्य को विभिन्न वर्गों के बीच गुणात्मक और मात्रात्मक अंतर का ध्यान रखने और सुधारात्मक उपाय करने की शक्ति से वंचित नहीं किया जा सकता है।

45. संविधान निर्माताओं द्वारा आरक्षण पर हमेशा के लिए विचार नहीं किया गया था। एक ओर, जो लोग ऊपर आए हैं, उन्हें बाहर नहीं रखा गया है, दूसरी ओर, यदि उप वर्गीकरण को अस्वीकार कर दिया जाता है, तो यह असमान को समान मानकर समानता के अधिकार को पराजित करेगा। *चेब्रोलू लीला प्रसाद राव बनाम ए.पी. राज्य [चेब्रोलू लीला प्रसाद राव बनाम ए.पी. राज्य, (2021) 11 एससीसी 401: 2020 एससीसी ऑनलाइन एससी 383]* में, *इंद्रा साहनी [इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ, 1992 अनुपूरक (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) अनुपूरक 1]* और *भारत संघ बनाम राकेश कुमार [भारत संघ बनाम राकेश कुमार, (2010) 4 एससीसी 50: (2010) 1 एससीसी (एल एंड एस) 961]* का सहारा लेते हुए सूचियों को संशोधित करने की आवश्यकता बताई गई थी।

46. सेवाओं और शिक्षा में आरक्षण का लाभ उठाए जाने से आरक्षित वर्ग के भीतर रोष और जाति संघर्ष है, जो बेहतर वंशानुगत व्यवसाय कर रहे हैं। बाल्मीकि नाम से जाना जाने वाला सफाई कर्मचारी वर्ग कमोबेश वहीं पर बना हुआ है, जहां वह था, और इसी तरह, अनुसूचित जाति के भीतर असमानता विभिन्न रिपोर्टों से स्पष्ट है। आरक्षण का लाभ वंचित वर्ग तक पहुंचे और कागजों तक ही सीमित न रहे, तथा सभी को लाभ मिले और उनके साथ समान व्यवहार हो, यह सुनिश्चित करने के लिए पंजाब अधिनियम की धारा 4(5) के तहत उप-वर्गीकरण किया गया था, क्या यह अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है? हमारी राय में, समानता लाने के लिए सभी को लाभ प्रदान करने के लिए इस तरह का उप-वर्गीकरण करना तर्कसंगत आधार पर स्वीकार्य होगा, और यह सूची से बहिष्कार के बराबर नहीं होगा क्योंकि कोई भी वर्ग (जाति) समग्र रूप से आरक्षण से वंचित नहीं है। यदि अनुसूचित जातियों की सूची में शामिल सभी जातियों के उद्धार के लिए लाभ को कुछ जातियों द्वारा हड़पने की अनुमति दी जाती है, जिनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व है, जो आगे बढ़ चुके हैं और जो क्रीमी लेयर से संबंधित हैं, तो यह असमानता पैदा करने के बराबर होगा, जबकि भूख की स्थिति में प्रत्येक व्यक्ति को भोजन और रोटी उपलब्ध कराना आवश्यक है। समरूप वर्ग बनाने की आड़ में फलों की पूरी टोकरी दूसरों की कीमत पर शक्तिशाली लोगों को नहीं दी जा सकती।

47... ..

48... ..

49. अनुमेय सीमा के भीतर आरक्षण का प्रतिशत प्रदान करना राज्य विधानमंडलों की शक्तियों के अंतर्गत है। सूची में अन्य लोगों को वंचित किए बिना अनुसूचित जातियों, अनुसूचित

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

जनजातियों और सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के विशेष वर्गों के भीतर उचित वर्गीकरण करने की इसकी सहवर्ती शक्ति से इसे वंचित नहीं किया जा सकता है। आरक्षण के वास्तविक उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए, संवैधानिक गतिशीलता के भीतर, जरूरतमंदों को हमेशा लाभ दिया जा सकता है; अन्यथा, इसका मतलब होगा कि यदि सभी को लाभ सुनिश्चित करने के लिए वरीयता वर्गीकरण नहीं किया जाता है तो वर्ग के भीतर असमानता बनी रहेगी।

50. उप-वर्गीकरण का उद्देश्य मूल वर्गीकरण में परिकल्पित उद्देश्य को प्राप्त करना है और उसके आधार पर आरक्षण की अवधारणा विकसित हुई है। क्या उप-वर्गीकरण उक्त गतिशीलता के सिद्धांत का एक और विस्तार होगा, इस सवाल पर न्यायालय द्वारा आधिकारिक रूप से विचार किया जाना है।

51. प्रेसिडेंशियल सूची के अनुसार अनुसूचित जातियाँ हमेशा के लिए स्थिर नहीं हैं, और न ही वे एक समरूप समूह हैं जैसा कि विभिन्न आयोगों द्वारा एकत्र किए गए विशाल मानवशास्त्रीय और सांख्यिकीय डेटा से स्पष्ट है। सीमित सीमा तक अधिमान्य उपचार का राज्य कानून सूची में संशोधन नहीं करता है। यह सूची को वैसे ही अपनाता है जैसा वह है। राज्य कानून सांख्यिकीय डेटा के आधार पर व्यावहारिक तरीके से सभी अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण प्रदान करने का इरादा रखता है। यह प्रत्येक अनुसूचित जाति की जरूरतों के आधार पर आरक्षण का लाभ वितरित करता है।

52. राज्य को अनुच्छेद 15(4) और 16(4) और अनुच्छेद 341(1) और 342(1) के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को आरक्षण का लाभ देने की क्षमता है। यह विभिन्न वर्गों के लिए आरक्षण की सीमा/प्रतिशत निर्धारित करता है। राज्य सरकार आरक्षण के तरीके और मात्रा को तय कर सकती है। इस प्रकार, राज्य सूची में सभी अनुसूचित जातियों को आरक्षण प्रदान करते समय उप-वर्गीकरण भी कर सकता है, जो आरक्षण प्रदान करने वाले संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 16 की मूल भावना के अनुरूप होगा। राज्य सरकार सूची से छेड़छाड़ नहीं कर सकती है; वह सूची में किसी भी जाति को न तो शामिल कर सकती है और न ही बाहर कर सकती है या यह जांच नहीं कर सकती है कि कोई समानार्थी मौजूद है या नहीं, जैसा कि *मिलिंद [महाराष्ट्र राज्य बनाम मिलिंद, (2001) 1 एससीसी 4: 2001 एससीसी (एल एंड एस) 117]* में कहा गया है।

57. अनुच्छेद 14, 15, 16, 338, 341, 342 और 342-ए की व्याख्या अत्यधिक सार्वजनिक महत्व का मामला है, और *इंद्रा साहनी [इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ, 1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) अनुपूरक 1]* और अन्य निर्णयों में बाध्यकारी मिसालों की सही व्याख्या है। हालाँकि हम निर्णय के सिद्धांत का पूरा सम्मान करते हैं, लेकिन साथ ही, न्यायालय मूक दर्शक नहीं रह सकता और कठोर वास्तविकताओं से आँखें मूंद नहीं सकता। सामाजिक परिवर्तन का संवैधानिक लक्ष्य बदलती सामाजिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखे बिना हासिल नहीं किया जा सकता।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

58. हम 3 न्यायाधीशों की पीठ की राय का समर्थन करते हैं कि आगे के विकास और संविधान के संशोधन को देखते हुए, जो हुए हैं, *ई.वी. चिन्नैया [ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (2005) 1 एससीसी 394: (2008) 2 एससीसी (एल एंड एस) 329]* को एक वृहद पीठ द्वारा फिर से देखे जाने की आवश्यकता है। हम *ई.वी. चिन्नैया [ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (2005) 1 एससीसी 394: (2008) 2 एससीसी (एल एंड एस) 329]* को समन्वित शक्ति की पीठ होने के नाते फिर से नहीं देख सकते। हम माननीय मुख्य न्यायाधीश से अनुरोध करते हैं कि वे मामलों को 7 न्यायाधीशों या उससे अधिक की पीठ के समक्ष रखें, जैसा कि उचित समझा जाए।

14. उपर्युक्त के मद्देनजर, हमारे समक्ष विचारार्थ मामले रखे गए हैं कि *ई.वी. चिन्नैया* मामले पर पुनर्विचार की आवश्यकता है या नहीं। दूसरे शब्दों में, इस बात पर विचारार्थ कि क्या *ई.वी. चिन्नैया* द्वारा निर्धारित कानून *इंद्रा साहनी* मामले में की गई कुछ टिप्पणियों के आलोक में सही कानून है।

प्रासंगिक संवैधानिक प्रावधान

15. इस संदर्भ में उठाई गई प्रतिद्वंद्वी दलीलों को समझने के लिए, संविधान के प्रासंगिक प्रावधानों को संदर्भ के लिए पुनः प्रस्तुत करना लाभदायक होगा।

अनुच्छेद 14. कानून के समक्ष समानता – राज्य भारत के क्षेत्र में किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता या कानूनों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।

अनुच्छेद 15. धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध –

1 से 3...

(4) इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 29 के खंड (2) की कोई बात राज्य को सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े नागरिकों के किसी वर्ग या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के उत्थान के लिए कोई विशेष उपबंध करने से नहीं रोकेगी।]

(5) इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 19 के खंड (1) के उपखंड (जी) की कोई बात राज्य को सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े नागरिकों के किसी वर्ग या अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों के उत्थान के लिए कानून द्वारा कोई विशेष उपबंध करने से नहीं रोकेगी, जहां तक ऐसे विशेष उपबंध अनुच्छेद 30 के खंड (1) में निर्दिष्ट अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थानों के अलावा निजी शैक्षणिक संस्थानों सहित शैक्षणिक संस्थानों में उनके प्रवेश से संबंधित हैं, चाहे वे राज्य द्वारा सहायता प्राप्त हों या गैर-सहायता प्राप्त हों।

अनुच्छेद 16. सार्वजनिक रोजगार के मामलों में अवसर की समानता–

1 से 3 ...

(4) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को नागरिकों के किसी पिछड़े वर्ग के पक्ष में नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए कोई उपबंध करने से नहीं रोकेगी, जिसका राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

(4 क) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में, जिनका राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है, राज्य के अधीन सेवाओं में किसी वर्ग या वर्गों के पदों पर परिणामी ज्येष्ठता सहित पदोन्नति के मामलों में आरक्षण के लिए कोई उपबंध करने से नहीं रोकेगी।

अनुच्छेद 162. राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार – इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य की कार्यपालिका शक्ति उन विषयों तक विस्तारित होगी जिनके संबंध में राज्य के विधानमंडल को कानून बनाने की शक्ति है:

परन्तु किसी ऐसे विषय में जिसके संबंध में राज्य के विधानमंडल और संसद को कानून बनाने की शक्ति है, राज्य की कार्यपालिका शक्ति इस संविधान द्वारा या संसद द्वारा बनाए गए किसी कानून द्वारा संघ या उसके प्राधिकारियों को स्पष्ट रूप से प्रदत्त कार्यपालिका शक्ति के अधीन होगी और उससे सीमित होगी।

अनुच्छेद 166. किसी राज्य की सरकार का कार्य संचालन –

(1) किसी राज्य की सरकार की सभी कार्यपालिका कार्रवाई राज्यपाल के नाम से की गई मानी जाएगी।

(2) राज्यपाल के नाम से बनाए गए और निष्पादित आदेशों और अन्य लिखतों को ऐसी रीति से प्रमाणित किया जाएगा जैसा कि राज्यपाल द्वारा बनाए जाने वाले नियमों में निर्दिष्ट किया जा सकता है, और ऐसे प्रमाणित आदेश या लिखत की वैधता इस आधार पर प्रश्नगत नहीं की जाएगी कि वह राज्यपाल द्वारा बनाया गया या निष्पादित आदेश या लिखत नहीं है। राज्य के लिए महाधिवक्ता। किसी राज्य की सरकार का कार्य संचालन।

(3) राज्यपाल राज्य सरकार के कार्य के अधिक सुविधाजनक संचालन के लिए तथा उक्त कार्य के मंत्रियों के बीच आबंटन के लिए नियम बनाएगा, जहां तक वह ऐसा कार्य नहीं है जिसके संबंध में राज्यपाल को इस संविधान द्वारा या उसके अधीन अपने विवेक से कार्य करने की आवश्यकता है।

अनुच्छेद 246. संसद तथा राज्यों के विधानमंडलों द्वारा बनाए गए कानूनों की विषय-वस्तु –

(1) खंड (2) और (3) में किसी बात के होते हुए भी, संसद को सातवीं अनुसूची की सूची 1 में (जिसे इस संविधान में "संघ सूची" कहा गया है) सूचीबद्ध किसी भी विषय के संबंध में कानून बनाने की अनन्य शक्ति है।

(2) खंड (3) में किसी बात के होते हुए भी, संसद को तथा खंड (1) के अधीन रहते हुए, किसी राज्य के विधानमंडल को भी सातवीं अनुसूची की सूची 3 में (जिसे इस संविधान में "समवर्ती सूची" कहा गया है) सूचीबद्ध किसी भी विषय के संबंध में कानून बनाने की शक्ति है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(3) खंड (1) और (2) के अधीन रहते हुए, किसी राज्य के विधानमंडल को सातवीं अनुसूची की सूची 2 में (जिसे इस संविधान में “राज्य सूची” कहा गया है) सूचीबद्ध किसी विषय के संबंध में ऐसे राज्य या उसके किसी भाग के लिए कानून बनाने की अनन्य शक्ति है।

(4) संसद को भारत के राज्यक्षेत्र के किसी ऐसे भाग के लिए किसी विषय के संबंध में कानून बनाने की शक्ति है जो [किसी राज्य में] सम्मिलित नहीं है, भले ही ऐसा विषय राज्य सूची में सूचीबद्ध विषय हो।

अनुच्छेद 335. सेवाओं और पदों पर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावे—

संघ या राज्य के मामलों से संबंधित सेवाओं और पदों पर नियुक्तियां करने में, प्रशासन की दक्षता बनाए रखने के अनुरूप, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावों पर विचार किया जाएगा:

परंतु इस अनुच्छेद की कोई बात, संघ या राज्य के मामलों से संबंधित सेवाओं या पदों के किसी वर्ग या वर्गों में आरक्षण या पदोन्नति के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के पक्ष में किसी परीक्षा में अर्हक अंकों में छूट देने या मूल्यांकन के मानकों को कम करने के लिए कोई उपबंध करने से नहीं रोकेगी।

अनुच्छेद 341. अनुसूचित जातियां —

(1) राष्ट्रपति किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में, और राज्य के संबंध में राज्यपाल से परामर्श के पश्चात्, लोक अधिसूचना द्वारा, उन जातियों, मूलवंशों या जनजातियों अथवा जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के भागों या समूहों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा जो इस संविधान के प्रयोजनों के लिए, यथास्थिति, उस राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में अनुसूचित जातियां समझी जाएंगी।

(2) संसद विधि द्वारा, खंड (1) के अधीन जारी की गई अधिसूचना में विनिर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में किसी जाति, मूलवंश या जनजाति अथवा किसी जाति, मूलवंश या जनजाति के भाग या समूह को सम्मिलित कर सकेगी या उससे बहिष्कृत कर सकेगी, किन्तु जैसा पूर्वोक्त है उसके सिवाय, उक्त खंड के अधीन जारी की गई अधिसूचना में किसी पश्चातवर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 342. अनुसूचित जनजातियाँ —

(1) राष्ट्रपति किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में, और राज्य के संबंध में उसके राज्यपाल से परामर्श के पश्चात्, सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा, उन जनजातियों या जनजातीय समुदायों या जनजातियों या जनजातीय समुदायों के भागों या समूहों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा, जो इस संविधान के प्रयोजनों के लिए, यथास्थिति, उस राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में अनुसूचित जनजातियां समझे जाएंगे।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(2) संसद विधि द्वारा, खंड (1) के अधीन जारी की गई अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किसी जनजाति या जनजातीय समुदाय या किसी जनजाति या जनजातीय समुदाय के भाग या समूह को अनुसूचित जनजातियों की सूची में सम्मिलित कर सकेगी या उससे बहिष्कृत कर सकेगी, किन्तु जैसा पूर्वोक्त है, उसके सिवाय उक्त खंड के अधीन जारी की गई अधिसूचना में किसी पश्चातवर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 342 क. सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग

(1) राष्ट्रपति किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में, और राज्य के संबंध में, उसके राज्यपाल से परामर्श के पश्चात, सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा, 6 [केन्द्रीय सूची में सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों को, जो केन्द्रीय सरकार के प्रयोजनों के लिए] उस राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में, यथास्थिति, सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग माने जाएंगे, विनिर्दिष्ट कर सकेगा।

(2) संसद विधि द्वारा, खंड (1) के अधीन जारी अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किसी सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग को केन्द्रीय सूची में सम्मिलित कर सकेगी या उससे बाहर कर सकेगी, किन्तु जैसा पूर्वोक्त है, उसके सिवाय उक्त खंड के अधीन जारी अधिसूचना में किसी पश्चातवर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा।]

(3) खंड (1) और (2) में निहित किसी बात के होते हुए भी, प्रत्येक राज्य या संघ राज्य क्षेत्र, विधि द्वारा, अपने प्रयोजनों के लिए सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की एक सूची तैयार कर सकेगा और रख सकेगा, जिसकी प्रविष्टियां केन्द्रीय सूची से भिन्न हो सकती हैं।

अनुच्छेद 366. परिभाषाएं – इस संविधान में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, निम्नलिखित अभिव्यक्तियों के क्रमशः वही अर्थ होंगे जो उन्हें दिए गए हैं, अर्थात् –

(24) "अनुसूचित जाति" का अर्थ है ऐसी जातियां, नस्लें या जनजातियां या ऐसी जातियों, नस्लों या जनजातियों के भाग या उनके भीतर के समूह जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 341 के अधीन अनुसूचित जातियां समझी जाती हैं;

(25) "अनुसूचित जनजातियां" का अर्थ है ऐसी जनजातियां या जनजातीय समुदाय या ऐसी जनजातियों या जनजातीय समुदायों के भाग या उनके भीतर के समूह जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 342 के अधीन अनुसूचित जनजातियां समझी जाती हैं;

(26) * * * *

(26 ए)

(26 बी)

(26 सी) "सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग" का अर्थ है ऐसे पिछड़े वर्ग जिन्हें, यथास्थिति, केंद्र सरकार या राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 342 ए के अधीन ऐसा समझा जाता है;

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

विश्लेषण

(1) क्या ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य* में पांच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा निर्धारित कानून को, बिना ई.वी. चिन्नैया में पांच न्यायाधीशों की पीठ के उक्त निर्णय से असहमति के लिए कोई ठोस कारण दर्ज किए, तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा वृहद पीठ को भेजा जा सकता था, खासकर तब जब उक्त निर्णय पंद्रह वर्षों की लंबी अवधि तक प्रभाव में रहा?

16. यह ध्यान देने योग्य है कि आंध्र प्रदेश अनुसूचित जाति (आरक्षण का युक्तिकरण) अधिनियम, 2000 को **ई.वी. चिन्नैया** मामले में पांच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा पहले ही असंवैधानिक घोषित किया जा चुका है। इसी तरह, पंजाब अनुसूचित जाति और पिछड़ा वर्ग (सेवाओं में आरक्षण अधिनियम, 2006) की धारा 4(5) को भी पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने 29.03.2010 के फैसले के माध्यम से असंवैधानिक घोषित किया है, जिसके संबंध में वर्तमान संदर्भ दिया गया है। इसलिए, आज की तारीख में इन दोनों अधिनियमों को असंवैधानिक घोषित किया गया है। यह भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि **ई.वी. चिन्नैया** का मामला 2005 में निर्णीत किया गया था, जो लगभग 15 वर्षों तक क्षेत्र में रहा, जब तक कि **दविंदर सिंह** में पांच न्यायाधीशों की पीठ ने तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा किए गए संदर्भ पर, सन् 2020 में मामलों को सात न्यायाधीशों की पीठ को भेज दिया।

17. यह उल्लेखनीय है कि तीन न्यायाधीशों की पीठ ने कोई कारण बताए बिना मामले को वृहद पीठ को भेज दिया था, कि वह संविधान पीठ द्वारा दिए गए **ई.वी. चिन्नैया** के फैसले से सहमत क्यों नहीं हो सकता। संविधान पीठ द्वारा तय किया गया कानून जो 15 वर्षों से प्रचलित था, उसे तीन न्यायाधीशों की पीठ ने बहुत ही रहस्यमय और औपचारिक आदेश पारित करके संदेहास्पद और अस्थिर करने का प्रयास किया, जिसका कोई कारण नहीं दिया गया, जैसा कि ऊपर उद्धृत किया गया है।

18. **प्रदीप चंद्र परीजा और अन्य बनाम प्रमोद चंद्र पटनायक और अन्य** में पांच न्यायाधीशों की पीठ ने तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिए गए निर्णय की सत्यता पर संदेह करते हुए और मामले को सीधे पांच न्यायाधीशों की पीठ को संदर्भित करने वाले दो न्यायाधीशों की पीठ के औचित्य की जांच में कहा था कि न्यायिक अनुशासन और औचित्य की मांग है कि दो विद्वान न्यायाधीशों की पीठ को तीन विद्वान न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय का पालन करना चाहिए, लेकिन यदि दो विद्वान न्यायाधीशों की पीठ इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि तीन विद्वान न्यायाधीशों का पिछला निर्णय इतना गलत है कि किसी भी परिस्थिति में उसका पालन नहीं किया जा सकता है, तो उसके लिए उचित तरीका यह होगा कि वह मामले को तीन विद्वान न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष संदर्भित करे, जिसमें कारण बताए जाएं कि वह पहले के निर्णय से सहमत क्यों नहीं हो सकता है।

19. हमारी न्यायिक प्रणाली के प्रशासन में बाध्यकारी मिसालों के सिद्धांत के महत्व को शायद ही दोहराया जाना चाहिए। मिसालों और निर्णय मिसाल के सिद्धांत हमारी कानूनी प्रणाली के मूल मूल्य हैं। कई मामलों में, इस न्यायालय की संविधान पीठों ने बार-बार इस बात पर जोर दिया है कि जब इस न्यायालय द्वारा कोई निर्णय दिया जाता है, तो यह एक निर्भरता हित प्राप्त करता है और समाज ऐसे कानूनी आदेश के आधार पर खुद को संगठित करता है। जब संविधान पीठों द्वारा संदर्भों पर पर्याप्त न्यायिक समय और संसाधन खर्च किए जाते हैं, तो इसे

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

किसी छोटी पीठ द्वारा लापरवाही से और असहमति के कारणों को दर्ज किए बिना वृहद पीठ को नहीं भेजा जाना चाहिए।

20. वर्ष 1974 में **मगनलाल छगनलाल (पी) लिमिटेड बनाम ग्रेटर बॉम्बे नगर निगम और अन्य** में सात न्यायाधीशों की पीठ ने टिप्पणी की थी कि कानून में निश्चितता, जो कानून के शासन का एक आवश्यक घटक है, काफी हद तक नष्ट हो जाएगी यदि देश का सर्वोच्च न्यायालय पहले के मामलों में अपने द्वारा व्यक्त किए गए दृष्टिकोण को हल्के में खारिज कर दे। उनके अनुसार, एक उदाहरण जहां इस तरह के फैसले को खारिज किया जा सकता है, वह ऐसी स्थिति थी जहां पहले के दृष्टिकोण को जन्म देने वाले प्रासंगिक मूल्यों में बाद में काफी बदलाव आया हो।

21. **लेफ्टिनेंट कर्नल खजूर सिंह बनाम भारत संघ और अन्य** में सात न्यायाधीशों की पीठ ने इस बात पर जोर दिया कि न्यायालय को न्यायालय के पहले के फैसले में दी गई व्याख्या से अलग नहीं होना चाहिए जब तक कि इस बात पर पर्याप्त सर्वसम्मति न हो कि पहले का फैसला स्पष्ट रूप से गलत था।

22. **केशव मिल्स कंपनी लिमिटेड बनाम आयकर आयुक्त, बॉम्बे नॉर्थ, अहमदाबाद** में एक अन्य सात न्यायाधीशों की पीठ द्वारा इस मुद्दे की अधिक विस्तृत जांच की गई थी, जिसमें यह कहा गया था कि इस न्यायालय द्वारा अपने पिछले निर्णयों की समीक्षा करने की अपनी शक्ति का इस आधार पर बार-बार प्रयोग कि बाद में उसके समक्ष रखा गया दृष्टिकोण न्यायालय को अधिक उचित प्रतीत हुआ, संयोगवश कानून को अनिश्चित बना सकता है और भ्रम पैदा कर सकता है, जिससे लगातार बचना चाहिए। यह भी कहा गया था कि किसी पिछले निर्णय को स्पष्ट रूप से गलत घोषित किए जाने से पहले, न्यायालय को अपने सदस्यों के बीच उचित मात्रा में सर्वसम्मति से संतुष्ट होना चाहिए कि उक्त दृष्टिकोण का संशोधन पूरी तरह से उचित है।

23. **डॉ. शाह फैसल और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य** के मामले में एक और हालिया निर्णय में एक पांच न्यायाधीशों की पीठ ने मिसाल और निर्णायक सिद्धांत के सिद्धांतों को दोहराया, और निम्नानुसार टिप्पणी की: –

“17. इस न्यायालय के न्यायशास्त्र ने दर्शाया है कि आमतौर पर न्यायालय स्थापित मिसालों को तब तक नहीं पलटते जब तक कि कोई सामाजिक, संवैधानिक या आर्थिक परिवर्तन न हो जो इस तरह के विकास को अनिवार्य बनाता हो। संख्याएँ स्वयं संयम की बात करती हैं और इस न्यायालय द्वारा मिसाल के सिद्धांत को दिए गए महत्व को दर्शाती हैं। यह न्यायालय मिसाल के उपयोग को अपरिहार्य आधार मानता है जिस पर यह न्यायालय न्याय प्रदान करता है। इस तरह की मिसालों का उपयोग, कुछ हद तक, निश्चितता पैदा करता है जिस पर व्यक्ति भरोसा कर सकते हैं और अपने मामलों का संचालन कर सकते हैं। यह कानून के शासन के विकास के लिए एक आधार भी बनाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश, जॉन रॉबर्ट्स ने अपनी सीनेट पुष्टिकरण सुनवाई के दौरान कहा, “जब आप किसी मिसाल को पलटते हैं तो यह कानूनी प्रणाली के लिए एक झटका होता है। मिसाल स्थिरता और निष्पक्षता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है”। [कांग्रेस रिकॉर्ड-सीनेट, खंड 156, भाग 7, 10018 (7-6-2010)]।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

“18. मिसाल और निर्णायक सिद्धांत हमारी कानूनी प्रणाली के मूल मूल्य हैं। वे ऐसे उपकरण बनाते हैं जो हमारी कानूनी प्रणाली में निश्चितता, स्थिरता और निरंतरता के लक्ष्य को आगे बढ़ाते हैं। निश्चित रूप से, न्यायाधीशों का कानून की निश्चितता की अवधारणा के प्रति कर्तव्य है, इसलिए वे अक्सर कानून के स्थापित सिद्धांतों पर भरोसा करके अपने फैसलों को सही ठहराते हैं।”

“19. जब इस न्यायालय द्वारा कोई निर्णय दिया जाता है, तो यह एक निर्भरता हित प्राप्त करता है और समाज वर्तमान कानूनी व्यवस्था के आधार पर खुद को व्यवस्थित करता है। जब संदर्भों पर पर्याप्त न्यायिक समय और संसाधन खर्च किए जाते हैं, तो उन्हें लापरवाही से नहीं बनाया जाना चाहिए। यह केवल तभी होता है जब किसी प्रस्ताव का उसी पीठ के बाद के फैसले से खंडन होता है, या यह दिखाया जाता है कि विहित प्रस्ताव अव्यवहारिक हो गया है या एक अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत के विपरीत है, तब एक वृहद पीठ को संदर्भ दिया जाएगा। इस संदर्भ में, *चंद्र प्रकाश बनाम उत्तर प्रदेश राज्य में इस न्यायालय की पांच न्यायाधीशों की पीठ [(2002) 4 एससीसी 234: 2002 एससीसी (क्रि.) 496: 2002 एससीसी (एलएंडएस) 496]*, ने पहले के कई फैसलों पर विचार करने के बाद दोहराया कि : (एससीसी पृष्ठ 245, पैरा 22)

“22. ... बाध्यकारी मिसाल का सिद्धांत हमारी न्यायिक प्रणाली के प्रशासन में अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह न्यायिक निर्णयों में निश्चितता और स्थिरता को बढ़ावा देता है। न्यायिक स्थिरता प्रणाली में विश्वास को बढ़ावा देती है, इसलिए, इस न्यायालय के निर्णयों में कानूनी सिद्धांतों के प्रतिपादन में स्थिरता की आवश्यकता है।”

24. कानून की उपरोक्त व्याख्या यह स्पष्ट करती है कि बाध्यकारी मिसाल और निर्णायक सिद्धान्त, साथ ही वर्षों में विकसित न्यायिक अनुशासन और औचित्य, विहित करते हैं कि वृहद पीठ के फैसले का पालन छोटी पीठ द्वारा किया जाना चाहिए। यदि छोटी पीठ को वृहद पीठ के किसी निर्णय पर कोई संदेह या असहमति है, तो वह उसे पुनर्विचार के लिए वृहद पीठ के पास भेज सकती है, हालांकि, इसके लिए वह उन कारणों और औचित्य को बताएगी कि वह पहले की वृहद पीठ के निर्णय से सहमत क्यों नहीं हो सकती या उसका पालन क्यों नहीं कर सकती। ऐसी असहमति कुछ उचित कारणों पर भी आधारित होनी चाहिए, जैसे कि जहां वृहद पीठ का पहले का निर्णय स्पष्ट रूप से गलत पाया जाता है या जहां पहले के दृष्टिकोण को जन्म देने वाले प्रासंगिक मूल्यों में काफी बदलाव आया है आदि। बिना कोई कारण दर्ज किए या इस आधार पर कि बाद में उसके समक्ष रखा गया दृष्टिकोण अधिक उचित प्रतीत होता है, मामले को वृहद पीठ को भेजने की शक्ति का आकस्मिक प्रयोग संयोगवश कानून को अनिश्चित बना सकता है और भ्रम पैदा कर सकता है, जिससे बचना चाहिए।

25. इस मामले में, तीन न्यायाधीशों की पीठ ने *ई.वी. चिन्नैया* में संविधान पीठ के पिछले निर्णय पर पुनर्विचार के लिए वृहद पीठ को संदर्भ दिया, बिना कोई कारण बताए और बहुत ही लापरवाही से, और वह भी अंतिम निर्णय प्राप्त करने के पंद्रह साल बाद। इस तरह के संदर्भ को बाद के पांच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा सात न्यायाधीशों की पीठ को संदर्भित करने के लिए समर्थन नहीं किया जा सकता था और न ही किया जाना चाहिए था। जब *ई.वी. चिन्नैया* में पिछली संविधान पीठ ने *इंद्रा साहनी* सहित सभी पिछले निर्णयों पर विचार करने और पर्याप्त न्यायिक

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

समय और संसाधनों का निवेश करने के बाद एक कानून तय किया था, और जब वह पंद्रह वर्षों की काफी लंबी अवधि तक क्षेत्र में रहा था, तो मेरी राय में, *ई.वी. चिन्नैया* में निर्णय पर पुनर्विचार के लिए तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा वृहद पीठ को संदर्भ, वह भी बिना कोई कारण बताए अनुचित था और मिसाल और निर्णायक सिद्धान्त के सुस्थापित सिद्धांतों के अनुरूप नहीं था। इतना कहने के बाद, आइए संदर्भ में शामिल अन्य मुद्दों पर आगे बढ़ें।

(II) क्या राज्यों को अनुच्छेद 341 के खंड (1) के तहत अधिसूचित "अनुसूचित जातियों" को निर्दिष्ट करने वाली प्रेसिडेंशियल सूची में छेड़छाड़ या उसमें परिवर्तन करने की अनुमति दी जानी चाहिए, जो कि सबसे कमजोर लोगों के लिए आरक्षण प्रदान करने की आड़ में उक्त सूची में शामिल जातियों को उप-वर्गीकृत या उप-विभाजित या पुनः समूहीकृत करके की गई है, और इस तरह अनुच्छेद 341 के खंड (2) में निहित अधिदेश का उल्लंघन किया गया है?

26. उपरोक्त प्रश्न से उत्पन्न होने वाले संपार्श्विक मुद्दों को निम्नानुसार रखा जा सकता है: –

(क) संविधान की व्याख्या पर कानून।

(ख) अनुच्छेद 341 का उद्देश्य, प्रयोजन और सीमाएँ।

(ग) प्रेसिडेंशियल सूची में अधिसूचित "अनुसूचित जातियों" की व्युत्पत्ति और विशेष दर्जा।

(घ) अनुच्छेद 15 और 16 के तहत आरक्षण प्रदान करने के लिए प्रेसिडेंशियल सूची में "अनुसूचित जातियों" के रूप में निर्दिष्ट जातियों को उप-वर्गीकृत या उप-विभाजित या पुनर्समूहीकृत करने की राज्य की क्षमता।

(क) संवैधानिक व्याख्या

27. *इंद्रा साहनी* में कानून की व्याख्या के संदर्भ में *ई.वी. चिन्नैया* में पांच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा निर्धारित कानून की सत्यता की जांच करने से पहले और संवैधानिक प्रावधानों, खासकर भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16 और 341 के प्रकाश में, आइए हम इस न्यायालय द्वारा वर्षों से निर्णयों की श्रृंखला में निर्धारित संविधान की व्याख्या के प्रमुख सिद्धांतों पर एक नजर डालें।

28. यह नकारा नहीं जा सकता कि संविधान को एक जीवंत और जैविक दस्तावेज माना जाता है, क्योंकि इसका उद्देश्य आने वाले युगों तक टिके रहना है और परिणामस्वरूप मानवीय मामलों के विभिन्न संकटों के अनुकूल होना है। हालांकि, बेंजामिन कार्डोजो के शब्दों में, इसे व्यापक और उदारतापूर्वक व्याख्यायित करने की आवश्यकता है, "एक न्यायाधीश सुंदरता और अच्छाई के अपने आदर्श की खोज में अपनी मर्जी से घूमने वाला शूरवीर नहीं है। न्यायाधीश को अपनी मर्जी से कुछ नया नहीं करना चाहिए।"

29. जैसा कि इस न्यायालय ने लगातार माना है, संवैधानिक प्रावधानों को व्यापक और उदार व्याख्या देना वांछनीय हो सकता है, लेकिन ऐसा करते समय, "स्पष्ट अर्थ" या "शाब्दिक" व्याख्या का नियम, जो "प्राथमिक नियम" बना हुआ है, को भी ध्यान में रखना होगा।

30. *जीवीके इंडस्ट्रीज लिमिटेड और अन्य बनाम आयकर अधिकारी और अन्य* में संविधान की व्याख्या पर पांच न्यायाधीशों की पीठ ने निम्न प्रकार से टिप्पणी की: –

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

“37. संविधान सहित किसी भी कानून की व्याख्या करते समय, विचाराधीन प्रावधान का पाठ अधिनियम में निहित अर्थों को समझने का प्राथमिक स्रोत होगा। हालांकि, गंभीर मुद्दों के मद्देनजर संवैधानिक आवश्यकता के रूप में, विचाराधीन प्रावधान के वास्तविक अर्थ, अभिप्राय और दायरे की खोज को व्यापक बनाना हमेशा विवेकपूर्ण होगा। संविधान का कोई भी प्रावधान, और वास्तव में कोई भी शब्द या अभिव्यक्ति, अलग-थलग नहीं है – वे आवश्यक रूप से संविधान के अन्य प्रावधानों, शब्दों और वाक्यांशों से संबंधित हैं, उन्हें रूपांतरित करते हैं और बदले में उनके द्वारा रूपांतरित होते हैं।

38. हमारा संविधान लंबा होने के साथ-साथ अर्थों, उद्देश्यों और संरचनाओं का एक जटिल मैट्रिक्स भी है। केवल उस संवैधानिक मैट्रिक्स के भीतर विचाराधीन किसी विशेष संवैधानिक प्रावधान को रखकर ही कोई इसके वास्तविक अर्थ, अभिप्राय और दायरे को समझने में सक्षम होने की उम्मीद कर सकता है। जैसा कि प्रो. लॉरेंस ट्राइब बताते हैं:

“संविधान को एक कानूनी पाठ के रूप में समझने के लिए, यह पहचानना आवश्यक है कि यह किस तरह का पाठ है: एक संवैधानिक पाठ जो लोगों के नाम पर, कानूनी और राजनीतिक रूप से एक साथ कई अलग-अलग लेकिन परस्पर संबंधित संस्थाओं और प्रथाओं को अस्तित्व में लाने का दावा करता है, और उन संस्थाओं और प्रथाओं को नियंत्रित करने वाले नियमों को परिभाषित करता है।” (देखें- *रिफ्लेक्संस ऑन फ्री फॉर्म मेथड इन कास्टीट्यूशनल इंटरप्रेटेशन* [108 हार्व एल रेव 1221, 1235 (1995)])”

39. इस न्यायालय द्वारा बार-बार यह माना गया है कि हमारा संविधान सबसे सावधानीपूर्वक तैयार किए गए संविधानों में से एक है, जिसमें हमारे निर्माताओं के विशाल अनुभव, विशेषज्ञता और ज्ञान के भीतर, हर संभव स्थिति पर विचार किया गया, विचार-विमर्श किया गया और राज्य के अंगों को उनकी भूमिका निभाने में सक्षम बनाने के लिए उपयुक्त विशेषताओं और पाठ का चयन किया गया। यद्यपि वास्तव में गतिशील व्याख्या आवश्यक है, यदि बदली हुई परिस्थितियों में फिट होने के लिए आवश्यक अर्थ पाठ में ही पाया जा सकता है, तो हम हमेशा पाठ के जितना संभव हो सके उतना करीब से चलने, सरल सामान्य अर्थ को पाने और पूरे दस्तावेज़ में अपनी दृष्टि और समझ को व्यापक रखने का प्रयास करेंगे, ताकि यह देखा जा सके कि क्या वह अर्थ संवैधानिक मूल्यों और योजना द्वारा मान्य है।”

31. जीवीके इंडस्ट्रीज लिमिटेड के बाद, **डॉ. जयश्री लक्ष्मणराव पाटिल बनाम मुख्यमंत्री और अन्य** में एक और पांच न्यायाधीशों की पीठ ने निम्नलिखित टिप्पणी की : –

“113. संविधान के प्रावधानों की जांच करते समय, न्यायालयों को प्राथमिक नियम को अपनाना चाहिए, और अभिव्यक्तियों के स्पष्ट अर्थ को प्रभावी बनाना चाहिए; इस नियम को तभी छोड़ा जा सकता है, जब इसमें अस्पष्टता हो। *कुलदीप नैयर बनाम भारत संघ* [(2006) 7 एससीसी 1] में *जी. नारायणस्वामी बनाम जी. पन्नीरसेल्वम* [(1972) 3 एससीसी 717] से

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

उद्धरण देने के बाद इस न्यायालय ने धारित किया कि : (कुलदीप नैयर मामला एससीसी पृष्ठ 88, पैरा 201)

“201. ... हम निर्णय के ऊपर उद्धृत पैराग्राफ में लिए गए दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं और उसे दोहराते हैं। संवैधानिक प्रावधानों को व्यापक और उदार अर्थ देना वांछनीय हो सकता है, लेकिन ऐसा करते समय “स्पष्ट अर्थ” या “शाब्दिक” व्याख्या का नियम, जो “प्राथमिक नियम” बना हुआ है, को भी ध्यान में रखना होगा। वास्तव में “शाब्दिक अर्थ” का नियम सुरक्षित नियम है जब तक कि इस्तेमाल की गई भाषा विरोधाभासी, अस्पष्ट न हो या वास्तव में बेतुके परिणामों की ओर न ले जाए।”

32. इस प्रकार, यह पूरी तरह से स्थापित है कि संविधान सहित किसी भी कानून की व्याख्या करते समय, विचाराधीन प्रावधान का पाठ अधिनियम में निहित अर्थों को समझने का प्राथमिक स्रोत होगा। कभी-कभी संवैधानिक आवश्यकता के रूप में, विचाराधीन प्रावधान के वास्तविक अर्थ, अभिप्राय और दायरे की खोज को व्यापक बनाना समझदारी हो सकती है, हालांकि, यह ध्यान में रखना होगा कि संविधान में कोई भी प्रावधान, कोई भी शब्द या अभिव्यक्ति अलग-थलग नहीं है। वे संविधान में अन्य प्रावधानों, शब्दों और वाक्यांशों से अनिवार्य रूप से संबंधित हैं, उन्हें रूपांतरित करते हैं और बदले में उनके द्वारा रूपांतरित होते हैं। भले ही एक गतिशील व्याख्या आवश्यक हो और बदली हुई परिस्थितियों के अनुकूल आवश्यक अर्थ पाठ में ही मिल जाए, फिर भी हमेशा पाठ के जितना संभव हो सके उतना करीब से चलना बेहतर होगा, साधारण अर्थों को लेकर, यह देखना होगा कि क्या वह अर्थ संवैधानिक मूल्यों और योजना द्वारा मान्य है। संवैधानिक प्रावधानों को एक व्यापक और उदार निर्माण देते समय, “साधारण अर्थ” या “शाब्दिक” व्याख्या का नियम, जो “प्राथमिक नियम” बना हुआ है, को ध्यान में रखना होगा।

(ख) अनुच्छेद 341 का उद्देश्य, प्रयोजन एवं सीमाएं:—

33. चूंकि पूरा मामला भारतीय संविधान के अनुच्छेद 341 की व्याख्या पर टिका है, इसलिए आइए संविधान में इसके समावेश के उद्देश्य और प्रयोजन को देखें।

34. अनुच्छेद 341 में कहा गया है कि राष्ट्रपति किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में, और संबंधित राज्य के राज्यपाल से परामर्श के पश्चात, सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा, उन जातियों, मूलवंशों और जनजातियों अथवा जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के भागों या समूहों को निर्दिष्ट कर सकता है, जिन्हें संविधान के प्रयोजनों के लिए उस राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में अनुसूचित जातियां माना जाएगा, जैसा भी मामला हो। उक्त अनुच्छेद 341 के खंड (2) में कहा गया है कि संसद विधि द्वारा खंड (1) के अंतर्गत जारी अधिसूचना में निर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में किसी जाति, मूलवंश या जनजाति अथवा किसी जाति, मूलवंश या जनजाति के भाग या समूह को शामिल कर सकती है या उससे बाहर कर सकती है, लेकिन जैसा कि पूर्वोक्त है, उक्त खंड के अंतर्गत जारी अधिसूचना को छोड़कर, जिसमें किसी भी बाद की अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा। अनुसूचित जनजातियों के लिए अनुच्छेद 342 में इसी प्रकार का प्रावधान किया गया है। सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों से संबंधित अनुच्छेद 342 (ए) को थोड़ा अलग तरीके से लिखा गया है, जिसे संविधान (102 वां संशोधन) अधिनियम, 2018 द्वारा दिनांक 14.08.2018 से जोड़ा गया था।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

35. संविधान सभा की बहस के अभिलेखों से पता चलता है कि वर्तमान संविधान में अनुच्छेद 341 के समान कोई अनुच्छेद नहीं है। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की सूची बनाने की आवश्यकता को देखते हुए, संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. अंबेडकर द्वारा प्रारूप संविधान में कुछ संशोधन पेश किए गए थे। 17 सितंबर, 1949 को संविधान सभा की बहस की कार्यवाही का प्रासंगिक हिस्सा नीचे दिया गया है : -

“माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर: महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

“यह कि सूची IV (आठवां सप्ताह) के संशोधन सं. 147 के संदर्भ में, अनुच्छेद 303 के खंड (1) के उप-खंड (डब्ल्यू) के स्थान पर निम्नलिखित उप-खंड प्रतिस्थापित किया जाए : -

(डब्ल्यू) अनुसूचित जाति का अर्थ है ऐसी जातियां, मूलवंश या जनजातियां या ऐसी जातियों, मूलवंश या जनजातियों के भाग या समूह जिन्हें इस संविधान के अनुच्छेद 300 ए के तहत इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियां माना गया है।

एकमात्र परिवर्तन यह है कि शब्द ‘निर्दिष्ट’ को ‘माना’ में बदल दिया गया है। महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ : “सूची IV (आठवां सप्ताह) के संशोधन सं. 148 के संदर्भ में, अनुच्छेद 303 के खंड (1) के उप-खंड (x) के स्थान पर निम्नलिखित उप-खंड प्रतिस्थापित किया जाए : -

(x) अनुसूचित जनजाति का अर्थ है ऐसी जनजातियां या जनजातीय समुदाय या ऐसी जनजातियों या जनजातीय समुदायों के भाग या समूह जिन्हें इस संविधान के अनुच्छेद 300 बी के तहत इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जनजातियां माना गया है;

मैं अन्य संशोधन को शामिल कर रहा हूँ जिसे भी पेश किया गया है। क्या हम साथ ही दोनों अन्य अनुच्छेदों पर भी विचार करेंगे।

अध्यक्ष महोदय: हां।

नए अनुच्छेद 300 ए और 300 बी [सीओआई अनुच्छेद 341 और 342]

माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर: महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ:

“कि अनुच्छेद 300 के बाद निम्नलिखित अनुच्छेद सम्मिलित किए जाएं: - 300 ए - (1) राष्ट्रपति किसी राज्य के राज्यपाल या शासक से परामर्श के पश्चात सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा उन जातियों, मूलवंशों या जनजातियों अथवा जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के भागों या समूहों को निर्दिष्ट कर सकेगा, जो इस संविधान के प्रयोजनों के लिए उस राज्य के संबंध में अनुसूचित जातियां मानी जाएंगी।

(2) संसद विधि द्वारा इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन राष्ट्रपति द्वारा जारी अधिसूचना में निर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में किसी जाति, मूलवंश या जनजाति अथवा किसी जाति, मूलवंश या जनजाति के भाग या समूह को शामिल कर सकेगी या उससे बाहर कर सकेगी, किन्तु जैसा पूर्वोक्त है उसके सिवाय उक्त खंड के अधीन जारी अधिसूचना में किसी पश्चातवर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा।

300 बी- अनुसूचित जनजातियाँ। - (1) राष्ट्रपति किसी राज्य के राज्यपाल या शासक से परामर्श के पश्चात सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा उन जनजातियों या जनजातीय समुदायों अथवा

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

जनजातियों या जनजातीय समुदायों के भागों या समूहों को निर्दिष्ट कर सकेगा, जो इस संविधान के प्रयोजनों के लिए उस राज्य के संबंध में अनुसूचित जनजातियां मानी जाएंगी।

(2) संसद, विधि द्वारा, इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन राष्ट्रपति द्वारा जारी अधिसूचना में विनिर्दिष्ट अनुसूचित जनजातियों की सूची में किसी जनजाति या जनजातीय समुदाय को अथवा किसी जनजाति या जनजातीय समुदाय के भाग या समूह को सम्मिलित कर सकेगी, किन्तु जैसा पूर्वोक्त है उसके सिवाय, उक्त खंड के अधीन जारी अधिसूचना में किसी पश्चातवर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा।”

जैसा कि मैंने कहा, इन दो अनुच्छेदों का उद्देश्य संविधान पर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की लंबी सूची का बोझ डालने की आवश्यकता को समाप्त करना था। अब यह प्रस्तावित है कि राष्ट्रपति को राज्य के राज्यपाल या शासक के परामर्श से राजपत्र में एक सामान्य अधिसूचना जारी करने का अधिकार होना चाहिए, जिसमें उन सभी जातियों और जनजातियों या उनके समूहों को निर्दिष्ट किया जाए जिन्हें संविधान में उनके लिए परिभाषित विशेषाधिकारों के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां माना जाता है। एकमात्र सीमा जो लगाई गई है वह यह है: एक बार राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचना जारी कर दिए जाने पर, जिसे निस्संदेह, वह प्रत्येक राज्य की सरकार के परामर्श और सलाह पर जारी करेंगे, उसके बाद, यदि इस तरह अधिसूचित सूची से कोई निष्कासन किया जाना है या कोई अतिरिक्त जोड़ा जाना था, तो उसे संसद द्वारा किया जाना चाहिए, न कि राष्ट्रपति द्वारा। उद्देश्य राष्ट्रपति द्वारा प्रकाशित अनुसूची में गड़बड़ी के मामले में किसी भी तरह के राजनीतिक कारकों की भूमिका को समाप्त करना है।

अध्यक्ष महोदय: 218 ए.

श्री टी. टी. कृष्णामाचारी: इसे पढ़ते हुए उन्होंने इसे शामिल किया है।

अध्यक्ष महोदय: 224.

पंडित ठाकुर दास भार्गव: महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

“सूची V (आठवें सप्ताह) के संशोधन सं. 201 में प्रस्तावित नए अनुच्छेद 300 ए के खंड (2) के अंत में निम्नलिखित जोड़ा जाए: – ‘इस संविधान के प्रारंभ से दस वर्ष की अवधि के लिए।’”

मैं यह भी प्रस्ताव करता हूं:

“सूची V (आठवें सप्ताह) के संशोधन सं. 201 में प्रस्तावित नए अनुच्छेद 300 बी के खंड (2) के अंत में निम्नलिखित जोड़ा जाए: –

‘इस संविधान के प्रारंभ से दस वर्ष की अवधि के लिए।’” मैं इस सिद्धांत से सहमत हूं कि आने वाले दस वर्षों तक राष्ट्रपति द्वारा मूल रूप से की गई अधिसूचना में कोई परिवर्तन संभव नहीं होना चाहिए। क्योंकि अब जबकि अनुसूचित जातियों को आरक्षण आदि के विशेषाधिकार दे दिए गए हैं, तो मुझे यह विचार अच्छा नहीं लगता कि कार्यपालिका, राष्ट्रपति या राज्यपाल या कोई अन्य व्यक्ति उस अधिकार में छेड़छाड़ कर सके, लेकिन दस वर्ष की अवधि के बाद, जब

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

अनुसूचित जातियों को यह विशेषाधिकार उपलब्ध नहीं रहेगा, तब अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के बीच कोई अंतर नहीं रह जाएगा, जिन्हें संविधान के अनुच्छेद 301 के तहत घोषित किया जाएगा। उस समय राज्यपाल के परामर्श से राष्ट्रपति से यह शक्ति छीनने का कोई अर्थ नहीं रह जाएगा। इसलिए, मेरा विनम्र निवेदन है कि इस बात को पूरी तरह स्पष्ट और अस्पष्टता से मुक्त करने के लिए प्रस्तावित संशोधन को स्वीकार किया जाए। जब तक हम इस संविधान के लागू होने से दस वर्ष की अवधि के लिए इन शब्दों को नहीं जोड़ते, आप राष्ट्रपति की उस शक्ति को छीन लेंगे जिससे वह 300 ए और बी के तहत जारी की जाने वाली अधिसूचना के दायरे से उचित वर्गों को शामिल या बाहर कर सके। पहले दस वर्षों के बाद इन वर्गों के लिए जो विशेषाधिकार उपलब्ध होंगे, वे संभवतः अनुच्छेद 10 और अनुच्छेद 296 और 299 के तहत होंगे। मुझे ऐसे किसी अन्य विशेषाधिकार की जानकारी नहीं है जो विशेष रूप से इन अनुसूचित जातियों को दिए गए हों। जबकि मैं इस बात पर बहुत जोर देता हूं और सचेत हूं कि इन प्रावधानों के साथ छेड़छाड़ नहीं की जानी चाहिए, मैं चाहता हूं कि ये जातियां रुढ़िबद्ध न हो जाएं और सही अवसर आने पर अनुसूची से बाहर जाने की क्षमता न खो दें। इसलिए मैं निवेदन करता हूं कि यदि आप इन शब्दों को जोड़ते हैं तो आप पूरी चीज को लचीला बना देंगे और राष्ट्रपति के पास दस वर्ष बीत जाने के बाद ऐसी जनजातियों या जातियों को अधिसूचना के भीतर शामिल या बाहर करने की शक्ति होगी।

अध्यक्ष महोदय: श्री चालिहा— आपके पास दो संशोधन हैं। एक 205 है और दूसरा 225 है। मुझे नहीं पता कि अब 205 आता है या नहीं।

श्री कुलधर चालिहा (असम: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं: "कि प्रस्तावित नए अनुच्छेद 300 बी के खंड (2) में सूची V (आठवें सप्ताह) के संशोधन संख्या 201 में 'संसद' शब्दों के बाद 'और उसके निर्णय के अधीन राज्य विधानमंडल' शब्द डाले जाएं।"

मैं हमेशा से इस बात के लिए लड़ता रहा हूं कि राज्यपाल को जनजातियों के अधिकारों की रक्षा करने का अधिकार होना चाहिए। मुझे खुशी है कि कुछ हद तक यह मान लिया गया है। फिर भी मुझे इस बात में कुछ संदेह है कि राज्य विधानमंडल की उपेक्षा की गई है। प्रारूप समिति ने राज्य विधानमंडल को अपनी बात कहने का अधिकार नहीं दिया है। उस कमी को पूरा करने के लिए मैंने कहा है कि संसद अपने निर्णय के अधीन राज्य विधानमंडल को ऐसा करने का अधिकार दे सकती है।

श्री टी. टी. कृष्णामाचारी: तो फिर राज्य विधानमंडल के पास क्या बचा है?

श्री कुलधर चालिहा: किसी न किसी तरह मुझे लगता है कि आपने इसकी उपेक्षा की है। इनमें आपने काफी कुछ शामिल किया है जिस पर आपने पहले आपत्ति जताई थी। मुझे यह कहते हुए खुशी हो रही है कि राज्यपाल को अधिकार दिया गया है। एकमात्र बात यह है कि प्रांतीय विधानसभाओं को इसमें कोई अधिकार नहीं है। संसद जो भी कहती है, वे उससे बंधे होते हैं; लेकिन अगर कोई ऐसी चीज है जो संसद के आदेशों के अनुरूप वे कुछ कर सकते हैं, तो उन्हें अधिकार दिया जाना चाहिए। इसीलिए मैंने यह प्रस्ताव रखा है। लेकिन मैं इस बार आभारी हूँ

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कि प्रारूप समिति ने अच्छे विचारों को आत्मसात किया है और केवल प्रांतीय विधानसभाओं की उपेक्षा की गई है। लेकिन राज्यपाल तो हैं – यह एक सुधार है – संसद है, राष्ट्रपति हैं। इसलिए मैं प्रारूप समिति को इसके लिए धन्यवाद देता हूँ।

अध्यक्ष महोदय: श्री सिधवा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: यह पहले से ही शामिल है।

श्री ब्रजेश्वर प्रसाद (बिहार: सामान्य) कुछ संशोधन हैं जो कुछ और खंड जोड़ने की मांग कर रहे हैं।

अध्यक्ष महोदय: 'यह एक अलग मामला है। ये सभी संशोधन थे।

श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्लई: अध्यक्ष महोदय, मैं माननीय डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किए गए संशोधनों का समर्थन करता हूँ। ये संशोधन अनुसूचित जातियों की परिभाषा से संबंधित हैं। जहाँ तक मैं देख सकता हूँ उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया है कि इसके दूसरे भाग के अनुसार, 26 जनवरी 1950 को राष्ट्रपति ऐसे समुदायों की सूची प्रकाशित करेंगे जो अनुसूचित जातियों की श्रेणी में आते हैं। लेकिन मैं इस सदन को उस पृष्ठभूमि से अवगत कराना चाहता हूँ जिसके कारण अनुसूचित जातियों का विशेष नाम सामने आया। अस्पृश्यता ही, वह सामाजिक बुराई थी जो हिंदू समुदाय में सदियों से चली आ रही थी, जिसके कारण सरकार और लोगों को यह पता चला कि हिंदू वर्ग के अंतर्गत कौन से लोग आते हैं और उन्हें हिंदू समाज से बाहर रखा जाता है। 1916 में वापस जाएँ तो यह वह वर्ष था जब सरकार ने पाया कि अछूत वर्गों के लिए कुछ किया जाना चाहिए, (जब वे अछूत वर्ग कहते थे, तो उन्हें हमेशा हिंदू समझा जाता था), और उन्हें मान्यता दी जानी चाहिए। मद्रास में छह समुदाय इस वर्गीकरण के अंतर्गत आते थे। मोंटेगो चेम्सफोर्ड सुधारों के दौरान उन्हें दस कर दिया गया। 1930 में जब महात्मा गांधी का महान युगांतकारी उपवास हुआ, तब ही देश को पता चला कि असली अछूत वर्ग कौन थे और 1935 के अधिनियम में, सरकार ने पूरी बात की गहन जाँच की और जहाँ तक मद्रास प्रांत का संबंध है, उन्होंने 86 समुदायों को इस सूची या श्रेणी में शामिल किया, हालाँकि कुछ स्पृश्य वर्ग भी थे। अब, आगे की जांच के बाद प्रांतीय सरकारों ने एक सूची तैयार की है और मुझे लगता है कि संशोधन प्रस्तावक के सुझावों के अनुसार, वे सभी समुदाय जो अछूतों की श्रेणी में आते हैं और जो हिंदू धर्म को मानते हैं, वे अनुसूचित जातियाँ होंगी, क्योंकि मैं धर्म के बारे में जोर देना चाहता हूँ। मैं इस बात पर जोर इसलिए दे रहा हूँ क्योंकि हाल ही में यहां-वहां कुछ आंदोलन हुए हैं; ऐसे लोग हैं जो अनुसूचित जाति और हिंदू धर्म छोड़कर दूसरे धर्मों में शामिल हो गए हैं और वे भी अनुसूचित जाति होने का दावा कर रहे हैं। ऐसे धर्मांतरित लोग इस परिभाषा के दायरे में नहीं आ सकते। जबकि मुझे सरकार द्वारा इन धर्मांतरित लोगों को कोई रियायत दिए जाने पर कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन मेरा दृढ़ विश्वास है कि उन्हें अनुसूचित जातियों के साथ नहीं जोड़ा जाना चाहिए।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

महोदय, मैं प्रारूप समिति का तथा उस समिति के अध्यक्ष का आभारी हूँ कि उन्होंने इसका दूसरा भाग बहुत स्पष्ट कर दिया है कि भविष्य में राष्ट्रपति द्वारा अनुसूचित जातियाँ कौन होंगी, यह घोषित करने के पश्चात् जब किसी अन्य वर्ग को शामिल करने की आवश्यकता होगी या किसी व्यक्ति या समुदाय को अनुसूचित जातियों की सूची से बाहर करने की आवश्यकता होगी तो वह संसद के आदेश से ही होगा। मैं इस खंड को लाने के लिए उनका आभारी हूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि वास्तव में जब हरिजन लोग स्वतंत्र रूप से व्यवहार करते हैं या कुछ मामलों में अपने अधिकार का दावा करते हैं, तो कुछ प्रान्तों के मंत्री न केवल उन सदस्यों पर ध्यान देते हैं और उनके विरुद्ध कार्यवाही करते हैं, बल्कि वे उस समुदाय को भी शामिल कर लेते हैं जिससे वह व्यक्ति संबंधित है; और इस प्रकार न केवल उस व्यक्ति को बल्कि अनुसूचित जातियों की उस श्रेणी में आने वाले समुदाय को भी परेशान किया जाता है। मैं समझता हूँ कि इस प्रावधान से खतरा टल गया है। मैं पंडित भार्गव द्वारा प्रस्तुत संशोधन का कड़ा विरोध करता हूँ। इसका कारण यह है कि वे इन संशोधनों के पालन के लिए दस वर्ष की अवधि चाहते हैं। लेकिन वह पूरी तरह से भूल गए हैं कि एक अन्य अनुच्छेद के तहत, जिसे हम पहले ही पारित कर चुके हैं, या पारित करेंगे, संविधान इन समुदायों की विभिन्न अक्षमताओं में जाने और राष्ट्रपति को एक रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए केंद्र में एक विशेष अधिकारी और सभी प्रांतों में विभिन्न अधिकारियों की नियुक्ति का प्रावधान करता है, जो तब यह जान सकेंगे कि क्या अनुसूचित जातियाँ उस स्थिति में पहुंच गई हैं जहां उन्हें अब दी जा रही सुविधाएं वापस ली जा सकती हैं। मुझे नहीं लगता कि उन्होंने जो कारण बताए हैं, वे हरिजनों के उत्थान के लिए उचित और स्पष्ट हैं। इन कुछ शब्दों के साथ, मैं संशोधन का समर्थन करता हूँ।

अध्यक्ष महोदय: क्या कोई और बोलना चाहता है? क्या आप कुछ कहना चाहते हैं डॉ. अंबेडकर?

माननीय डॉ. बी. आर. अंबेडकर: मैं पंडित ठाकुर दास भार्गव के संशोधन को स्वीकार नहीं करता।

अध्यक्ष महोदय: तो फिर मैं संशोधन रखता हूँ। पहला संशोधन 147 के संदर्भ में है।

प्रश्न यह है: "सूची IV (आठवें सप्ताह) के संशोधन सं. 147 के संदर्भ में, अनुच्छेद 303 के खंड (1) के उपखंड (डब्ल्यू) के स्थान पर निम्नलिखित उपखंड प्रतिस्थापित किया जाए : -

'(डब्ल्यू) 'अनुसूचित जाति' का अर्थ ऐसी जातियाँ, मूलवंश या जनजातियाँ या ऐसी जातियों, मूलवंश या जनजातियों के भाग या उनमें समूह हैं जिन्हें इस संविधान के अनुच्छेद 300 ए के तहत इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियाँ माना गया है; संशोधन को स्वीकार कर लिया गया।"

36. उपर्युक्त बहस से यह देखा जा सकता है कि अंततः मूल मसौदा अनुच्छेद 300 ए को संविधान सभा द्वारा अनुमोदित किया गया था, और वर्तमान संविधान में इसे अनुच्छेद 341 के रूप में पुनः क्रमांकित किया गया था। अनुच्छेद 341 को पढ़ने से यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि राष्ट्रपति की शक्ति उन जातियों या

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

जनजातियों को निर्दिष्ट करने तक सीमित है जिन्हें संविधान के प्रयोजनों के लिए, किसी राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति माना जाएगा, जैसा भी मामला हो। एक बार अनुच्छेद 341 के खंड (1) के तहत अधिसूचना जारी होने के बाद, यह केवल संसद ही है जो कानून द्वारा, अधिसूचना में निर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में किसी भी जाति, नस्ल या जनजाति या किसी भी जाति, नस्ल या जनजाति के हिस्से या समूह को शामिल या बाहर कर सकती है, और खंड (1) के तहत जारी की गई अधिसूचना किसी भी बाद की अधिसूचना द्वारा भिन्न नहीं हो सकती है। जैसा कि ऊपर उद्धृत संविधान सभा की बहसों से पता चलता है, अनुच्छेद 341 को शामिल करने का उद्देश्य संविधान पर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की लंबी सूची का बोझ डालने की आवश्यकता को खत्म करना था। यह प्रस्ताव किया गया था कि राष्ट्रपति को राज्य के राज्यपाल या शासक के परामर्श से राजपत्र में एक सामान्य अधिसूचना जारी करने का अधिकार होना चाहिए, जिसमें उन सभी जातियों और जनजातियों या उनके समूहों को निर्दिष्ट किया जाए जिन्हें संविधान में उनके लिए परिभाषित विशेषाधिकारों के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति माना जाता है। एकमात्र सीमा यह थी कि एक बार राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचना जारी कर दिए जाने के बाद, सूची में कोई भी विलोपन या कोई भी जोड़ संसद द्वारा किया जाना चाहिए, न कि राष्ट्रपति द्वारा। डॉ. अंबेडकर के शब्दों में, "उद्देश्य राष्ट्रपति द्वारा प्रकाशित अनुसूची में गड़बड़ी के मामले में किसी भी तरह के राजनीतिक कारकों को खत्म करना है।"

37. बी. बसवलिंगप्पा बनाम डी. म्युनिचिनप्पा एवं अन्य में पांच न्यायाधीशों की पीठ ने माना था कि अनुच्छेद 341 में निहित प्रावधान का उद्देश्य इस बात के सभी विवादों से बचना था कि कोई विशेष जाति अनुसूचित जाति है या नहीं, तथा केवल वे जातियाँ ही अनुसूचित जातियाँ हो सकती हैं जिन्हें राज्यपाल के परामर्श के पश्चात अनुच्छेद 341 के अंतर्गत राष्ट्रपति द्वारा जारी आदेश में अधिसूचित किया गया है, जहाँ यह किसी राज्य में ऐसी जाति से संबंधित है। इसने आगे कहा कि खंड (2) में प्रावधान है कि संसद कानून द्वारा खंड (1) के अंतर्गत जारी अधिसूचना में निर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में किसी भी जाति, नस्ल या जनजाति या किसी भी जाति, नस्ल या जनजाति के भाग या समूह को शामिल या बाहर कर सकती है। इस प्रकार संसद को खंड (1) के अंतर्गत राष्ट्रपति द्वारा जारी अधिसूचना को संशोधित करने की शक्ति दी गई थी। खंड (1) के अंतर्गत जारी अधिसूचना में किसी भी बाद की अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जा सकता है, इस प्रकार राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचना को खंड (2) द्वारा प्रदान किए गए कानून द्वारा संशोधन को छोड़कर सभी समय के लिए अंतिम बना दिया जाता है।

38. उक्त कानून को भैया लाल बनाम हरिकिशन सिंह के मामले में पांच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा भी दोहराया गया है। इसी प्रकार का विचार **महाराष्ट्र राज्य बनाम मिलिंद एवं अन्य** के मामले में एक अन्य पांच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा भी लिया गया है, जिसमें कहा गया है कि:

"11. भारत के संविधान के अनुच्छेद 341 और 342 के तहत निहित शक्तियों के आधार पर, राष्ट्रपति को पहली बार जातियों, मूलवंशों या जनजातियों या जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के भाग या समूहों को निर्दिष्ट करने के लिए सार्वजनिक अधिसूचना जारी करने का अधिकार है, जिन्हें संविधान के प्रयोजनों के लिए किसी राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति माना जाएगा, जैसा भी मामला हो। अनुच्छेद 341 और 342 की

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

भाषा और शब्द समान हैं। अनुच्छेद 341 के संबंध में जो कहा गया है वह यथावश्यक परिवर्तनों सहित अनुच्छेद 342 पर भी लागू होता है। उक्त अनुच्छेदों का प्रशंसनीय उद्देश्य अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन को ध्यान में रखते हुए अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान करना है, जिससे वे काफी लंबे समय से पीड़ित हैं। “अनुसूचित जातियां” और “अनुसूचित जनजातियां” शब्दों में “जाति” या “जनजाति” शब्दों का प्रयोग शब्दों के सामान्य अर्थ में नहीं किया गया है, बल्कि अनुच्छेद 366(24) और 366(25) में निहित परिभाषाओं के अर्थ में उपयोग किए गए हैं। इस दृष्टि से, एक जाति अनुसूचित जाति या एक जनजाति अनुसूचित जनजाति केवल तभी होगी जब उन्हें संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 341 और 342 के तहत जारी राष्ट्रपति के आदेशों में शामिल किया गया हो। अपने में निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए, राष्ट्रपति ने संविधान (अनुसूचित जातियां) आदेश, 1950 और संविधान (अनुसूचित जनजातियां) आदेश, 1950 जारी किए हैं। इसके बाद, केंद्र शासित प्रदेशों और अन्य राज्यों के संबंध में उक्त अनुच्छेदों के तहत कुछ आदेश जारी किए गए और संसद द्वारा पारित संशोधन अधिनियमों द्वारा जारी आदेशों के संबंध में कुछ संशोधन किए गए।

12. इन अनुच्छेदों की सरल भाषा और स्पष्ट शब्दों से पता चलता है कि (1) उक्त अनुच्छेदों के खंड (1) के तहत राष्ट्रपति किसी राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में उस राज्य के राज्यपाल से परामर्श के बाद सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा उन जातियों, मूलवंशों या जनजातियों या जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के भागों या समूहों को निर्दिष्ट कर सकते हैं जिन्हें संविधान के प्रयोजनों के लिए उस राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति माना जाएगा, जैसा भी मामला हो; (2) उक्त अनुच्छेदों के खंड (2) के तहत खंड (1) के तहत जारी की गई अधिसूचना को संसद द्वारा बनाए गए कानून के अलावा किसी भी बाद की अधिसूचना द्वारा नहीं बदला जा सकता है। दूसरे शब्दों में, केवल संसद ही कानून द्वारा उक्त अनुच्छेदों के खंड (1) के तहत जारी की गई अधिसूचनाओं में निर्दिष्ट अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की सूची में किसी जाति/जनजाति को शामिल करने या बाहर करने के लिए सक्षम है। राष्ट्रपति के आदेशों में जातियों और जनजातियों को शामिल करने में, राष्ट्रपति को शैक्षणिक और सामाजिक पिछड़ेपन के आधार पर अधिसूचना को जाति या जनजाति के भीतर भागों या समूहों तक सीमित करने के लिए अधिकृत किया गया है। यह अनुमेय है कि केवल उनके भागों या समूहों को निर्दिष्ट किया जाए तथा राज्य के भागों के संबंध में उनकी जातियों या जनजातियों को निर्दिष्ट किया जाए, न कि पूरे राज्य के संबंध में, जब यह संतुष्ट हो जाए कि सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन को ध्यान में रखते हुए ऐसा करना आवश्यक है। राज्यों को राज्यपालों के माध्यम से अपने विचार प्रस्तुत करने का अवसर था, जब राष्ट्रपति द्वारा जातियों या जनजातियों, भागों या समूहों के संबंध में उनके भीतर या तो पूरे राज्य या राज्य के भागों के संबंध में परामर्श किया जाता था। ऐसा प्रतीत होता है कि अनुच्छेद 341 और 342 के खंड (1) का उद्देश्य संविधान के प्रयोजन के लिए किसी जाति/जनजाति

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

के अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति होने या न होने से संबंधित विवादों को दूर रखना था। अनुच्छेद 341 और 342 के खंड (1) के तहत जारी राष्ट्रपति के आदेशों में निहित प्रविष्टियों के अर्थ के भीतर, कोई विशेष जाति या जनजाति अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति है या नहीं, जैसा भी मामला हो, यह उनके आधार पर निर्धारित किया जाना चाहिए। उक्त अनुच्छेदों का खंड (2) किसी को भी यह साक्ष्य प्रस्तुत करके उक्त आदेशों में संशोधन की मांग करने की अनुमति नहीं देता है कि आदेश में केवल जाति/जनजाति (ए) का उल्लेख है, लेकिन जाति/जनजाति (बी) भी जाति/जनजाति (ए) का एक हिस्सा है और इस प्रकार जाति/जनजाति (बी) को अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति माना जाना चाहिए, जैसा भी मामला हो। केवल संसद ही अनुच्छेद 341 और 342 के तहत जारी आदेशों को संशोधित करने के लिए सक्षम है। जैसा कि प्रत्येक राज्य से संबंधित अनुसूचियों में प्रविष्टियों से देखा जा सकता है, जब भी किसी जाति/जनजाति का कोई अन्य नाम होता है, तो उसे अनुसूचियों में उसके बाद कोष्ठक में उल्लेख किया जाता है। इस दृष्टि से यह स्थापित करने के लिए कि कोई विशेष जाति/जनजाति संविधान के प्रयोजन के लिए अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति है, गजेटियर या शब्दावलियों को देखने का कोई उद्देश्य नहीं है, भले ही राष्ट्रपति के आदेशों में इसका विशेष रूप से उल्लेख न किया गया हो। उक्त अनुच्छेदों के खंड (1) के अंतर्गत एक बार जारी किए गए आदेशों को संसद द्वारा बनाए गए कानून को छोड़कर राष्ट्रपति द्वारा भी बाद के आदेश या अधिसूचना द्वारा नहीं बदला जा सकता है। इसलिए यह कहना संभव नहीं है कि राज्य सरकारों या किसी अन्य प्राधिकरण या अदालतों या न्यायाधिकरणों को उक्त आदेशों को संशोधित या बदलने की कोई शक्ति प्राप्त है। यदि ऐसा है, तो कोई जांच अनुमेय नहीं है और यह स्थापित करने के लिए कोई सबूत नहीं दिया जा सकता है कि जनजातियों या जनजातियों के भीतर कोई विशेष जाति या भाग या समूह राष्ट्रपति के आदेश में शामिल है, यदि उन्हें स्पष्ट रूप से आदेशों में शामिल नहीं किया गया है। चूंकि अनुच्छेद 341 और 342 के खंड (2) में दिए गए प्रावधान के अलावा राष्ट्रपति के आदेश को संशोधित करने का कोई भी कार्य या प्रयास व्यर्थ होगा, इसलिए उस संबंध में कोई जांच करना या कोई सबूत देना न तो अनुमेय है और न ही उपयोगी है।

39. बीर सिंह बनाम दिल्ली जल बोर्ड और अन्य के मामले में, पांच न्यायाधीशों की पीठ ने संविधान (अनुसूचित जाति) आदेश 1950 और संविधान (अनुसूचित जनजाति) आदेश 1950 के प्रासंगिक खंडों का उल्लेख करने के बाद, निम्नलिखित टिप्पणी की:

“36. उपर्युक्त चर्चा का परिणाम हमें इस निष्कर्ष पर ले जाएगा कि अनुसूचित जातियों के संबंध में अनुच्छेद 341 के तहत और अनुसूचित जनजातियों के संबंध में अनुच्छेद 342 के तहत जारी राष्ट्रपति के आदेशों को न्यायालय सहित किसी भी प्राधिकरण द्वारा बदला या परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। केवल संसद को ही ऐसा करने की शक्ति दी गई है, वह भी बनाए गए कानूनों द्वारा। किसी राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में इस प्रकार निर्दिष्ट अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियाँ किसी अन्य राज्य या केंद्र शासित प्रदेश में समान स्थिति नहीं

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

रखती हैं। संसद को छोड़कर किसी भी प्राधिकरण द्वारा अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों की सूची का कोई भी विस्तार/हटाना भारत के संविधान के अनुच्छेद 341 और 342 के तहत संवैधानिक अधिदेश के विरुद्ध होगा।

37... ..

38. यह व्याख्या का एक निर्विवाद सिद्धांत है कि परस्पर संबंधित वैधानिक और संवैधानिक प्रावधानों को सामंजस्यपूर्ण ढंग से पढ़ा और समझा जाना चाहिए ताकि किसी भी प्रावधान को निरर्थक और अर्थहीन बनाने से बचा जा सके। यदि अनुच्छेद 341/342 के तहत राष्ट्रपति के आदेशों में अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों की सूची केवल संसद द्वारा बनाए गए कानूनों द्वारा परिवर्तन के अधीन है, तो अनुच्छेद 16(4) द्वारा निहित सक्षम शक्ति के प्रयोग द्वारा किसी विशेष राज्य/संघ राज्य क्षेत्र के लिए राष्ट्रपति के आदेश के तहत सूचीबद्ध वर्गों या श्रेणियों से परे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की सूचियों का संचालन अनुच्छेद 341/342 में विशिष्ट संवैधानिक प्रावधानों को दरकिनार करने का स्पष्ट प्रभाव होगा। इस संबंध में, यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि अनुच्छेद 16(4) के तहत शक्ति न केवल विधायी प्रावधान/अधिनियम द्वारा प्रयोग की जा सकती है, बल्कि संविधान के अनुच्छेद 166 के तहत जारी किए गए कार्यकारी आदेश द्वारा भी प्रयोग की जा सकती है। इसलिए, यह समझना संवैधानिक योजना के अनुरूप होगा कि अनुच्छेद 16(4) के तहत सक्षम प्रावधान केवल उस राज्य/संघ शासित प्रदेश के लिए राष्ट्रपति के आदेशों में सूचीबद्ध अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के वर्गों या श्रेणियों को उस राज्य के भौगोलिक क्षेत्र के भीतर आरक्षण प्रदान करने के लिए उपलब्ध है, उससे आगे नहीं। यदि किसी राज्य की राय में उस विशेष राज्य की सूचियों में निर्दिष्ट लोगों से परे अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के किसी वर्ग/श्रेणी को आरक्षण का लाभ देना आवश्यक है, तो संवैधानिक अनुशासन के लिए राज्य को इस मामले में अपने विचारों को केंद्रीय प्राधिकारी के समक्ष रखना होगा ताकि उस विशेष राज्य के लिए अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों की सूचियों में संशोधन करके उचित संसदीय अभ्यास किया जा सके। संविधान के अनुच्छेद 16(4) की कसौटी पर राज्यों द्वारा एकतरफा कार्रवाई संवैधानिक अराजकता का संभावित ट्रिगर बिंदु हो सकती है और इसलिए इसे संविधान के तहत अस्वीकार्य माना जाना चाहिए।

40. उपर्युक्त कानूनी स्थिति से, इसमें कोई संदेह नहीं है कि अनुच्छेद 341 के तहत अधिसूचित राष्ट्रपति सूची अधिसूचना के प्रकाशन पर अंतिम हो जाती है, और अधिसूचना में निर्दिष्ट जातियां, नस्लें या जनजातियां या जातियों, नस्लों या जनजातियों के हिस्से या समूह संविधान के प्रयोजनों के लिए, उस राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में "अनुसूचित जातियां" मानी जाती हैं, जैसा भी मामला हो। केवल संसद ही कानून द्वारा खंड (1) के तहत अधिसूचित अधिसूचना में निर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में किसी भी जाति, नस्ल या जनजाति या किसी भी जाति, नस्ल या जनजाति के हिस्से या समूह को शामिल या बाहर कर सकती है। खंड (1) के तहत अधिसूचित ऐसी अधिसूचना में राष्ट्रपति द्वारा कोई भी बाद की अधिसूचना जारी करके भी बदलाव नहीं किया जा सकता है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(c) “अनुसूचित जातियों” की व्युत्पत्ति और विशेष दर्जा

41. चूंकि हमारे सामने यह तर्क प्रस्तुत किया जा चुका है कि अनुच्छेद 341 के खंड (1) के अंतर्गत राष्ट्रपति सूची में निर्दिष्ट अनुसूचित जातियों को समरूप समूह माना जाना चाहिए या विषम समूह, तो आइए हम “अनुसूचित जातियों” और “अनुसूचित जनजातियों” के नामकरण की व्युत्पत्ति पर नज़र डालें। संक्षेप में कहा जाए तो, ब्रिटिश काल के दौरान भारत में विशेष रूप से हिंदुओं में अस्पृश्यता या जाति-आधारित भेदभाव की प्रथा व्याप्त थी। श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्लई ने अपने भाषण में (जिसका उल्लेख पहले किया गया है) संविधान सभा के सदस्यों को उस पृष्ठभूमि के बारे में बताया था, जिसके कारण अनुसूचित जाति का विशेष नाम सामने आया था, और कहा था कि यह अस्पृश्यता थी, जो हिंदू समुदाय द्वारा सदियों से प्रचलित एक सामाजिक बुराई थी, जिसके कारण सरकार और लोगों के लिए यह जानना आवश्यक हो गया था कि हिंदू की श्रेणी में कौन से लोग आते हैं और उन्हें हिंदू समाज से बाहर रखा गया है। ऐसे वर्ग के लोगों के साथ उनकी जाति और उनके व्यवसाय के आधार पर भेदभाव किया जाता था, जैसे स्वीपर, मेहतर, चमार, मोची आदि। उन्हें “दलित वर्ग” के रूप में जाना जाता था। हालाँकि “दलित वर्ग” शब्द “पिछड़े वर्ग” का पर्याय नहीं था। हमारे सामने प्रस्तुत अध्ययन सामग्री से ऐसा प्रतीत होता है कि जनगणना आयुक्त जे.एच. हटन, जिन्होंने 1931 में जनगणना की थी, ने स्पष्ट किया था कि ‘दलित जातियां’ वे जातियां थीं, जिनके संपर्क में आने से ‘उच्च जाति के हिंदुओं का शुद्धिकरण होता था।’ ये वे समुदाय थे जो सामाजिक अक्षमताओं से पीड़ित थे जैसे कि मंदिरों में प्रवेश से वंचित होना, अलग कुओं का उपयोग करना और स्कूल के घर के अंदर बैठने की अनुमति नहीं देना आदि। ‘दलित वर्ग’ शब्द का इस्तेमाल केवल निम्न जाति के हिंदुओं के लिए किया जा रहा था जो अस्पृश्यता के कलंक से पीड़ित थे। “दलित वर्ग” में “वर्ग” शब्द वास्तव में “जाति” के लिए संदर्भित था। अंततः भारत सरकार अधिनियम 1935 में “दलित वर्गों” को “अनुसूचित जाति” के रूप में संदर्भित किया गया। 1935 के अधिनियम ने यह स्पष्ट कर दिया कि “अनुसूचित जातियाँ” कोई और नहीं बल्कि वे ही हैं जिन्हें पहले “दलित वर्ग” के रूप में जाना जाता था। उक्त अधिनियम 1935 में संलग्न अनुसूची I के खंड 26 में निम्नलिखित उल्लेख किया गया है:

“26(1) ‘अनुसूचित जाति’ से ऐसी जातियां, वर्ग या जनजातियां अथवा जातियों, मूलवंश या जनजातियों के भाग या समूह अभिप्रेत हैं, जो जातियां, मूलवंश, जनजातियां या भाग या समूह हैं, जो महामहिम द्वारा परिषद में निर्दिष्ट व्यक्तियों के वर्गों के अनुरूप प्रतीत होते हैं, जिन्हें पूर्व में ‘दलित वर्ग’ के रूप में जाना जाता था।”

42. उक्त अनुसूची में अनुसूचित जातियों के रूप में शामिल करने के लिए विभिन्न जातियों की पहचान प्रत्येक प्रांत के लिए किए गए विस्तृत अभ्यास पर आधारित थी, जैसा कि 1935 के अधिनियम की नौ भागों वाली अनुसूची से देखा जा सकता है। इसके बाद, दिनांक 06.06.1936 को एक राजपत्रित अधिसूचना प्रकाशित की गई जिसमें भारत सरकार (अनुसूचित जातियां) आदेश 1936 को प्रख्यापित किया गया, जिसमें उन जातियों की सूची अधिसूचित की गई जिन्हें भारत के क्षेत्र में “अनुसूचित जातियां” के रूप में माना जाना था। जैसा कि मूल रूप से संविधान के अनुच्छेद 341 और 342 के तहत अधिनियमित किया गया था, संविधान (अनुसूचित जाति) आदेश 1950 और संविधान (अनुसूचित जनजाति) आदेश 1950 द्वारा संविधान के बाद की कवायद मूल रूप

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

से 1935 के अधिनियम की अनुसूची को फिर से तैयार करने की कवायद थी। उक्त दो राष्ट्रपति आदेशों के प्रासंगिक खंड निम्नलिखित शब्दों में थे:

“संविधान (अनुसूचित जातियाँ) आदेश, 1950 का खंड 2

2. इस आदेश के उपबंधों के अधीन रहते हुए, इस आदेश की अनुसूची के भाग 1 से 25 में विनिर्दिष्ट जातियाँ, मूलवंश या जनजातियाँ अथवा उनके भाग या उनमें के समूह, उन राज्यों के संबंध में जिनसे वे भाग क्रमशः संबंधित हैं, अनुसूचित जातियाँ समझी जाएंगी जहां तक उनके सदस्य उस अनुसूची के उन भागों में उनके संबंध में विनिर्दिष्ट स्थानों में निवासी हैं।

संविधान (अनुसूचित जनजातियाँ) आदेश, 1950 का खंड 2

इस आदेश की अनुसूची के भाग 1 से 22 में विनिर्दिष्ट जनजातियाँ या जनजातीय समुदाय अथवा जनजातियों या जनजातीय समुदायों के भाग या उनमें मौजूद समूह, उन राज्यों के संबंध में जिनसे वे भाग क्रमशः संबंधित हैं, अनुसूचित जनजातियाँ समझी जाएंगी, जहाँ तक उनके सदस्यों का संबंध उस अनुसूची के उन भागों में क्रमशः उनके संबंध में विनिर्दिष्ट स्थलों में रहने से है।

43. उपर्युक्त दोनों आदेशों में समय-समय पर किए गए संशोधन, नए राज्यों के सृजन तथा विद्यमान राज्यों के क्षेत्र और सीमाओं में परिवर्तन करके, विभिन्न समयों पर संविधान की प्रथम अनुसूची में किए गए संशोधनों के अनुरूप स्थिति लाने के लिए किए गए थे।

44. जैसा कि पहले चर्चा की गई है, अनुच्छेद 341(1) या अनुच्छेद 342(1) के तहत जारी राष्ट्रपति के आदेशों में “अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति” के रूप में मान्यता प्राप्त जातियों/नस्लों, जनजातियों की सूची को किसी भी राज्य या न्यायालय सहित किसी भी प्राधिकरण द्वारा बदला या परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। केवल संसद को ही ऐसा करने की शक्ति दी गई है, वह भी कानून द्वारा, साथ ही ऊपर चर्चा किए गए निर्णयों की श्रृंखला द्वारा तय की गई है।

45. अनुच्छेद 341 में प्रयुक्त शब्द ही कि “जाति, मूलवंश या जनजाति अथवा जातियों, मूलवंश या जनजातियों के भाग या समूह संविधान के प्रयोजनों के लिए, उस राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में अनुसूचित जातियाँ समझी जाएंगी, जैसा भी मामला हो”, यह अधिदेश देता है कि प्रत्येक जाति, प्रत्येक मूलवंश, प्रत्येक जनजाति अथवा जातियों, मूलवंश या जनजातियों के भीतर का प्रत्येक भाग या समूह संविधान के प्रयोजनों के लिए, मानी गई कल्पना के अनुसार “अनुसूचित जातियाँ” होंगे, भले ही वे मानक कुछ भी हों जिनके द्वारा ऐसी जाति/मूलवंश या जनजाति को उस राज्य के संबंध में “अनुसूचित जाति” के रूप में मान्यता दी गई हो। यद्यपि “अनुसूचित जाति” के सदस्य विभिन्न जातियों, नस्लों और जनजातियों से आते हैं, फिर भी उन्हें अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति की अधिसूचना के आधार पर विशेष दर्जा प्राप्त है। इस प्रकार, संविधान के अनुच्छेद 341 के तहत प्रकाशित राष्ट्रपति के आदेशों के साथ मिलकर “अनुसूचित जाति” नाम की व्युत्पत्ति और विकासवादी इतिहास और पृष्ठभूमि “अनुसूचित जाति” को एक समरूप वर्ग बनाती है। आवश्यक परिणाम यह होगा कि राष्ट्रपति सूची में सूचीबद्ध सभी जातियों, नस्लों और जनजातियों के सभी सदस्यों को संविधान के प्रयोजनों के लिए

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

"अनुसूचित जाति" माना जाएगा और वे सभी "अनुसूचित जातियों" के लिए दिए गए या आरक्षित सभी लाभों के हकदार होंगे।

46. केरल राज्य और अन्य बनाम एन.एम. थॉमस और अन्य 20 मामले में सात न्यायाधीशों की पीठ द्वारा इस संबंध में बहुत ही प्रासंगिक टिप्पणियां की गई हैं, जिन्हें फिर से दोहराया जाना चाहिए। उक्त मामले में शामिल मुद्दे अन्य बातों के साथ-साथ यह थे कि क्या अनुच्छेद 16(1) उचित वर्गीकरण के आधार पर अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और कमजोर वर्गों को वरीयता देता है, या क्या अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) और 16(2) का अपवाद है। पांच न्यायाधीशों के बहुमत ने अपनी अलग-अलग लेकिन सहमति वाली राय में निम्नलिखित राय व्यक्त की: -

न्यायमूर्ति ए.एन. रे के अनुसार

"40. संविधान में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का अनेक प्रावधानों में वर्गीकरण किया गया है तथा राज्य को उन्हें विशेष या अनुकूल व्यवहार प्रदान करने का अधिदेश दिया गया है। अनुच्छेद 46 में राज्य नीति का एक निर्देशक सिद्धांत शामिल है - जो देश के शासन में मौलिक है, जो राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को विशेष ध्यान से बढ़ावा देने तथा उन्हें किसी भी सामाजिक अन्याय और शोषण से बचाने का निर्देश देता है। अनुच्छेद 335 में यह प्रावधान है कि संघ और राज्यों में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के सेवाओं और पदों के दावों पर विचार किया जाएगा। अनुच्छेद 338 में राष्ट्रपति द्वारा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए संविधान के तहत उनके लिए प्रदान किए गए सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों की जांच करने के लिए एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति का प्रावधान है। अनुच्छेद 341 राष्ट्रपति को सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा उन जातियों, नस्लों या जनजातियों को निर्दिष्ट करने में सक्षम बनाता है जिन्हें राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में अनुसूचित जातियां माना जाएगा। अनुच्छेद 342 में अनुसूचित जनजातियों के संबंध में इसी प्रकार की अधिसूचना का प्रावधान है। अनुच्छेद 366(24) और (25) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को परिभाषित करता है। आक्षेपित नियम और आदेशों द्वारा वर्गीकरण राज्य की सेवाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के उद्देश्य से किया गया है, अन्यथा वे राज्य सेवाओं के सबसे निचले पायदान पर ही बने रहेंगे।

41. से 42... ..

43. अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ जाति के सामान्य अर्थ में जाति नहीं हैं। भैयालाल बनाम हरिकिशन सिंह [एआईआर 1965 एससी 1557: (1965) 2 एससीआर 877] में इस न्यायालय ने अवधारित किया कि यह जाँच कि क्या अपीलकर्ता दोहर जाति से संबंधित है जिसे अनुसूचित जाति के रूप में मान्यता नहीं दी गई है और उसका यह घोषणा कि वह चमार जाति से संबंधित है जो अनुसूचित जाति थी, अनुच्छेद 341 में निहित प्रावधानों के कारण नहीं मानी जा सकती। कोई भी न्यायालय इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता कि कोई जाति या जनजाति अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति है। अनुसूचित जाति अनुच्छेद

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

366(25) के तहत अधिसूचित जाति है। विस्तृत जांच के परिणामस्वरूप अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचना जारी की जाती है। अनुच्छेद 341 का उद्देश्य अनुसूचित जातियों के सदस्यों को उनके आर्थिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन को ध्यान में रखते हुए संरक्षण प्रदान करना है।

न्यायमूर्ति मेथ्यू के अनुसार

82. अनुच्छेद 16(2) में “जाति” शब्द में “अनुसूचित जाति” शामिल नहीं है। अनुच्छेद 366(24) में “अनुसूचित जाति” की परिभाषा का अर्थ है “ऐसी जातियाँ, मूलवंश या जनजातियाँ या ऐसी जातियों, मूलवंश या जनजातियों के भाग या समूह जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 341 के तहत अनुसूचित जातियाँ माना जाता है।”

इससे पता चलता है कि राष्ट्रपति की अधिसूचना के आधार पर ही अनुसूचित जातियाँ अस्तित्व में आई हैं। हालाँकि अनुसूचित जातियों के सदस्य जातियों, मूलवंशों या जनजातियों से लिए गए हैं, लेकिन राष्ट्रपति की अधिसूचना के आधार पर उन्हें एक नया दर्जा प्राप्त होता है। इसके अलावा, हालाँकि जनजाति के सदस्यों को अनुसूचित जातियों में शामिल किया जा सकता है, लेकिन जनजाति का उल्लेख अनुच्छेद 16(2) में नहीं किया गया है।”

न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर

“135. हम अनुच्छेद 16(2) की रुकावट को दूर कर सकते हैं क्योंकि यह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की शब्दावली में जाति के बारे में भ्रम से उपजा है। इस बाद की अभिव्यक्ति को अनुच्छेद 341 और 342 में परिभाषित किया गया है। इसे पढ़ने से ही यह सर्वोत्कृष्ट अवधारणा सामने आती है कि वे (इस प्रकार) हिंदू धर्म में कोई जाति नहीं हैं, बल्कि जातियों, नस्लों, समूहों, जनजातियों, समुदायों या उनके भागों का एक मिश्रण हैं, जो जांच में सबसे निचले स्तर पर पाए गए हैं और जिन्हें बड़े पैमाने पर राज्य सहायता की आवश्यकता है और जिन्हें राष्ट्रपति द्वारा इस तरह अधिसूचित किया गया है। इस पिछड़ी सामाजिक संरचना को जातियों के साथ भ्रमित करना एक संवैधानिक त्रुटि है, जो एक संक्षिप्त नाम से गुमराह करने वाली है। इसलिए, हरिजनों की रक्षा करना किसी जाति के प्रति पूर्वाग्रह नहीं है, बल्कि नागरिक एकजुटता को बढ़ावा देना है। अनुच्छेद 16(2) रास्ते से हटकर है और जनजातियों, नस्लों, समूहों, समुदायों और गैर-जातियों के इस मिश्रित समूह को चार गुना हिंदू विभाजन के बाहर सुरक्षात्मक भेदभाव का विस्तार करना उप-अनुच्छेद में निहित जातिविहीनता की गति के साथ समझौता नहीं करना है। भारतीय कॉर्पस ज्यूरिस की विवेकपूर्ण भावना ने आम तौर पर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को जाति के रूप में नहीं बल्कि सामाजिक करुणा के योग्य एक बड़े पिछड़े समूह के रूप में माना है।”

47. एन.एम. थॉमस में की गई उपरोक्त टिप्पणियों से इस बात में कोई संदेह नहीं रह जाता कि “अनुसूचित जातियाँ” जाति के सामान्य अर्थ में कोई जाति नहीं हैं। अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति की अधिसूचना के आधार

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

पर ही "अनुसूचित जातियाँ" अस्तित्व में आती हैं। हालांकि, अनुसूचित जातियों के सदस्य अलग-अलग जातियों, नस्लों या जनजातियों से आते हैं, लेकिन राष्ट्रपति की अधिसूचना के आधार पर उन्हें एक नया विशेष दर्जा प्राप्त होता है। अनुच्छेद 341 को पढ़ने से ही यह सर्वोत्कृष्ट अवधारणा सामने आती है कि "अनुसूचित जातियाँ" जातियों, नस्लों, समूहों, जनजातियों, समुदायों या उनके भागों का एक मिश्रण है, और एक समरूप समूह है, और राष्ट्रपति की सूची द्वारा अधिसूचित होने के बाद, उन्हें "अनुसूचित जातियों" का विशेष दर्जा प्राप्त होता है, जिसे संसद द्वारा कानून के अलावा बदला नहीं जा सकता।

(d) अनुच्छेद 15 और 16 के अंतर्गत आरक्षण प्रदान करने के लिए राष्ट्रपति सूची में "अनुसूचित जातियों" के रूप में निर्दिष्ट जातियों को उप-वर्गीकृत या उप-विभाजित या पुनर्समूहित करने की राज्य की क्षमता: -

48. यह ध्यान देने योग्य है कि संविधान में कहीं भी "पिछड़ा वर्ग" शब्दावली को परिभाषित या वर्णित नहीं किया गया है, तथापि उक्त शब्दावली को संविधान के विभिन्न प्रावधानों में स्थान मिला है। संविधान का भाग XVI कुछ वर्गों, अर्थात् अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, एंग्लो-इंडियन समुदाय, पिछड़े वर्ग, सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग आदि से संबंधित विशेष प्रावधानों से संबंधित है। अनुच्छेद 330 और 332 लोक सभा और राज्यों की विधान सभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों के आरक्षण का प्रावधान करते हैं। अनुच्छेद 335 में कहा गया है कि संघ और राज्य के मामलों से संबंधित सेवाओं और पदों पर नियुक्तियाँ करते समय, प्रशासन की दक्षता बनाए रखने के साथ-साथ अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावों पर भी विचार किया जाएगा। अनुच्छेद 338, 338(ए) और 338(बी) क्रमशः अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और पिछड़े वर्गों के लिए राष्ट्रीय आयोगों के गठन का प्रावधान करते हैं। अनुच्छेद 366(24) में निहित "अनुसूचित जातियों" की परिभाषा के अनुसार, "अनुसूचित जातियों" का अर्थ ऐसी जातियाँ, मूलवंश या जनजातियाँ या ऐसी जातियों, नस्लों या जनजातियों के भाग या समूह हैं जिन्हें संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 341 के तहत अनुसूचित जातियाँ माना जाता है। इसी तरह की परिभाषाएँ "अनुसूचित जनजातियों" के लिए अनुच्छेद 366(25) और "सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों" के लिए अनुच्छेद 366(26 सी) में निहित हैं।

49. अनुच्छेद 15(4) राज्य को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े नागरिकों के किसी वर्ग या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान करने की शक्ति प्रदान करता है। अनुच्छेद 15 में नया जोड़ा गया खंड (5) (20.01.2006 से प्रभावी) राज्य को कानून द्वारा सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े नागरिकों के किसी वर्ग या अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों के उत्थान के लिए विशेष प्रावधान करने में सक्षम बनाता है, जहां तक ऐसे प्रावधान शैक्षणिक संस्थानों में उनके प्रवेश से संबंधित हैं। अनुच्छेद 16(4) राज्य को नागरिकों के किसी पिछड़े वर्ग के पक्ष में नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए प्रावधान करने में सक्षम बनाता है, जिसका राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है। तत्पश्चात् अनुच्छेद 16 में जोड़ा गया खंड (4 ए) (दिनांक 17.6.1995 से प्रभावी) राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में राज्य के अधीन सेवाओं में पदों पर पदोन्नति के मामलों में आरक्षण का प्रावधान करने में सक्षम बनाता है, जिनका राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है। संविधान (एक सौ तीनवां संशोधन) अधिनियम, 2019 द्वारा सम्मिलित अनुच्छेद 16(6) राज्य को खंड 4 में उल्लिखित वर्गों अर्थात् नागरिकों के पिछड़े वर्ग के अलावा नागरिकों के किसी भी आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

के पक्ष में आरक्षण का प्रावधान करने में सक्षम बनाता है। अनुच्छेद 46 में कहा गया है कि राज्य जनता के कमजोर वर्गों, विशेषकर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को विशेष ध्यान से बढ़ावा देगा तथा उन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाएगा।

50. इस प्रकार, “अनुसूचित जाति” और “अनुसूचित जनजाति” शब्दों का प्रयोग अनुच्छेद 15(4) में “नागरिकों के सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों” के साथ किया गया है, अनुच्छेद 16(4 ए) में विशेष रूप से प्रयोग किया गया है और अनुच्छेद 46 में “लोगों के कमजोर वर्गों” के साथ प्रयोग किया गया है। हालाँकि, “पिछड़ा वर्ग” शब्द का प्रयोग केवल अनुच्छेद 16(4) में किया गया है। इसके अलावा, अनुच्छेद 340 राष्ट्रपति को भारत के क्षेत्र में सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की स्थितियों की जाँच करने के लिए एक आयोग नियुक्त करने और ऐसे वर्ग के सदस्यों की कठिनाइयों को दूर करने के लिए संघ या किसी राज्य द्वारा उठाए जाने वाले कदमों के बारे में सिफारिशें करने का अधिकार देता है। जैसा कि पहले विस्तार से चर्चा की गई है, अनुच्छेद 341 राष्ट्रपति को राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के संबंध में अनुसूचित जातियों को निर्दिष्ट करने के लिए अधिसूचना जारी करने का अधिकार देता है। इसी तरह का प्रावधान अनुच्छेद 342 में अनुसूचित जनजातियों के लिए पाया जाता है। संविधान (एक सौ दूसरा संशोधन अधिनियम, 2018) द्वारा 14 अगस्त, 2018 से सम्मिलित अनुच्छेद 342 ए राष्ट्रपति को केन्द्रीय सूची में सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों को निर्दिष्ट करने का अधिकार देता है, जिन्हें उस राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा वर्ग माना जाता है। संविधान (एक सौ पांचवां) संशोधन अधिनियम, 2021 के आधार पर, अनुच्छेद 342(ए) में खंड (2) का स्पष्टीकरण और नया खंड (3) जोड़ा गया है। अनुच्छेद 341, 342 और 342 ए के बीच अंतर यह है कि, जबकि अनुच्छेद 341 और 342 के तहत जारी अधिसूचनाओं में संसद द्वारा कानून के अलावा कोई बदलाव नहीं किया जा सकता है, अनुच्छेद 342 ए का नया जोड़ा गया खंड (3) कानून द्वारा राज्य या केंद्र शासित प्रदेश को अपने उद्देश्यों के लिए सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की प्रविष्टियों की एक सूची तैयार करने और बनाए रखने की अनुमति देता है, जो केंद्रीय सूची से अलग हो सकती है।

51. अनुच्छेद 341 के खंड (2) में निहित अधिदेश स्पष्ट रूप से खंड (1) के तहत जारी अधिसूचना में संसद द्वारा कानून के अलावा किसी भी परिवर्तन को प्रतिबंधित करता है। संविधान में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो राज्यों को अनुच्छेद 15 या 16 के तहत आरक्षण के प्रयोजन के लिए अनुच्छेद 341 के खंड (1) के तहत जारी की गई अधिसूचना में कोई परिवर्तन करने का अधिकार देता हो। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि अनुच्छेद 162 के अनुसार, किसी राज्य की कार्यकारी शक्ति उन मामलों तक विस्तारित होगी जिनके संबंध में राज्य के विधानमंडल को कानून बनाने की शक्ति है। उक्त अनुच्छेद के प्रावधान में कहा गया है कि किसी ऐसे मामले में, जिसके संबंध में राज्य के विधानमंडल और संसद को कानून बनाने की शक्ति है, राज्य की कार्यपालिका शक्ति संविधान द्वारा या संसद द्वारा बनाए गए किसी कानून द्वारा संघ या उसके प्राधिकारियों को स्पष्ट रूप से प्रदत्त कार्यपालिका शक्ति के अधीन होगी और उससे सीमित होगी। राज्य की विधायी शक्ति का स्रोत अनुच्छेद 246 में पाया जाता है, जिसके आधार पर किसी भी राज्य के विधानमंडल को संसद के साथ सातवीं अनुसूची की सूची III में सूचीबद्ध किसी भी विषय के संबंध में कानून बनाने की शक्ति है, और उक्त अनुसूची की सूची II में सूचीबद्ध किसी भी विषय के संबंध में कानून बनाने की अनन्य शक्ति है।

52. जैसा कि **भारत कोयला लिमिटेड बनाम बिहार राज्य और अन्य** में अवधारित किया गया है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

"19. अनुच्छेद 162 राज्य की कार्यकारी शक्ति की सीमा निर्धारित करता है, यह निर्धारित करता है कि राज्य की कार्यकारी शक्ति उन मामलों तक विस्तारित होगी जिनके संबंध में राज्य की विधायिका को कानून बनाने की शक्ति है। इस प्रकार, राज्य सरकार की कार्यकारी शक्ति राज्य विधायिका की विधायी शक्ति के साथ सह-व्यापक है। यदि राज्य विधायिका के पास राज्य सूची या समवर्ती सूची में सूचीबद्ध किसी मामले पर कानून बनाने की शक्ति है, तो राज्य के पास संविधान के अन्य प्रावधानों के अधीन उन मामलों से निपटने की कार्यकारी शक्ति है।..... इसके अलावा, अनुच्छेद 162 के प्रावधान में ही राज्य की कार्यकारी शक्ति के प्रयोग पर सीमाएं हैं। यह निर्धारित करता है कि किसी भी मामले में जिसके संबंध में राज्य की विधायिका और संसद को कानून बनाने की शक्ति है, राज्य की कार्यकारी शक्ति संविधान द्वारा या संसद द्वारा संघ या उसके प्राधिकार पर बनाए गए किसी कानून द्वारा स्पष्ट रूप से प्रदत्त कार्यकारी शक्ति की सीमा के अधीन होगी। अनुच्छेद 162 के प्रावधान में निहित सीमाएं सातवीं अनुसूची की सूची III में सूचीबद्ध मामलों के संबंध में राज्य और संघ सरकार की कार्यकारी शक्ति के प्रयोग में टकराव से बचने के लिए आवश्यक थीं।....."

53. यद्यपि राज्य सरकार की कार्यकारी शक्ति राज्य विधानमंडल की विधायी शक्ति के साथ सह-विस्तृत है, फिर भी सातवीं अनुसूची की सूची II या सूची III में से कोई भी प्रविष्टि राज्य को अनुच्छेद 341(1) के तहत तैयार की गई राष्ट्रपति सूची में प्रगणित जातियों को उप-वर्गीकृत या उप-विभाजित करके आरक्षण को युक्तिसंगत बनाने के लिए कोई विधायी शक्ति प्रदान नहीं करती है, जैसा कि आंध्र प्रदेश राज्य द्वारा आंध्र प्रदेश अनुसूचित जाति (आरक्षण का युक्तिकरण), अधिनियम 2000 पारित करके करने की मांग की गई थी, और न ही यह संविधान के अनुच्छेद 341(1) के तहत तैयार की गई राष्ट्रपति सूची में प्रगणित "अनुसूचित जातियों" में से किसी विशेष जाति या जातियों के लिए कोटा प्रदान करने या आरक्षित करने की कोई शक्ति प्रदान करती है, जैसा कि पंजाब और हरियाणा राज्य द्वारा पंजाब अनुसूचित जाति और पिछड़ा वर्ग (सेवाओं में आरक्षण) अधिनियम, 2006 पारित करके करने की मांग की गई थी। किसी भी कार्यकारी या विधायी शक्तियों के अभाव में, राज्य जातियों को विभाजित/ अनुसूचित जातियों में से जातियों, नस्लों या जनजातियों को उप-विभाजित/उप-वर्गीकृत/पुनर्गठित नहीं कर सकते थे और न ही वे संपूर्ण अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित कोटे में से किसी विशेष जाति, नस्ल, जनजाति के लिए कोटा आरक्षित करके कोई अधिमान्य व्यवहार दे सकते थे।

54. यद्यपि आरक्षण के प्रयोजनार्थ राज्य द्वारा अनुसूचित जातियों में से जातियों का उप-वर्गीकरण या उप-विभाजन, अनुसूचित जातियों की राष्ट्रपति सूची में किसी जाति को सम्मिलित या बहिष्कृत करने के समान नहीं होगा, तथापि यह निश्चित रूप से खंड (1) के अंतर्गत अधिसूचित अधिसूचना में छेड़छाड़ या परिवर्तन करने के समान होगा, जो खंड (2) के अंतर्गत स्पष्ट रूप से निषिद्ध है। जब राष्ट्रपति सूची में सूचीबद्ध सभी जातियां, नस्लें या जनजातियां संविधान के उद्देश्यों के लिए "अनुसूचित जातियां" मानी जाती हैं, तो राज्य द्वारा सरकारी नौकरियों के लिए अनुसूचित जातियों के पूरे वर्ग के लिए आरक्षित कोटे में से किसी विशेष जाति, नस्ल या जनजाति को दी गई कोई वरीयता या उसके लिए आरक्षित कोई कोटा निश्चित रूप से "अनुसूचित जातियों" के अन्य सदस्यों को आरक्षण के लाभ से वंचित करेगा, जिस सीमा तक कोटा ऐसी विशेष जाति या जातियों के लिए

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

आरक्षित है। राज्य की ओर से की गई ऐसी कोई भी कार्रवाई न केवल विपरीत भेदभाव और अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगी, बल्कि संविधान के अनुच्छेद 341 के साथ छेड़छाड़ भी होगी।

55. स्थापित कानूनी स्थिति के अनुसार, संविधान में प्रयुक्त प्रत्येक शब्द या अभिव्यक्ति का एक उद्देश्य होता है, तथा संविधान के सभी प्रावधानों को सामंजस्य के साथ पढ़ा जाना चाहिए, ताकि ऐसे शब्द या अभिव्यक्ति का अर्थ संवैधानिक मूल्यों और योजना द्वारा मान्य हो सके। राष्ट्रपति सूची में सूचीबद्ध किसी भी जाति, नस्ल या जनजाति से संबंधित कोई व्यक्ति किसी विशेष राज्य के संबंध में "अनुसूचित जाति" के सदस्य के रूप में विशेष दर्जा प्राप्त करता है, तो वह संविधान के तहत निहित मौलिक अधिकारों सहित सभी अधिकारों का हकदार होगा, और इसलिए उस विशेष राज्य में ऐसी राष्ट्रपति सूची में सूचीबद्ध "अनुसूचित जातियों" के अन्य सदस्यों के बीच समान रूप से व्यवहार किए जाने का भी हकदार होगा। यदि कोई राज्य शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश के लिए या अनुच्छेद 15 और 16 के तहत अनुमत सार्वजनिक सेवाओं में पदों पर नियुक्तियों के लिए संपूर्ण "अनुसूचित जातियों" के लिए कोटा तय करके आरक्षण का विशेष प्रावधान करता है, तो आरक्षण का ऐसा कोटा राष्ट्रपति सूची में निर्दिष्ट "अनुसूचित जातियों" के सभी सदस्यों को उपलब्ध कराया जाना चाहिए, क्योंकि ऐसी सूची में निर्दिष्ट जातियों, नस्लों और जनजातियों के सभी सदस्य संविधान के प्रयोजनों के लिए "अनुसूचित जातियां" माने जाते हैं, और राज्य के पास "अनुसूचित जातियों" की उक्त सूची में से किसी विशेष जाति को अधिमान्य उपचार देने के लिए "अनुसूचित जातियों" को आगे उप-वर्गीकृत या उप-विभाजित करने की कोई शक्ति नहीं है। जैसा कि पहले कहा गया है, अनुच्छेद 341 का मुख्य उद्देश्य संविधान के उद्देश्यों के लिए "अनुसूचित जातियों" को नया विशेष दर्जा देना और राज्यों के राजनीतिक हस्तक्षेप को उक्त प्रावधानों के दायरे से बाहर रखना है। इसलिए, सबसे कमजोर जातियों को आरक्षण प्रदान करने की आड़ में, राज्य को अधिसूचना में कोई बदलाव करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और न ही उसे अनुच्छेद 341(1) के तहत प्रकाशित ऐसी अधिसूचना के साथ अप्रत्यक्ष रूप से छेड़छाड़ करने की अनुमति दी जा सकती है।

56. अनुच्छेद 15(4) एक सक्षमकारी प्रावधान है जो राज्य को नागरिकों के किसी भी सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान करने में सक्षम बनाता है, और इसका खंड (5) राज्य को शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश के संबंध में उनके लिए विशेष प्रावधान करने में सक्षम बनाता है। इसी तरह, अनुच्छेद 16(4) राज्य को नागरिकों के किसी भी पिछड़े वर्ग के पक्ष में नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए कोई भी प्रावधान करने में सक्षम बनाता है, जो राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व नहीं करता है। अनुच्छेद 15 और 16 के तहत ये प्रावधान केवल सक्षमकारी प्रावधान हैं, और इन्हें "अनुसूचित जातियों" के रूप में सूचीबद्ध जातियों, नस्लों या जनजातियों को उप-विभाजित या पुनर्वर्गीकृत/उप-वर्गीकृत या पुनर्समूहीकृत करने के लिए कानून बनाने की शक्ति के स्रोत के रूप में नहीं माना जा सकता है, जिन्होंने संविधान के अनुच्छेद 341 के आधार पर विशेष दर्जा प्राप्त किया है।

57. आरक्षण प्रदान करने की आड़ में या समाज के सबसे कमजोर वर्गों के लिए सकारात्मक कार्रवाई करने के बहाने, राज्य राष्ट्रपति सूची में बदलाव नहीं कर सकता और अनुच्छेद 341 के साथ छेड़छाड़ नहीं कर सकता। यदि राज्य द्वारा किसी कार्यकारी या विधायी शक्ति की अनुपस्थिति में ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाता है, तो यह शक्तियों का रंग-रूपी प्रयोग होगा। यह दोहराने की जरूरत नहीं है कि 'रंग-रूपी विधान के सिद्धांत' द्वारा

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

व्यक्त किया गया विचार यह है कि यद्यपि विधानमंडल किसी कानून को पारित करते समय अपनी शक्तियों की सीमाओं के भीतर कार्य करने का दावा करता है, फिर भी सार रूप में और वास्तव में, यह अपनी शक्तियों का उल्लंघन करता है, यह उल्लंघन उचित जांच करने पर केवल दिखावा या भेस प्रतीत होता है। जैसा कि अच्छी तरह से स्थापित है, "रंग-रूपी प्रयोग" का पूरा सिद्धांत इस कहावत पर आधारित है – "आप वह काम अप्रत्यक्ष रूप से नहीं कर सकते जो आप सीधे नहीं कर सकते।" सकारात्मक कार्रवाई के नाम पर राज्य की कोई भी कार्रवाई, यदि संविधान द्वारा अनुमति प्राप्त नहीं है, तो संविधान के विशिष्ट प्रावधानों के साथ छेड़छाड़ करके या उनमें फेरबदल करके न्यायालयों द्वारा उसे वैध या उचित नहीं ठहराया जा सकता।

(III) क्या इंद्रा साहनी मामले में अन्य पिछड़े वर्गों के संबंध में की गई कुछ टिप्पणियों के मद्देनजर ई.वी. चिन्नैया मामले पर पुनर्विचार की आवश्यकता है?

58. देविंदर सिंह मामले में पांच न्यायाधीशों की पीठ ने इस पीठ के समक्ष इंद्रा साहनी के निर्णय का संदर्भ देने के लिए काफी भरोसा किया है, जिसमें कहा गया था कि ईवी चिन्नैया मामले में लिया गया दृष्टिकोण इंद्रा साहनी मामले के दृष्टिकोण से मेल नहीं खाता है, हालांकि, मेरी राय में, इंद्रा साहनी ने केसी गजपति नारायण देव बनाम उड़ीसा राज्य, (1953) 2 एससीसी 178 "अनुसूचित जातियों" के उप-वर्गीकरण के मुद्दे पर विचार नहीं किया था, और संविधान के अनुच्छेद 341 के तहत "अनुसूचित जातियों" के रूप में निर्दिष्ट जातियों को उप-वर्गीकृत या उप-विभाजित या पुनर्समूहीकृत करने की राज्य की शक्ति पर तो बिल्कुल भी विचार नहीं किया था।

59. जहां तक इंद्रा साहनी का सवाल है, तथ्य यह है कि भारत सरकार ने संविधान के अनुच्छेद 340 के तहत 1 जनवरी, 1979 को श्री बी.पी. मंडल (जिसे मंडल आयोग के नाम से जाना जाता है) की अध्यक्षता में "द्वितीय पिछड़ा वर्ग आयोग" का गठन किया था। उक्त आयोग के विचारार्थ विषय अन्य बातों के साथ-साथ सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों को परिभाषित करने के लिए मानदंड निर्धारित करना, इस प्रकार पहचाने गए नागरिकों के सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए उठाए जाने वाले कदमों की सिफारिश करना और नागरिकों के ऐसे पिछड़े वर्गों के पक्ष में नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए प्रावधान करने की वांछनीयता या अन्यथा की जांच करना था, जिनका संघ या किसी राज्य के मामलों से संबंधित सार्वजनिक सेवाओं और पदों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं था। भारत सरकार ने स्वयं मंडल आयोग की सिफारिशों पर 13 अगस्त, 1990 को एक कार्यालय ज्ञापन जारी किया, जिसमें 7 अगस्त, 1990 से अपनी सेवाओं में सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण बढ़ाने का प्रस्ताव किया गया। उक्त ज्ञापन में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए पहले से आरक्षित सीटों के अतिरिक्त सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए 27% सीटें आरक्षित की गई थीं। उक्त ज्ञापन के जारी होने पर व्यापक विरोध हुआ और उक्त ज्ञापन पर सवाल उठाते हुए सर्वोच्च न्यायालय में रिट याचिकाएँ दायर की गईं। इस न्यायालय की पांच न्यायाधीशों की पीठ ने 1 अक्टूबर, 1990 के अपने आदेश द्वारा 13 अगस्त, 1990 के उक्त कार्यालय ज्ञापन के संचालन पर रोक लगा दी, तथापि, सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों की पहचान के लिए जातियों की पहचान की प्रक्रिया को जारी रखने की अनुमति दी। इसके बाद, केंद्र में सरकार के परिवर्तन के परिणामस्वरूप, 25 सितंबर, 1991 को 13 अगस्त, 1990 के पिछले कार्यालय ज्ञापन को संशोधित करते हुए एक और कार्यालय ज्ञापन जारी किया गया, जिसमें 27% कोटे में सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों को

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

वरीयता देकर आरक्षण देने में आर्थिक मानदंड लागू किया गया तथा अन्य आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए सिविल सेवाओं में 10% रिक्तियों को आरक्षित किया गया, जो आरक्षण की किसी भी मौजूदा योजना के अंतर्गत नहीं आते हैं, जिसे उच्च जाति और अन्य धर्मों के सबसे गरीब लोगों तक विस्तारित करने के लिए समझाया गया था। 25 सितंबर, 1991 के उक्त कार्यालय ज्ञापन की संवैधानिकता को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी और मामले की सुनवाई के लिए नौ न्यायाधीशों की पीठ गठित की गई थी। मामले की सुनवाई नौ न्यायाधीशों की पीठ ने की और 6:3 के निर्णय द्वारा, कुछ शर्तों और पूर्वपेक्षाओं के अधीन 13.08.1990 के आक्षेपित कार्यालय ज्ञापन की संवैधानिकता, वैधता और प्रवर्तनीयता को बरकरार रखा गया, जबकि 25 सितंबर, 1991 के दूसरे कार्यालय ज्ञापन के पैराग्राफ 2(ii) में आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों के लिए 10% अतिरिक्त आरक्षण का प्रावधान किया गया था, जिसे असंवैधानिक करार दिया गया और उसे रद्द कर दिया गया। छह अलग-अलग निर्णय सुनाए गए। आगे के निर्णय न्यायमूर्ति बी.पी. जीवन रेड्डी (मुख्य न्यायमूर्ति एम.एच. कानिया और एम.एन. वेंकटचलैया, ए.एम. अहमदी और स्वयं उनके लिए) द्वारा दिया गया, जबकि न्यायमूर्ति एस. रत्नावेल पांडियन और न्यायमूर्ति पी.बी. सावंत ने भी अलग-अलग निर्णयों में सहमति व्यक्त की।

60. इंद्रा साहनी मामले में नौ न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष कई प्रश्न रखे गए थे, जिन्हें न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी के प्रमुख निर्णय में व्यापक रूप से इंगित और चर्चा की गई है, साथ ही इसमें चर्चा किए गए विविध प्रश्न भी शामिल हैं। अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों से विशेष रूप से संबंधित प्रश्न प्रश्न-3(ए), प्रश्न 3(ई) और प्रश्न-10 थे। प्रश्न-3(ए) था, “अनुच्छेद 16(4) में “नागरिकों के पिछड़े वर्ग” का क्या अर्थ है?” प्रश्न-3(ई) था, “क्या पिछड़े वर्ग के रूप में नामित किए जाने वाले वर्ग को अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के समान स्थित होना चाहिए?” प्रश्न-10 था, “क्या पिछड़े वर्गों के गरीब वर्गों और अन्य के बीच दूसरे ज्ञापन में किया गया भेद अनुच्छेद 16 के तहत स्वीकार्य था?”

61. न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने नागरिकों के पिछड़े वर्ग की पहचान के संबंध में प्रश्न 3(बी) का उत्तर देते हुए अपने प्रमुख निर्णय में पैराग्राफ 781 में निम्नलिखित टिप्पणी की: -

“781. सर्वप्रथम हम यह कह सकते हैं कि इस चर्चा के उद्देश्य से हम अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों को अलग रखते हैं (क्योंकि वे निश्चित रूप से पिछड़े वर्गों में शामिल हैं), सिवाय यह टिप्पणी करने के कि अनुच्छेद 16(4) द्वारा परिकल्पित पिछड़े वर्गों में कुछ जातियाँ शामिल हैं - क्योंकि इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि अनुसूचित जातियों में काफी जातियाँ शामिल हैं।”

62. न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने प्रश्न संख्या 3 (डी) के संबंध में “साधन परीक्षण” और “क्रीमी लेयर परीक्षण” के संबंध में मुद्दे पर आगे चर्चा की और पृष्ठ 725 पर पैराग्राफ 792 में एक विशेष टिप्पणी की कि: -

“यह चर्चा केवल अन्य पिछड़े वर्गों तक ही सीमित है और अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों के मामले में इसकी कोई प्रासंगिकता नहीं है।”

63. प्रश्न संख्या 3 में शामिल मुद्दों का सारांश देते हुए न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने पैरा 796 और 797 में निम्नलिखित अवधारित किया: -

“796.-797. अब हम प्रश्न संख्या 3 के अंतर्गत अपनी चर्चा को संक्षेप में प्रस्तुत कर सकते हैं।

(क) भारत में जाति एक सामाजिक वर्ग हो सकती है और अक्सर होती भी है। यदि यह

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

सामाजिक रूप से पिछड़ी है, तो यह अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजनों के लिए एक पिछड़ा वर्ग होगी। गैर-हिंदुओं में, कई व्यावसायिक समूह, संप्रदाय और संप्रदाय हैं, जो ऐतिहासिक कारणों से सामाजिक रूप से पिछड़े हैं। वे भी अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजनों के लिए पिछड़े सामाजिक समूहों का प्रतिनिधित्व करते हैं। (ख) न तो संविधान और न ही कानून पिछड़े वर्गों की पहचान की प्रक्रिया या विधि निर्धारित करता है। न ही न्यायालय के लिए ऐसी कोई प्रक्रिया या विधि निर्धारित करना संभव या उचित है। इसे पहचान के लिए नियुक्त प्राधिकारी पर छोड़ देना चाहिए। वह अपनी सुविधानुसार कोई भी तरीका/प्रक्रिया अपना सकता है और जब तक उसका सर्वेक्षण पूरी आबादी को कवर करता है, तब तक इस पर कोई आपत्ति नहीं की जा सकती। पिछड़े वर्गों की पहचान निश्चित रूप से अन्य समूहों, वर्गों और लोगों के वर्गों के बीच और उनके साथ जातियों के संदर्भ में की जा सकती है। कोई भी जाति से प्रक्रिया शुरू कर सकता है, जहाँ भी वे पाई जाती हैं, मानदंड (पिछड़ेपन का निर्धारण करने के लिए विकसित) लागू करें और पता करें कि क्या यह मानदंडों को पूरा करता है। यदि ऐसा है – तो अनुच्छेद 16(4) के अर्थ और उद्देश्यों के भीतर "नागरिकों का पिछड़ा वर्ग" उभर कर आता है। इसी तरह की प्रक्रिया अन्य व्यावसायिक समूहों, समुदायों और वर्गों के मामले में भी अपनाई जा सकती है, ताकि पूरी आबादी को कवर किया जा सके। केंद्रीय विचार और समग्र उद्देश्य समाज में सभी उपलब्ध समूहों, वर्गों और वर्गों पर विचार करना होना चाहिए। चूंकि जाति एक विद्यमान, पहचान योग्य सामाजिक समूह/वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है, जिसमें देश की जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा शामिल है, इसलिए हम इससे शुरुआत कर सकते हैं और फिर अन्य समूहों, वर्गों और वर्गों पर जा सकते हैं। (ग) किसी वर्ग को पिछड़ा वर्ग घोषित करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के समान स्थिति में हो। (घ) 'क्रीमी लेयर' को बाहर रखा जा सकता है और उसे बाहर रखा जाना चाहिए। (ङ) यह कहना सही नहीं है कि अनुच्छेद 16(4) द्वारा परिकल्पित पिछड़ा वर्ग अनुच्छेद 15(4) और अनुच्छेद 340 में संदर्भित सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों तक सीमित है। यह बहुत व्यापक है। सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन की कसौटी या आवश्यकता अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर लागू नहीं की जा सकती, जो निस्संदेह "नागरिकों के पिछड़े वर्ग" की अभिव्यक्ति में आते हैं। अनुच्छेद 16(4) में जोर सामाजिक पिछड़ेपन पर है। बेशक, भारतीय संदर्भ में सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक पिछड़ापन आपस में घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। अनुच्छेद 16(4) द्वारा परिकल्पित वर्ग अनुच्छेद 15(4) द्वारा परिकल्पित वर्गों से अधिक व्यापक हो सकते हैं।”

64. न्यायमूर्ति पांडियन ने अपने सहमति वाले मत में पैराग्राफ 39 में कहा कि अनुच्छेद 16(4) में आने वाले शब्द “नागरिकों का पिछड़ा वर्ग” संविधान में न तो परिभाषित हैं और न ही स्पष्ट किए गए हैं, जबकि अनुच्छेद 15(4) में आने वाले उन्हीं शब्दों के बाद एक विशेषण वाक्यांश आता है, “सामाजिक और शैक्षणिक रूप से”। पैराग्राफ 126 में उन्होंने कहा कि किसी वर्ग को पिछड़ा वर्ग घोषित करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के समान ही स्थित हो।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

65. न्यायमूर्ति पी.बी. सावंत ने अपने सहमति वाले निर्णय में अनुच्छेद 417 में निम्नानुसार टिप्पणी की: –

“417. अनुच्छेद 16(4) के तहत राज्य की नौकरियों में आरक्षण ऐसे “लोगों के वर्ग” के लिए प्रदान किया जाना है जो “पिछड़ा” है और “राज्य की राय में” राज्य की सेवाओं में “पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं करता है”। अनुच्छेद 46 के तहत, राज्य से अपेक्षा की जाती है कि वह लोगों के “कमजोर वर्गों” और “विशेष रूप से” अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के “शैक्षिक और आर्थिक हितों” को “विशेष सावधानी के साथ बढ़ावा दे” और उन्हें “सामाजिक अन्याय” और “सभी प्रकार के शोषण” से “संरक्षित” करे। चूंकि वर्तमान मामले में, हम अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में आरक्षण से चिंतित नहीं हैं, इसलिए अनुच्छेद 335 का संदर्भ देना आवश्यक नहीं है, सिवाय इसके कि, इसमें प्रदत्त शर्तों के अनुसार सेवाओं में अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के दावों पर विचार किया जाना है, जो प्रशासन की दक्षता को बनाए रखने के अनुरूप है। इसलिए, इसका मतलब यह होना चाहिए कि नागरिकों के अन्य पिछड़े वर्ग और कमजोर वर्गों के दावों पर भी दक्षता बनाए रखने के साथ-साथ विचार किया जाना चाहिए। इसलिए, चाहे किसी को भी आरक्षण दिया जाए, प्रशासन की दक्षता का त्याग नहीं किया जाना चाहिए, चाहे दक्षता का मतलब कुछ भी हो। यह संविधान का ही आदेश है।”

66. इंद्रा साहनी मामले में प्रतिपादित सिद्धांतों पर विचार करने के बाद, न्यायमूर्ति हेगड़े ने ई.वी. चिन्नैया मामले में अनुच्छेद 38 में ठीक ही टिप्पणी की है: –

“38. प्रतिवादियों की ओर से, यह बताया गया कि इंद्रा साहनी मामले में [1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1: (1992) 22 एटीसी 385] न्यायालय ने अन्य पिछड़े समुदायों को उनके तुलनात्मक अविकसितता के आधार पर पिछड़े और अधिक पिछड़े के रूप में उपवर्गीकरण की अनुमति दी थी, इसलिए, अनुसूचित जातियों की राष्ट्रपति सूची में सूचीबद्ध वर्ग के बीच समान वर्गीकरण कानून में स्वीकार्य है। हमें नहीं लगता कि इंद्रा साहनी मामले में निर्धारित सिद्धांत [1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1: (1992) 22 एटीसी 385] अन्य पिछड़ा वर्ग के उपवर्गीकरण के लिए राष्ट्रपति सूची में अनुसूचित जातियों के उपवर्गीकरण या उपसमूहीकरण के लिए एक मिसाल कानून के रूप में लागू किया जा सकता है क्योंकि उसी निर्णय में खुद ही स्पष्ट रूप से कहा गया है कि अन्य पिछड़ा वर्ग का उपविभाजन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर लागू नहीं होता है। हमें लगता है कि ऐसा स्पष्ट कारण से है यानी संविधान ने खुद अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की सूची को राज्य सरकारों के हस्तक्षेप से बाहर रखा है।”

67. न्यायमूर्ति एच.के. सेमा, जे. ने ई.वी. चिन्नैया मामले में न्यायमूर्ति हेगड़े से सहमति जताते हुए पैराग्राफ 48 में निम्नलिखित टिप्पणी की: –

“48. इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ [1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1: (1992) 22 एटीसी 385] में इस न्यायालय ने एससीसी पृष्ठ 725 पर

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

टिप्पणी की कि क्रीमी लेयर की चर्चा केवल अन्य पिछड़ा वर्ग तक ही सीमित है और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मामले में इसकी कोई प्रासंगिकता नहीं है।”

68. न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा ने भी अपनी सहमति व्यक्त करते हुए अनुच्छेद 76 और 92 में निम्नलिखित टिप्पणी की: –

“76. इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ [1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1: (1992) 22 एटीसी 385] में इस न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखते हुए पिछड़े वर्ग के नागरिकों को चार अलग-अलग श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है – (i) अधिक पिछड़ा, (ii) पिछड़ा, (iii) अनुसूचित जाति, और (iv) अनुसूचित जनजाति। एक तर्क दिया गया है कि इंद्रा साहनी [1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1: (1992) 22 एटीसी 385] में न्यायालय ने अन्य पिछड़ा वर्गों के बीच वर्गीकरण की अनुमति दी और इस तरह कोई कारण नहीं है कि उक्त सिद्धांत अनुसूचित जातियों के सदस्यों पर लागू नहीं किया जाएगा। इंद्रा साहनी [1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1: (1992) 22 एटीसी 385] में स्वयं इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा था कि वह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के संबंध में इस प्रश्न से चिंतित नहीं था। (एससीसी पैरा 792, पृष्ठ 725) यह ध्यान रखना प्रासंगिक है कि न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी द्वारा तैयार किया गया प्रश्न 5 केवल पिछड़े वर्गों को पिछड़े और अधिक पिछड़े श्रेणियों में आगे विभाजन के संबंध में था। सलाह दी गई कि अनुसूचित जातियों को अधिक पिछड़ी और पिछड़ी अनुसूचित जातियों में विभाजित करने के संबंध में कोई प्रश्न नहीं बनाया गया।

92. आक्षेपित अधिनियम तथा उच्च न्यायालय का निर्णय इंद्रा साहनी [1992 सप (3) एससीसी 217: 1992 एससीसी (एल एंड एस) सप 1: (1992) 22 एटीसी 385] में की गई टिप्पणियों पर आधारित है कि पिछड़े वर्गों को पिछड़ा और अधिक पिछड़ा वर्ग के रूप में वर्गीकृत करने में राज्य के लिए कोई संवैधानिक या कानूनी रोक नहीं है। हालाँकि, इस न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 16(4) का हवाला देते हुए कहा कि उसने केवल एक वर्ग अर्थात् नागरिकों के पिछड़े वर्ग को निम्नलिखित शब्दों में मान्यता दी है: (एससीसी पृष्ठ 716, पैरा 781) “781. सबसे पहले, हम यह कह सकते हैं कि इस चर्चा के उद्देश्य के लिए, हम अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों को अलग रखते हैं (क्योंकि वे निश्चित रूप से पिछड़े वर्गों में शामिल हैं), सिवाय यह टिप्पणी करने के कि अनुच्छेद 16(4) द्वारा परिकल्पित पिछड़े वर्गों में कुछ जातियां शामिल हैं – क्योंकि इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि अनुसूचित जातियों में काफी जातियां शामिल हैं।”

69. अशोक कुमार ठाकुर बनाम भारत संघ और अन्य में, एक अन्य पांच-पीठ के फैसले ने इस मुद्दे पर पहले के फैसलों पर विचार करने के बाद कि क्या “क्रीमी लेयर” सिद्धांत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर लागू होता है, यह अवधारित किया कि उक्त सिद्धांत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर लागू

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

नहीं हो सकता क्योंकि वे अपने आप में अलग वर्ग हैं। सटीक रूप से कहें तो, इसने निम्नलिखित रूप में अवधारित किया: -

"184. अब तक, इस न्यायालय ने आरक्षण के उद्देश्य के लिए समानता के सामान्य सिद्धांत पर "क्रीमी लेयर" सिद्धांत को लागू नहीं किया है। "क्रीमी लेयर" को अब तक केवल पिछड़े वर्ग की पहचान करने के लिए लागू किया गया है, क्योंकि पिछड़े वर्गों को निर्धारित करने के लिए कुछ मापदंडों की आवश्यकता होती है। "क्रीमी लेयर" सिद्धांत पिछड़े वर्गों की पहचान करने के मापदंडों में से एक है। इसलिए, मुख्य रूप से, "क्रीमी लेयर" सिद्धांत को एसटी और एससी पर लागू नहीं किया जा सकता है, क्योंकि एससी और एसटी अपने आप में अलग-अलग वर्ग हैं। मुख्य न्यायाधीश रे ने पूर्व के एक निर्णय में कहा था कि "अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ जाति के सामान्य अर्थ में एक जाति नहीं हैं"। और उन्हें संविधान के अनुच्छेद 341 और 342 के तहत भारत के राष्ट्रपति द्वारा जारी अधिसूचना के आधार पर इस प्रकार पहचाना जाता है। राष्ट्रपति राज्यपाल के परामर्श के बाद सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा उन जातियों, नस्लों या जनजातियों या जातियों, नस्लों या जनजातियों के भागों या समूहों को निर्दिष्ट कर सकते हैं जिन्हें संविधान के प्रयोजन के लिए अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति माना जाएगा। अधिसूचना जारी होने के बाद, उन्हें अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति, जो भी लागू हो, का सदस्य माना जाता है।

ई.वी. चिन्नैया [(2005) 1 एस.सी.सी. 394] में बहुमत के निर्णय से सहमति जताते हुए, न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा ने अवधारित किया : (एस.सी.सी. पृ. 403)

"अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ हमारे संविधान में एक विशेष स्थान रखती हैं। भारत के राष्ट्रपति के पास यह अधिकार है कि वे उन जातियों, नस्लों या जनजातियों या जातियों, नस्लों या जनजातियों के भागों या समूहों को निर्दिष्ट कर सकें जिन्हें संविधान के उद्देश्यों के लिए अनुसूचित जातियाँ माना जाएगा। अनुच्छेद 341(1) के अनुसार बनाया गया संविधान (अनुसूचित जातियाँ) आदेश, 1950 संपूर्ण है। अनुच्छेद 341 और 342 का उद्देश्य अनुसूचित जाति आदेश और अनुसूचित जनजाति आदेश में निर्दिष्ट पिछड़े वर्ग के नागरिकों को उनके आर्थिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन को ध्यान में रखते हुए संरक्षण प्रदान करना है। कोई भी कानून जो उन्हें इसके दायरे से बाहर कर देगा या भारत के राष्ट्रपति द्वारा जारी आदेश में फेरबदल करेगा, वह असंवैधानिक होगा। (पैरा 52, 111 और 84)

(प्रभाव वर्धित)

186. इसके अलावा, शुरु से ही अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को एक अलग श्रेणी के रूप में माना जाता था और किसी ने भी ऐसे वर्गों की पहचान पर कभी विवाद नहीं किया। जब तक "क्रीमी लेयर" को समानता के सिद्धांतों में से एक के रूप में लागू नहीं किया जाता है, तब तक इसे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर लागू नहीं किया जा सकता है। अब तक, इसे केवल सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों की पहचान करने

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

के लिए लागू किया जाता है। हम यह स्पष्ट करते हैं कि आरक्षण के उद्देश्य से, "क्रीमी लेयर" के सिद्धांत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए लागू नहीं हैं।

70. उपर्युक्त के मद्देनजर, मेरी राय है कि यद्यपि **इंद्रा साहनी** ने अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजन के लिए "पिछड़े वर्ग" के दायरे पर विचार करते हुए सामाजिक पिछड़ेपन के संदर्भ में "पिछड़े वर्ग" को परिभाषित करने की मांग की थी, लेकिन इसमें विशेष रूप से अनुच्छेद 341/342 के प्रकाश में अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के मुद्दे पर विचार नहीं किया गया, बल्कि इसमें अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों को स्पष्ट रूप से विचार के दायरे से बाहर रखा गया। अनुसूचित जातियां पिछड़े वर्गों में सबसे पिछड़ा वर्ग हैं, और अनुच्छेद 341 के आधार पर एक विशेष दर्जा प्राप्त करने के कारण, "अनुसूचित जाति" के रूप में "पिछड़े वर्ग" को परिभाषित करने का प्रश्न ही नहीं उठता, और संविधान के अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजनों के लिए **इंद्रा साहनी** मामले में इस पर उचित ही विचार नहीं किया गया।

71. जहां तक अनुच्छेद 15(4) और 15(5) का संबंध है, "सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों" शब्दों से पहले "कोई" शब्द का प्रयोग और "अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों" से पहले "को" शब्द का प्रयोग स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि उक्त प्रावधान "अन्य पिछड़े वर्गों" से संबंधित हैं जो सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े हैं, और उक्त प्रावधान "अनुसूचित जातियों" और "अनुसूचित जनजातियों" से भी संबंधित हैं, हालांकि "अनुसूचित जातियों" को अनुच्छेद 341 के तहत अधिसूचित किए जाने के बाद किसी और पहचान की आवश्यकता नहीं है। जैसा कि **अशोक कुमार ठाकुर** ने सही कहा है, "क्रीमी लेयर" सिद्धांत पिछड़े वर्गों की पहचान करने के मापदंडों में से एक है। "अनुसूचित जातियाँ" पहले से ही अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति सूची में निर्दिष्ट हैं, इसलिए क्रीमी लेयर सिद्धांत को पिछड़े वर्ग के रूप में उनकी पहचान के लिए "अनुसूचित जातियों" पर लागू नहीं किया जा सकता है। मेरी राय में, पांच न्यायाधीशों की पीठ ने **इंद्रा साहनी** को पूरी तरह से गलत तरीके से पढ़ा और गलत व्याख्या की है, यह राय देने के लिए कि **इंद्रा साहनी** ने अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों सहित पिछड़े वर्गों के उप-वर्गीकरण की अनुमति दी थी, बल्कि उन्हें **इंद्रा साहनी** में नौ न्यायाधीशों की पीठ द्वारा विचार के दायरे से स्पष्ट रूप से बाहर रखा गया था।

72. **जरनैल सिंह** मामले पर अवलम्ब लेना भी पूरी तरह से गलत है। **जरनैल सिंह** मामले में, पांच न्यायाधीशों की पीठ को **नागराज** मामले में प्रतिपादित कानून की सत्यता की जांच करने के लिए कहा गया था। **जरनैल सिंह** के पैरा-17 में, पीठ ने टिप्पणी की कि: -

"चिनैया मामले में दिए गए फैसले को तीन जजों की पीठ ने आदेश दिनांकित 20 अगस्त, 2014 के तहत वृहद पीठ को सौंप दिया है। ऐसा इसलिए है क्योंकि तीन जजों की बेंच के अनुसार, चिनैया मामले में फैसला भारतीय संविधान के अनुच्छेद 338 और **इंद्रा साहनी** के विपरीत है। चूंकि चिनैया मामले की सत्यता हमारे सामने नहीं आती, इसलिए हमें इस संदर्भ के बारे में और कुछ कहने की जरूरत नहीं है, जिसका फैसला इसके मेरिट के आधार पर किया जाएगा।"

73. उपर्युक्त उल्लेख के पश्चात, **जरनैल सिंह** मामले में पांच न्यायाधीशों की पीठ **अशोक कुमार** मामले में पांच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा अपनाए गए इस दृष्टिकोण से सहमत नहीं थी कि क्रीमी लेयर सिद्धांत केवल पहचान का सिद्धांत है, न कि समानता का सिद्धांत। **जरनैल सिंह** मामले में पीठ ने एम. नागराज एवं अन्य बनाम भारत संघ

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

एवं अन्य मामले में लिए गए निर्णय के उस भाग से सहमति व्यक्त की जिसमें कहा गया था कि बुनियादी संरचना परीक्षण के अनुप्रयोग में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर क्रीमी लेयर परीक्षण लागू होता है, तथापि, वह नागराज के उस निर्णय से सहमत नहीं थी, जिसमें नागराज ने राज्यों से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के संबंध में पिछड़ेपन पर मात्रात्मक आंकड़े एकत्र करने की अपेक्षा की थी। जरनैल सिंह मामले में खंडपीठ ने कहा कि "यह स्पष्ट रूप से इंद्रा साहनी मामले के विपरीत होगा, जिसमें कहा गया था कि सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन की आवश्यकता अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर लागू नहीं की जा सकती, जो अनिवार्य रूप से "नागरिकों के पिछड़े वर्ग" की अभिव्यक्ति के अंतर्गत आते हैं और इसलिए नागराज मामले में दिए गए निर्णय को इस आधार पर गलत घोषित किया जाना चाहिए।" मेरी राय में, जरनैल सिंह मामले में की गई ऐसी टिप्पणियाँ स्वयं विरोधाभासी हैं। किसी भी मामले में, बेंच के पास इस मुद्दे पर विचार करने का कोई अवसर नहीं था और न ही उसने इस पर विचार किया था कि क्या अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति सूची में अधिसूचित "अनुसूचित जातियों" का उप-वर्गीकरण राज्यों द्वारा किया जाना अनुमेय था।

74. यह बहुत आम बात है कि संवैधानिक पीठ अपने निर्णयों में कई जटिल तथ्यों और कानूनी मुद्दों पर विचार करती है। निर्णय में कही गई सभी बातें अन्य न्यायालयों के लिए मिसाल या बाध्यकारी नहीं होंगी। संविधान पीठों के निर्णयों को उन प्रश्नों के संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए जो उनके समक्ष विचार के लिए उठे थे। निर्णय में की गई कुछ टिप्पणियाँ शामिल मुद्दों पर निर्णय लेने के लिए आवश्यक हो सकती हैं, लेकिन निर्णय सुनाते समय कानून पर की गई हर टिप्पणी का मिसाल के तौर पर बाध्यकारी प्रभाव नहीं हो सकता है। संयोगवश या समानांतर रूप से की गई कोई भी टिप्पणी या टिप्पणी या राय, जो सीधे न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत प्रश्न पर नहीं है, एक 'ओबिटर डिक्टा' होगी, न कि 'उदाहरण'। एक निर्णय इस बात के लिए एक प्राधिकरण है कि वह क्या निर्णय लेता है, न कि उससे तार्किक रूप से क्या निष्कर्ष निकाला जा सकता है, जैसा कि हरियाणा राज्य बनाम रणबीर उर्फ राणा में कहा गया था। एडीएम जबलपुर बनाम शिवकांत शुक्ला में यह भी देखा गया कि जो कथन अनुपात निर्णय का हिस्सा नहीं हैं, वे आज्ञापत्र का गठन करते हैं और आधिकारिक नहीं हैं।

75. इंद्रा साहनी या जरनैल सिंह के किसी भी मामले में अनुच्छेद 341 के संदर्भ में "अनुसूचित जातियों" के उप-वर्गीकरण का मुद्दा न तो उठाया गया और न ही बहस की गई, न ही संबंधित बेंचों द्वारा इस पर निर्णय लिया गया, जैसा कि ई.वी. चिन्नैया में उठाया गया और निर्णय लिया गया। इसलिए, यह मानना गलत होगा कि ई.वी. चिन्नैया में निर्धारित कानून इंद्रा साहनी या जरनैल सिंह के अनुरूप नहीं था।

76. चूंकि मैंने यह माना है कि राज्य के पास अनुच्छेद 341 के तहत अधिसूचित राष्ट्रपति सूची में "अनुसूचित जातियों" के रूप में निर्दिष्ट जातियों, नस्लों या जनजातियों को उप-वर्गीकृत करने, उप-विभाजित करने या पुनर्समूहित करने की न तो कार्यकारी और न ही विधायी शक्ति है, इसलिए उप-वर्गीकरण के लिए मानदंड या पैमाना, या उप-वर्गीकरण के लिए राज्य द्वारा मात्रात्मक डेटा आदि एकत्र करने की आवश्यकता से संबंधित अन्य प्रश्नों को संबोधित करने की आवश्यकता नहीं है।

सकारात्मक कार्रवाई और संवैधानिक ढांचा

77. राज्यों की सकारात्मक कार्रवाई संवैधानिक ढांचे के भीतर होनी चाहिए, और यदि वे नहीं हैं, तो न्यायालय संविधान में निहित विशिष्ट आदेशों को तोड़-मरोड़ कर या ढाल कर उनकी पुष्टि नहीं कर सकते। अनुच्छेद 142

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

का उपयोग, चाहे वह कितना भी बड़ा क्यों न हो, उस विषय से संबंधित संवैधानिक प्रावधानों की अनदेखी करके, उस स्थान पर नई इमारत बनाने के लिए नहीं किया जा सकता, जहाँ पहले कोई इमारत नहीं थी। ऐसा करके, अप्रत्यक्ष रूप से कुछ ऐसा हासिल किया जा सकता है, जिसे सीधे तौर पर हासिल नहीं किया जा सकता। जैसा कि **सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन बनाम यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य** के मामले में ऐतिहासिक फैसले में संविधान पीठ ने कहा था।

“47. संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत इस न्यायालय की पूर्ण शक्तियाँ न्यायालय में अंतर्निहित हैं और उन शक्तियों की पूरक हैं जो न्यायालय को विभिन्न विधियों द्वारा विशेष रूप से प्रदान की जाती हैं, हालांकि वे उन विधियों द्वारा सीमित नहीं हैं। ये शक्तियाँ पक्षों के बीच पूर्ण न्याय करने की दृष्टि से विधियों से स्वतंत्र भी मौजूद हैं। ये शक्तियाँ बहुत व्यापक आयाम की हैं और पूरक शक्तियों की प्रकृति की हैं। यह शक्ति विधियों से अलग क्षेत्राधिकार के एक अलग और स्वतंत्र आधार के रूप में मौजूद है। यह नींव पर खड़ा है और इसके प्रयोग का आधार मुकदमेबाजी की प्रक्रिया में अन्याय को रोकने और पक्षकारों के बीच पूर्ण न्याय करने के लिए एक अलग और शायद व्यापक आधार पर रखा जा सकता है। यह पूर्ण अधिकार क्षेत्र, इस प्रकार, शक्ति का अवशिष्ट स्रोत है जिसका उपयोग यह न्यायालय आवश्यकतानुसार कर सकता है जब भी ऐसा करना उचित और न्यायसंगत हो और विशेष रूप से कानून की उचित प्रक्रिया का पालन सुनिश्चित करने के लिए, पक्षों के बीच पूर्ण न्याय करने के लिए, जबकि कानून के अनुसार न्याय करना। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह अन्य सभी शक्तियों के लिए एक अपरिहार्य सहायक है और अधिकार क्षेत्र के प्रतिबंध से मुक्त है और "न्याय की धारा को अवरुद्ध या बाधित करने" को रोकने के लिए न्यायालय के हाथों में एक मूल्यवान हथियार के रूप में कार्य करता है। हालांकि, यह याद रखना होगा कि अनुच्छेद 142 द्वारा न्यायालय को प्रदान की गई शक्तियाँ उपचारात्मक प्रकृति की हैं, लेकिन इन्हें ऐसी शक्तियों के रूप में नहीं समझा जा सकता जो न्यायालय को उसके समक्ष लंबित किसी मामले से निपटने के दौरान वादी के मूल अधिकारों की अनदेखी करने के लिए अधिकृत करती हैं। इस शक्ति का उपयोग न्यायालय के विचाराधीन मामले या कारण पर लागू मूल कानून को “प्रतिस्थापित” करने के लिए नहीं किया जा सकता। अनुच्छेद 142, अपने व्यापक आयाम के साथ भी, किसी विषय पर विचार करने वाले स्पष्ट वैधानिक प्रावधानों की अनदेखी करके और इस तरह अप्रत्यक्ष रूप से कुछ ऐसा हासिल करने के लिए इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है जिसे सीधे हासिल नहीं किया जा सकता है। न्यायालय की अवमानना के मामले में किसी अवमाननाकर्ता अधिवक्ता को उसके प्रैक्टिस करने के लाइसेंस को निलंबित करके दंडित करना, जो कि अन्यथा वैधानिक रूप से केवल बार काउंसिल ऑफ इंडिया को ही उपलब्ध शक्ति है, इस आधार पर कि अवमाननाकर्ता एक अधिवक्ता भी है, अनुच्छेद 142 के तहत क्षेत्राधिकार के प्रयोग में स्वीकार्य नहीं है। अनुच्छेद 142 का निर्माण अनुच्छेद के हितकारी उद्देश्यों से कार्यात्मक रूप से सूचित होना चाहिए, अर्थात्, पक्षों के बीच पूर्ण न्याय करना। यह अन्यथा नहीं हो सकता। जैसा कि न्यायालय की

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अवमानना के मामले में पहले ही देखा जा चुका है, अवमानना करने वाले और न्यायालय को मुकदमा करने वाले पक्ष नहीं कहा जा सकता है।”

78. राज्य की कार्रवाई, भले ही वह नेकनीयत और सकारात्मक प्रकृति की हो, यदि संविधान के विशिष्ट प्रावधान का उल्लंघन करती है, तो उसे अनुच्छेद 142 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा वैध नहीं ठहराया जा सकता। संविधान के विशिष्ट प्रावधान के उल्लंघन की कीमत पर असमानताओं को दूर करने या असमानताओं को दूर करने के उपाय की अनुमति नहीं दी जा सकती। जब संविधान के अनुच्छेद 341 के मामले में कानून के प्रावधानों के शब्द स्पष्ट हों, और संविधान के प्रारूपकारों की मंशा भी स्पष्ट हो, तो न्यायालय ऐसे प्रावधान में ऐसे शब्द नहीं जोड़ या घटा सकता जिससे उसे ऐसा अर्थ मिले जो न्यायालय को लगता है कि सामाजिक परिवर्तन के लक्ष्य को प्राप्त करेगा। कभी-कभी सकारात्मक कार्रवाई और संविधान एक दूसरे के साथ जटिल तरीकों से जुड़ते हैं, क्योंकि सकारात्मक कार्रवाई की नीतियां राज्यों द्वारा विविधता को बढ़ावा देने और ऐतिहासिक असमानताओं को दूर करने के लिए तैयार की जाती हैं, जबकि कानूनी ढांचे को यह सुनिश्चित करना होता है कि इन नीतियों को संविधान की सीमाओं के भीतर लागू किया जाए। सकारात्मक कार्रवाई की नीतियों का कार्यान्वयन संवैधानिक और कानूनी सिद्धांतों, विशेष रूप से समानता और गैर-भेदभाव से संबंधित सिद्धांतों के साथ संरेखित होना चाहिए। संक्षेप में, सकारात्मक कार्रवाई और कानूनी ढांचे, हालांकि दोनों का उद्देश्य अधिक समतापूर्ण समाज बनाना है, लेकिन उन्हें निष्पक्षता और संवैधानिकता सुनिश्चित करने के लिए जटिल कानूनी सिद्धांतों को समझना चाहिए।

79. उपर्युक्त चर्चा का निष्कर्ष निम्नानुसार है: -

(i) जब ई.वी. चित्रैया मामले में संविधान पीठ द्वारा इंद्रा साहनी सहित सभी पिछले निर्णयों पर विचार करने और पर्याप्त न्यायिक समय और संसाधनों का निवेश करने के बाद कानून तय किया गया था, तो उस पर संदेह नहीं किया जाना चाहिए था और दविंदर सिंह मामले में तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा इसे बड़ी पीठ को भेजा जाना चाहिए था, और वह भी बिना कोई कारण बताए, और असहमति के लिए तो और भी कम ठोस कारण बताए बिना, पूर्व उदाहरणों और निर्णय के सुस्थापित सिद्धांतों की अवहेलना करते हुए।

(ii) संवैधानिक प्रावधानों को व्यापक और उदार रूप देते समय, “सरल अर्थ” या “शाब्दिक” व्याख्या के नियम को ध्यान में रखना होगा, जो कि “प्राथमिक नियम” है।

(iii) अनुच्छेद 341 के तहत “अनुसूचित जातियों” को निर्दिष्ट करने वाली राष्ट्रपति सूची अधिसूचना के प्रकाशन पर अंतिम रूप ले लेती है, और अधिसूचना में निर्दिष्ट जातियां, नस्लें या जनजातियाँ, या जातियों, नस्लों या जनजातियों के भीतर के समूह संविधान के प्रयोजनों के लिए उस राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में “अनुसूचित जातियाँ” माने जाते हैं और इस तरह “अनुसूचित जातियों” का विशेष दर्जा प्राप्त करते हैं।

(iv) केवल संसद ही कानून बनाकर खंड (1) के तहत अधिसूचित अधिसूचना में निर्दिष्ट “अनुसूचित जातियों” की सूची में किसी जाति, नस्ल या जनजाति या किसी जाति, नस्ल या जनजाति के हिस्से या समूह को शामिल या बाहर कर सकती है। खंड (1) के तहत अधिसूचित ऐसी अधिसूचना में राष्ट्रपति द्वारा बाद में कोई अधिसूचना जारी करके भी बदलाव नहीं किया जा सकता।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(v) अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति की अधिसूचना के आधार पर ही “अनुसूचित जातियाँ” अस्तित्व में आती हैं। हालाँकि अनुसूचित जातियों के सदस्य अलग-अलग जातियों, नस्लों या जनजातियों से आते हैं, लेकिन राष्ट्रपति की अधिसूचना के आधार पर उन्हें “अनुसूचित जातियों” का विशेष दर्जा प्राप्त होता है। “अनुसूचित जातियों” के नामकरण की व्युत्पत्ति और विकासवादी इतिहास और पृष्ठभूमि, संविधान के अनुच्छेद 341 के तहत प्रकाशित राष्ट्रपति के आदेशों के साथ मिलकर “अनुसूचित जातियों” को एक समरूप वर्ग बनाती है, जिसके साथ राज्यों द्वारा छेड़छाड़ नहीं की जा सकती।

(vi) राज्यों के पास अनुच्छेद 341 के तहत अधिसूचना में अनुसूचित जातियों के रूप में सूचीबद्ध जातियों, नस्लों या जनजातियों को विभाजित/उप-विभाजित/उप-वर्गीकृत या पुनर्समूहीकृत करके किसी विशेष जाति/जातियों को आरक्षण प्रदान करने या अधिमान्य उपचार देने के लिए कानून बनाने की कोई विधायी क्षमता नहीं है।

(vii) आरक्षण प्रदान करने की आड़ में या समाज के सबसे कमजोर वर्गों के लिए सकारात्मक कार्रवाई करने के बहाने, राज्य राष्ट्रपति सूची में बदलाव नहीं कर सकता है, न ही संविधान के अनुच्छेद 341 के साथ छेड़छाड़ कर सकता है।

(viii) इंद्रा साहनी मामले में नौ न्यायाधीशों की पीठ और जरनैल सिंह मामले में पांच न्यायाधीशों की पीठ ने अनुच्छेद 341 के संदर्भ में “अनुसूचित जातियों” के उप वर्गीकरण के मुद्दे पर विचार नहीं किया था, और न ही संविधान के अनुच्छेद 341 के तहत “अनुसूचित जातियों” के रूप में निर्दिष्ट जातियों को उप-वर्गीकृत या उप-विभाजित या पुनर्समूहित करने की राज्य की शक्तियों पर विचार किया था, और इसलिए, यह नहीं माना जा सकता था कि ई.वी. चिन्नैया मामले में निर्धारित कानून इंद्रा साहनी या जरनैल सिंह मामले के अनुरूप नहीं था।

(ix) अनुच्छेद 142 के तहत सर्वोच्च न्यायालय को दी गई शक्ति का उपयोग विचाराधीन मामले पर लागू मूल कानून को प्रतिस्थापित करने के लिए नहीं किया जा सकता है। अपने व्यापक आयाम के बावजूद, अनुच्छेद 142 का उपयोग उस स्थान पर नई इमारत बनाने के लिए नहीं किया जा सकता है, जहां पहले कोई इमारत नहीं थी, विषय से संबंधित स्पष्ट वैधानिक प्रावधानों की अनदेखी करके, और इस तरह अप्रत्यक्ष रूप से कुछ ऐसा हासिल करने के लिए जिसे सीधे हासिल नहीं किया जा सकता। राज्य की कार्रवाई, भले ही वह अच्छी मंशा वाली और सकारात्मक प्रकृति की हो, यदि संविधान के विशिष्ट प्रावधान का उल्लंघन करती है, तो अनुच्छेद 142 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उसे वैध नहीं ठहराया जा सकता।

(x) सकारात्मक कार्रवाई और कानूनी ढांचे, हालांकि दोनों का लक्ष्य अधिक समतापूर्ण समाज बनाना है, लेकिन निष्पक्षता और संवैधानिकता सुनिश्चित करने के लिए उन्हें जटिल कानूनी सिद्धांतों पर भी विचार करना होगा।

80. इस मामले को देखते हुए, मेरा मानना है कि ई.वी. चिन्नैया मामले में पांच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा निर्धारित कानून सही कानून है और इसकी पुष्टि की जानी चाहिए।

न्यायमूर्ति पंकज मिश्र

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अनुक्रमणिका

1	परिचय	
2	केस कानूनों के संदर्भ में संविधान में संशोधन	
3	अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग पर केन्द्र सरकार और राज्य सरकार के आयोग	
4	आरक्षण के प्रभाव	
5	जातिविहीन समाज – जाति व्यवस्था बनाम वर्ण व्यवस्था	
6	आरक्षण केवल सुविधा का माध्यम है और इसका क्रियान्वयन जातिवाद को पुनर्जीवित करता है	
7	निष्कर्ष	

परिचय

- मुख्य न्यायाधीश द्वारा अपनी राय में संक्षेप में वर्णित इस संविधान पीठ के समक्ष विचाराधीन मुद्दा यह है कि क्या आरक्षण के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण संवैधानिक रूप से स्वीकार्य है।
- यह मुद्दा तब उठा जब पंजाब विधानमंडल ने पंजाब अनुसूचित जातियां और पिछड़ा वर्ग (सेवाओं में आरक्षण) अधिनियम, 2006 पारित किया, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ अनुसूचित जातियों के पक्ष में 25% आरक्षण का प्रावधान किया गया तथा कहा गया कि उक्त प्रतिशत का 50% विशेष अनुसूचित जातियों जैसे बाल्मीकि और मज़हबी सिखों को सीधी भर्ती में दिया जाएगा।
- अनुसूचित जातियों की राष्ट्रपति सूची में उल्लिखित विभिन्न श्रेणियों में से अनुसूचित जातियों की उपरोक्त दो श्रेणियों के पक्ष में 50% आरक्षण प्रदान करने की वैधता को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट क्षेत्राधिकार का आह्वान करके उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी। पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय ने **ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य एवं अन्य** मामले में इस न्यायालय के संविधान पीठ के निर्णय पर अवलम्ब लेते हुए उक्त अधिनियम की धारा 4(5) को अमान्य घोषित कर दिया, जो अनुसूचित जातियों को उप-वर्गीकृत करती थी तथा अनुसूचित जातियों के लिए स्वीकार्य 25% में से 50% आरक्षण केवल अनुसूचित जातियों की उपरोक्त दो श्रेणियों के पक्ष में प्रदान करती थी।
- चिन्नैया (उपरोक्त) मामला** आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णय से उद्भूत हुआ, जिसमें उसने आंध्र प्रदेश अनुसूचित जाति (आरक्षण का युक्तिकरण) अधिनियम, 2000 के प्रावधान को चुनौती को खारिज कर दिया, जिसमें अनुसूचित जातियों को चार समूहों में वर्गीकृत करके उनके बीच आरक्षण के विभाजन का प्रावधान किया गया था: समूह ए के लिए 1%, समूह बी के लिए 7%, समूह सी के लिए 6% और समूह डी के लिए फिर से 1%।
- चिन्नैया** के मामले में संविधान पीठ की एकमत राय थी कि अनुसूचित जातियों को चार समूहों में उप-वर्गीकृत करने और समूहवार आरक्षण मानदंड को विभाजित करने का उपरोक्त अधिनियम का प्रावधान असंवैधानिक था।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

यह माना गया कि **इंद्रा साहनी और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य** द्वारा अनुमत उप-वर्गीकरण केवल पिछड़े और अन्य पिछड़े वर्गों तक ही सीमित था और अनुसूचित जातियों पर लागू नहीं होता।

6. उपर्युक्त पृष्ठभूमि में, पंजाब राज्य एवं अन्य बनाम दविंदर सिंह एवं अन्य मामले पर विचार करते हुए संविधान पीठ ने माना कि इस मामले पर एक वृहद पीठ द्वारा पुनर्विचार किए जाने की आवश्यकता है।

7. कुछ इसी प्रकार, एक मामला हरियाणा राज्य से तथा दूसरा तमिलनाडु राज्य से संदर्भित हुआ, जिसमें हरियाणा राज्य में अधिसूचना द्वारा अनुसूचित जातियों को आरक्षण लागू करने के प्रयोजनार्थ दो श्रेणियों अर्थात् ए तथा बी में वर्गीकृत किया गया तथा तमिलनाडु राज्य में 2009 के अधिनियम द्वारा शैक्षणिक संस्थानों में तथा सेवाओं में नियुक्ति के लिए अरुणथथियार समुदाय के लिए सीटों का आरक्षण प्रदान किया गया।

8. तीनों श्रेणियों के मामले अर्थात् पंजाब राज्य, हरियाणा राज्य और तमिलनाडु राज्य से संबंधित मामले सिविल अपील, रिट याचिका, टीपी (सी) और टीसी (सी) और विशेष अनुमति याचिका (सिविल) के रूप में पीठ के समक्ष हैं और इन्हें सम्मिलित मामलों के रूप में लिया गया है, क्योंकि मुद्दा एक ही है, जैसा कि आरंभ में बताया गया है।

9. अनुसूचित जातियों के उप-वर्गीकरण के मुद्दे का उत्तर मुख्य न्यायाधीश और मेरे आदरणीय भाई न्यायमूर्ति गवई ने अपनी अलग-अलग राय देकर उचित रूप से दिया है, जिससे मैं सम्मानपूर्वक सहमत हूँ, लेकिन साथ ही चूंकि यह मामला मूलतः "आरक्षण" से संबंधित है, इसलिए मैं इसे अत्यंत महत्वपूर्ण मानता हूँ और इसलिए अपने विचार अलग से लिखना उचित समझता हूँ।

10. मनुष्य/मानव को सही रूप से समझा जाए तो वह एक सामाजिक प्राणी है और उसे समाज में रहना पड़ता है। समाज का आदर्श स्वरूप वह है जो योग्यता के आधार पर आगे बढ़ता है या जहाँ केवल योग्यता ही प्रबल होती है। यह संविधान के अनुच्छेद 14 और 15 से स्पष्ट है जो कानून के समक्ष समानता प्रदान करता है और यह कि राज्य धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा। अनुच्छेद 14 और 15 (जैसा कि यह मूल रूप से था) नीचे उद्धृत हैं:

“अनुच्छेद 14. विधि के समक्ष समता

राज्य, भारत के राज्यक्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता से या विधियों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।

अनुच्छेद 15. धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध –

(1) राज्य, किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।

(2) कोई नागरिक केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर

(क) दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों और सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश या

(ख) पूर्णतः या भागतः राज्य निधि से पोषित या साधारण जनता के प्रयोग के लिए समर्पित कुओं, तालाबों, स्नानघाटों, सड़कों और सार्वजनिक समागम के स्थानों के

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उपयोग, के संबंध में किसी भी नियोग्यता, दायित्व, निर्बन्धन या शर्त के अधीन नहीं होगा।

(3) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।"

11. हालांकि, कोई भी समाज अपने आदर्श रूप में अस्तित्व में नहीं रह सकता क्योंकि सभी नागरिक एक जैसे नहीं होते। सभी की बुनियादी जरूरतें अलग-अलग होती हैं और समाज को आगे बढ़ाने के लिए उन्हें ध्यान में रखना पड़ता है। इसलिए, सभी व्यक्तियों या व्यक्तियों के वर्गों की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जरूरतों पर विचार करने की सख्त जरूरत है। भारत के संदर्भ में, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय की त्रिमूर्ति को संतुलित किया जाना चाहिए और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के लिए, तथाकथित हाशिए पर पड़े नागरिकों या लोगों के दबे-कुचले वर्गों के उत्थान के लिए प्रावधान किए जाने चाहिए, जिन्हें बाद में पिछड़ा वर्ग और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदि के रूप में जाना जाने लगा। प्रत्येक नागरिक या नागरिकों के एक वर्ग को समान स्तर और कानून के बराबर लाने के उपरोक्त सामाजिक उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए ही संविधान में आरक्षण का प्रावधान किया गया।

12. किसी भी वर्ग के लिए आरक्षण का प्रावधान प्रथम दृष्टया मेरिट-विरोधी प्रतीत हो सकता है, लेकिन सामाजिक न्याय के तराजू पर तौला जाए तो यह अनिवार्य है।

13. भारतीय समाज के गरीब और दलित वर्गों को पहले शासक वर्ग द्वारा "दलित वर्ग" के रूप में वर्णित किया जाता था, जिसमें अछूत, विभिन्न पिछड़े समुदायों के लोग और देश के पहाड़ों और जंगलों या दूरदराज के इलाकों में जनजातियों में रहने वाले लोग शामिल थे। धीरे-धीरे, इन दलित वर्गों के लोगों को उनके व्यवसाय के अनुसार विभिन्न समूहों में वर्गीकृत किया जाने लगा जैसे कि सफाईकर्मी, चमड़े का काम करने वाले, लोहार, बढ़ई, चौकीदार और अन्य छोटे-मोटे कामगार और उन्हें अनुसूचित जाति के रूप में संदर्भित किया गया; और पहाड़ों, जंगलों या दूरदराज के इलाकों में जनजातियों में रहने वाले लोगों को अनुसूचित जनजाति के रूप में पहचाना जाने लगा। शेष दलित वर्ग या हाशिए पर पड़े वर्गों को बाद में अन्य पिछड़े वर्गों के रूप में वर्गीकृत किया गया।

14. भारत सरकार अधिनियम, 1935 ने पहली बार उपर्युक्त दलित वर्गों को अनुसूचित जाति और आदिम जनजातियों को पिछड़ी जनजाति के रूप में मान्यता दी और अन्य बातों के साथ-साथ संघीय विधानमंडल में अनुसूचित जातियों और पिछड़ी जनजातियों के लिए सीटों का आरक्षण प्रदान किया। इसका उद्देश्य केवल राजनीतिक समानता लाना था।

15. 26 नवम्बर, 1949 को अधिनियमित एवं अंगीकृत तथा 26 जनवरी, 1950 से लागू भारत के संविधान में मूलतः दो श्रेणियों के आरक्षण का प्रावधान किया गया था, एक राजनीतिक उद्देश्यों के लिए तथा दूसरा सामाजिक उद्देश्यों के लिए, जिसके अंतर्गत अनुच्छेद 330 एवं 332 तथा अनुच्छेद 15(3) एवं 16(4) दिए गए थे।

16. संविधान के अनुच्छेद 330 और 332 का उद्देश्य लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों का आरक्षण प्रदान करके राजनीतिक न्याय प्राप्त करना था, जबकि अनुच्छेद 15(3) और 16(4) का उद्देश्य सामाजिक न्याय था और क्रमशः महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान और पिछड़े वर्गों के व्यक्तियों के पक्ष में सेवाओं में आरक्षण प्रदान किया गया था।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

केस कानूनों के संदर्भ में संविधान में संशोधन

17. विधायी मोर्चे पर, आरक्षण के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय के विभिन्न निर्णयों के मद्देनजर, आरक्षण के संदर्भ में न्यायालयों के निर्णयों के आलोक में आरक्षण नीति के कार्यान्वयन में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने के लिए संविधान में संशोधन के बाद संशोधन लाने के लिए एक संवैधानिक संशोधन व्यवस्था शुरू हुई।

18. संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951, 18 जून, 1951 से प्रभावी हुआ, ताकि **मद्रास राज्य बनाम चम्पकम दोराईराजन** में इस न्यायालय के 5 न्यायाधीशों की संविधान पीठ के निर्णय से उत्पन्न समस्याओं का समाधान किया जा सके, जिसमें मेडिकल कॉलेजों में प्रवेश के लिए जाति-आधारित आरक्षण को संविधान के अनुच्छेद 29(2) का उल्लंघन बताते हुए रद्द कर दिया गया था और **बी. वेंकटरमण बनाम मद्रास राज्य और अन्य** में 5 न्यायाधीशों की संविधान पीठ के अन्य निर्णय द्वारा, जिसमें कहा गया था कि न्यायिक अधिकारियों की नियुक्ति असंवैधानिक है, क्योंकि अनुच्छेद 16(4) केवल नागरिकों के पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की अनुमति देता है। इस प्रकार, भारत के संविधान के अनुच्छेद 15 के उप-अनुच्छेद (4) को प्रस्तुत किया गया ताकि राज्य को नागरिकों के किसी भी सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान करने के लिए सशक्त बनाया जा सके।

19. इस प्रकार, अनुच्छेद 16(4), 15(3) और 15(4) में देश के नागरिकों के बीच सामाजिक न्याय लाने की परिकल्पना की गई है।

20. **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** मामले में संविधान पीठ के निर्णय के बाद, न्यायालय की विभिन्न टिप्पणियों के कारण उत्पन्न कठिनाइयों को दूर करने के लिए संविधान में संशोधनों की बाढ़ आ गई।

21. संविधान (सत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1995 द्वारा संविधान में अनुच्छेद 16(4)(ए) जोड़ा गया ताकि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में पदोन्नति में आरक्षण प्रदान किया जा सके, जिनका राज्य की सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है।

22. इसके बाद संविधान (इक्यासीवां संशोधन) अधिनियम, 2000 पारित किया गया, जिसमें अनुच्छेद 16(4) (बी) को शामिल किया गया ताकि आरक्षित वर्ग की रिक्तियों को आगे बढ़ाने का प्रावधान किया जा सके। नए अनुच्छेद 16(4)(बी) में यह प्रावधान किया गया है कि राज्य को किसी वर्ष की किसी भी रिक्तियों को, जो अनुच्छेद 16 के खंड 4 या खंड 4(ए) के तहत किए गए आरक्षण के प्रावधानों के अनुसार उस वर्ष में भरे जाने के लिए आरक्षित हैं, किसी भी बाद के वर्ष या वर्षों में भरे जाने के लिए आगे बढ़ाने पर विचार करने की शक्ति से वंचित नहीं किया जाएगा और ऐसी आगे बढ़ाई गई रिक्तियों को उस वर्ष की कुल रिक्तियों में 50% आरक्षण के मुद्रांकन का निर्धारण करने के लिए नहीं गिना जाएगा।

23. इसके तत्काल बाद संविधान (बयासीवां संशोधन) अधिनियम, 2000 आया, जो **एस. विनोद कुमार एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य** के मामले में इस न्यायालय के निर्णयों में से एक को पार करने के लिए आवश्यक था, जिसमें कहा गया था कि यदि पदोन्नति में आरक्षण अनुमेय है, तो भी आरक्षित श्रेणियों के लिए पदोन्नति के लिए कम अर्हक अंक या निम्न स्तर का मूल्यांकन कानूनी रूप से अनुमेय नहीं है। उक्त संशोधन में संघ या राज्य के मामलों से संबंधित पदों के लिए किसी वर्ग या वर्गों की सेवाओं में पदोन्नति के मामलों में आरक्षण के लिए किसी

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

भी परीक्षा में अर्हक अंकों में छूट देने या मूल्यांकन के मानकों को कम करने का प्रावधान करने की अनुमति दी गई।

24. **भारत संघ बनाम वीरपाल सिंह चौहान** मामले में, इस न्यायालय ने अवधारित किया कि आरक्षित श्रेणियों के व्यक्तियों को त्वरित पदोन्नति से उन्हें परिणामी वरिष्ठता नहीं मिलेगी और पदोन्नत श्रेणी में उनकी वरिष्ठता फीडर कैडर में उनकी वरिष्ठता द्वारा शासित होगी।

25. **अजीत सिंह जनुजा बनाम पंजाब राज्य** मामले में उपरोक्त दृष्टिकोण की पुनः पुष्टि की गई तथा यह अवधारित किया गया कि आरक्षित श्रेणी के व्यक्ति केवल त्वरित पदोन्नति के ही हकदार हैं, न कि परिणामी वरिष्ठता के।

26. उपरोक्त दो निर्णयों के बाद **अजीत सिंह (II) बनाम पंजाब राज्य** मामले में निर्णय लिया गया, जिसमें उपरोक्त दो मामलों में निर्धारित त्वरित पदोन्नति और परिणामी वरिष्ठता के सिद्धांतों को बरकरार रखते हुए यह स्पष्ट किया गया कि पदोन्नति पर सामान्य उम्मीदवारों को उन आरक्षित उम्मीदवारों पर वरिष्ठता मिलेगी, जिन्हें पहले ही त्वरित पदोन्नति के माध्यम से पदोन्नत किया गया था, यदि दोनों एक ही संवर्ग में हों।

27. संविधान (85 वां संशोधन) अधिनियम, 2002, विशेष रूप से **अजीत सिंह (II)** मामले (उपरोक्त) में दिए गए निर्णयों द्वारा निर्धारित सिद्धांतों को पूर्ववत करने के लिए अधिनियमित किया गया था और संविधान के अनुच्छेद 16 (4) (ए) में "परिणामी वरिष्ठता के साथ" अभिव्यक्ति डाली गई थी। इस संशोधन को 07.06.1995 से पूर्वव्यापी प्रभाव दिया गया था, जिस दिन संविधान (सत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1995 द्वारा अनुच्छेद 14(4)(ए) को संविधान के अनुच्छेद 16 में डाला गया था।

28. इस बीच, **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों का पालन करते हुए, भारत सरकार द्वारा दिनांक 08.09.1993 को एक कार्यालय ज्ञापन जारी किया गया, जिसमें कुछ श्रेणियों के लोगों को "क्रीमी लेयर" के रूप में नामित किया गया। बिहार और उत्तर प्रदेश राज्यों ने बिहार पद और सेवाओं में रिक्तियों का आरक्षण (अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए) (संशोधन) अध्यादेश, 1995, और उत्तर प्रदेश लोक सेवाओं में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण अधिनियम, 1994 के तहत यह प्रावधान किया है कि आईएस और आईपीएस अधिकारी "क्रीमी लेयर" के अंतर्गत आएंगे यदि उनका (i) वेतन 10,000/- रुपये प्रति माह है; (ii) पति/पत्नी में से कोई एक स्नातक है; और (iii) उनमें से एक के पास शहरी क्षेत्र में घर है। इसी प्रकार, 10 लाख रुपये प्रति वर्ष आय वाले पेशेवरों को भी "क्रीमी लेयर" के अंतर्गत वर्गीकृत किया गया है, साथ ही अतिरिक्त मानदंड यह है कि पति या पत्नी में से कोई एक स्नातक होना चाहिए और परिवार के पास कम से कम 20 लाख रुपये की अचल संपत्ति होनी चाहिए।

29. **अशोक कुमार ठाकुर बनाम बिहार राज्य** मामले में, इस न्यायालय ने बिहार और उत्तर प्रदेश अधिनियम द्वारा निर्धारित शिक्षा और संपत्ति की अतिरिक्त शर्तों को संविधान के अनुच्छेद 16(4) और 14 का उल्लंघन करने वाले "क्रीमी लेयर" की पहचान करने के लिए असंवैधानिक करार दिया।

30. **इंद्रा साहनी (II) बनाम भारत संघ** मामले में, केरल राज्य पिछड़ा वर्ग अधिनियम, 1995, जिसमें यह प्रावधान था कि राज्य के किसी भी पिछड़े वर्ग में कोई सामाजिक रूप से उन्नत वर्ग नहीं है और राज्य में पिछड़े वर्गों का राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है और ऐसे में पिछड़े वर्ग आरक्षण का लाभ उठाते रहेंगे, इस प्रकार, यह घोषणा करते हुए कि राज्य में ओबीसी के बीच कोई 'क्रीमी लेयर' नहीं है, को खारिज कर

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

दिया गया और कहा गया कि पिछड़े वर्गों में 'क्रीमी लेयर' को अगड़े वर्गों के बराबर माना जाएगा और वे आरक्षण के लाभ के हकदार नहीं हैं। यह भी देखा गया कि "क्रीमी लेयर" को बाहर रखा जाना चाहिए अन्यथा यह भेदभावपूर्ण होगा और अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन होगा क्योंकि "अगले" और "पिछड़े वर्गों के क्रीमी लेयर" के साथ असमान व्यवहार नहीं किया जा सकता है।

31. **एम. नागराज बनाम भारत संघ** मामले में, संवैधानिक संशोधनों अर्थात् संविधान (सत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1995, संविधान (इकरासीवां संशोधन) अधिनियम, 2000, संविधान (बयासीवां संशोधन) अधिनियम, 2000 और संविधान (पच्चासीवां संशोधन) अधिनियम, 2002 की वैधता को बरकरार रखा गया।

32. **टी.एम.ए. पाई फाउंडेशन बनाम कर्नाटक राज्य** मामले में इस न्यायालय की 11 न्यायाधीशों की संविधान पीठ ने शैक्षणिक संस्थान स्थापित करने के अधिकार, प्रवेश देने की प्रक्रिया, अल्पसंख्यकों के अधिकार और राज्य नियामक तंत्र की सीमा के संबंध में विभिन्न सिद्धांत निर्धारित किए थे। उक्त निर्णय की व्याख्या और स्पष्टीकरण **इस्लामिक एकेडेमिया एजुकेशन बनाम कर्नाटक राज्य** द्वारा किया गया। **पी.ए. इनामदार बनाम महाराष्ट्र राज्य** मामले में 7 न्यायाधीशों की संविधान पीठ ने माना कि इस्लामिक एकेडेमिया एजुकेशन मामले में 5 न्यायाधीशों की संविधान पीठ ने टीएमए पाई फाउंडेशन मामले की सही व्याख्या नहीं की। ऐसी स्थिति में, टीएमए पाई फाउंडेशन मामले की व्याख्या में कथित रूप से उत्पन्न भ्रम को दूर करने के लिए संविधान (तिरानबेवां संशोधन) अधिनियम, 2006 लाया गया और संविधान के अनुच्छेद 15 में उप-अनुच्छेद (5) जोड़ा गया जो इस प्रकार है:

अनुच्छेद 15(5)– इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 19 के खंड (1) के उपखंड (छ) की कोई बात राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों के लिए, विधि द्वारा, कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी, जहां तक ऐसे विशेष उपबंध, अनुच्छेद 30 के खंड (1) में निर्दिष्ट अल्पसंख्यक शिक्षा संस्थाओं से भिन्न, शिक्षा संस्थाओं में, जिनके अंतर्गत प्राइवेट शिक्षा संस्थाएं भी हैं, चाहे वे राज्य से सहायता प्राप्त हों या नहीं, प्रवेश से संबंधित हैं।"

33. संविधान (तिरानबेवां संशोधन) अधिनियम, 2006 की वैधता को **अशोक कुमार ठाकुर मामले (उपरोक्त)** में 5 न्यायाधीशों की संविधान पीठ ने बरकरार रखा, जिसमें सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े नागरिकों के वर्गों या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण प्रदान किया गया था, जहां तक यह राज्य द्वारा संचालित संस्थानों और सरकार द्वारा सहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थानों से संबंधित है।

34. **प्रमति एजुकेशनल एंड कल्चरल ट्रस्ट बनाम भारत संघ** मामले में भी इसी प्रकार का विचार व्यक्त किया गया था, जिसमें संविधान (93 वां संशोधन) अधिनियम, 2006 की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा गया था और गैर-सहायता प्राप्त निजी संस्थानों में सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े नागरिकों के वर्गों या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण को भी बरकरार रखा गया था।

35. **राम सिंह बनाम भारत संघ** मामले में विभिन्न राज्यों में जाटों के लिए आरक्षण को रद्द कर दिया गया था, क्योंकि राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग द्वारा उनके पक्ष में ऐसे किसी आरक्षण की सिफारिश नहीं की गई थी और उनके पक्ष में आरक्षण को उचित ठहराने के लिए कोई मात्रात्मक आंकड़े उपलब्ध नहीं थे। तदनुसार, संविधान (एक सौ दूसरा संशोधन) अधिनियम, 2018 लाया गया और अनुच्छेद 338 बी और 342 ए डाले गए, जिससे

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए एक अलग आयोग का गठन किया गया और राष्ट्रपति को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों को निर्दिष्ट करने का अधिकार दिया गया।

36. **जयश्री लक्ष्मणराव पाटिल बनाम महाराष्ट्र राज्य** मामले में 5 न्यायाधीशों की संविधान पीठ ने महाराष्ट्र राज्य में मराठों के लिए आरक्षण को इस आधार पर रद्द कर दिया कि राज्य के पास किसी भी वर्ग के लोगों को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा वर्ग घोषित करने का अधिकार नहीं है।

37. उपरोक्त निर्णय से उत्पन्न कठिनाई को दूर करने के लिए, संविधान (एक सौ पांचवां संशोधन) अधिनियम, 2021 अनुच्छेद 342 ए में संशोधन करने के बारे में लाया गया ताकि यह प्रावधान किया जा सके कि राष्ट्रपति द्वारा तैयार नागरिकों के सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों की सूची केवल केंद्र सरकार के लिए है, लेकिन राज्य भी अपनी सूची तैयार कर सकते हैं।

38. इस बीच, संविधान (एक सौ तीनवां संशोधन) अधिनियम, 2019 अधिनियमित किया गया जिसके तहत अनुच्छेद 15 और 16 में उप-अनुच्छेद (6) निम्नलिखित शब्दों में डाला गया:

“अनुच्छेद 15(6)– इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 19 के खंड (1) के उपखंड (छ) या अनुच्छेद 29 खंड (2) की कोई बात, राज्य को, –

(क) खंड (4) और खंड (5) में उल्लिखित वर्गों से भिन्न नागरिकों के आर्थिक रूप से दुर्बल किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए कोई भी विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी; और

(ख) खंड (4) और खंड (5) में उल्लिखित वर्गों से भिन्न नागरिकों के आर्थिक रूप से दुर्बल किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए कोई भी विशेष उपबंध करने से वहां निवारित नहीं करेगी, जहां तक ऐसे उपबंध, ऐसी शैक्षणिक संस्थाओं में, जिनके अंतर्गत अनुच्छेद 30 के खंड (1) में निर्दिष्ट अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थाओं से भिन्न प्राइवेट शैक्षणिक संस्थाएं भी हैं, चाहे वे राज्य द्वारा सहायता पाने वाली हैं या सहायता न पाने वाली हैं, प्रवेश से संबंधित हैं, जो आरक्षण की दशा में विद्यमान आरक्षणों के अतिरिक्त तथा प्रत्येक प्रवर्ग में कुल स्थानों के अधिकतम दस प्रतिशत के अध्य होंगे ।

अनुच्छेद 15(6)– इस अनुच्छेद की कोई बात, राज्य को विद्यमान आरक्षण के अतिरिक्त तथा प्रत्येक प्रवर्ग में पदों के अधिकतम दस प्रतिशत के अध्यधीन, खंड (4) में उल्लिखित वर्गों से भिन्न नागरिकों के आर्थिक रूप से दुर्बल किन्हीं वर्गों के पक्ष में नियुक्तियों और पदों के आरक्षण के लिए कोई भी उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।”

39. **जनहित अभियान बनाम भारत संघ (ईडब्ल्यूएस आरक्षण)** मामले में उक्त संशोधन की वैधता को बरकरार रखा गया।

40. आरक्षण का प्रावधान करने के संबंध में संविधान में इसके अपनाए जाने के बाद से किए गए विभिन्न संशोधनों को संक्षेप में इस प्रकार बताया जा सकता है:–

1	संविधान (प्रथम संशोधन) अधिनियम, 1951	सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण प्रदान करने हेतु अनुच्छेद 15 में उप–
---	--------------------------------------	---

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

		अनुच्छेद (4) को शामिल किया गया।
2	संविधान (सत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम, 1995	पदोन्नति में आरक्षण प्रदान करने के लिए अनुच्छेद 16 में उप-अनुच्छेद (4) (ए) को शामिल किया गया।
3	संविधान (इक्यासीवाँ संशोधन) अधिनियम, 2000	रिक्तियों को आगे ले जाने के लिए अनुच्छेद 16 में उप-अनुच्छेद (4) (बी) को शामिल किया गया।
4	संविधान (बयासीवाँ संशोधन) अधिनियम, 2000	अनुच्छेद 335 में परन्तुक जोड़कर आरक्षित श्रेणी के व्यक्तियों के लिए अर्हक अंकों में छूट प्रदान की गई।
5	संविधान (85 वाँ संशोधन) अधिनियम, 2002	अनुच्छेद 16(4)(ए) में "परिणामी वरिष्ठता के साथ" वाक्यांश सम्मिलित करके आरक्षित वर्ग को न केवल त्वरित पदोन्नति बल्कि परिणामी वरिष्ठता भी प्रदान की जाएगी।
6	संविधान (तिरानबेवाँ संशोधन) अधिनियम, 2006	अनुच्छेद 15 में उप-अनुच्छेद (5) को शामिल करके आरक्षित वर्ग के लिए शिक्षा संस्थानों में प्रवेश की व्यवस्था की जाएगी।
7	संविधान (एक सौ दूसरा संशोधन) अधिनियम, 2018 और संविधान (एक सौ पांचवाँ संशोधन) अधिनियम, 2021	अनुच्छेद 342 ए को शामिल करके केंद्र और राज्यों द्वारा पिछड़े वर्गों की पहचान का प्रावधान किया गया।
8	संविधान (एक सौ तीनवाँ संशोधन) अधिनियम, 2019	अनुच्छेद 16 के उप-अनुच्छेद (6) को सम्मिलित करके समान रूप से कमजोर वर्ग ईडब्ल्यूएस के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया।

41. आरक्षित श्रेणियों को आरक्षण का लाभ प्रदान करने के उद्देश्य से किए गए संवैधानिक संशोधनों के उपरोक्त सारांश से पता चलता है कि आरक्षण नीति को निष्पक्ष और निष्पक्ष तरीके से लागू करने के लिए संविधान में 9 बार संशोधन किया गया है, ताकि तथाकथित दलित वर्गों को अगड़े वर्गों के बराबर उठाया जा सके। अधिकांशतः संविधान में संशोधन या तो इस न्यायालय के निर्णयों को रद्द करने के लिए किए गए या फिर आरक्षण नीति के क्रियान्वयन में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देशों या टिप्पणियों को अधिक निष्पक्ष और उचित तरीके से लागू करने के लिए किए गए, ताकि आरक्षण का लाभ अन्य पिछड़े वर्गों/अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के सबसे पिछड़े लोगों तक पहुंच सके।

अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग पर केन्द्र सरकार और राज्य सरकार आयोग

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

42. उपर्युक्त विधायी कार्य के अलावा, स्वतंत्रता के बाद केंद्र सरकार ने वर्ष 1953 में काका साहब कालेलकर की अध्यक्षता में पिछड़ा वर्ग आयोग का गठन किया। आयोग ने अपनी रिपोर्ट में अन्य बातों के साथ-साथ यह भी सिफारिश की है कि सभी महिलाओं को एक वर्ग के रूप में पिछड़ा माना जाना चाहिए; पिछड़े वर्गों के सभी योग्य छात्रों को सभी तकनीकी और व्यावसायिक संस्थानों में 70% सीटों के आरक्षण का लाभ दिया जाना चाहिए; सभी सरकारी सेवाओं और स्थानीय निकायों में पिछड़े वर्गों को न्यूनतम आरक्षण प्रदान किया जाना चाहिए जो कि वर्ग-I में 25%, वर्ग-II में 33- ½%, वर्ग-III में 40% और वर्ग-IV में 40% है। आयोग ने अपनी रिपोर्ट में कहा:

"यदि कुछ अपवादों को छोड़कर पूरे समुदाय को पिछड़ा माना जाएगा तो वास्तविक जरूरतमंद भीड़ में खो जाएंगे और वे शायद ही कभी ध्यान आकर्षित कर पाएंगे और उन्हें पर्याप्त मदद मिल पाएगी।"

43. आयोग ने यह भी कहा कि राजस्थान जैसे कुछ राज्यों में आवारा/बेचैन घूमने वाले/भटकने वाले लोग जो पशुओं की देखभाल और पालन-पोषण करते हैं, उन्हें विशेष सुरक्षा दी जानी चाहिए। रिपोर्ट को कार्ययोजना के साथ संसद में रखा गया था, लेकिन इस पर कोई चर्चा नहीं हुई। उस समय केंद्र सरकार ने 4.5 लाख रुपये खर्च किए थे, जो आज के हिसाब से लगभग 5 करोड़ रुपये के बराबर है।

44. 1965 में, केंद्र सरकार ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की मौजूदा सूची में संशोधन पर सलाह देने के लिए एक समिति नियुक्त की। इस समिति को लोकप्रिय रूप से बीएन लोकुर समिति के रूप में जाना जाता है, जिसने रिपोर्ट दी और निष्कर्ष निकाला कि अपेक्षाकृत उन्नत समुदायों को सूची से बाहर करने (या बाहर करने) के सवाल पर गंभीरता से और तत्काल विचार किया जाना चाहिए। इसने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों में से प्रत्येक द्वारा की गई सामाजिक-आर्थिक प्रगति का गहन आवधिक सर्वेक्षण करने की सिफारिश की, जिसमें संभवतः उन समुदायों को शामिल नहीं किया जाएगा जिन्होंने प्रगति की है, तथा उन समुदायों को शामिल किया जाएगा जो पीछे रह गए हैं। इसने आगे यह भी सिफारिश की कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए विकास योजनाओं को तैयार करते समय, उनमें से सबसे पिछड़े लोगों के कल्याण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इसने उन समुदायों (जातियों/जनजातियों) की एक सूची भी तैयार की जो अपेक्षाकृत आगे थे और 14 अनुसूचित जनजातियों और 28 अनुसूचित जातियों को सूची से हटाने या बाहर करने की सिफारिश की।

45. संविधान का उद्देश्य जातिविहीन समाज बनाना था, लेकिन इसमें कुछ वंचित/दलित वर्गों को अनुसूचित जाति के रूप में परिभाषित किया गया और वन, पहाड़ी क्षेत्रों और अन्य दूरदराज के क्षेत्रों में रहने वाली कुछ जनजातियों को अनुसूचित जनजाति के रूप में परिभाषित किया गया। हालाँकि, आबादी का एक महत्वपूर्ण हिस्सा जो सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक रूप से पिछड़ा हुआ था, उसे कोई विशेषाधिकार या उत्थान का लाभ नहीं दिया गया। वे हाशिए पर थे और शिक्षा के साथ-साथ रोजगार में भी पिछड़े हुए थे। इस विसंगति को दूर करने के लिए भारत सरकार ने 1 जनवरी 1979 को सबसे चर्चित द्वितीय पिछड़ा वर्ग आयोग का गठन किया, जिसे बी.पी. मंडल आयोग के नाम से जाना जाता है। इस आयोग को सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की स्थिति की जांच करने, नागरिकों के ऐसे वर्गों को परिभाषित करने के मानदंडों की सिफारिश करने, उनकी उन्नति और उत्थान के लिए उठाए जाने वाले कदमों और उन्हें आरक्षण का लाभ प्रदान करने के तरीके की सिफारिश करने का काम सौंपा गया था।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

46. आयोग ने 31 दिसंबर, 1980 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। आयोग ने 1961 की जनगणना के आधार पर 'अन्य पिछड़ा वर्ग' शीर्षक के अंतर्गत 3743 वर्गों के व्यक्तियों की एक राष्ट्रीय सूची तैयार की, जिसमें से 2108 को 'दलित पिछड़ा वर्ग' के रूप में वर्गीकृत किया गया। आयोग ने दर्ज किया कि भारत में 52 प्रतिशत (44 प्रतिशत हिंदू और 8 प्रतिशत गैर हिंदू सहित) नागरिक अन्य पिछड़ा वर्ग के हैं जबकि 22.5 प्रतिशत अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति हैं।

47. सरकार ने मंडल आयोग की सिफारिशों को लागू करते हुए 6 अगस्त, 1990 को अन्य पिछड़ा वर्ग, जो सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग थे, के लिए 27 प्रतिशत आरक्षण लागू करने का ऐतिहासिक निर्णय लिया। यह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए 22.5 प्रतिशत आरक्षण के अतिरिक्त था। अन्य पिछड़े वर्गों के पक्ष में 27 प्रतिशत आरक्षण सीमित था क्योंकि इस न्यायालय ने **एम.आर. बालाजी बनाम मैसूर राज्य** मामले में आरक्षण के प्रयोजनों के लिए 50 प्रतिशत की सीमा तय की थी।

48. इस प्रकार मंडल आयोग ने सार्वजनिक क्षेत्र और सरकारी नौकरियों तथा सभी स्तरों पर पदोन्नति में ओबीसी के लिए 27 प्रतिशत आरक्षण की सिफारिश की। यह भी सिफारिश की गई है कि यदि किसी विशेष वर्ष में उपरोक्त कोटा खाली रह जाता है, तो शेष रिक्तियों को 3 वर्ष की अवधि के लिए आगे बढ़ाया जाए, जिसके बाद यदि कोई रिक्तियां नहीं भरी जाती हैं, तो उन्हें आरक्षित नहीं माना जाएगा। इसने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के समान ओबीसी को आयु में छूट देने की भी सिफारिश की। ओबीसी के पक्ष में उक्त 27 प्रतिशत आरक्षण की वैधता को इस न्यायालय ने वर्ष 1992 में **इंद्रा साहनी (उपरोक्त)** मामले में बरकरार रखा था।

49. कार्यकारी/प्रशासनिक पक्ष पर सरकार के उपरोक्त अभ्यास के अलावा, **ई.वी. चिन्नैया (उपरोक्त)** के मामले में इस न्यायालय के निर्देश पर, भारत सरकार ने आंध्र प्रदेश में अनुसूचित जातियों के उप-वर्गीकरण के मुद्दे की जांच करने के लिए राष्ट्रीय स्तर का एक सदस्यीय न्यायमूर्ति उषा मेहरा आयोग नियुक्त किया। वर्ष 2006 में नियुक्त इस आयोग के बाद वर्ष 2007 में केन्द्र सरकार द्वारा न्यायमूर्ति जी. रोहिणी की अध्यक्षता में एक अन्य आयोग का गठन किया गया। इसे ओबीसी की केंद्र सूची में प्रविष्टियों का अध्ययन करने और ओबीसी के बीच आरक्षण के लाभों के न्यायसंगत वितरण की सीमा की जांच करने का कार्य भी सौंपा गया था। एक महत्वपूर्ण पहलू जो इस आयोग को सौंपा गया था, वह ओबीसी के उप-वर्गीकरण के लिए एक तंत्र तैयार करना था।

50. इसके अतिरिक्त, विभिन्न राज्यों ने विभिन्न अवसरों पर आरक्षण नीति में किए जाने वाले सुधारों तथा संबंधित राज्य के संदर्भ में आरक्षण के प्रावधानों के सुचारु कार्यान्वयन के बारे में अध्ययन करने तथा रिपोर्ट देने के लिए विभिन्न राज्य स्तरीय समितियों और आयोगों का गठन किया था। इस संदर्भ में, विभिन्न राज्यों द्वारा गठित कुछ समितियों और आयोगों का उल्लेख करना लाभदायक हो सकता है:

1	1961	डॉ. आर. नागन्ना गौड़ा समिति, कर्नाटक	इसमें तकनीकी एवं व्यावसायिक संस्थानों में 50% तथा सरकारी सेवाओं में 45% आरक्षण का सुझाव दिया गया।
2	1963	वी.के. विश्वनाथन आयोग, केरल	इसने तकनीकी और व्यावसायिक कॉलेजों में ओबीसी छात्रों के लिए 40% और एससी/एसटी छात्रों के लिए 10% सीटें आरक्षित करने की सिफारिश की।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

3	1964	बी.डी. देशमुख समिति, महाराष्ट्र	इसने पिछड़े वर्गों को चार श्रेणियों में बांटने तथा राज्य में उनके प्रतिशत के अनुपात में सरकारी सेवाओं और शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण देने की सिफारिश की।
4	1969	ए.एन.सत्तनाथन आयोग, तमिलनाडु	इसने 1970 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और राज्य सरकार की नौकरियों और शैक्षणिक संस्थानों में 33% आरक्षण की सिफारिश की।
5	1970	मनोहर प्रसाद आयोग, आंध्र प्रदेश	इसने ओबीसी की चार विभिन्न श्रेणियों की पहचान की तथा व्यावसायिक कॉलेजों और सरकारी सेवाओं दोनों में उनके पक्ष में आरक्षण की सिफारिश की।
6	1970	जे.एन. वजीर समिति, जम्मू और कश्मीर	इस समिति की सिफारिशों के आधार पर राज्य सरकार द्वारा “जम्मू और कश्मीर अनुसूचित जाति और पिछड़ा वर्ग (आरक्षण) नियम, 1970” तैयार किए गए।
7	1973	डेबर आयोग जनजातीय कार्य मंत्रालय	इस आयोग की स्थापना कमजोर आदिवासी समूहों का अध्ययन करने के लिए की गई थी। इसने आदिवासी समूहों में कम विकसित लोगों के लिए अलग श्रेणी बनाने का सुझाव दिया। 1975 में भारत सरकार ने सबसे कमजोर जनजातीय समूहों को एक अलग श्रेणी के रूप में चिन्हित करने के लिए एक अभियान चलाया और उनमें से 52 को ऐसे समूह में घोषित किया, जिसमें 1993 में 23 नए समूह जोड़े गए, जिससे कुल 705 अनुसूचित जनजातियों में से 75 समूह इसमें शामिल हो गए।
8	1975	एल.जी. हवानूर आयोग, कर्नाटक	इसने सरकारी रक्तियों और शैक्षणिक संस्थानों में पिछड़े समुदायों के लिए 16%, पिछड़ी जातियों के लिए 10% और पिछड़ी जनजातियों के लिए 6% आरक्षण की सिफारिश की।
9	1976	मुंगेरी लाल आयोग, बिहार	इसने 128 समुदायों को पिछड़ा और 94 को सबसे पिछड़ा बताया। इसने सरकारी सेवाओं में 20% और व्यावसायिक संस्थानों में 24% आरक्षण की सिफारिश की।
10	1976	ए.आर.बक्शी आयोग, गुजरात	इसमें 82 जातियों और समुदायों को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा बताया गया तथा सरकारी सेवाओं और व्यावसायिक संस्थानों में 10% आरक्षण की सिफारिश की गई।
11	1977	छेदी लाल साथी आयोग, उत्तर प्रदेश	यह सबसे चर्चित पिछड़े वर्गों पर आयोगों में से एक है। इसने पिछड़े वर्गों को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत करने की सिफारिश की और एक अलग कोटा के तहत सरकारी सेवाओं और शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण का सुझाव दिया।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

12	1990	न्यायमूर्ति गुरनाम सिंह आयोग, हरियाणा	आयोग ने पाया कि आरक्षण का लाभ मुख्य रूप से एक विशेष अनुसूचित जाति द्वारा उठाया गया है तथा इसका समग्र लाभ शेष 36 अनुसूचित जातियों तक नहीं पहुंचा है। परिणामस्वरूप, हरियाणा में आरक्षण के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियों की सूची को ब्लॉक 'ए' और ब्लॉक 'बी' में विभाजित किया गया, जिससे 36 अनुसूचित जातियों को ब्लॉक 'ए' में रखा गया तथा सबसे अधिक लाभ प्राप्त करने वाली जाति को ब्लॉक 'बी' में रखा गया।
13	1997	न्यायमूर्ति पी. रामचन्द्र राजू, आयोग, आंध्र प्रदेश	यह आयोग आंध्र प्रदेश राज्य की अनुसूचित जातियों में से अत्यंत पिछड़ी जातियों की मांग पर स्थापित किया गया था। रिपोर्ट में कहा गया कि आरक्षण का लाभ मुख्यतः अनुसूचित जातियों में से एक विशेष जाति को ही मिला है, इसलिए अनुसूचित जातियों को समूह ए, बी, सी और डी में वर्गीकृत करने की सिफारिश की गई। इस आयोग की सिफारिश के आधार पर ही आंध्र प्रदेश में अनुसूचित जातियों को समूह ए, बी, सी और डी में वर्गीकृत किया गया था, जिसके अधिनियमन के परिणामस्वरूप ई.वी. चिन्नैया मामले में इस न्यायालय ने इस वर्गीकरण को असंवैधानिक घोषित किया और कहा कि अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति एक समरूप वर्ग है और आरक्षण के प्रयोजनों के लिए उन्हें उप-वर्गीकृत नहीं किया जा सकता।
14	2001	हुकम सिंह समिति, उत्तर प्रदेश	अध्ययन के बाद समिति ने पाया कि आरक्षण का लाभ सबसे अधिक वंचित वर्ग तक नहीं पहुंच रहा है, बल्कि नौकरियों में सबसे अधिक हिस्सा यादवों का है। इसलिए, इसने अनुसूचित जातियों/ओबीसी की सूची के उप-वर्गीकरण की सिफारिश की।
15	2003	लाहुजी साल्वे आयोग, महाराष्ट्र	यह आयोग अनुसूचित जातियों की सूची में शामिल मांग जाति की सामाजिक आर्थिक स्थिति का अध्ययन करने के लिए नियुक्त किया गया था। आयोग ने अनुसूचित जातियों के उप-वर्गीकरण की सिफारिश की क्योंकि जाति व्यवस्था के पदानुक्रम में मांग सबसे निचले स्थान पर थे और उन्हें पर्याप्त लाभ नहीं मिल रहा था।
16	2005	न्यायमूर्ति ए.जे. सदाशिव आयोग, कर्नाटक	इस आयोग की नियुक्ति राज्य में अनुसूचित जातियों की उन जातियों, नस्लों और जनजातियों की पहचान करने के लिए की गई थी, जिन्हें आरक्षण का लाभ पर्याप्त रूप से नहीं दिया जा रहा था। आयोग ने राष्ट्रपति सूची में निर्दिष्ट 101 जातियों को चार श्रेणियों में विभाजित करने की सिफारिश की, जिसमें प्रत्येक श्रेणी के लिए

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

			अनुसूचित जातियों के कुल आरक्षण का 15% शामिल हो।
17	2007	महादलित आयोग, बिहार	आयोग का उद्देश्य अनुसूचित जातियों में पिछड़ी जातियों की पहचान करना था। आयोग ने अनुसूचित जातियों की सूची में से 18 जातियों को अत्यंत कमजोर जातियों के रूप में शामिल करने की सिफारिश की।
18	2007	जस्टिस जसराज चोपड़ा समिति, राजस्थान	समिति ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि गुर्जर दूरदराज, पृथक और निर्जन क्षेत्रों में रहते हैं तथा अत्यंत पिछड़े हैं, इसलिए सिफारिश की गई कि उन्हें अन्य पिछड़े वर्गों को उपलब्ध सुविधाओं से बेहतर सुविधाएं प्रदान की जाएं।
19	2008	न्यायमूर्ति थिरु एम.एस. जनार्थनम समिति, तमिलनाडु	समिति ने सिफारिश की कि अरुंधथियार को आरक्षण में विभेदकारी व्यवहार मिलना चाहिए।
20	2017	के. रत्न प्रभा समिति, कर्नाटक	इस समिति की सिफारिश के आधार पर, आरक्षण के आधार पर पदोन्नत सरकारी कर्मचारियों के लिए परिणामी वरिष्ठता का कर्नाटक विस्तार (राज्य की सिविल सेवाओं में पदों के लिए) अधिनियम, 2018 को अधिनियमित किया गया और मामला सर्वोच्च न्यायालय में आया, जिसमें अधिनियम की वैधता को बरकरार रखा गया और यह राय दी गई कि आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवार न केवल त्वरित पदोन्नति के हकदार हैं, बल्कि परिणामी वरिष्ठता के भी हकदार हैं।
21	2018	न्यायमूर्ति राघवेन्द्र कुमार समिति, उत्तर प्रदेश	रिपोर्ट के अनुसार राज्य में ओबीसी श्रेणी के अंतर्गत 79 जातियां हैं, जिनमें से 9 पिछड़ी, 37 अधिक पिछड़ी तथा 33 सर्वाधिक पिछड़ी जातियां हैं। इसलिए, इसने राज्य में ओबीसी के 27% कोटे को विभाजित करने की सिफारिश की: पिछड़े वर्गों के लिए 7%, अधिक पिछड़े वर्गों के लिए 11% और सर्वाधिक पिछड़े वर्गों के लिए 9%।

आरक्षण के प्रभाव

51. देश में आरक्षण का उपरोक्त इतिहास इस बात का स्पष्ट संकेत देता है कि राज्य के तीनों अंगों यानी विधानमंडल, कार्यपालिका और न्यायपालिका ने आरक्षण नीति को बढ़ावा देकर और उसे इस तरह लागू करके सामाजिक न्याय लाने के लिए बहुत प्रयास किए हैं कि पिछड़े ही नहीं बल्कि पिछड़ों में सबसे पिछड़े लोगों को भी मुख्यधारा में शामिल किया जा सके। तो सवाल उठता है कि आरक्षण नीति किसी के अनुमान के मुताबिक कितनी सफल रही है? आरक्षण नीति की सफलता या विफलता के बावजूद एक बात तो तय है कि इसने न्यायपालिका के सभी स्तरों, खास तौर पर उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालयों पर बहुत अधिक मुकदमेबाजी

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

का बोझ डाला है, जिसे टाला जा सकता था अगर संवैधानिक प्रावधानों के तहत शुरू से ही एक मजबूत और दूरदर्शी आरक्षण नीति की परिकल्पना की गई होती, न कि टुकड़ों में बदलाव किए गए होते।

52. यह अनुभव की बात है कि सरकारी सेवाओं में चयन और नियुक्ति तथा उच्च स्तर पर प्रवेश की हर तरह की प्रक्रिया को आरक्षण के नियमों के गलत इस्तेमाल के आधार पर अदालतों में चुनौती दी जाती रही है। अधिकांश बार मुकदमेबाजी के कारण नियुक्तियां और प्रवेश वर्षों तक अटके रहते हैं। इससे भर्ती प्रक्रिया में भारी देरी होती है और रिक्तियां लंबे समय तक खाली रह जाती हैं, जिससे अस्थायी/तदर्थ नियुक्तियां होती हैं, जिसके परिणामस्वरूप मुकदमेबाजी बढ़ती है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि राज्य के तीनों विभागों द्वारा आरक्षण की प्रक्रिया को सुव्यवस्थित करने और आरक्षण नीति को लागू करने के लिए एक दोषरहित तंत्र विकसित करने में पर्याप्त समय और ऊर्जा खर्च की गई है, लेकिन फिर भी पिछड़ी जातियों के उत्थान को संभालने के लिए गैर-दूरदर्शी दृष्टिकोण ने उन्हें सुलझाने के बजाय और अधिक कठिनाइयां पैदा की हैं।

53. यह बात सर्वविदित है कि आरक्षण समर्थक और आरक्षण विरोधी आंदोलनों के दौरान पूरे देश की शांति और स्थिरता कभी-कभी भंग हो जाती थी। खास तौर पर 1990 में मंडल आयोग विरोधी आंदोलन के दौरान अधिकांश राज्यों में बड़े पैमाने पर अशांति देखी गई। अगस्त-नवंबर 1990 के महीनों में ऐसे आंदोलनों और प्रदर्शनों से पैदा हुई अशांति व्यापक हिंसा का पर्याप्त संकेत है।

54. यह बताना प्रासंगिक होगा कि मंडल आयोग विरोधी हिंसा के अलावा देश ने वर्ष 2006 में भी इसी तरह की हिंसा देखी थी, जब आईआईटी और एम्स के छात्र आरक्षण का विरोध करते हुए सड़कों पर उतरे थे। इसके अलावा, महाराष्ट्र में मराठा आरक्षण के खिलाफ हिंसा हुई थी।

55. स्वतंत्रता के पश्चात राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में 10 वर्ष की अवधि के भीतर सभी बच्चों को अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने का विशेष प्रावधान किया गया था, लेकिन स्वतंत्रता के 77 वर्ष बाद भी यह लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सका। कुछ वर्ष पूर्व केन्द्र सरकार ने बच्चों को निःशुल्क शिक्षा प्रदान करने के लिए शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 बनाया। उक्त अधिनियम बहुत ही कमजोर कानून साबित हुआ तथा जाति, पंथ, नस्ल, धर्म और लिंग के बावजूद सभी को प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने में सक्षम नहीं रहा, क्योंकि तथाकथित दलित वर्ग के अधिकांश बच्चे या तो स्कूल नहीं जाते या एक या दो वर्ष की शिक्षा के बाद पढ़ाई छोड़ देते हैं। ऐसे बच्चों को शिक्षा देने की कोई बाध्यता नहीं है। आरक्षण की नीति केवल उच्च स्तर पर और रोजगार के प्रयोजनों के लिए लागू है। इस प्रकार, ऐसे बच्चों या स्कूल छोड़ने वाले बच्चों को प्राथमिक स्तर पर आरक्षण या किसी अन्य तरीके से उत्थान के लाभ से वंचित किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप ये बच्चे अंततः पिछड़ों में सबसे पिछड़े रह जाते हैं।

56. आंकड़े साबित करते हैं कि वंचित और हाशिए पर पड़े लोगों को आरक्षण का लाभ नहीं मिल पाया है, जो उच्च स्तर पर अनुमेय है क्योंकि सबसे पिछड़े वर्गों के लगभग 50% छात्र कक्षा-5 से पहले और 75% कक्षा-8 से पहले स्कूल छोड़ देते हैं। हाई स्कूल के स्तर पर यह आंकड़ा 95 प्रतिशत तक पहुँच जाता है। इस प्रकार, केवल कुछ जातियों के बच्चे, जो पहले से ही समृद्ध या शहरीकृत हैं, उच्च शिक्षा और आरक्षण का लाभ प्राप्त करने में सक्षम हैं।

57. उपरोक्त आन्दोलनों, उपद्रवों, हिंसा, मुकदमेबाजी और कमियों का उल्लेख करते हुए मेरा यह सुझाव देने का कोई इरादा नहीं है कि दलितों के उत्थान का कार्य समाप्त कर दिया जाए अथवा सरकार आरक्षण नीति को त्याग

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

दे। लेकिन मुद्दा यह है कि समानता और सभी का विकास लाने की प्रक्रिया को कैसे आगे बढ़ाया जाए, तथाकथित दलित वर्गों या दलितों की पहचान कैसे की जाए और उनके उत्थान के लिए उठाए जाने वाले कदमों का स्वरूप क्या हो। सरकार ने उत्थान के लिए जाति को आधार बनाया है, न कि व्यवसाय या सामाजिक और आर्थिक स्थिति के आधार पर लोगों के वर्ग की पहचान की है, जिन्हें वास्तव में अगड़े वर्ग के स्तर पर पदोन्नत करने के लिए सहायता की आवश्यकता है। यही कारण है कि आज हम आरक्षण के उद्देश्य से अधिसूचित जातियों के उप-वर्गीकरण की स्थिति से जूझ रहे हैं। अनुभव से पता चलता है कि पिछड़े वर्ग में श्रेष्ठतम वर्ग आरक्षित अधिकांश रिक्तियों/सीटों को खा जाता है, जिससे सबसे पिछड़े वर्ग के पास कुछ नहीं बचता।

58. इसे तीन छात्रों अर्थात् 'ए', 'बी' और 'सी' को लेकर स्पष्ट किया जा सकता है। 'ए' और 'बी' दोनों ही हर तरह से समान हैं, क्योंकि वे एक ही तरह की स्थिति, पारिवारिक पृष्ठभूमि, शिक्षा और वित्तीय क्षमता वाले संपन्न परिवार से आते हैं। 'ए' सामान्य श्रेणी का उम्मीदवार होने के कारण उच्च शिक्षा में प्रवेश के लिए योग्यता प्राप्त करता है, जबकि 'बी' जो पिछड़े वर्ग से संबंधित है, वह आरक्षित श्रेणी में प्रवेश के लिए प्रतिस्पर्धा करता है और योग्यता प्राप्त करता है। छात्र 'सी' जो पिछड़े वर्ग का है, लेकिन उसे 'ए' और 'बी' दोनों को मिलने वाले लाभ के रूप में कोई लाभ नहीं मिलता है, पिछड़ी श्रेणी में प्रतिस्पर्धा करने के बावजूद असफल रहता है। अगले वर्षों में भी वह असफल ही रहता है, क्योंकि बार-बार पिछड़ी श्रेणी के उम्मीदवार, जो अगड़े वर्ग के समकक्ष या 'ए' और 'बी' के समकक्ष हैं, उत्तीर्ण होते रहते हैं और पिछड़ों में सबसे पिछड़े को बहुत पीछे छोड़ देते हैं। इस तरह पिछड़े वर्ग के सबसे पिछड़े लोग पिछड़े वर्गों से भी लड़ाई हार जाते हैं, जो व्यावहारिक रूप से अगड़े वर्ग के लोगों की स्थिति का आनंद ले रहे हैं।

जातिविहीन समाज-जाति व्यवस्था के प्रतिकूल वर्ण व्यवस्था

59. संविधान वस्तुतः जातिविहीन समाज और एकीकृत समाज की कल्पना करता है, लेकिन दलित वर्ग/दलितों को सुविधा और विशेषाधिकार देने के लिए 'समानता' के नाम पर यह कहा जाता है कि हमने जाति की तथाकथित मनुवादी व्यवस्था को जारी रखा है। मैं धार्मिक ग्रंथों का विशेषज्ञ नहीं हूँ और न ही मैं यह दावा करता हूँ कि मुझे उनमें से किसी का भी ज्ञान है, हालाँकि मैंने कभी-कभी भगवद्गीता और रामचरित मानस का अध्ययन किया होगा। शास्त्रों की मेरी सीमित समझ के अनुसार, विशेषकर गीता के अनुसार, मेरा दृढ़ मत है कि आदिम भारत में किसी भी जाति व्यवस्था का अस्तित्व नहीं था, बल्कि लोगों का उनके पेशे, प्रतिभा, गुणों और स्वभाव के अनुसार वर्गीकरण था। यह बात भगवद्गीता के अध्याय 4 के श्लोक 13 और अध्याय 18 के श्लोक 41 में बहुत अच्छी तरह से प्रतिबिम्बित की जा सकती है, जिसे मैं नीचे उद्धृत कर रहा हूँ।

60. चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः। (अध्याय 4, श्लोक 13, भगवत गीता)

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परन्तप।

कर्मणी प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः ॥ (अध्याय 18, श्लोक 41, भगवत गीता)

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि मैंने मनुष्यों को उनकी प्रकृति और विशेषताओं के अनुसार 4 वर्णों में बाँटा है इस प्रकार गीता केवल वर्ण व्यवस्था को बढ़ावा देती है जो वर्तमान जाति व्यवस्था से भिन्न है। यह समाज की संतुलित संरचना के लिए व्यक्ति की योग्यता, गुण और चेतना पर जोर देती है और प्रत्येक व्यक्ति में सर्वश्रेष्ठ को सामने लाती है। चार वर्ण (व्यावसायिक श्रेणियाँ) हैं: -

वर्ण (व्यावसायिक श्रेणियाँ) हैं: -

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

1	भरमा	शिक्षक, पुजारी और बुद्धिजीवी (पुजारी वर्ग)
2	क्षत्रिय	योद्धा, पुलिस और प्रशासक (प्रशासनिक वर्ग)
3	वैश्य	किसान, व्यापारी, व्यापारी और व्यवसायी (व्यापारी और किसान वर्ग)
4	सूद्र	कारीगर, श्रमिक और श्रमिक वर्ग (श्रमिक वर्ग)

61. भगवद्गीता के अगले श्लोकों में प्रत्येक वर्ण के आंतरिक गुणों का वर्णन किया गया है। व्यावसायिक श्रेणियों को दर्शाने वाली वर्ण व्यवस्था को व्यक्ति के भौतिक शरीर से भी समझाया जा सकता है, जिसमें बौद्धिक कार्य करने वाले व्यक्ति के सिर को 'ब्राह्मण' कहा जाता है। जो हाथ उसकी और उसके परिवार की रक्षा करते हैं, वे 'क्षत्रिय' का काम करते हैं। पेट जिसे भोजन को ऊर्जा में बदलने की आवश्यकता होती है, वह 'वैश्य' को संदर्भित करता है, जो मुख्य रूप से किसान और व्यापारी हैं जो आजीविका कमाने के लिए निवेश करते हैं। निचले अंग (पैर) सभी प्रकार के श्रम कार्य करते हैं और उन्हें 'शूद्र' कहा जाता है।।

62. स्कंद पुराण में भी एक श्लोक है:

जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् द्विज उच्यते

जिसका अर्थ है कि प्रत्येक व्यक्ति शूद्र के रूप में जन्म लेता है अर्थात् कर्म करने के लिए और धीरे-धीरे उनमें से प्रत्येक अपनी प्रतिभा, गुण, चरित्र और स्वभाव के बल पर वैश्य, क्षत्रिय और ब्राह्मण के उच्च पद पर पहुँच जाता है।

63. इसका अर्थ है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के कर्तव्य उनके गुणों और स्वभाव के अनुसार वितरित किए गए (न कि जन्म से)। सभी लोगों का स्वभाव और विशेषताएँ अलग-अलग होती हैं। उनके व्यक्तित्व का निर्माण उनके गुणों के अनुसार होता है। इस प्रकार, अलग-अलग पेशेवर कर्तव्य अलग-अलग स्वभाव और चरित्र वाले व्यक्तियों के लिए उपयुक्त होते हैं। ईश्वर (परमात्मा) समाज का केंद्र है, इसलिए प्रत्येक व्यक्ति (आत्मा) अपने अंतर्निहित गुणों के अनुसार स्वयं और समाज को बनाए रखने के लिए काम करता है।

64. वर्ण व्यवस्था के अनुसार किसी को भी निम्न या उच्च नहीं माना जाना चाहिए, बल्कि यह उपदेश दिया गया है कि सभी समान हैं और सर्वशक्तिमान ईश्वर के अभिन्न अंग हैं। गीता कहीं भी यह उपदेश नहीं देती है कि उपरोक्त वर्ण जन्म के आधार पर हैं और एक दूसरे के स्थान पर नहीं आ सकते हैं। हालाँकि, समय बीतने के साथ, वर्ण व्यवस्था बिगड़ गई और लोगों ने व्यक्ति की प्रकृति और विशेषताओं की अनदेखी करते हुए इन वर्णों को जन्म के आधार पर लेबल करना शुरू कर दिया, जो गीता में दिए गए उपदेशों के बिल्कुल विपरीत है। वर्णों को बहुत ढीले ढंग से जातियों का नाम दिया गया था।

65. बाद में ब्राह्मणों की संतानें स्वयं को ब्राह्मण कहने लगीं, भले ही उनमें गुण हों या न हों। इसी प्रकार अन्य वर्णों की संतानों ने भी अपने स्वभाव, प्रतिभा और गुणों की अनदेखी करते हुए अपने पिता का वर्ण अपना लिया। जब यह व्यवस्था कठोर और जन्म आधारित हो गई, तो यह बेकार हो गई।

66. संक्षेप में, यह बताने का आशय यह है कि गीता के अनुसार कोई जाति व्यवस्था नहीं है और वर्ण व्यवस्था (वर्गीकरण) व्यक्ति के स्वभाव और गुणों के आधार पर बिल्कुल अलग है। इस प्रकार, प्राचीन भारत यानी भारत

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।

में कोई जाति व्यवस्था नहीं थी। वर्ण व्यवस्था को जाति व्यवस्था के रूप में गलत तरीके से प्रस्तुत करना एक सामाजिक दोष था जो समय के साथ बढ़ता गया और इसे अच्छा नहीं माना गया क्योंकि इसने समाज को विभाजित किया और भेदभाव और असमानता को जन्म दिया।

67. तथाकथित जाति व्यवस्था या अस्पृश्यता आदि की समस्या से उत्पन्न सामाजिक समस्याओं को व्यापक रूप से भारतीय समाज में प्रचलित कुरीतियाँ माना जाता था। इसलिए, समाज सुधारकों ने हमेशा ऐसी कुप्रथाओं को छोड़ने का प्रचार किया।

68. राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने पूरे स्वतंत्रता संग्राम के दौरान 'अछूतों' सहित तथाकथित दलित वर्गों के उत्थान के लिए कड़ी मेहनत की। उन्होंने अछूतों को 'ईश्वर के व्यक्ति' - 'हरिजन' के रूप में वर्णित किया। स्वतंत्रता के बाद संविधान को अपनाने के साथ, हमने एकीकृत जातिविहीन समाज की ओर बढ़ने का फैसला किया और अनुच्छेद 17 के तहत किसी भी रूप में अस्पृश्यता की प्रथा को समाप्त करने की परिकल्पना की और अस्पृश्यता को 'दंडनीय अपराध' बनाने पर विचार किया। जातिविहीन समाज का उद्देश्य और समानता का सिद्धांत होने के बावजूद; मूल संविधान ने अनुच्छेद 15 (3) के तहत प्रावधान किया था कि राज्य महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान कर सकता है, भले ही धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव पर रोक हो। इसी प्रकार, अनुच्छेद 16 (4) राज्य को किसी पिछड़े वर्ग के नागरिकों के पक्ष में नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए विशेष प्रावधान करने में सक्षम बनाता है। ऐसा सामाजिक समानता और न्याय लाने के उद्देश्य से किया गया था।

69. संविधान ने उसी समय अनुच्छेद 341 के तहत राष्ट्रपति को कुछ जातियों, नस्लों या जनजातियों या ऐसी जातियों, नस्लों और जनजातियों के हिस्से को अनुसूचित जाति के रूप में अधिसूचित करने की शक्ति प्रदान की। वास्तव में, संविधान अन्यथा उपरोक्त मान्य प्रावधान को छोड़कर किसी भी जाति को मान्यता नहीं देता है। देश इस तरह से जातिविहीन समाज में चला गया था, केवल संविधान के प्रयोजनों के लिए उपरोक्त कानूनी कल्पना को छोड़कर, अन्यथा नहीं।

70. दूसरे शब्दों में, संक्षेप में कहें तो आदिम भारत में कोई जाति व्यवस्था नहीं थी। धीरे-धीरे प्रचलित वर्ण व्यवस्था को जाति व्यवस्था समझ लिया गया, जिसे सामाजिक रूप से अस्वीकार्य पाया गया और इस तरह स्वतंत्रता के बाद संविधान को अपनाने के साथ हमने फिर से जातिविहीन समाज की ओर बढ़ने की कोशिश की, लेकिन दलितों और पिछड़े वर्गों के उत्थान के लिए सामाजिक कल्याण के नाम पर हम फिर से जाति व्यवस्था के जाल में फंस गए। हमने समानता लाने के लिए दलितों या पिछड़े वर्ग या अनुसूचित जाति को आरक्षण का विशेषाधिकार दिया।

71. यह आम समझ है कि किसी भी वर्ग को खुश करने के लिए एक बार जो दिया जाता है, उसे वापस नहीं लिया जा सकता। संविधान के तहत आरक्षित वर्ग के लोगों को दिए गए लाभ भी इसी तरह हैं। एक बार दी गई हर रियायत, किशमिश/गुब्बारे की तरह फूलती रहती है। आरक्षण की नीति के साथ भी यही हुआ। आरक्षण केवल सुविधा का माध्यम है, लेकिन इसके क्रियान्वयन से जातिवाद फिर से पनपता है।

72. आरक्षण ओबीसी/एससी/एसटी की स्थिति को बेहतर बनाने या मदद करने के तरीकों में से एक है। जो कोई भी तथाकथित दलित वर्गों या दलितों या समाज के हाशिए पर पड़े लोगों की मदद करने का कोई दूसरा या

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

बेहतर तरीका सुझाता है, उसे तुरंत 'दलित विरोधी' करार दिया जाता है। 'दलित विरोधी' कहलाने की कीमत पर, मैं नानी ए पालकीवाला की पुस्तक 'वी, द नेशन, द लॉस्ट डिफेंड्स' से उद्धृत करता हूँ)

"संविधान का मूल ढांचा एक सुसंगठित, एकीकृत, जातिविहीन समाज की परिकल्पना करता है। जातिवाद में नई जान फूंककर, यह निर्णय राष्ट्र को खंडित करता है और संविधान के मूल ढांचे की अवहेलना करता है। यह निर्णय जातिवाद को पुनर्जीवित करेगा, राष्ट्र को दो भागों में विभाजित करेगा – अगड़ा और पिछड़ा – और आंतरिक संघर्षों और विखंडनकारी ताकतों के लिए नए रास्ते खोलेगा, और पिछड़ेपन को एक निहित स्वार्थ बना देगा। यह एकीकृत, एकीकृत राष्ट्र बनाने की दिशा में स्वतंत्रता के बाद से जो कुछ भी हासिल किया गया है, उसे खत्म कर देगा। बहुमत के फैसले जातिवाद को पुनर्जीवित करेंगे, जिसे संविधान ने जोरदार तरीके से समाप्त करने का इरादा किया था; और स्वतंत्रता-पूर्व त्रासदी को भूमिकाओं को उलट कर फिर से लागू किया जाएगा – पहले के वंचित लोग वंचित नहीं बनेंगे विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के लिए।"

73. वास्तव में, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्ग अन्य अगड़े वर्गों के लोगों के साथ समानता के हकदार हैं। **के सी वसंत कुमार और अन्य बनाम कर्नाटक राज्य** के मामले में न्यायमूर्ति ओ. चिन्नाप्पा रेड्डी ने कहा, "उन्हें सुविधा की आवश्यकता है; उन्हें प्रक्षेपण की आवश्यकता है; उन्हें प्रणोदन की आवश्यकता है। उनकी ज़रूरतें उनकी माँ हैं। माँ अधिकारों के मामले हैं, परोपकार के नहीं। वे समानता की माँग करते हैं, दान की नहीं।"

74. **केरल राज्य बनाम एन एम थॉमस** के मामले में न्यायमूर्ति वी आर कृष्णा अय्यर ने कहा, "आप प्रशासनिक क्षमता के विचारों को हवा में नहीं उड़ा सकते और 'हरिजन कल्याण' के नाम पर सरकार के काम को ठप्प नहीं कर सकते।"

75. **ए. पेरियाकरुप्पन चेट्टियार बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्य** के मामले में इस न्यायालय ने कहा कि आरक्षण को निहित स्वार्थ नहीं बनने दिया जाना चाहिए। **अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ बनाम भारत संघ और अन्य** के मामले में यह कहा गया कि आरक्षण नीति की प्रभावशीलता इस बात पर निर्भर करेगी कि आरक्षण को कितनी जल्दी खत्म किया जा सकता है। तत्कालीन भारत के मुख्य न्यायाधीश वाई.वी. चंद्रचूड़ ने **वसंत कुमार (उपरोक्त)** के मामले में सलाह दी, "रोजगार, शिक्षा और विधायी संस्थानों में आरक्षण की नीति की हर पांच साल में समीक्षा की जानी चाहिए।"

76. पंडित जवाहर लाल नेहरू ने 27 जून 1961 को सभी राज्यों के मुख्यमंत्रियों को संबोधित अपने पत्र में किसी भी जाति या समूह को आरक्षण और विशेषाधिकार देने की आदत पर दुख जताया और कहा कि इस तरह की प्रथा को छोड़ दिया जाना चाहिए और नागरिकों की मदद जाति के आधार पर नहीं बल्कि आर्थिक आधार पर की जानी चाहिए और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों को मदद मिलनी चाहिए, लेकिन किसी भी तरह के आरक्षण के रूप में नहीं, खासकर सेवाओं में। उन्होंने लिखा:

"मैं चाहता हूँ कि मेरा देश हर चीज में प्रथम श्रेणी का देश बने। जिस क्षण हम दूसरे दर्जे को बढ़ावा देते हैं, हम खो जाते हैं।"

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पिछड़े समूह की मदद करने का एकमात्र वास्तविक तरीका उन्हें अच्छी शिक्षा के अवसर देना है, इसमें तकनीकी शिक्षा भी शामिल है जो अधिक से अधिक महत्वपूर्ण होती जा रही है। बाकी सब कुछ किसी तरह की बैसाखी का प्रावधान है जो शरीर की ताकत या स्वास्थ्य में वृद्धि नहीं करता है।"

उसी पत्र में उन्होंने दो बहुत महत्वपूर्ण निर्णयों के बारे में बात की, "पहला, सार्वभौमिक मुफ्त प्राथमिक शिक्षा जो आधार है; और दूसरा, प्रतिभाशाली लड़के और लड़कियों को शिक्षा के हर स्तर पर बहुत व्यापक पैमाने पर छात्रवृत्ति।" उन्होंने आगे कहा कि यदि सांप्रदायिक और जातिगत आधार पर आरक्षण जारी रहा, तो भारत दूसरे दर्जे या तीसरे दर्जे का ही रहेगा। उन्होंने कहा, "यह न केवल मूर्खता है, बल्कि आपदा है। हमें पिछड़े समूहों की हर तरह से मदद करनी चाहिए, लेकिन कभी भी दक्षता की कीमत पर नहीं।"

निष्कर्ष

77. हमारे पूर्ववर्ती, न केवल न्यायाधीश बल्कि पूर्व प्रधान मंत्री भी किसी भी वर्ग या जाति के लोगों को विशुद्ध रूप से जाति के आधार पर आरक्षण देने के खिलाफ दिखाई दिए और देश को योग्यता के आधार पर आगे ले जाना चाहते थे। इस तरह व्यक्त किए गए विचारों के बावजूद, संवैधानिक संशोधनों में दलित और पिछड़े वर्गों के लोगों को बढ़ावा देने की परिकल्पना की गई थी ताकि उन्हें शहरी अभिजात वर्ग का दर्जा प्राप्त विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग के स्तर पर लाया जा सके। इस प्रकार, आरक्षण नीति सही ढंग से लागू की गई और चूंकि इसके कार्यान्वयन में कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ा क्योंकि पिछड़े वर्गों में से कुछ आगे बढ़ गए, इसलिए पिछड़े के पिछड़े लोगों का उत्थान करना अनिवार्य हो गया, जिसके लिए उप-वर्गीकरण दिन का क्रम बन गया।

78. मुझे मुख्य न्यायाधीश और मेरे आदरणीय भाई न्यायमूर्ति गवई के विद्वत्तापूर्ण निर्णयों को पढ़ने का सौभाग्य मिला।

79. मुख्य न्यायाधीश ने अपने विचार में इस मूल मुद्दे का उत्तर देने के लिए कानूनी पहलुओं पर विस्तार से विचार किया है कि क्या अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण आरक्षण के प्रयोजनों के लिए संवैधानिक रूप से स्वीकार्य है। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है कि **इंद्रा साहनी** (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय का कभी भी उप-वर्गीकरण के आवेदन को केवल अन्य पिछड़े वर्गों तक सीमित करने का इरादा नहीं था। यदि कोई वर्ग एकीकृत नहीं है तो उसे आगे वर्गीकृत किया जा सकता है और किसी वर्ग का ऐसा उप-वर्गीकरण संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं होगा, जब तक कि किसी वर्ग के लोग समान स्थिति में न हों। अनुसूचित जाति के भीतर उप-वर्गीकरण में संविधान के अनुच्छेद 341(2) का कोई उल्लंघन नहीं है क्योंकि ऐसे उप-वर्गीकरण से किसी जाति को अनुसूचित जातियों की सूची में शामिल या बहिष्कृत नहीं किया जा रहा है।

80. माननीय न्यायमूर्ति गवई ने अपने मत में एक उदाहरण दिया जिसमें पिछड़े वर्ग का कोई सदस्य आईएएस या आईपीएस या अखिल भारतीय सेवा का कोई अन्य अधिकारी बन जाता है और समाज में अपनी स्थिति में सुधार करता है लेकिन फिर भी उसके बच्चों को आरक्षण का पूरा लाभ मिलता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि "एक निगल से गर्मी नहीं आती" जिसका अर्थ है कि यदि किसी विशेष जाति/वर्ग के कुछ सदस्य समाज में आगे बढ़ते हैं तो पूरी जाति या वर्ग पिछड़ा नहीं रह जाएगा। फिर भी यदि पिछड़े वर्ग का कोई सदस्य उच्च दर्जा प्राप्त कर लेता है और अगड़े वर्ग के साथ समानता प्राप्त कर लेता है, तो यह समझना कठिन है कि उसके बच्चों को सामाजिक,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

आर्थिक या शैक्षणिक रूप से किसी भी तरह से दलित, दलित या पिछड़ा कैसे माना जाएगा। इसलिए, जिस जाति से वह व्यक्ति संबंधित है, उसे समग्र रूप से आरक्षण के लाभ से बाहर नहीं रखा जा सकता है, लेकिन निश्चित रूप से जिस परिवार ने एक बार लाभ प्राप्त किया है, उसे अगली पीढ़ी में आरक्षण का लाभ लेने की अनुमति नहीं दी जाएगी। ऐसे परिवारों के लिए आरक्षण केवल एक पीढ़ी तक ही सीमित होना चाहिए।

81. मेरे भाई न्यायमूर्ति गवई ने अपने मत में सही कहा है कि न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने एन.एम. थॉमस (उपरोक्त) के मामले में बार-बार टिप्पणी की है कि राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक रूप से उन्नत वर्गों को आरक्षण के दायरे से बाहर करने के लिए कदम उठाने का अधिकार है।

82. यह सही कहा गया है कि सेंट स्टीफन कॉलेज या किसी अच्छे शहरी कॉलेज में पढ़ने वाले बच्चे की तुलना ग्रामीण स्कूल/कॉलेज में पढ़ने वाले बच्चे से नहीं की जा सकती और उसे एक ही वर्ग में नहीं रखा जा सकता।

83. इन परिस्थितियों में मेरे भाई न्यायमूर्ति गवई ने सही निष्कर्ष निकाला है कि राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों में से भी क्रीमी लेयर की पहचान करने की नीति विकसित करनी चाहिए ताकि उन्हें आरक्षण के लाभ से बाहर रखा जा सके।

84. मुख्य न्यायाधीश और भाई न्यायमूर्ति गवई, द्वारा लिखित विद्वानों की अलग-अलग राय से सहमत होते हुए, मैं अपने विचारों को इस प्रकार संक्षेप में प्रस्तुत करता हूँ:

(i) संविधान के तहत और इसके विभिन्न संशोधनों द्वारा निहित आरक्षण की नीति को दलित वर्ग या दलितों या एससी/एसटी/ओबीसी समुदायों से संबंधित लोगों की मदद और उत्थान के लिए नए सिरे से पुनर्विचार और अन्य तरीकों के विकास की आवश्यकता है। जब तक कोई नई पद्धति विकसित या अपनाई नहीं जाती, तब तक प्रचलित आरक्षण प्रणाली एक वर्ग विशेष रूप से अनुसूचित जाति के उपवर्गीकरण की अनुमति देने की शक्ति के साथ क्षेत्र पर कब्जा करना जारी रख सकती है क्योंकि मैं किसी मौजूदा इमारत को उसके स्थान पर एक नई इमारत बनाए बिना ध्वस्त करने का सुझाव नहीं दूंगा जो अधिक उपयोगी साबित हो सकती है;

(ii) संवैधानिक शासन में कोई जाति व्यवस्था नहीं है और देश जातिविहीन समाज में प्रवेश कर चुका है केवल संविधान के तहत सीमित उद्देश्यों के लिए दलित, दलित या अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/अन्य पिछड़ा वर्ग के लोगों को आरक्षण देने के प्रावधान को छोड़कर। इसलिए, उपरोक्त श्रेणियों के व्यक्तियों की पदोन्नति के लिए कोई भी सुविधा या विशेषाधिकार जाति के अलावा पूरी तरह से अलग मानदंडों पर आधारित होना चाहिए, जो आर्थिक या वित्तीय कारकों, रहने की स्थिति, व्यवसाय और उनमें से प्रत्येक को उनके रहने के स्थान (शहरी या ग्रामीण) के आधार पर उपलब्ध सुविधाओं पर आधारित हो सकता है;

(iii) आरक्षण, यदि कोई हो, केवल पहली पीढ़ी या एक पीढ़ी के लिए सीमित होना चाहिए और यदि परिवार में किसी भी पीढ़ी ने आरक्षण का लाभ उठाया है और उच्च दर्जा प्राप्त किया है, तो आरक्षण का लाभ तार्किक रूप से दूसरी पीढ़ी को उपलब्ध नहीं होगा; और

(iv) यह दोहराया जाता है कि आरक्षण का लाभ लेने के बाद सामान्य वर्ग के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने वाले व्यक्ति के वर्ग को बाहर करने के लिए समय-समय पर अभ्यास किया जाना चाहिए।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

85. संदर्भ का तदनुसार उत्तर दिया गया है और यह धारित किया गया है कि आरक्षण के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जातियों का उपवर्गीकरण कानून में स्वीकार्य है।

न्यायमूर्ति सतीश चंद्र शर्मा

1. मुझे भारत के माननीय मुख्य न्यायमूर्ति डी.वाई. चंद्रचूड़ और माननीय न्यायमूर्ति बी.आर. गवई द्वारा लिखित सुस्पष्ट और विस्तृत राय पढ़ने का सौभाग्य मिला है। मैं दोनों राय से इस हद तक पूरी तरह सहमत हूँ कि अनुसूचित जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण की वैधता संवैधानिक रूप से स्वीकार्य है। इसके अलावा, मैं इस हद तक राय से पूरी तरह सहमत हूँ कि राज्य द्वारा उप-वर्गीकरण से जुड़ी किसी भी कवायद को अनुभवजन्य आंकड़ों द्वारा समर्थित किया जाना चाहिए, जो उस उप-समूह की अधिक 'वंचित' स्थिति को रेखांकित करे, जिसके लिए समग्र रूप से संवैधानिक वर्ग के मुकाबले इस तरह के अधिमान्य उपचार प्रदान किए जाने की मांग की जाती है।
2. हालांकि, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए 'क्रीमी लेयर सिद्धांत' की प्रयोज्यता के सवाल पर, मैं खुद को न्यायमूर्ति गवई द्वारा व्यक्त किए गए दृष्टिकोण से सहमत हूँ, यानी अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बीच वास्तविक समानता की पूर्ण प्राप्ति के लिए, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के रूप में 'क्रीमी लेयर' की पहचान राज्य के लिए एक संवैधानिक अनिवार्यता बननी चाहिए।

मामले का परिणाम: संदर्भ का उत्तर दिया गया।

हेडनोट्स बिभूति भूषण बोस द्वारा तैयार किए गए:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।